नमो नमो निम्मलदंसणस्स

बाल ब्रह्मचारी श्री नेमिनाथाय नम:

पूज्य आनन्द-क्षमा-ललित-सुशील-सुधर्मसागर-गुरूभ्यो नम:

आगम-५/२

भगवती/व्याख्याप्रज्ञप्ति-२

आगमसूत्र हिन्दी अनुवाद

आगम दीवाकर मुनि दीपरत्नसागरजी

[M.Com. M.Ed. Ph.D. श्रुत महर्षि]

'आगम' हिन्दी-अनुवाद-श्रेणी पुष्प- ५/२

आगमसूत्र-५- 'भगवती'

अंगसूत्र- ५ -हिन्दी अनुवाद

कहां क्या देखे ?

क्रम	विषय	पृष्ठ	क्रम	विषय	पृष्ठ
.....	भगवती सूत्र भाग-१	.....		भगवती सूत्र भाग-२..चालु	
०१	शतक १	००५	२१	शतक २१	१४२
०२	शतक २	०३८	२२	शतक २२	१४४
०३	शतक ३	०५७	२३	शतक २३	१४६
०४	शतक ४	०८६	२४	शतक २४	१४७
०५	शतक ५	०८८	२५	शतक २५	१७६
०६	शतक ६	१११	२६	शतक २६	२१३
०७	शतक ७	१२९	२७	शतक २७	२१८
०८	शतक ८	१४९	२८	शतक २८	२१९
०९	शतक ९	१८९	२९	शतक २९	२२०
१०	शतक १०	२२०	३०	शतक ३०	२२२
११	शतक ११	२२९	३१	शतक ३१	२२६
	भगवती सूत्र भाग-२		३२	शतक ३२	२२९
१२	शतक १२	००५	३३	शतक ३३	२३०
१३	शतक १३	०२९	३४	शतक ३४	२३३
१४	शतक १४	०४८	३५	शतक ३५	२३९
१५	शतक १५	०६०	३६	शतक ३६	२४४
१६	शतक १६	०८१	३७	शतक ३७	२४५
१७	शतक १७	०९३	३८	शतक ३८	२४५
१८	शतक १८	१०१	३९	शतक ३९	२४५
१९	शतक १९	११८	४०	शतक ४०	२४६
२०	शतक २०	१२५	४१	शतक ४१	२४९

४५ आगम वर्गीकरण

क्रम	आगम का नाम	सूत्र	क्रम	आगम का नाम	सूत्र
०१	आचार	अंगसूत्र-१	२५	आतुरप्रत्याख्यान	पयन्नासूत्र-२
०२	सूत्रकृत्	अंगसूत्र-२	२६	महाप्रत्याख्यान	पयन्नासूत्र-३
०३	स्थान	अंगसूत्र-३	२७	भक्तपरिज्ञा	पयन्नासूत्र-४
०४	समवाय	अंगसूत्र-४	२८	तंदुलवैचारिक	पयन्नासूत्र-५
०५	भगवती	अंगसूत्र-५	२९	संस्तारक	पयन्नासूत्र-६
०६	ज्ञाताधर्मकथा	अंगसूत्र-६	३०.१	गच्छाचार	पयन्नासूत्र-७
०७	उपासकदशा	अंगसूत्र-७	३०.२	चन्द्रवेध्यक	पयन्नासूत्र-७
०८	अंतकृत् दशा	अंगसूत्र-८	३१	गणिविद्या	पयन्नासूत्र-८
०९	अनुत्तरोपपातिकदशा	अंगसूत्र-९	३२	देवेन्द्रस्तव	पयन्नासूत्र-९
१०	प्रश्नव्याकरणदशा	अंगसूत्र-१०	३३	वीरस्तव	पयन्नासूत्र-१०
११	विपाकश्रुत	अंगसूत्र-११	३४	निशीथ	छेदसूत्र-१
१२	औपपातिक	उपांगसूत्र-१	३५	बृहत्कल्प	छेदसूत्र-२
१३	राजप्रश्निय	उपांगसूत्र-२	३६	व्यवहार	छेदसूत्र-३
१४	जीवाजीवाभिगम	उपांगसूत्र-३	३७	दशाश्रुतस्कन्ध	छेदसूत्र-४
१५	प्रज्ञापना	उपांगसूत्र-४	३८	जीतकल्प	छेदसूत्र-५
१६	सूर्यप्रज्ञप्ति	उपांगसूत्र-५	३९	महानिशीथ	छेदसूत्र-६
१७	चन्द्रप्रज्ञप्ति	उपांगसूत्र-६	४०	आवश्यक	मूलसूत्र-१
१८	जंबूद्वीपप्रज्ञप्ति	उपांगसूत्र-७	४१.१	ओघनिर्युक्ति	मूलसूत्र-२
१९	निरयावलिका	उपांगसूत्र-८	४१.२	पिंडनिर्युक्ति	मूलसूत्र-२
२०	कल्पवतंसिका	उपांगसूत्र-९	४२	दशवैकालिक	मूलसूत्र-३
२१	पुष्पिका	उपांगसूत्र-१०	४३	उत्तराध्ययन	मूलसूत्र-४
२२	पुष्पचूलिका	उपांगसूत्र-११	४४	नन्दी	चूलिकासूत्र-१
२३	वृष्णिदशा	उपांगसूत्र-१२	४५	अनुयोगद्वार	चूलिकासूत्र-२
२४	चतु:शरण	पयन्नासूत्र-१	---	----------	-----

मुनि दीपरत्नसागरजी प्रकाशित साहित्य

आगम साहित्य			आगम साहित्य		
क्र	साहित्य नाम	बूक्स	क्रम	साहित्य नाम	बू
1	मूल आगम साहित्य:-	147	6	आगम अन्य साहित्य:-	10
	-1- आगमसुत्ताणि-मूलं print	[49]		-1- આગમ કથાનુયોગ	06
	-2- आगमसुत्ताणि-मूलं Net	[45]		-2- आगम संबंधी साहित्य	02
	-3- आगममञ्जूषा (मूल प्रत)	[53]		-3- ऋषिभाषित सूत्राणि	01
2	आगम अनुवाद साहित्य:-	165		-4- आगमिय सूक्तावली	01
	-1- આગમસૂત્ર ગુજરાતી અનુવાદ	[47]		आगम साहित्य- कुल पुस्तक	516
	-2- आगमसूत्र हिन्दी अनुवाद Net	[47]			
	-3- AagamSootra English Trans.	[11]			
	-4- આગમસૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	[48]			
	-5- आगमसूत्र हिन्दी अनुवाद print	[12]		अन्य साहित्य:-	
3	आगम विवेचन साहित्य:-	171	1	તત્વાભ્યાસ સાહિત્ય-	13
	-1- आगमसूत्र सटीकं	[46]	2	સૂત્રાભ્યાસ સાહિત્ય-	06
	-2- आगमसूत्राणि सटीकं प्रताकार-1	[51]	3	વ્યાકરણ સાહિત્ય-	05
	-3- आगमसूत्राणि सटीकं प्रताकार-2	[09]	4	વ્યાખ્યાન સાહિત્ય-	04
	-4- आगम चूर्णि साहित्य	[09]	5	જિનભક્તિ સાહિત્ય-	09
	-5- सवृत्तिक आगमसूत्राणि-1	[40]	6	વિધિ સાહિત્ય-	04
	-6- सवृत्तिक आगमसूत्राणि-2	[08]	7	આરાધના સાહિત્ય	03
	-7- सचूर्णिक आगमसुत्ताणि	[08]	8	પરિચય સાહિત્ય-	04
4	आगम कोष साहित्य:-	14	9	પૂજન સાહિત્ય-	02
	-1- आगम सद्दकोसो	[04]	10	તીર્થંકર સંક્ષિપ્ત દર્શન	25
	-2- आगम कहाकोसो	[01]	11	પ્રકીર્ણ સાહિત્ય-	05
	-3- आगम-सागर-कोष:	[05]	12	દીપરત્નસાગરના લઘુશોધનિબંધ	05
	-4- आगम-शब्दादि-संग्रह (प्रा-सं-गु)	[04]		આગમ સિવાયનું સાહિત્ય કૂલ પુસ્તક	85
5	आगम अनुक्रम साहित्य:-	09			
	-1- આગમ વિષયાનુક્રમ- (મૂળ)	02		1-आगम साहित्य (कुल पुस्तक)	51
	-2- आगम विषयानुक्रम (सटीकं)	04		2-आगमेतर साहित्य (कुल	08
	-3- आगम सूत्र-गाथा अनुक्रम	03		दीपरत्नसागरजी के कुल प्रकाशन	60

મુનિ દીપરત્નસાગરનું સાહિત્ય

1	મુનિ દીપરત્નસાગરનું આગમ સાહિત્ય	[કુલ પુસ્તક 516]	તેના કુલ પાના [98,300]
2	મુનિ દીપરત્નસાગરનું અન્ય સાહિત્ય	[કુલ પુસ્તક 85]	તેના કુલ પાના [09,270]
3	મુનિ દીપરત્નસાગર સંકલિત 'तत्त्वार्थसूत्र'ની વિશિષ્ટ DVD		તેના કુલ પાના [27,930]

અમારા પ્રકાશનો કુલ ૬૦૧ + વિશિષ્ટ DVD કુલ પાના 1,35,500

[५/२] भगवती/व्याख्याप्रज्ञप्ति
अंगसूत्र- ५/२ - हिन्दी अनुवाद

शतक–१२

सूत्र - ५२९

बारहवें शतक में दस उद्देशक हैं–(१) शंख, (२) जयन्ती, (३) पृथ्वी, (४) पुद्गल, (५) अतिपात, (६) राहु, (७) लोक, (८) नाग, (९) देव और (१०) आत्मा ।

शतक-१२ - उद्देशक-१

सूत्र - ५३०

उस काल और उस समय में श्रावस्ती नगरी थी । कोष्ठक उद्यान था, उस श्रावस्ती नगरी में शंख आदि बहुत-से श्रमणोपासक रहते थे । (वे) आढ्य यावत् अपरिभूत थे; तथा जीव, अजीव आदि तत्त्वों के ज्ञाता थे, यावत् विचरते थे । उस 'शंख' श्रमणोपासक की भार्या 'उत्पला' थी । उसके हाथ-पैर अत्यन्त कोमल थे, यावत् वह रूपवती एवं श्रमणोपासिका थी, जीव-अजीव आदि तत्त्वों की जानने वाली यावत् विचरती थी । उसी श्रावस्ती नगरीमें पुष्कली नामका श्रमणोपासक रहता था । वह भी आढ्य यावत् जीव-अजीवादि तत्त्वों का ज्ञाता था यावत् विचरता था ।

उस काल और उस समय में महावीर स्वामी श्रावस्ती पधारे । परीषद् वन्दन के लिए गई, यावत् पर्युपासना करने लगी । तत्पश्चात् वे श्रमणोपासक भी, आलभिका नगरी के श्रमणोपासक के समान उनके वन्दन एवं धर्म-कथाश्रवण आदि के लिए गए यावत् पर्युपासना करने लगे । श्रमण भगवान महावीर ने उन श्रमणोपासकों को और महती महापरीषद् की धर्मकथा कही । यावत् परीषद् वापिस चली गई । वे श्रमणोपासक भगवान महावीर के पास धर्मोपदेश सूनकर और अवधारण करके हर्षित और सन्तुष्ट हुए । उन्होंने श्रमण भगवान महावीर को वन्दन-नमस्कार किया, प्रश्न पूछे, तथा उनका अर्थ ग्रहण किया । फिर उन्होंने खड़े होकर श्रमण भगवान महावीर को वन्दन-नमस्कार किया और कोष्ठक उद्यान से नीकलकर श्रावस्ती नगरी की ओर जाने का विचार किया ।

सूत्र - ५३१

उस शंख श्रमणोपासक ने दूसरे श्रमणोपासकों से कहा–देवानुप्रियो ! तुम विपुल अशन, पान, खादिम और स्वादिम तैयार कराओ । फिर हम उस प्रचुर अशन, पान, खाद्य और स्वाद्य का आस्वादन करते हुए, विस्वादन करते हुए, एक दूसरे को देते हुए भोजन करते हुए पाक्षिक पौषध का अनुपालन करते हुए अहोरात्र-यापन करेंगे । इस पर उन श्रमणोपासकों ने शंख श्रमणोपासक की इस बात को विनयपूर्वक स्वीकार किया ।

तदनन्तर उस शंख श्रमणोपासक को एक ऐसा अध्यवसाय यावत् उत्पन्न हुआ–'उस विपुल अशन, पान, खाद्य और स्वाद्य का आस्वादन, विस्वादन, परिभाग और परिभोग करते हुए पाक्षिक पौषध (करके) धर्मजागरणा करना मेरे लिए श्रेयस्कर नहीं प्रत्युत अपनी पौषध-शाला में, ब्रह्मचर्यपूर्वक, मणि, सुवर्ण आदि के त्यागरूप तथा माला, वर्णक एवं विलेपन से रहित, और शस्त्र-मूसल आदि के त्यागरूप पौषध का ग्रहण करके दर्भ के संस्तारक पर बैठकर अकेले को ही पाक्षिक पौषध के रूप में धर्मजागरणा करते हुए विचरण करना श्रेयस्कर है ।' इस प्रकार विचार करके वह श्रावस्ती नगरी में जहाँ अपना घर था, वहाँ आया, (और अपनी धर्मपत्नी) उत्पला श्रमणोपासिका से पूछा । फिर पौषधशाला में प्रवेश किया । पौषधशाला का प्रमार्जन किया; उच्चारण-प्रस्रवण की भूमि का प्रति-लेखन किया । डाभ का संस्तारक बिछाया और उस पर बैठा । फिर पौषधशाला में उसने ब्रह्मचर्य यावत् पाक्षिक पौषध पालन करते हुए, (अहोरात्र) यापन किया ।

तत्पश्चात् वे श्रमणोपासक श्रावस्ती नगरी में अपने-अपने घर पहुँचे । और उन्होंने पुष्कल अशन, पान, खाद्य और स्वाद्य तैयार करवाया । एक दूसरे को बुलाया और परस्पर कहने लगे–देवानुप्रियो ! हमने तो पुष्कल अशन, पान,

खाद्य और स्वाद्य तैयार करवा लिया; परन्तु शंख श्रमणोपासक अभी तक नहीं आए, देवानुप्रियो ! हमे शंख श्रमणोपासक को बुला लाना श्रेयस्कर है । इसके बाद उस पुष्कली श्रमणोपासक ने कहा–'देवानुप्रियो ! तुम सब अच्छी तरह स्वस्थ और विश्वस्त होकर बैठो, मैं शंख श्रमणोपासक को बुलाकर लाता हूँ ।' यों कहकर वह श्रावस्ती नगरी में जहाँ शंख श्रमणोपासक का घर था, वहाँ आकर उसने शंख श्रमणोपासक के घर में प्रवेश किया।

पुष्कली श्रमणोपासक को आते देखकर, वह उत्पला श्रमणोपासिका हर्षित और सन्तुष्ट हुई । वह अपने आसन से उठी और सात-आठ कदम सामने गई । पुष्कली श्रमणोपासक को वन्दन-नमस्कार किया, और आसन पर बैठने को कहा । फिर पूछा–'कहिए, देवानुप्रिय ! आपके आने का क्या प्रयोजन है ?' पुष्कली श्रमणोपासक ने, उत्पला श्रमणोपासिका से कहा–'देवानुप्रिये ! शंख श्रमणोपासक कहाँ है ?' उत्पला–'देवानुप्रिय ! बात ऐसी है कि वह पौषधशाला में पौषध ग्रहण करके ब्रह्मचर्ययुक्त होकर यावत् (धर्मजागरणा कर) रहे हैं । तब वह पुष्कली श्रमणोपासक, जिस पौषधशाला में शंख श्रमणोपासक था, वहाँ उसके पास आया और उसने गमनागमन का प्रतिक्रमण किया । फिर शंख श्रमणोपासक को वन्दन-नमस्कार करके बोला–'देवानुप्रिय ! हमने वह विपुल अशन, पान, खादिम और स्वादिम आहार तैयार करा लिया है । अतः देवानुप्रिय ! अपन चलें और वह विपुल अशनादि आहार एक दूसरे को देते और उपभोगादि करते हुए पौषध करके रहें । शंख श्रमणोपासक ने पुष्कली श्रमणो-पासक से कहा–'देवानुप्रिय ! मेरे लिए उस विपुल अशन, पान, खाद्य और स्वाद्य का उपभोग आदि करते हुए पौषध करना कल्पनीय नहीं है । मेरे लिए पौषधशाला में पौषध अंगीकार करके यावत् धर्मजागरणा करते हुए रहना कल्पनीय है । अतः हे देवानुप्रिय ! तुम सब अपनी ईच्छानुसार उस विपुल अशन, पान, खाद्य और स्वाद्य आहार का उपभोग आदि करते हुए यावत् पौषध का अनुपालन करो ।

तदनन्तर वह पुष्कली श्रमणोपासक, शंख श्रमणोपासक की पौषधशाला से लौटा और श्रावस्ती नगरी के मध्य में से होकर, जहाँ वे (साथी) श्रमणोपासक थे, वहाँ आया । फिर उन श्रमणोपासकों से बोला–शंख श्रमणो-पासक निराहार-पौषधव्रत अंगीकार करके स्थित है । उसने कह दिया कि 'देवानुप्रियो ! तुम सब स्वेच्छानुसार उस विपुल अशनादि आहार को परस्पर देते हुए यावत् उपभोग करते हुए पौषध का अनुपालन करो । शंख श्रमणो-पासक अब नहीं आएगा ।' यह सूनकर उन श्रमणोपासकों ने उस विपुल अशन-पान-खाद्य-स्वाद्यरूप आहार को खाते-पीते हुए यावत् पौषध करके धर्मजागरणा की ।

इधर उस शंख श्रमणोपासक को पूर्वरात्रि व्यतीत होने पर, पिछली रात्रि के समय में धर्मजागरिकापूर्वक जागरणा करते हुए इस प्रकार का अध्यवसाय यावत् उत्पन्न हुआ–'कल प्रातःकाल यावत् जाज्वल्यमान सूर्योदय होने पर मेरे लिए यह श्रेयस्कर है कि श्रमण भगवान महावीर को वन्दना-नमस्कार करके यावत् उनकी पर्युपासना करके वहाँ से लौट कर पाक्षिक पौषध पारित करूँ । प्रातःकाल सूर्योदय होने पर अपनी पौषधशाला से बाहर नीकला । शुद्ध एवं सभा में प्रवेश करने योग्य मंगल वस्त्र ठीक तरह से पहने, और अपने घर से चला । वह पैदल चलता हुआ श्रावस्ती नगरी के मध्य में होकर भगवान की सेवा में पहुँचा, यावत् उनकी पर्युपासना करने लगा । वहाँ अभिगम नहीं (कहना चाहिए) । तदनन्तर वे सब श्रमणोपासक, (दूसरे दिन) प्रातःकाल यावत् सूर्योदय होने पर स्नानादि (नित्यकृत्य) करके यावत् शरीर को अलंकृत करके अपने-अपने घरों से नीकले और एक स्थान पर मिले । फिर सब मिलकर पूर्ववत् भगवान की सेवा में पहुँचे, यावत् पर्युपासना करने लगे ।

भगवान महावीर ने उन श्रमणोपासकों और उस महती महापरीषद् को यावत्-धर्मदेशना दी । बाद वे सभी श्रमणोपासक श्रमण भगवान महावीर से धर्म श्रवण कर और हृदय में अवधारणा करके हर्षित एवं सन्तुष्ट हुए। फिर उन्होंने खड़े होकर श्रमण भगवान महावीर को वन्दन-नमस्कार किया । तदनन्तर वे शंख श्रमणोपासक के पास आए और कहने लगे–देवानुप्रिय! कल आपने ही हमें कहा था कि ''देवानुप्रियो ! तुम प्रचूर अशनादि तैयार करवाओ, हम आहार देते हुए यावत् उपभोग करते हुए पौषध का अनुपालन करेंगे । किन्तु फिर आप आए नहीं और आपने अकेले ही पौषधशाला में यावत् निराहार पौषध कर लिया । अतः देवानुप्रिय ! आपने हमारी अच्छी अवहेलना की!'' भगवान

महावीर ने उन श्रमणोपासकों से कहा–'आर्यो ! तुम श्रमणोपासक शंख की हीलना, निन्दा, कोसना, गर्हा और अवमानना मत करो । क्योंकि शंख श्रमणोपासक प्रियधर्मा और दृढ़धर्मा है । इसने सुदर्शन नामक जागरिका की है ।

सूत्र - ५३२

गौतम स्वामी ने श्रमण भगवान महावीर स्वामी को वन्दन-नमस्कार किया और पूछा–भगवन् ! जागरिका कितने प्रकार की है ? गौतम ! जागरिका तीन प्रकार की कही गई है, यथा–वृद्ध-जागरिका, अबुद्ध-जागरिका और सुदर्शन-जागरिका । भगवन् ! किस हेतु से कहा जाता है ? गौतम ! जो उत्पन्न हुए केवलज्ञान-केवलदर्शन के धारक अरिहंत भगवान हैं, इत्यादि स्कन्दक-प्रकरण के अनुसार जो यावत् सर्वज्ञ, सर्वदर्शी हैं, वे बुद्ध हैं, वे बुद्ध-जागरिका करते हैं, जो ये अनगार भगवंत ईर्यासमिति, भाषासमिति आदि पाँच समितियों और तीन गुप्तियों से युक्त यावत् गुप्त ब्रह्मचारी हैं, वे अबुद्ध हैं । वे अबुद्ध-जागरिका करते हैं । जो ये श्रमणोपासक, जीव-अजीव आदि तत्त्वों के ज्ञाता यावत् पौषधादि करते हैं, वे सुदर्शन-जागरिका करते हैं । इसी कारण से, हे गौतम ! तीन प्रकार की जागरिका यावत् सुदर्शन-जागरिका कही गई है ।

सूत्र - ५३३

इसके बाद उस शंख श्रमणोपासक ने श्रमण भगवान महावीर को वन्दन-नमस्कार किया और पूछा–'भगवन्! क्रोध के वश-आर्त्त बना हुआ जीव कौन-से कर्म बाँधता है ? क्या करता है ? किसका चय करता है और किसका उपचय करता है ? शंख ! क्रोधवश-आर्त्त बना हुआ जीव आयुष्यकर्म को छोड़कर शेष सात कर्मों की शिथिल बन्धन से बंधी हुई प्रकृतियों को गाढ़ बन्धन वाली करता है, इत्यादि प्रथम शतक में असंवृत अनगार के वर्णन के समान यावत् वह संसार में परिभ्रमण करता है, यहाँ तक जान लेना । भगवन् ! मान-वश-आर्त्त बना हुआ जीव क्या बाँधता है ? इत्यादि पूर्ववत् प्रश्न । क्रोधवशार्त्त जीवविषयक कथन के अनुसार जान लेना । इसी प्रकार माया-वशार्त्त जीव, तथा लोभावशार्त्त जीव के विषय में भी, यावत्-संसार में परिभ्रमण करता है, यहाँ तक जानना। श्रमण भगवान महावीर से यह फल सूनकर और अवधारण करके वे श्रमणोपासक उसी समय भयभीत, त्रस्त, दुःखित एवं संसारभय से उद्विग्न हुए । उन्होंने श्रमण भगवान महावीर को वन्दन-नमस्कार किया और जहाँ शंख श्रमणोपासक था, वहाँ उसके पास आए । शंख श्रमणोपासक को उन्होंने वन्दन-नमस्कार किया और फिर अपने उस अविनयरूप अपराध के लिए विनयपूर्वक बार-बार क्षमायाचना करने लगे । इसके पश्चात् उन सभी श्रमणो-पासकों ने भगवान से कई प्रश्न पूछे, इत्यादि सब वर्णन आलभिका के (श्रमणोपासकों के) समान जानना चाहिए, यावत् वे अपने-अपने स्थान पर लौट गए

भगवान गौतम ने श्रमण भगवान महावीर को वन्दन-नमस्कार करके पूछा–भगवन् ! क्या शंख श्रमणो-पासक आप देवानुप्रिय के पास प्रव्रजित होने में समर्थ है? गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है; इत्यादि समस्त वर्णन ऋषिभद्रपुत्र श्रमणोपासक के समान कहना, यावत् सर्व दुःखों का अन्त करेगा । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । यह इसी प्रकार है ।'

शतक-१२ – उद्देशक-२

सूत्र - ५३४

उस काल और उस समय में कौशाम्बी नगरी थी । चन्द्रवतरण उद्यान था । उस कौशाम्बी नगरी में सहस्त्रा-नीक राजा का पौत्र, शतानीक राजा का पुत्र, चेटक राजा का दौहित्र, मृगावती देवी का आत्मज और जयन्ती श्रमणोपासिका का भतीजा 'उदयन' नामक राजा था । उसी कौशाम्बी नगरी में सहस्रानीक राजा की पुत्रवधू, शतानीक राजा की पत्नी, चेटक राजा की पुत्री, उदयन राजा की माता, जयन्ती श्रमणोपासिका की भौजाई, मृगावती नामक देवी (रानी) थी । वह सुकुमाल हाथ-पैर वाली, यावत् सुरूपा, श्रमणोपासिका यावत् विचरण करती थी । उसी कौशाम्बी नगरी में सहस्त्रानीक राजा की पुत्री, शतानीक राजा की भगिनी, उदयन राजा की बूआ, मृगावती देवी की ननद और वैशालिक के श्रावक आर्हतों की पूर्व शय्यातरा 'जयन्ती' नाम की श्रमणोपासिका थी । वह सुकुमाल यावत् सुरूपा और जीवाजीवादि तत्त्वों की ज्ञाता यावत् विचरती थी ।

सूत्र - ५३५

उस काल उस समय में महावीर स्वामी (कौशाम्बी) पधारे, यावत् परीषद् पर्युपासना करने लगी । उस समय उदायन राजा को जब यह पता लगा तो वह हर्षित और सन्तुष्ट हुआ । उसने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया और उनसे इस प्रकार कहा-'देवानुप्रियो ! कौशाम्बी नगरी को भीतर और बाहर से शीघ्र ही साफ करवाओ; इत्यादि सब वर्णन कोणिक राजा के समान यावत् पर्युपासना करने लगा ।

तदनन्तर वह जयन्ती श्रमणोपासिका भी इस समाचार को सूनकर हर्षित एवं सन्तुष्ट हुई और मृगावती के पास आकर इस प्रकार बोली-(इत्यादि आगे का सब कथन), नौवें शतक में ऋषभदत्त ब्राह्मण के प्रकरण के समान, यावत्-(हमारे लिए इह भव, परभव और दोनों भवों के लिए कल्याणप्रद और श्रेयस्कर) होगा; तक जानना चाहिए । तत्पश्चात् उस मृगावती देवी ने भी जयन्ती श्रमणोपासिका के वचन उसी प्रकार स्वीकार किए, जिस प्रकार देवानन्दा ने (ऋषभदत्त के वचन) यावत् स्वीकार किये थे । तत्पश्चात् उस मृगावती देवी ने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया और उनसे इस प्रकार कहा-देवानुप्रियो ! जिसमें वेगवान घोड़े जुते हुए हों, ऐसा यावत् श्रेष्ठ धार्मिक रथ जोतकर शीघ्र ही उपस्थित करो । कौटुम्बिक पुरुषों ने यावत् रथ लाकर उपस्थित किया और यावत् उनकी आज्ञा वापिस सौंपी ।

इसके बाद उस मृगावती देवी और जयन्ती श्रमणोपासिका ने स्नानादि किया यावत् शरीर को अलंकृत किया फिर कुब्जा दासियों के साथ वे दोनों अन्तःपुर से नीकलीं । फिर वे दोनों बाहरी उपस्थानशाला में आई और जहाँ धार्मिक श्रेष्ठ यान था, उसके पास आकर यावत् रथारूढ़ हुई । तब जयन्ती श्रमणोपासिका के साथ श्रेष्ठ धार्मिक यान पर आरूढ़ मृगावती देवी अपने परिवार सहित, यावत् धार्मिक श्रेष्ठ यान से नीचे ऊतरी, तक कहना चाहिए । तत्पश्चात् जयन्ती श्रमणोपासिका एवं बहुत-सी कुब्जा दासियों सहित मृगावती देवी श्रमण भगवान महावीर की सेवा में देवानन्दा के समान पहुँची, यावत् भगवान को वन्दना-नमस्कार किया और उदयन राजा को आगे करके समवसरण में बैठी और उसके पीछे स्थित होकर पर्युपासना करने लगी ।

तदनन्तर श्रमण भगवान महावीर ने उदयन राजा, मृगावती देवी, जयन्ती श्रमणोपासिका और उस महत्ती महापरीषद् को यावत् धर्मोपदेश दिया, यावत् परीषद् लौट गई, उदयन राजा और मृगावती रानी भी चले गए ।

सूत्र - ५३६

वह जयन्ती श्रमणोपासिका श्रमण भगवान महावीर से धर्मोपदेश श्रवण कर एवं अवधारण करके हर्षित एवं सन्तुष्ट हुई । फिर भगवान महावीर को वन्दन-नमस्कार करके पूछा-भगवन् ! जीव किस कारण से शीघ्र गुरुत्व को प्राप्त होते हैं ? जयन्ती ! जीव प्राणातिपात से लेकर मिथ्यादर्शनशल्य तक अठारह पापस्थानों के सेवन से शीघ्र गुरुत्व को प्राप्त होते हैं, (इत्यादि) प्रथम शतक अनुसार, यावत् संसारसमुद्र से पार हो जाते हैं ।

भगवन् ! जीवों का भवसिद्धिकत्व स्वाभाविक है या पारिणामिक है ? जयन्ती ! वह स्वाभाविक है, पारिणामिक नहीं । भगवन् ! क्या सभी भवसिद्धिक जीव सिद्ध हो जाएंगे ? हाँ, जयन्ती ! हो जाएंगे । भगवन् ! यदि भवसिद्धिक जीव सिद्ध हो जाएंगे, तो क्या लोक भवसिद्धिक जीवों से रहित हो जाएगा ? जयन्ती ! यह अर्थ शक्य नहीं है । भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहा जाता है ? जयन्ती ! जिस प्रकार कोई सर्वाकाश श्रेणी हो, जो अनादि, अनन्त हो, परित्त और परिवृत हो, उसमें से प्रतिसमय एक-एक परमाणु-पुद्गल जितना खण्ड निकालते-निकालते अनन्त उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी तक निकाला जाए तो भी वह श्रेणी खाली नहीं होती । इसी प्रकार, हे जयन्ती ! ऐसा कहा जाता है कि सब भवसिद्धिक जीव सिद्ध होंगे, किन्तु लोक भवसिद्धिक जीवों से रहित नहीं होगा ।

भगवन् ! जीवों का सुप्त रहना अच्छा है या जागृत रहना अच्छा ? जयन्ती ! कुछ जीवों का सुप्त रहना अच्छा है और कुछ जीवों का जागृत रहना अच्छा है । भगवन् ! ऐसा किस कारण कहते हैं ? जयन्ती ! जो ये अधार्मिक, अधर्मानुसरणकर्ता, अधर्मिष्ठ, अधर्म का कथन करने वाले, अधर्मावलोकनकर्ता, अधर्म में आसक्त, अधर्माचरणकर्ता और अधर्म से ही आजीविका करने वाले जीव हैं, उन जीवों का सुप्त रहना अच्छा है, क्योंकि वे जीव सुप्त रहते हैं, तो अनेक प्राणों, भूतों, जीवों और सत्त्वों को दुःख, शोक और परिताप देने में प्रवृत्त नहीं होते । ये जीव सोये रहते हैं तो अपने को, दूसरे को और स्व-पर को अनेक अधार्मिक संयोजनाओं में नहीं फँसाते । 'जयन्ती ! जो ये धार्मिक हैं,

धर्मानुसारी, धर्मप्रिय, धर्म का कथन करने वाले, धर्म के अवलोकनकर्ता, धर्मासक्त, धर्माचरणी, और धर्म से ही अपनी आजीविका करने वाले जीव हैं, उन जीवों का जाग्रत रहना अच्छा है, क्योंकि ये जीव जाग्रत हों तो बहुत से प्राणों, भूतों, जीवों और सत्त्वों को दुःख, शोक और परिताप देने में प्रवृत्त नहीं होते । ऐसे (धर्मिष्ठ) जीव जागृत रहते हुए स्वयं को, दूसरे को और स्व-पर को अनेक धार्मिक संयोजनाओं में संयोजित करते रहते हैं । इसलिए इन जीवों का जागृत रहना अच्छा है । इसी कारण से, हे जयन्ती ! ऐसा कहा जाता है कि कईं जीवों का सुप्त रहना अच्छा है और कईं जीवों का जागृत रहना अच्छा है ।

भगवन् ! जीवों की सबलता अच्छी है या दुर्बलता ? जयन्ती ! कईं जीवों की सबलता अच्छी है और कईं जीवों की दुर्बलता अच्छी है । भगवन् ! जयन्ती ! जो जीव अधार्मिक यावत् अधर्म से ही आजीविका करते हैं, उन जीवों की दुर्बलता अच्छी है । क्योंकि ये जीव दुर्बल होने से किसी प्राण, भूत, जीव और सत्त्व को दुःख आदि नहीं पहुँचा सकते, इत्यादि सुप्त के समान दुर्बलता का भी कथन करना । और 'जाग्रत' के समान सबलता का कथन करना चाहिए । यावत् धार्मिक संयोजनाओं में संयोजित करते हैं, इसलिए इन जीवों की सबलता अच्छी है । हे जयन्ती ! इसी कारण से ऐसा कहा जाता है कि कईं जीवों की सबलता अच्छी है और कईं जीवों की निर्बलता ।

भगवन् ! जीवों का दक्षत्व (उद्यमीपन) अच्छा है, या आलसीपन ? जयन्ती ! कुछ जीवों का दक्षत्व अच्छा है और कुछ जीवों का आलसीपन अच्छा है । भगवन् ! ऐसा किस कारण से कहा जाता है ? जयन्ती ! जो जीव अधार्मिक यावत् अधर्म द्वारा आजीविका करते हैं, उन जीवों का आलसीपन अच्छा है । यदि वे आलसी होंगे तो प्राणों, भूतों, जीवों और सत्त्वों को दुःख, शोक और परिताप उत्पन्न करने में प्रवृत्त नहीं होंगे, इत्यादि सब सुप्त के समान कहना तथा दक्षता का कथन जाग्रत के समान कहना, यावत् वे स्व, पर और उभय को धर्म के साथ संयोजित करने वाले होते हैं । ये जीव दक्ष हों तो आचार्य की वैयावृत्य, उपाध्याय की वैयावृत्य, स्थविरों की वैया-वृत्य, तपस्वीयों की वैयावृत्य, ग्लान की वैयावृत्य, शैक्ष की वैयावृत्य, कुलवैयावृत्य, गणवैयावृत्य, संघवैयावृत्य और साधर्मिकवैयावृत्य से अपने आपको संयोजित करने वाले होते हैं । हे जयन्ती ! इसी कारण से ऐसा कहा जाता है कि कुछ जीवों का दक्षत्व अच्छा है और कुछ जीवों का आलसीपन अच्छा है ।

भगवन् ! श्रोत्रेन्द्रिय के वश-आर्त्त बना हुआ जीव क्या बाँधता है ? इत्यादि प्रश्न । जयन्ती ! जिस प्रकार क्रोध के वश - आर्त्त बने हुए जीव के विषय में कहा गया है, उसी प्रकार यावत् वह संसार में बार-बार पर्यटन करता है, (यहाँ तक कहना) । इसी प्रकार चक्षुरिन्द्रिय-वशार्त्त बने हुए जीव के विषय में भी कहना । इसी प्रकार यावत् स्पर्शेन्द्रिय-वशार्त्त बने हुए जीव के विषय में कहना । तदनन्तर वह जयन्ती श्रमणोपासिका, श्रमण भगवान महावीर से यह अर्थ सूनकर एवं हृदय में अवधारण करके हर्षित और सन्तुष्ट हुई, इत्यादि शेष समस्त वर्णन देवानन्दा के समान है, यावत् जयन्ती श्रमणोपासिका प्रव्रजित हुई यावत् सर्व दुःखों से रहित हुई । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, यह इसी प्रकार है

शतक-१२ – उद्देशक-३

सूत्र - ५३७

राजगृह नगर में यावत् गौतम स्वामी ने वन्दन-नमस्कार करके इस प्रकार पूछा–भगवन् ! पृथ्वीयाँ (नरक-भूमियाँ) कितनी कही गई हैं ? गौतम ! पृथ्वीयाँ सात कही गई हैं, वे इस प्रकार है–प्रथमा, द्वीतिया यावत् सप्तमी । भगवन् ! प्रथमा पृथ्वी किस नाम और किस गोत्र वाली है ? गौतम ! प्रथमा पृथ्वी का नाम 'धम्मा' है और गोत्र 'रत्नप्रभा' । शेष वर्णन जीवाभिगम सूत्र के नैरयिक उद्देशक के समान यावत् अल्पबहुत्व तक कहना । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१२ – उद्देशक-४

सूत्र - ५३८

राजगृह नगर में, यावत् गौतमस्वामी ने पूछा–भगवन् ! दो परमाणु जब संयुक्त होकर एकत्र होते हैं, तब उनका क्या होता है ? गौतम ! द्विप्रदेशिक स्कन्ध बन जाता है । यदि उसका भेदन हो तो दो विभाग होने पर एक ओर एक

परमाणु-पुद्गल और दूसरी ओर भी एक परमाणु-पुद्गल हो जाता है । भगवन् ! जब तीन परमाणु एक रूप में इकट्ठे होते हैं, तब उनका क्या होता है ? गौतम ! त्रिप्रदेशिक स्कन्ध होता है । भेदन होने पर दो या तीन विभाग होते हैं । दो विभाग हों तो एक ओर एक परमाणु-पुद्गल और दूसरी ओर द्विप्रदेशिक स्कन्ध हो जाता है । उसके तीन विभाग हों तो तीन परमाणु-पुद्गल पृथक्-पृथक् हो जाते हैं । भगवन् ! चार परमाणु-पुद्गल इकट्ठे होते हैं, तब उनका क्या होता है ? गौतम ! उनका चतुष्प्रदेशिक स्कन्ध बन जाता है । उनका भेदन होने पर दो, तीन अथवा चार विभाग होते हैं । दो विभाग होने पर एक ओर (एक) परमाणु-पुद्गल और दूसरी ओर त्रिप्रदेशिक स्कन्ध होता है, अथवा पृथक्-पृथक् दो द्विप्रदेशिक स्कन्ध हो जाते हैं । तीन विभाग होने पर ओर पृथक्-पृथक् दो परमाणु-पुद्गल और एक ओर द्विप्रदेशिक स्कन्त रहता है । चार विभाग होने पर चार परमाणु-पुद्गल पृथक्-पृथक् होते हैं ।

भगवन् ! पाँच परमाणु-पुद्गल एकत्र संहत होने पर क्या स्थिति होती है ? पँचप्रदेशिक स्कन्ध बनता है । भेदन होने पर दो, तीन, चार अथवा पाँच विभाग होते हैं । यदि दो विभाग किये जाएं तो एक ओर एक परमाणु-पुद्गल और दूसरी ओर एक चतुष्प्रदेशिक स्कन्ध हो जाता है । अथवा एक ओर द्विप्रदेशिक स्कन्ध और दूसरी ओर त्रिप्रदेशिक स्कन्ध हो जाता है । तीन विभाग किये जाने पर एक ओर पृथक्-पृथक् दो परमाणु-पुद्गल और एक त्रिप्रदेशिक स्कन्ध रहता है; अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल दूसरी ओर पृथक्-पृथक् दो द्विप्रदेशिक-स्कन्ध रहते हैं । चार विभाग किये जान पर एक ओर पृथक्-पृथक् तीन परमाणु-पुद्गल और दूसरी ओर एक द्विप्रदेशिक-स्कन्ध रहता है । पाँच विभाग किये जाने पर पृथक्-पृथक् पाँच परमाणु होते हैं । भगवन् ! छह परमाणु-पुद्गल जब संयुक्त होकर इकट्ठे होते हैं, तब क्या बनता है ? षट्प्रदेशिक स्कन्ध बनता है । भेदन होने पर दो, तीन, चार, पाँच अथवा छह विभाग होते हैं । दो विभाग किये जाने पर एक ओर एक परमाणु-पुद्गल और पंचप्रदेशिक स्कन्ध होता है; अथवा एक ओर द्विप्रदेशिक स्कन्ध और एक ओर चतुष्प्रदेशिक स्कन्ध रहता है । अथवा दो त्रिप्रदेशी स्कन्ध होते हैं । तीन विभाग से एक ओर पृथक्-पृथक् दो परमाणु-पुद्गल और एक ओर चतु-ष्प्रदेशिक स्कन्ध रहता है । अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल एक ओर द्विप्रदेशिक स्कन्ध और एक ओर त्रिप्रदेशिक स्कन्ध होता है, अथवा तीन पृथक्-पृथक् द्विप्रदेशिक होते हैं । चार विभाग से एक ओर तीन पृथक् परमाणु-पुद्गल एक ओर त्रिप्रदेशिक स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् दो परमाणु पुद्गल, एक ओर पृथक्-पृथक् दो द्विप्रदेशी स्कन्ध होते हैं; पाँच विभाग किये जाने पर एक ओर पृथक्-पृथक् चार परमाणु-पुद्गल और एक ओर द्विप्रदेशिक स्कन्ध होता है; और छह विभाग किये जाने पर पृथक्-पृथक् छह परमाणु-पुद्गल होते हैं ।

भगवन् ! जब सात परमाणु-पुद्गल संयुक्त रूप से इकट्ठे होते हैं, तब क्या होता है ? गौतम ! सप्त-प्रदेशिक स्कन्ध होता है । भेदन किये जाने पर दो, तीन यावत् सात विभाग भी हो जाते हैं । यदि दो विभाग किये जाएं तो-एक ओर एक परमाणु-पुद्गल और दूसरी ओर षट्प्रदेशिक स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर द्विप्रदेशिक स्कन्ध होता है, एक ओर पंचप्रदेशिक स्कन्ध होता है अथवा एक ओर त्रिप्रदेशिक स्कन्ध होता है और दूसरी ओर चतुःप्रदेशी स्कन्ध होता है । तीन विभाग से-एक ओर पृथक्-पृथक् दो परमाणु-पुद्गल और दूसरी ओर पंच-प्रदेशिक स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल, एक ओर द्विप्रदेशिक स्कन्ध और एक ओर चतु-ष्प्रदेशिक स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर एक परमाणु पुद्गल, एक ओर पृथक्-पृथक् दो त्रिप्रदेशिक स्कन्ध होते हैं । अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् दो द्विप्रदेशिक स्कन्ध होते हैं और दूसरी ओर एक त्रिप्रदेशिक स्कन्ध होता है । चार विभाग से एक ओर पृथक्-पृथक् तीन परमाणु-पुद्गल, एक ओर चतुःप्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर दो परमाणु-पुद्गल पृथक्-पृथक्, एक ओर द्विप्रदेशिक स्कन्ध तथा एक ओर त्रिप्रदेशिक स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर एक परमाणु पुद्गल और दूसरी ओर तीन द्विप्रदेशिक स्कन्ध होते हैं । पाँच विभाग से एक ओर पृथक्-पृथक् चार परमाणु-पुद्गल और एक ओर त्रिप्रदेशिक स्कन्ध रहता है । अथवा एक ओर तीन पृथक्-पृथक् परमाणु-पुद्गल और एक ओर पृथक्-पृथक् दो द्विप्रदेशिक स्कन्ध होते हैं । छह विभाग से एक ओर पृथक्-पृथक् पाँच परमाणु-पुद्गल और दूसरी ओर द्विप्रदेशिक स्कन्ध होता है । सात विभाग किये जाने पर पृथक्-पृथक् सात परमाणु-पुद्गल होते हैं ।

भगवन् ! आठ परमाणु-पुद्गल संयुक्त रूप से इकट्ठे होने पर क्या बनता है ? गौतम ! उनका अष्टप्रदेशिक स्कन्ध बन जाता है । यदि उसके विभाग किये जाएं तो दो, तीन, चार यावत् आठ विभाग होते हैं । दो विभाग किये जाने पर एक ओर एक परमाणु-पुद्गल और एक ओर सप्तप्रदेशिक स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर एक द्विप्रदेशिक स्कन्ध और दूसरी ओर एक षट्प्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर एक त्रिप्रदेशिक स्कन्ध और एक ओर एक पंचप्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा पृथक्-पृथक् दो चतुष्प्रदेशी स्कन्ध होते हैं । उसके तीन विभाग से एक ओर पृथक्-पृथक् दो परमाणु-पुद्गल और एक ओर षट्प्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक पंचप्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक पंचप्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक त्रिप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक चतुष्प्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर दो द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक चतुष्प्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध होता है, और एक ओर दो त्रिप्रदेशी स्कन्ध पृथक्-पृथक् होते हैं । जब उसके चार विभाग से एक ओर पृथक् -पृथक् तीन परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक पंचप्रदेशिक स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् दो परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक चतुष्प्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् दो परमाणु-पुद्गल, एक ओर पृथक्-पृथक् दो त्रिप्रदेशिक स्कन्ध होते हैं । अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल, एक ओर द्विप्रदेशिक स्कन्ध ओर एक त्रिप्रदेशिक स्कन्ध होते हैं । अथवा पृथक्-पृथक् चार द्विप्रदेशी स्कन्ध होते हैं । पाँच विभाग से एक ओर पृथक्-पृथक् चार परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक चतुष्प्र-देशी स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् तीन परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध तथा एक ओर एक त्रिप्रदेशिक स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् दो परमाणु-पुद्गल और एक ओर तीन द्विप्रदेशीक स्कन्ध होते हैं । उसके छह विभाग से एक ओर पृथक्-पृथक् पाँच परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक त्रिप्रदेशीस्कन्ध होता है । अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् चार परमाणु-पुद्गल और एक ओर दो द्विप्रदेशिक स्कन्ध होते हैं । उसके सात विभाग से एक ओर पृथक्-पृथक् छह परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध होता है । यदि उससे आठ विभाग किये जाएं तो पृथक्-पृथक् आठ परमाणु-पुद्गल होते हैं ।

भगवन् ! नौ परमाणु-पुद्गलों के संयुक्तरूप से इकट्ठे होने पर क्या बनता है ? गौतम ! उनका नवप्रदेशी स्कन्ध बनता है । उसके विभाग हों तो दो, तीन यावत् नौ विभाग होते हैं । यदि उसके दो विभाग किये जाएं तो एक ओर एक परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक अष्टप्रदेशी स्कन्ध होता है । इस प्रकार क्रमशः एक-एक का संचार (वृद्धि) करना चाहिए, यावत् अथवा एक ओर एक चतुष्प्रदेशी स्कन्ध और एक ओर पंचप्रदेशी स्कन्ध होता है । तीन विभाग से एक ओर पृथक्-पृथक् दो परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक सप्तप्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक षट्प्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक त्रिप्रदेशी स्कन्ध और एक पंचप्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल, और एक और दो चतुष्प्रदेशी स्कन्ध होते हैं । अथवा एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध, एक ओर एक त्रिप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक चतुष्प्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा तीन त्रिप्रदेशी स्कन्ध होते हैं । चार भाग से– एक ओर पृथक्-पृथक् तीन परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक षट्प्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् दो परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक पंचप्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् दो परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक त्रिप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक चतुःप्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल, एक ओर दो द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक चतुःप्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर दो त्रिप्रदेशी स्कन्ध होते हैं । अथवा एक ओर तीन द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक त्रिप्रदेशी स्कन्ध होता है ।

पाँच भाग किये जाने पर–एक ओर पृथक्-पृथक् चार परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक पंचप्रदेशिक स्कन्ध

होता है । अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् तीन परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक द्विप्रदेशी-स्कन्ध और एक ओर एक चतुःप्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् तीन परमाणु-पुद्गल और एक ओर दो त्रिप्रदेशी स्कन्ध होत हैं । अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् दो परमाणु पुद्गल, एक ओर दो द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक त्रिप्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल और एक ओर चार द्विप्रदेशी स्कन्ध होते हैं । छह भाग किये जाने पर-एक ओर पृथक्-पृथक् पाँच परमाणु-पुद्गल और एक ओर चतुःप्रदेशिक स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर चार परमाणु-पुद्गल पृथक्-पृथक्, एक ओर एक द्विप्रदेशिक स्कन्ध और एक ओर एक त्रिप्रदेशिक स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् तीन परमाणु-पुद्गल और एक ओर तीन द्विप्रदेशिक स्कन्ध होते हैं । सात विभाग किये जाने पर-एक ओर पृथक्-पृथक् छह परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक त्रिप्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् पाँच परमाणु-पुद्गल और दो द्विप्रदेशिक स्कन्ध होते हैं । आठ विभाग किये जाने पर-एक ओर पृथक्-पृथक् सात परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक द्विप्रदेशिक स्कन्ध होता है । नव विभाग किये जाने पर-पृथक्-पृथक् नौ परमाणु-पुद्गल होते हैं ।

भगवन् ! दस परमाणु-पुद्गल संयुक्त होकर इकट्ठे हों तो क्या बनता है ? गौतम ! उनका एक प्रदेशी स्कन्ध बनता है । उसके विभाग किये जाने पर दो, तीन यावत् दश विभाग होते हैं । दो विभाग होने पर-एक ओर एक परमाणु-पुद्गल और एक ओर नवप्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक अष्टप्रदेशी स्कन्ध होता है । इस प्रकार एक-एक का संचार (वृद्धि) करना चाहिए, यावत् दो पञ्चप्रदेशी स्कन्ध होते हैं । तीन विभाग होने पर-एक ओर पृथक्-पृथक् दो परमाणु-पुद्गल और एक अष्टप्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल, एक ओर द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक सप्तप्रदेशी स्कन्ध होता है। अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक त्रिप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक षट्प्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक चतुःप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक पंचप्रदेशी स्कन्ध होता है । (अथवा एक ओर दो द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर षट्प्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध, एक ओर एक त्रिप्रदेशी स्कन्ध और एक पंचप्रदेशी स्कन्ध होता है ।) अथवा एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर दो चतुष्प्रदेशी स्कन्ध होते हैं । अथवा एक ओर दो त्रिप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक चतुष्प्रदेशी स्कन्ध होता है ।

चार विभाग होने पर-एक ओर पृथक्-पृथक् तीन परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक सप्तप्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् दो परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक षट्प्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् दो परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक त्रिप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक पंचप्रदेशी स्कन्ध होता है अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् दो परमाणु-पुद्गल, और एक ओर दो चतुष्प्रदेशी स्कन्ध होते हैं । अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध, एक ओर एक त्रिप्रदेशी-स्कन्ध और एक ओर एक चतुःप्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल और एक ओर तीन त्रिप्रदेशी स्कन्ध होते हैं । अथवा एक ओर तीन द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक चतुःप्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर दो त्रिप्रदेशी स्कन्ध होते हैं । पाँच विभाग हों तो-एक ओर पृथक्-पृथक् चार परमाणु-पुद्गल और एक ओर षट्प्रदेशिक स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर तीन परमाणु-पुद्गल (पृथक्-पृथक्) तथा एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध, एक ओर एक पञ्चप्रदेशीस्कन्ध होता है। अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् तीन परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक त्रिप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक चतुःप्रदेशिक स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर दो पृथक्-पृथक् परमाणु-पुद्गल, एक ओर दो द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर चतुःप्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर दो परमाणु-पुद्गल (पृथक्-पृथक्) एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध और दो त्रिप्रदेशी स्कन्ध होते हैं । अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल, एक ओर तीन द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक त्रिप्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा पाँच द्विप्रदेशिक स्कन्ध होते हैं ।

छह विभाग किये जान पर-एक ओर पृथक्-पृथक् पाँच परमाणु-पुद्गल, एक ओर पंचप्रदेशी स्कन्ध होता है अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् चार परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक चतुः प्रदेशी

स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् चार परमाणु-पुद्गल और एक ओर दो त्रिप्रदेशी स्कन्ध होते हैं । अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् तीन परमाणु-पुद्गल, एक ओर दो द्विप्रदेशिक स्कन्ध और एक त्रिप्रदेशी स्कन्ध होता है अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् दो परमाणु-पुद्गल तथा एक ओर चार द्विप्रदेशी स्कन्ध होते हैं । सात विभाग से-एक ओर पृथक्-पृथक् छह परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक चतुःप्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् पाँच परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक त्रिप्रदेशी स्कन्ध होता है। अथवा एक और पृथक्-पृथक् चार परमाणु-पुद्गल और एक ओर तीन द्विप्रदेशी स्कन्ध होते हैं । आठ विभाग से-एक ओर पृथक्-पृथक् सात परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक त्रिप्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् छह परमाणु-पुद्गल और एक ओर दो द्विप्रदेशी स्कन्ध होते हैं । नौ विभाग से-एक ओर पृथक्-पृथक् आठ परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध होता है । दस विभाग किये जाने पर-पृथक्-पृथक् दस परमाणु-पुद्गल होते हैं ।

भगवन् ! संख्यात परमाणु-पुद्गलों के संयुक्त होने पर क्या बनता है ? गौतम ! वह संख्यातप्रदेशी स्कन्ध बनता है । यदि उसके विभाग किये जाएं तो दो तीन यावत् दस और संख्यात विभाग होते हैं । दो विभाग से-एक ओर एक परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक संख्येय प्रदेशिक स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक संख्यातप्रदेशी स्कन्ध होता है । इसी प्रकार यावत् एक ओर एक दशप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक संख्यातप्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा दो संख्यातप्रदेशी स्कन्ध होते हैं । तीन विभाग से-एक ओर दो पृथक्-पृथक् परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक संख्यातप्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक संख्यातप्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक त्रिप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक संख्यातप्रदेशी स्कन्ध होता है । इस प्रकार यावत्-अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक दशप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक संख्यात प्रदेशी-स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल और एक ओर दो संख्यातप्रदेशी स्कन्ध होते हैं । अथवा एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर दो संख्यातप्रदेशी स्कन्ध होते हैं । इस प्रकार यावत्-अथवा एक ओर एक दशप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर दो संख्यातप्रदेशी स्कन्ध होते हैं । अथवा तीन संख्यात-प्रदेशी स्कन्ध होते हैं ।

चार विभाग किये जाते हैं तो एक ओर पृथक्-पृथक् तीन परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक संख्यात-प्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् दो परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक संख्यात-प्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् दो परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक त्रिप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक संख्यात प्रदेशी स्कन्ध होता है । इस प्रकार यावत्-अथवा एक ओर दो पृथक्-पृथक् परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक दशप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक संख्यात-प्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् दो परमाणु-पुद्गल और एक ओर दो संख्यात प्रदेशी स्कन्ध होते हैं । अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक द्वि-प्रदेशी स्कन्ध और एक ओर दो संख्यात प्रदेशी स्कन्ध होते हैं । यावत्-अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक दशप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर दो संख्यात-प्रदेशी स्कन्ध होते हैं । अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल और एक ओर तीन संख्यात-प्रदेशी स्कन्ध होते हैं । इस प्रकार यावत्-एक ओर एक दशप्रदेशी स्कन्ध होता है और एक ओर तीन संख्यात प्रदेशी स्कन्ध होते हैं । अथवा चारों संख्यातप्रदेशी स्कन्ध होते हैं । इसी प्रकार पंचसंयोगी, यावत् नव-संयोगी विकल्प तक कहना । उसके दस विभाग किये जाने पर -एक ओर पृथक्-पृथक् नौ परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक संख्यात-प्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् आठ परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक संख्यात-प्रदेशी स्कन्ध होता है । इसी क्रम से यावत् एक ओर एक दशप्रदेशी स्कन्ध और एक और नौ संख्यातप्रदेशी स्कन्ध होते हैं, अथवा दस संख्यातप्रदेशी स्कन्ध होते हैं । यदि उसके संख्यात विभाग किया जाए तो पृथक्-पृथक् संख्यात परमाणु-पुद्गल होते हैं ।

भगवन् ! असंख्यात परमाणु-पुद्गल के इकट्ठे होने पर क्या होता है ? गौतम ! एक असंख्यातप्रदेशिक स्कन्ध होता है । उसके विभाग से दो, तीन यावत् दस विभाग भी होते हैं, संख्यात विभाग भी होते हैं, असंख्यात विभाग भी ।

दो विभाग किये जाने पर-एक ओर एक परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक असंख्यातप्रदेशी स्कन्ध होता है । यावत्-अथवा एक ओर एक दशप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक असंख्यातप्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर एक संख्यातप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक असंख्यातप्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा दो असंख्यातप्रदेशी स्कन्ध होते हैं । तीन विभाग से-एक ओर पृथक्-पृथक् दो परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक असंख्यात-प्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध होता है यावत्-अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल, एक ओर दशप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक असंख्यात-प्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक संख्यात-प्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक असंख्यातप्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल, और एक ओर दो असंख्यात-प्रदेशीस्कन्ध होते हैं । अथवा एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर दो असंख्यात-प्रदेशी स्कन्ध होते हैं । इस प्रकार यावत्-अथवा एक ओर एक संख्यात-प्रदेशी स्कन्ध और एक ओर दो असंख्यात-प्रदेशी स्कन्ध होते हैं । अथवा तीन असंख्यात-प्रदेशी स्कन्ध होते हैं ।

चार विभाग से-एक ओर तीन पृथक्-पृथक् परमाणु-पुद्गल और एक असंख्यात-प्रदेशी स्कन्ध होता है । इस प्रकार चतुःसंयोगी से यावत् दश संयोगी तक जानना । इन सबका कथन संख्यात-प्रदेशों के समान कहना । विशेष इतना है कि एक असंख्यात शब्द अधिक कहना चाहिए, यावत्-अथवा दश असंख्यात-प्रदेशी स्कन्ध होते हैं। संख्यात विभाग किये जाने पर-एक ओर पृथक्-पृथक् संख्यात परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक संख्यात प्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर संख्यात द्विप्रदेशिक स्कन्ध और एक ओर असंख्यातप्रदेशी स्कन्ध होता है। इस प्रकार यावत्-है । अथवा एक ओर संख्यात-प्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक असंख्यात-प्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा संख्यात असंख्यात-प्रदेशी स्कन्ध होते हैं । उसके असंख्यात विभाग किये जाने पर पृथक्-पृथक् असंख्यात परमाणु-पुद्गल होते हैं ।

भगवन् ! अनन्त परमाणु-पुद्गल संयुक्त होकर एकत्रित हों तो क्या होता है ? गौतम ! उनका एक अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध बन जाता है । यदि उसके विभाग किये जाएं तो दो तीन यावत् दस, संख्यात, असंख्यात और अनन्त विभाग होते हैं । दो विभाग किये जाने पर-एक और एक परमाणु-पुद्गल और दूसरी ओर अनन्त प्रदेशी स्कन्ध होता है । यावत् दो अनन्त प्रदेशी स्कन्ध होते हैं । तीन विभाग किये जान पर-एक ओर पृथक्-पृथक् दो परमाणु-पुद्गल, एक ओर द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक अनन्तप्रदेशी स्कन्ध होता है । यावत् अथवा एक ओर एक परमाणु पुद्गल, एक ओर एक असंख्यातप्रदेशी और एक ओर एक अनन्तप्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल, एक ओर दो अनन्तप्रदेशी स्कन्ध होते हैं । अथवा एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर दो अनन्तप्रदेशी स्कन्ध होते हैं । इस प्रकार यावत्-अथवा एक ओर एक दशप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर दो अनन्तप्रदेशी स्कन्ध होते हैं । अथवा एक ओर एक संख्यातप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर दो अनन्तप्रदेशी स्कन्ध होते हैं । अथवा एक ओर एक असंख्यातप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर दो अनन्तप्रदेशी स्कन्ध होते हैं । अथवा तीन अनन्तप्रदेशी स्कन्ध होते हैं ।

चार विभाग किये जाने पर-एक ओर पृथक्-पृथक् तीन परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक अनन्तप्रदेशी स्कन्ध होता है । इस प्रकार चतुष्कसंयोगी यावत् असंख्यात-संयोगी तक कहना । असंख्यात-प्रदेशी स्कन्ध के भंग अनुसार अनन्तप्रदेशी स्कन्ध के भंग कहने चाहिए । विशेष यह है कि एक 'अनन्त' शब्द अधिक कहना, यावत्-अथवा एक ओर संख्यात संख्यातप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक अनन्तप्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर संख्यात असंख्यातप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक अनन्तप्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा संख्यात अनन्तप्रदेशी स्कन्ध होते हैं । असंख्यात भाग किये जाते हैं तो एक ओर पृथक्-पृथक् असंख्यात परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक अनन्तप्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर असंख्यात द्विप्रदेशी स्कन्ध होते हैं और एक ओर एक अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध होता है, यावत्-एक ओर असंख्यात संख्यातप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक अनन्तप्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा एक ओर असंख्यात असंख्यातप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक अनन्तप्रदेशी स्कन्ध होता है । अथवा असंख्यात

अनन्तप्रदेशी स्कन्ध होते हैं । अनन्त विभाग किये जाने पर पृथक्-पृथक् अनन्त परमाणु-पुद्गल होते हैं ।

सूत्र - ५३९

भगवन् ! इन परमाणु-पुद्गलों के संघात और भेद के सम्बन्ध से होने वाले अनन्तानन्त पुद्गल-परिवर्त्त जानने योग्य हैं, (क्या) इसीलिए इनका कथन किया है ? हाँ, गौतम ! ये जानने योग्य हैं, इसीलिए ये कहे गए हैं ।

भगवन् ! पुद्गल-परिवर्त्त कितने प्रकार का है ? गौतम ! सात प्रकार का, यथा–औदारिक-पुद्गलपरिवर्त्त, वैक्रिय-पुद्गलपरिवर्त्त, तैजस-पुद्गलपरिवर्त्त, कार्मण-पुद्गलपरिवर्त्त, मनः-पुद्गलपरिवर्त्त, वचन-पुद्गलपरिवर्त्त और आनप्राण-पुद्गलपरिवर्त्त । भगवन् ! नैरयिकों के पुद्गलपरिवर्त्त कितने प्रकार के हैं ? गौतम ! सात प्रकार के, यथा–औदारिक-पुद्गलपरिवर्त्त, यावत् आनप्राण-पुद्गलपरिवर्त्त । इसी प्रकार वैमानिक तक कहना ।

भगवन् ! एक-एक जीव के अतीत औदारिक-पुद्गलपरिवर्त्त कितने हुए हैं ? गौतम ! अनन्त हुए हैं । भविष्यकालीन पुद्गलपरिवर्त्त कितने होंगे ? गौतम ! किसी के होंगे और किसी के नहीं होंगे । जिसके होंगे, उसके जघन्य एक, दो, तीन होंगे तथा उत्कृष्ट संख्यात, असंख्यात या अनन्त होंगे । इसी प्रकार यावत्–आन-प्राण तक सात आलापक कहना ।

भगवन् ! प्रत्येक नैरयिक के अतीत औदारिक-पुद्गलपरिवर्त्त कितने हैं ? गौतम ! (वे) अनन्त हैं । भगवन् भविष्यकालीन कितने होंगे ? गौतम ! किसी के होंगे, किसी के नहीं होंगे । जिसके होंगे, उसके जघन्य एक, दो (या) तीन होंगे और उत्कृष्ट संख्यात, असंख्यात या अनन्त होंगे । प्रत्येक असुरकुमार के अतीतकालिक कितने औदारिक-पुद्गलपरिवर्त्त हुए हैं ? गौतम ! पूर्ववत् ! इसी प्रकार यावत् वैमानिक (के अतीत पुद्गलपरिवर्त्त) तक (कहना) ।

भगवन् ! प्रत्येक नारक के भूतकालीन वैक्रिय-पुद्गलपरिवर्त्त कितने हुए हैं ? गौतम ! अनन्त हुए हैं । औदारिक-पुद्गलपरिवर्त्त के समान वैक्रिय-पुद्गलपरिवर्त्त के विषय में कहना । इसी प्रकार यावत् प्रत्येक वैमानिक के आनप्राण-पुद्गलपरिवर्त्त तक कहना । इस प्रकार वैमानिक तक प्रत्येक जीव की अपेक्षा से ये सात दण्डक होते हैं

भगवन् ! (समुच्चय) नैरयिकों के अतीतकालीन औदारिक-पुद्गलपरिवर्त्त कितने हुए हैं ? गौतम ! अनन्त हुए हैं । भगवन् ! (समुच्चय) नैरयिक जीवों के भविष्यत् कालीन पुद्गलपरिवर्त्त कितने होंगे ? गौतम ! अनन्त होंगे। इसी प्रकार वैमानिकों तक कथन करना । इसी प्रकार वैक्रिय-पुद्गलपरिवर्त्त के विषय में कहना । इसी प्रकार यावत् आन-प्राण-पुद्गलपरिवर्त्त तक । इस प्रकार पृथक्-पृथक् सातों पुद्गलपरिवर्त्तों के विषय में सात आलापक समुच्चय रूप से चौबीस दण्डकवर्ती जीवों के विषय कहना ।

भगवन् ! प्रत्येक नैरयिक जीव के, नैरयिक अवस्था में अतीत औदारिक-पुद्गलपरिवर्त्त कितने हुए हैं ? गौतम एक भी नहीं हुआ । भगवन् ! भविष्यकालीन कितने होंगे ? गौतम ! एक भी नहीं । भगवन् ! प्रत्येक नैरयिक जीव के, असुरकुमाररूप में अतीत औदारिक-पुद्गलपरिवर्त्त कितने हुए ? गौतम ! इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमार तक कहना

भगवन् ! प्रत्येक नैरयिक जीव के पृथ्वीकाय के रूप में अतीत में औदारिक-पुद्गलपरिवर्त्त कितने हुए ? गौतम ! वे अनन्त हुए हैं । भगवन् ! भविष्य में कितने होंगे ? किसी के होंगे, और किसी के नहीं होंगे । जिसके होंगे उसके जघन्य एक, दो या तीन और उत्कृष्ट संख्यात, असंख्यात अथवा अनन्त होंगे । इसी प्रकार यावत् मनुष्य भव तक कहना । असुरकुमारपन के समान वाणव्यन्तरपन, ज्योतिष्कपन तथा वैमानिकपन में कहना ।

भगवन् ! प्रत्येक असुरकुमार के नैरयिक भव में अतीत औदारिक-पुद्गलपरिवर्त्त कितने हुए हैं ? गौतम ! (प्रत्येक) नैरयिक जीव के समान असुरकुमार के विषय में यावत् वैमानिक भव-पर्यन्त कहना । इसी प्रकार स्तनित-कुमार तक कहना । इसी प्रकार प्रत्येक पृथ्वीकाय के विषय में भी वैमानिक पर्यन्त सबका एक आलापक कहना ।

भगवन् ! प्रत्यके नैरयिक जीव के नैरयिक भव में अतीतकालीन वैक्रिय-पुद्गलपरिवर्त्त कितने हुए हैं ? गौतम अनन्त हुए हैं । भगवन् ! भविष्यकालीन कितने होंगे ? गौतम ! किसी के होंगे और किसी के नहीं होंगे । एक से लेकर उत्तरोत्तर उत्कृष्ट संख्यात, असंख्यात अथव यावत् अनन्त होंगे । इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमार तक कहना ।

(भगवन् ! प्रत्येक नैरयिक जीव के) पृथ्वीकायिक भव में (अतीत में वैक्रिय-पुद्गलपरिवर्त्त) कितने हुए ?

(गौतम !) एक भी नहीं हुआ । (भगवन् !) भविष्यत् काल में (ये) कितने होंगे ? गौतम ! एक भी नहीं होगा । इस प्रकार जहाँ वैक्रियशरीर है, वहाँ एक से लेकर उत्तरोत्तर (अनन्त तक), (वैक्रिय-पुद्गलपरिवर्त्त जानना चाहिए ।) जहाँ वैक्रियशरीर नहीं है, वहाँ (प्रत्येक नैरयिक के) पृथ्वीकायभव में (वैक्रिय-पुद्गलपरिवर्त्त के विषय में) कहा, उसी प्रकार यावत् (प्रत्येक) वैमानिक जीव के वैमानिक भव पर्यन्त कहना चाहिए ।

तैजस-पुद्गलपरिवर्त्त और कार्मण-पुद्गलपरिवर्त्त सर्वत्र एक से लेकर उत्तरोत्तर अनन्त तक कहने चाहिए। मनः-पुद्गलपरिवर्त्त समस्त पंचेन्द्रिय जीवों में एक से लेकर उत्तरोत्तर यावत् अनन्त तक कहने चाहिए । किन्तु विकलेन्द्रियों में मनः-पुद्गलपरिवर्त्त नहीं होता । इसी प्रकार वचन-पुद्गलपरिवर्त्त के सम्बन्ध में भी कहना चाहिए । विशेष इतना ही है कि वह (वचन-पुद्गलपरिवर्त्त) एकेन्द्रिय जीवों में नहीं होता । आन-प्राण-पुद्गलपरिवर्त्त भी सर्वत्र एक से लेकर अनन्त तक जानना चाहिए । यावत् वैमानिक के वैमानिक भव तक कहना ।

भगवन् ! अनेक नैरयिक जीवों के नैरयिक भव में अतीतकालिक औदारिक-पुद्गलपरिवर्त्त कितने हुए हैं? गौतम ! एक भी नहीं हुआ । भगवन् ! भविष्य में कितने होंगे ? गौतम ! भविष्य में एक भी नहीं होगा । इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमार भव तक ।

भगवन् ! अनेक नैरयिक जीवों के पृथ्वीकायिकपन में (अतीतकालिक औदारिक-पुद्गलपरिवर्त्त) कितने हुए हैं ? गौतम ! अनन्त हुए हैं । भगवन् ! भविष्य में (औदारिक-पुद्गलपरिवर्त्त) कितने होंगे ? गौतम ! अनन्त होंगे ।

अनेक नैरयिकों के पृथ्वीकायिकपन में अतीत-अनागत औदारिक-पुद्गलपरिवर्त्त के समान मनुष्यभव तक कहना । अनेक नैरयिकों के नैरयिकभव में अतीत-अनागत औदारिक-पुद्गलपरिवर्त्त के समान उनके वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिक देव भव में भी कहना । उसी प्रकार अनेक वैमानिकों के वैमानिक भव तक कहना ।

जिस प्रकार औदारिक-पुद्गलपरिवर्त्त के विषय में कहा, उसी प्रकार शेष सातों पुद्गलपरिवर्त्तों का कथन कहना चाहिए । जहाँ जो पुद्गलपरिवर्त्त हो, वहाँ उसके अतीत और भविष्यकालीन पुद्गलपरिवर्त्त अनन्त-अनन्त कहने चाहिए । जहाँ नहीं हो, वहाँ अतीत और अनागत दोनों नहीं कहने चाहिए । यावत्-'भगवन् ! अनेक वैमानिकों के वैमानिक भव में कितने आन-प्राण-पुद्गलपरिवर्त्त हुए ?' (उत्तर-) गौतम ! अनन्त हुए हैं । 'भगवन्! आगे कितने होंगे ?' 'गौतम ! अनन्त होंगे ।' -यहाँ तक कहना चाहिए ।

सूत्र - ५४०

भगवन् ! यह औदारिक-पुद्गलपरिवर्त्त, औदारिक-पुद्गलपरिवर्त्त किसलिए कहा जाता है ? गौतम ! औदारिकशरीर में रहते हुए जीव ने औदारिकशरीर योग्य द्रव्यों को औदारिकशरीर के रूप में ग्रहण किए हैं, बद्ध किए हैं, स्पृष्ट किए हैं; उन्हें (पूर्वपरिणामापेक्षया परिणामान्तर) किया है; उन्हें प्रस्थापित किया है; स्थापित किए हैं, जीव के साथ सर्वथा संलग्न किए हैं; जीव ने रसानुभूति का आश्रय लेकर सबको समाप्त किया है । (जीव ने रसग्रहण द्वारा सभी अवयवों से उन्हें) पर्याप्त कर लिए हैं । परिणामान्तर प्राप्त कराए हैं, निर्जीर्ण किए हैं, पृथक् किए हैं, अपने प्रदेशों से परित्यक्त किए हैं । हे गौतम ! इसी कारण से औदारिक-पुद्गलपरिवर्त्त औदारिक-पुद्गल-परिवर्त्त कहलाता है । इसी प्रकार वैक्रिय-पुद्गलपरिवर्त्त के विषय में भी कहना । इतना विशेष है कि जीव ने वैक्रियशरीर में रहते हुए वैक्रियशरीर योग्य द्रव्यों को वैक्रियशरीर के रूप में ग्रहण किए हैं, इत्यादि शेष सब कथन पूर्ववत् । इसी प्रकार यावत् आन-प्राण-पुद्गलपरिवर्त्त तक कहना चाहिए । विशेष यह है कि आन-प्राण-योग्य समस्त द्रव्यों को आन-प्राण रूप से जीव ने ग्रहण किए हैं, इत्यादि (सब कथन करना चाहिए) । शेष पूर्ववत् ।

भगवन् ! औदारिक-पुद्गलपरिवर्त्त कितने काल में निर्वर्तित-निष्पन्न होता है ? गौतम ! अनन्त उत्सर्पिणी और अवसर्पिणीकाल में निष्पन्न होता है । इसी प्रकार वैक्रिय-पुद्गलपरिवर्त्त तथा यावत् आन-प्राण-पुद्गलपरिवर्त्त (का निष्पत्तिकाल जानना चाहिए) ।

भगवन् ! औदारिक-पुद्गलपरिवर्त्त-निर्वर्त्तना काल, यावत् आन-प्राण-पुद्गलपरिवर्त्त-निर्वर्त्तनाकाल, इन (सातों) में से कौन-सा काल, किस काल से अल्प यावत् विशेषाधिक है ? गौतम ! सबसे थोड़ा कार्मण-पुद्गल-परिवर्त्त

का निर्वर्त्तना काल है । उससे तैजस-पुद्गलपरिवर्त्त-निर्वर्त्तनाकाल अनन्तगुणा है । उससे औदारिक-पुद्गल परिवर्त्त-निर्वर्त्तनाकाल अनन्तगुणा है और उससे आन-प्राण-पुद्गलपरिवर्त्त-निर्वर्त्तनाकाल अनन्तगुणा है । उससे मनः-पुद्गलपरिवर्त्त-निर्वर्त्तनाकाल अनन्तगुणा है । उससे वचन-पुद्गलपरिवर्त्त-निर्वर्त्तनाकाल अनन्तगुणा है और उससे वैक्रिय-पुद्गलपरिवर्त्त का निर्वर्त्तनाकाल अनन्तगुणा है ।

सूत्र - ५४१

भगवन् ! औदारिक-पुद्गलपरिवर्त्त (से लेकर), आन-प्राण-पुद्गलपरिवर्त्त में कौन पुद्गलपरिवर्त्त किससे अल्प यावत् विशेषाधिक है ? गौतम ! सबसे थोड़े वैक्रिय-पुद्गलपरिवर्त्त हैं । उनसे वचन-पुद्गलपरिवर्त्त अनन्त-गुणे होते हैं, उनसे मनः-पुद्गलपरिवर्त्त अनन्तगुणे हैं, उनसे आन-प्राण-पुद्गलपरिवर्त्त अनन्तगुणे हैं । उनसे औदारिक-पुद्गलपरिवर्त्त अनन्तगुणे हैं, उनसे तैजस-पुद्गलपरिवर्त्त अनन्तगुणे हैं और उनसे भी कार्मण-पुद्गल-परिवर्त्त अनन्तगुणे हैं । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१२ – उद्देशक-५

सूत्र - ५४२

राजगृह नगर में यावत् गौतमस्वामी ने इस प्रकार पूछा–भगवन् ! प्राणातिपात, मृषावाद, अदत्तादान, मैथुन और परिग्रह; ये कितने वर्ण, कितने गन्ध, कितने रस और स्पर्श वाले कहे हैं ? गौतम ! (ये) पाँच वर्ण, दो गन्ध, पाँच रस और चार स्पर्श वाले कहे हैं ।

भगवन् ! क्रोध, कोप, रोष, द्वेष, अक्षमा, संज्वलन, कलह, चाण्डिक्य, भण्डन और विवाद–ये कितने वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श वाले कहे हैं ? गौतम ! ये (सब) पाँच वर्ण, पाँच रस, दो गन्ध और चार स्पर्श वाले कहे हैं । भगवन् मान, मद, सर्प, स्तम्भ, गर्व, अत्युत्क्रोश, परपरिवाद, उत्कर्ष, अपकर्ष, उन्नत, उन्नाम और दुर्नाम–ये कितने वर्ण, कितने गन्ध, कितने रस और कितने स्पर्श वाले कहे हैं ? गौतम ! पूर्ववत् । भगवन् ! माया, उपधि, निकृति, वलय, गहन, नूम, कल्क, कुरूपा, जिह्मता, किल्बिष आदरण, गूहनता, वञ्चनता, प्रतिकुञ्चनता, और सातियोग–इन (सब) में कितने वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श हैं ? गौतम ! पूर्ववत् । भगवन् ! लोभ, ईच्छा, मूर्च्छा, कांक्षा, गृद्धि, तृष्णा, भिध्या, अभिध्या, आशंसनता, प्रार्थनता, लालपनता, कामाशा, भोगाशा, जीविताशा, मरणाशा और नन्दिराग, ये कितने वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श वाले हैं ? गौतम ! क्रोध के समान जानना ।

भगवन् ! प्रेम-राग, द्वेष, कलह, यावत् मिथ्यादर्शन-शल्य, इन (सब पापस्थानों) में कितने वर्ण आदि हैं ? क्रोध के समान इनमें भी चार स्पर्श हैं, यहाँ तक कहना ।

सूत्र - ५४३

भगवन् ! प्राणातिपात-विरमण यावत् परिग्रह-विरमण तथा क्रोधविवेक यावत् मिथ्यादर्शनशल्यविवेक, इन सबमें कितने वर्ण, कितने गन्ध, कितने रस और कितने स्पर्श कहे हैं ? गौतम ! (ये सभी) वर्णरहित, गन्धरहित, रसरहित और स्पर्शरहित कहे हैं । भगवन् ! औत्पत्तिकी, वैनयिकी, कार्मिकी और पारिणामिकी बुद्धि कितने वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श वाली है ? गौतम ! पूर्ववत् जानना । भगवन् ! अवग्रह, ईहा, अवाय और धारणा में कितने वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श कहे हैं ? गौतम ! (ये चारों) वर्ण यावत् स्पर्श से रहित कहे हैं । भगवन् ! उत्थान, कर्म, बल, वीर्य और पुरुषकार-पराक्रम, इन सबमें कितने वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श हैं ? गौतम ! ये सभी पूर्ववत् वर्णादि यावत् स्पर्श से रहित कहे हैं ।

भगवन् ! सप्तम अवकाशान्तर कितने वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श वाला है ? गौतम ! वह वर्ण यावत् स्पर्श से रहित है । भगवन् ! सप्तम तनुवात कितने वर्णादि वाला है ? गौतम ! इसका कथन प्राणातिपात के समान करना । विशेष यह है कि यह आठ स्पर्श वाला है । सप्तम तनुवात के समान सप्तम घनवात, घनोदधि एवं सप्तम पृथ्वी के विषय में कहना । छठा अवकाशान्तर वर्णादि रहित है । छठा तनुवात, घनवात, घनोदधि और छठी पृथ्वी, ये सब आठ स्पर्श वाले हैं । सातवीं पृथ्वी की वक्तव्यता समान प्रथम पृथ्वी तक जानना । जम्बूद्वीप से लेकर स्वयम्भूरमण समुद्र

तक, सौधर्मकल्प से ईषत्प्राग्भारा पृथ्वी तक, नैरयिकावास से लेकर वैमानिकवास तक सब आठ स्पर्श वाले हैं।

भगवन् ! नैरयिकों में कितने वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श कहे हैं ? गौतम ! वैक्रिय और तैजस पुद्गलों की अपेक्षा से उनमें पाँच वर्ण, पाँच रस, दो गन्ध और आठ स्पर्श कहे हैं। कार्मण पुद्गलों की अपेक्षा से पाँच वर्ण, पाँच रस, दो गन्ध और चार स्पर्श कहे हैं। जीव की अपेक्षा से वे वर्णरहित यावत् स्पर्शरहित कहे हैं। इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमारों तक कहना चाहिए। भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीव कितने वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श वाले हैं ? गौतम ! औदारिक और तैजस पुद्गलों की अपेक्षा पाँच वर्ण, दो गन्ध, पाँच रस और आठ स्पर्श वाले कहे हैं। कार्मण की अपेक्षा और जीव की अपेक्षा, पूर्ववत् जानना चाहिए। इसी प्रकार चतुरिन्द्रिय तक जानना चाहिए। परन्तु इतनी विशेषता है कि वायुकायिक, औदारिक, वैक्रिय और तैजस, पुद्गलों की अपेक्षा पाँच वर्ण, पाँच रस, दो गन्ध और आठ स्पर्श वाले कहे हैं। शेष नैरयिकों के समान जानना चाहिए। पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चयोनिक जीवों का कथन भी वायुकायिकों के समान जानना चाहिए। भगवन् ! मनुष्य कितने वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श वाले हैं ? गौतम ! औदारिक, वैक्रिय, आहारक और तैजस पुद्गलों की अपेक्षा (मनुष्य) पाँच वर्ण, पाँच रस, दो गन्ध और आठ स्पर्श वाले कहे हैं। कार्मणपुद्गल और जीव की अपेक्षा से नैरयिकों के समान (कथन करना चाहिए)। वाण-व्यन्तर, ज्योतिषी और वैमानिकों के विषय में भी नैरयिकों के समान कथन करना चाहिए।

धर्मास्तिकाय यावत् पुद्गलास्तिकाय वर्णादि से रहित हैं। विशेष यह है कि पुद्गलास्तिकाय में पाँच वर्ण, पाँच रस, दो गन्ध और आठ स्पर्श कहे हैं। ज्ञानावरणीय (से लेकर) अन्तराय कर्म तक आठों कर्म, पाँच वर्ण, दो गन्ध, पाँच रस और चार स्पर्श वाले कहे हैं। भगवन् ! कृष्णलेश्या में कितने वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श कहे हैं ? गौतम ! द्रव्यलेश्या की अपेक्षा से उसमे पाँच वर्ण, पाँच रस, दो गन्ध और आठ स्पर्श कहे हैं और भावलेश्या की अपेक्षा से वह वर्णादि रहित हैं। इसी प्रकार शुक्ललेश्या तक जानना चाहिए।

सम्यग्दृष्टि, मिथ्यादृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि, तथा चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन और केवलदर्शन, आभिनिबोधिकज्ञान से लेकर विभंगज्ञान (तक एवं) आहारसंज्ञा यावत् परिग्रहसंज्ञा, ये सब वर्णरहित, गन्धरहित, रसरहित और स्पर्शरहित हैं। औदारिकशरीर यावत् तैजसशरीर, ये अष्टस्पर्श वाले हैं। कार्मणशरीर, मनोयोग और वचनयोग, ये चार स्पर्श वाले हैं। काययोग अष्टस्पर्श वाला है। साकार और अनाकारोपयोग, वर्णादि से रहित है।

भगवन् ! सभी द्रव्य कितने वर्णादि वाले हैं ? गौतम ! सर्वद्रव्यों में से कितने ही पाँच वर्ण यावत् आठ स्पर्श वाले हैं। कितने ही पाँच वर्ण यावत् चार स्पर्श वाले हैं। सर्वद्रव्यों में से कुछ (द्रव्य) एक वर्ण, एक गन्ध, एक रस और दो स्पर्श वाले हैं। सर्वद्रव्यों में से कई वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श से रहित हैं। इसी प्रकार सभी प्रदेश और समस्त पर्यायों के विषय में भी उपर्युक्त विकल्पों का कथन करना। अतीतकाल (अद्धा) वर्ण रहित यावत् स्पर्श-रहित कहा गया है। इसी प्रकार अनागतकाल और समस्त काल है।

सूत्र - ५४४

भगवन् ! गर्भ में उत्पन्न होता हुआ जीव, कितने वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श वाला होता है ? गौतम ! पाँच वर्ण, दो गन्ध, पाँच रस और आठ स्पर्श वाले परिणाम से परिणत होता है।

सूत्र - ५४५

भगवन् ! क्या जीव कर्मों से ही मनुष्य-तिर्यञ्च आदि विविध रूपों को प्राप्त होता है, कर्मों के बिना नहीं ? तथा क्या जगत् कर्मों से विविध रूपों को प्राप्त होता है, विना कर्मों के प्राप्त नहीं होता ? हाँ, गौतम ! कर्म से जीव और जगत विविध रूपों को प्राप्त होता है, किन्तु कर्म के विना प्राप्त नहीं होते। 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है।'

शतक-१२ – उद्देशक-६

सूत्र - ५४६

राजगृह नगर में यावत् गौतम स्वामी ने प्रश्न किया-भगवन् ! बहुत से मनुष्य परस्पर इस प्रकार कहते हैं, यावत् इस प्रकार प्ररूपणा करते हैं कि निश्चित ही राहु चन्द्रमा को ग्रस लेता है, तो हे भगवन् ! क्या यह ऐसा ही है?

गौतम ! यह जो बहुत-से लोग परस्पर इस प्रकार कहते हैं, वे मिथ्या कहते हैं । मैं इस प्रकार कहता हूँ, यावत् प्ररूपणा करता हूँ-'यह निश्चय है कि राहु महर्द्धिक यावत् महासौख्यसम्पन्न उत्तम वस्त्रधारी, श्रेष्ठ माला का धारक, उत्कृष्ट सुगन्धधर और उत्तम आभूषणधारी देव है ।' राहु देव के नौ नाम कहे हैं-(१) शृंगाटक, (२) जटिलक, (३) क्षत्रक, (४) खर, (५) दर्दुर, (६) मकर, (७) मत्स्य, (८) कच्छप और (९) कृष्णसर्प ।

राहुदेव के विमान पाँच वर्ण के कहे हैं-काला, नीला, लाल, पीला और श्वेत । इनमें से राहु का जो काला विमान है, वह खंजन के समान कान्ति वाला है । राहुदेव का जो नीला विमान है, वह हरी तुम्बी के समान कान्ति वाला है । राहु का जो लोहित विमान है, वह मजीठ के समान प्रभा वाला है । राहु का जो पीला विमान है, वह हल्दी के समान वर्ण वाला है और राहु का जो शुक्ल विमान है, वह भस्मराशि के समान कान्ति वाला है । जब गमन -आगमन करता हुआ, विकुर्वणा करता हुआ तथा कामक्रीड़ा करता हुआ राहुदेव, पूर्व में स्थित चन्द्रमा की ज्योत्सना को ढँककर पश्चिम की ओर चला जाता है; तब चन्द्रमा पूर्व में दिखाई देता है और पश्चिम में राहु दिखाई देता है । जब आता हुआ या जाता हुआ, अथवा विक्रिया करता हुआ, या कामक्रीड़ा करता हुआ राहु, चन्द्रमा की दीप्ति को पश्चिमदिशा में आच्छादित करके पूर्वदिशा की ओर चला जाता है; तब चन्द्रमा पश्चिम में दिखाई देता है और राहु पूर्व में दिखाई देता है । इसी प्रकार दक्षिण और उत्तर के दो आलापक हैं । इसी प्रकार ईशानकोण और नैऋत्यकोण के और इसी प्रकार आग्नेयकोण एवं वायव्यकोण के दो आलापक हैं । इसी प्रकार जब आता हुआ या जाता हुआ, अथवा विक्रिया करता हुआ या कामक्रीड़ा करता हुआ राहु, बार-बार चन्द्रमा की ज्योत्सना को आवृत्त करता रहता है, तब मनुष्य कहते हैं-'राहु ने चन्द्रमा को ऐसे ग्रस लिया, राहु इस प्रकार चन्द्रमा को ग्रस रहा है ।' जब आता हुआ या यावत् कामक्रीड़ा करता हुआ राहु चन्द्रद्युति को आच्छादित करके पास से होकर नीकलता है, तब मनुष्य कहते हैं-'चन्द्रमा ने राहु की कुक्षि का भेदन कर डाला, इस प्रकार चन्द्रमा ने राहु की कुक्षि का भेदन कर डाला ।' जब आता हुआ या यावत् कामक्रीड़ा करता हुआ राहु, चन्द्रमा की प्रभा को आवृत्त करके वापस लौटता है, तब मनुष्य कहते हैं-राहु ने चन्द्रमा का वमन कर दिया, राहु ने चन्द्रमा का वमन कर दिया । जब आता हुआ या यावत् कामक्रीड़ा करता हुआ राहु, चन्द्रमा की दीप्ति को नीचे से, दिशाओं एवं विदिशाओं से ढँक कर रहता है, तब मनुष्यलोक में मनुष्य कहते हैं-'राहु ने इसी प्रकार चन्द्रमा को ग्रसित कर लिया है ।'

भगवन् ! राहु कितने प्रकार का है ? गौतम ! दो प्रकार का, यथा-ध्रुवराहु और पर्वराहु । उनमें से जो ध्रुव-राहु है, वह कृष्णपक्ष की प्रतिपदा से लेकर प्रतिदिन अपने पन्द्रहवें भाग से, चन्द्रबिम्ब के पन्द्रहवे भाग को बार-बार ढँकता रहता है, यथा-प्रथमा को (चन्द्रमा) के प्रथम भाग को ढँकता है, द्वीतिया को दूसरे भाग को ढँकता है, इसी प्रकार यावत् अमावास्या को पन्द्रहवें भाग को ढँकता है । कृष्णपक्ष के अन्तिम समय में चन्द्रमा रक्त (सर्वथा आवृत्त) हो जाता है, और शेष समय में चन्द्रमा रक्त और विरक्त रहता है । इसी कारण शुक्लपक्ष का प्रतिपदा से लेकर यावत् पूर्णिमा तक प्रतिदिन पन्द्रहवाँ भाग दिखाई देता रहता है, शुक्लपक्ष के अन्तिम समय में चन्द्रमा पूर्णतः अनाच्छादित हो जाता है, और शेष समय में वह अंशतः अनाच्छादित और अंशतः अनाच्छादित रहता है । इनमें से जो पुर्वराहु है, वह जघन्यतः छह मास में चन्द्र और सूर्य को आवृत्त करता है और उत्कृष्ट बयालीस मास में चन्द्र को और अड़तालीस वर्ष में सूर्य को ढँकता है ।

सूत्र - ५४७, ५४८

भगवन् ! चन्द्रमा को 'चन्द्र शशी है', ऐसा क्यों कहा जाता है ? गौतम ! ज्योतिषियों के इन्द्र, ज्योतिषियों के राजा चन्द्र का विमान मृगांक है, उसमें कान्त देव तथा कान्ता देवियाँ हैं और आसन, शयन, स्तम्भ, भाण्ड, पात्र आदि उपकरण (भी) कान्त हैं । स्वयं ज्योतिष्कों का इन्द्र, ज्योतिष्कों का राजा चन्द्र भी सौम्य, कान्त, सुभग, प्रिय-दर्शन और सुरूप है, इसलिए, हे गौतम ! चन्द्रमा को शशी कहा जाता है ।

भगवन् ! सूर्य को-'सूर्य आदित्य है', ऐसा क्यों कहा जाता है ? गौतम ! समय अथवा आवलिका यावत् अथवा अवसर्पिणी या उत्सर्पिणी (इत्यादि काल) की आदि सूर्य से होती है, इसलिए इसे आदित्य कहते हैं ।

सूत्र - ५४९

भगवन् ! ज्योतिष्कों के इन्द्र, ज्योतिष्कों के राजा चन्द्र की कितनी अग्रमहिषियाँ हैं ? गौतम ! दशवें शतक अनुसार राजधानी में सिंहासन पर मैथुन-निमित्तक भोग भोगने में समर्थ नहीं है, यहाँ तक कहना । सूर्य के सम्बन्ध में भी इसी प्रकार कहना । भगवन् ! ज्योतिष्कों के इन्द्र, ज्योतिष्कों के राजा चन्द्र और सूर्य किस प्रकार के काम-भोगों का उपभोग करते हुए विचरते हैं ? गौतम ! जिस प्रकार प्रथम यौवन वय में किसी बलिष्ठ पुरुष ने, किसी यौवन-अवस्था में प्रविष्ट होती हुई किसी बलिष्ठ भार्या के साथ नया ही विवाह किया, और अर्थोपार्जन करने की खोज में सोलह वर्ष तक विदेश में रहा । वहाँ से धन प्राप्त करके अपना कार्य सम्पन्न कर वह निर्विघ्नरूप से पुनः लौटकर शीघ्र अपने घर आया । वहाँ उसने स्नान किया, बलिकर्म किया, कौतुक और मंगलरूप प्रायश्चित्त किया । तत्पश्चात् सभी आभूषणों से विभूषित होकर मनोज्ञ स्थालीपाक-विशुद्ध अठारह प्रकार के व्यंजनों से युक्त भोजन करे । फिर महाबल के प्रकरण में वर्णित वासगृह के समान शयनगृह में शृंगारगृहरूप सुन्दर वेष वाली, यावत् ललितकलायुक्त, अनुरक्त, अत्यन्त रागयुक्त और मनोऽनुकूल पत्नी के साथ वह इष्ट शब्द रूप, यावत् स्पर्श (आदि), पाँच प्रकार के मनुष्य-सम्बन्धी कामभोग का उपभोग करता हुआ विचरता है ।

हे गौतम ! वह पुरुष वेदोपशमन के समय किस प्रकार के साता-सौख्य का अनुभव करता है ? आयुष्यमन् श्रमण भगवन् ! वह पुरुष उदार (सुख का अनुभव करता है) । हे गौतम ! उस पुरुष के इन कामभोगों से वाण-व्यन्तरदेवों के कामभोग अनन्तगुण-विशिष्टतर होते हैं । उनसे असुरेन्द्र के सिवाय शेष भवनवासी देवों के कामभोग अनन्तगुण-विशिष्टतर होते हैं । उनसे असुरकुमार देवों के कामभोग अनन्तगुण-विशिष्टतर होते हैं । उनसे ग्रहगण, नक्षत्र और तारारूप ज्योतिष्क देवों के कामभोग अनन्तगुण-विशिष्टतर होते हैं । उनसे ज्योतिष्कों के इन्द्र, ज्योतिष्कों के राजा चन्द्रमा और सूर्य के कामभोग अनन्तगुण विशिष्टतर होते हैं । हे गौतम ! ज्योतिष्केन्द्र ज्योति-ष्कराज चन्द्रमा और सूर्य इस प्रकार के कामभोगों का अनुभव करते हुए विचरते हैं । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है

शतक-१२ – उद्देशक-७

सूत्र - ५५०

उस काल और उस समय में यावत् गौतम स्वामी ने श्रमण भगवान महावीर से प्रश्न किया-भगवन् ! लोक कितना बड़ा है ? गौतम ! लोक महातिमहान है । पूर्वदिशा में असंख्येय कोटा-कोटि योजन है । इसी प्रकार दक्षिण, पश्चिम, उत्तर एवं ऊर्ध्व तथा अधोदिशा में भी असंख्येय कोटा-कोटि योजन-आयाम-विष्कम्भ वाला है ।

भगवन् ! इतने बड़े लोक में क्या कोई परमाणु-पुद्गल जितना भी आकाशप्रदेश ऐसा है, जहाँ पर इस जीव ने जन्म-मरण न किया हो ? गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है । भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहा जाता है ? गौतम ! जैसे कोई पुरुष सौ बकरियों के लिए एक बड़ा बकरियों का बाड़ा बनाए । उसमें वह एक, दो या तीन और अधिक से अधिक एक हजार बकरियों को रखे । वहाँ उनके लिए घास-चारा चरने की प्रचूर भूमि और प्रचूर पानी हो । यदि वे बकरियाँ वहाँ कम से कम एक, दो या तीन दिन और अधिक से अधिक छह महीने तक रहे, तो हे गौतम ! क्या उस अजाव्रज का कोई भी परमाणु-पुद्गलमात्र प्रदेश ऐसा रह सकता है, जो उन बकरियों के मल, मूत्र, श्लेष्म, नाक के मैल, वमन, पित्त, शुक्र, रुधिर, चर्म, रोम, सींग, खुर और नखों से अस्पृष्ट न रहा हो ? यह अर्थ समर्थ नहीं है । हे गौतम ! कदाचित् उस बाड़े में कोई एक परमाणु-पुद्गलमात्र प्रदेश ऐसा भी रह सकता है, जो उन बकरियों के मल-मूत्र यावत् नखों से स्पृष्ट न हुआ हो, किन्तु इतने बड़े इस लोक में, लोक के शाश्वतभाव की दृष्टि से, संसार के अनादि होने के कारण, जीव की नित्यता, कर्मबहुलता तथा जन्म-मरण की बहुलता की अपेक्षा से कोई परमाणु-पुद्गल-मात्र प्रदेश भी ऐसा नहीं है जहाँ इस जीव ने जन्म-मरण नहीं किया हो । हे गौतम ! इसी कारण उपर्युक्त कथन किया गया है कि यावत् जन्म-मरण न किया हो ।

सूत्र - ५५१

भगवन् ! पृथ्वीयाँ कितनी हैं ? गौतम ! सात हैं । प्रथम शतक के पञ्चम उद्देशक अनुसार (यहाँ भी) नरकादि

के आवासों को कहना । यावत् अनुत्तर-विमान यावत् अपराजित और सर्वार्थसिद्ध तक इसी प्रकार कहना।

भगवन् ! क्या यह जीव, इस रत्नप्रभापृथ्वी के तीस लाख नरकावासों में से प्रत्येक नरकावास में पृथ्वी-कायिकरूप से यावत् वनस्पतिकायिक रूप से, नरक रूप में, पहले उत्पन्न हुआ है ? हाँ, गौतम ! अनेक बार अथवा अनन्त बार (उत्पन्न हो चूका है) ।

भगवन् ! क्या सभी जीव, इस रत्नप्रभापृथ्वी के तीस लाख नरकावासों में से प्रत्येक नरकावास में पृथ्वी-कायिकरूप में यावत् वनस्पतिकायिकरूप में, नरकपन और नैरयिकपन, पहले उत्पन्न हो चूके हैं ? (हाँ, गौतम !) उसी प्रकार अनेक बार अथवा अनन्त बार पहले उत्पन्न हुए हैं । भगवन् ! यह जीव शर्कराप्रभापृथ्वी के पच्चीस लाख नरकावासों में से प्रत्येक नरकावास में, पृथ्वीकायिक रूप में यावत् वनस्पतिकायिक रूप में, यावत् पहले उत्पन्न हो चूका है ? गौतम ! रत्नप्रभापृथ्वी-के समान दो आलापक कहने चाहिए । इसी प्रकार यावत् धूमप्रभा-पृथ्वी तक जानना । भगवन् ! क्या यह जीव तमःप्रभापृथ्वी के पाँच कम एक लाख नरकावासों में से प्रत्येक नरकावास में पूर्ववत् उत्पन्न हो चूका है ? (हाँ, गौतम !) पूर्ववत् जानना । भगवन् ! यह जीव अधःसप्तमपृथ्वी के पाँच अनुत्तर और महातिमहान् महानरकावासों में क्या पूर्ववत् उत्पन्न हो चूके हैं ? (हाँ, गौतम !) शेष सर्व कथन पूर्ववत् जानना ।

भगवन् ! क्या यह जीव, असुरकुमारों के चौंसठ लाख असुरकुमारवासों में से प्रत्येक असुरकुमारावास में पृथ्वीकायिकरूप में यावत् वनस्पतिकायिकरूप में, देवरूप में या देवीरूप में अथवा आसन, शयन, भांड, पात्र आदि उपकरणरूप में पहले उत्पन्न हो चूका है ? हाँ, गौतम ! अनेक बार या अनन्त बार (उत्पन्न हो चूका है) । भगवन् ! क्या सभी जीव (पूर्वोक्तरूप में उत्पन्न हो चूके हैं ?) हाँ, गौतम ! इसी प्रकार है । इसी प्रकार स्तनित-कुमारों तक कहना चाहिए । किन्तु उनके आवासों की संख्या में अन्तर है ।

भन्ते ! क्या यह जीव असंख्यात लाख पृथ्वीकायिक-आवासों में से प्रत्येक पृथ्वीकायिक-आवासमें पृथ्वी-कायिकरूपमें यावत् वनस्पतिकायिकरूपमें पहले उत्पन्न हो चूका है ? हाँ, गौतम ! अनेक बार अथवा अनन्त बार उत्पन्न हुआ है । इसी प्रकार सर्वजीवोंके (विषयमें कहना) । इसी प्रकार यावत् वनस्पतिकायिकोंके आवासों जानना ।

भगवन् ! क्या यह जीव असंख्यात लाख द्वीन्द्रिय-आवासों में से प्रत्येक द्वीन्द्रियावास में पृथ्वीकायिकरूप में यावत् वनस्पतिकायिकरूप में और द्वीन्द्रियरूप में पहले उत्पन्न हो चूका है ? हाँ, गौतम ! यावत् अनेक बार अथवा अनन्त बार (उत्पन्न हो चूका है) । इसी प्रकार सभी जीवों के विषय में (कहना चाहिए) । इसी प्रकार यावत् मनुष्यों तक विशेषता यह है कि त्रीन्द्रियों में यावत् वनस्पतिकायिकरूप में, यावत् त्रीन्द्रियरूप में, चनुरिन्द्रियों में यावत् चतुरिन्द्रियरूप में, पंचेन्द्रियतिर्यञ्चयोनिकों में यावत् पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चरूप में तथा मनुष्यों में यावत् मनुष्य-रूप में उत्पत्ति जानना । शेष समस्त कथन द्वीन्द्रियों के समान जानना ।

असुरकुमारों (की उत्पत्ति) के समान वाणव्यन्तर; ज्योतिष्क तथा सौधर्म एवं ईशान देवलोक तक कहना । भगवन् ! क्या यह जीव सनत्कुमार देवलोक के बारह लाख विमानावासों में से प्रत्येक विमानावास में पृथ्वीकायिक रूप में यावत् पहले उत्पन्न हो चूका है ? (हाँ, गौतम !) सब कथन असुरकुमारों के समान, यावत् अनेक बार अथवा अनन्त बार उत्पन्न हो चूके हैं; यहाँ तक कहना । किन्तु वहाँ से देवीरूप में उत्पन्न नहीं हुए । इसी प्रकार सर्व जीवों के विषय में कहना । इसी प्रकार यावत् आनत और प्राणत तथा आरण और अच्युत तक जानना । भगवन् ! क्या यह जीव तीन सौ अठारह ग्रैवेयक विमानावासों में से प्रत्येक विमानावास में पृथ्वीकायिक के रूप में यावत् उत्पन्न हो चूका है ? हाँ, गौतम ! उत्पन्न हो चूका है । भगवन् ! क्या यह जीव पाँच अनुत्तरविमानों में से, यावत् उत्पन्न हो चूका है? हाँ, किन्तु वहाँ (अनन्त बार) देवरूप में, या देवीरूप में उत्पन्न नहीं हुआ । इसी प्रकार सभी जीवों के विषय में जानना

भगवन् ! यह जीव, क्या सभी जीवों के माता-रूप में, पिता-रूप में, भाई के रूप में, भगिनी के रूप में, पत्नी के रूप में, पुत्र के रूप में, पुत्री के रूप में, तथा पुत्रवधू के रूप में पहले उत्पन्न हो चूका है ? हाँ, गौतम ! अनेक बार अथवा अनन्त बार उत्पन्न हो चूका है । भगवन् ! सभी जीव क्या इस जीव के माता के रूप में यावत् पुत्रवधू के रूप में पहले उत्पन्न हुए हैं ? हाँ, गौतम ! सब जीव, इस जीव के माता आदि के रूप में यावत् अनेक बार अथवा अनन्त बार

पहले उत्पन्न हुए हैं ।

भगवन् ! यह जीव क्या सब जीवों के शत्रु रूप में, वैरी रूप में, घातक रूप में, वधक रूप में, प्रत्यनीक रूप में, शत्रु-सहायक रूप में पहले उत्पन्न हुआ है ? हाँ, गौतम ! अनेक बार अथवा अनन्त बार पहले उत्पन्न हो चूका है । भगवन् ! क्या सभी जीव (इस जीवके पूर्वोक्त शत्रुआदि रूपोंमें) पहले उत्पन्न हो चूके हैं ? हाँ, गौतम ! पूर्ववत् समझना

भगवन् ! यह जीव, क्या सब जीवों के राजा के रूप में, युवराज के रूप में, यावत् सार्थवाह के रूप में पहले उत्पन्न हो चूका है ? गौतम ! अनेक बार या अनन्त बार पहले उत्पन्न हो चूका है । इस जीव के राजा आदि के रूप में सभी जीवों की उत्पत्ति भी पूर्ववत् ।

भगवन् ! क्या यह जीव, सभी जीवों के दास रूप में, प्रेष्य के रूप में, भृतक रूप में, भागीदार के रूप में, भोगपुरुष के रूप में, शिष्य के रूप में और द्वेष्य के रूप में पहले उत्पन्न हो चूका है ? हाँ, गौतम ! यावत् अनेक बार या अनन्त बार (पहले उत्पन्न हो चूका है) । इसी प्रकार सभी जीव, यावत् अनेक बार अथवा अनन्त बार पहले उत्पन्न हो चूके हैं । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१२ – उद्देशक-८

सूत्र - ५५२

उस काल और उस समय में गौतम स्वामी ने यावत् पूछा–भगवन् ! महर्द्धिक यावत् महासुख वाला देव च्यव कर क्या द्विशरीरी नागों में उत्पन्न होता है ? हाँ, गौतम ! होता है । भगवन् ! वह वहाँ नाग के भव में अर्चित, वन्दित, पूजित, सत्कारित, सम्मानित, दिव्य, प्रधान, सत्य, सत्यावपातरूप अथवा सन्निहित प्रतिहारक भी होता है? हाँ, गौतम होता है । भगवन् ! क्या वह वहाँ से अन्तररहित च्यव कर सिद्ध होता है, बुद्ध होता है, यावत् संसार का अन्त करता है ? हाँ, गौतम ! यावत् अन्त करता है ।

भगवन् ! महर्द्धिक यावत् महासुख वाला देव च्यव कर द्विशरीरी मणियों में उत्पन्न होता है ? नागों के अनुसार कहना । भगवन् ! महर्द्धिक यावत् महासुख वाला देव द्विशरीरी वृक्षों में उत्पन्न होता है ? हाँ, गौतम ! उत्पन्न होता है । विशेषता इतनी ही है कि (जिस वृक्ष में वह उत्पन्न होता है, वह अर्चित आदि के अतिरिक्त) यावत् सन्निहित प्रातिहारिक होता है, तथा उस वृक्ष की पीठिका गोबर आदि से लीपी हुई और खड़िया मिट्टी आदि द्वारा उसकी दीवार आदि पोती हुई होने से वह पूजित होता है । शेष पूर्ववत् ।

सूत्र - ५५३

भगवन् ! यदि वानरवृषभ, बड़ा मूर्गा एवं मण्डूकवृषभ, बड़ा मेंढक ये सभी निःशील, व्रतरहित, गुणरहित, मर्यादा-रहित तथा प्रत्याख्यान-पौषधोपवासरहित हों, तो मृत्यु को प्राप्त हो (क्या) इस रत्नप्रभापृथ्वी में उत्कृष्ट सागरोपम की स्थिति वाले नरक में नैरयिक के रूप में उत्पन्न होते हैं ? (हाँ, गौतम ! होते हैं;) क्योंकि उत्पन्न होता हुआ उत्पन्न हुआ, ऐसा कहा जा सकता है । भगवन् ! यदि सिंह, व्याघ्र, यावत् पाराशर–ये सभी शीलरहित इत्यादि पूर्वोक्तवत् क्या उत्पन्न होते हैं ? हाँ, गौतम ! उत्पन्न होते हैं, यावत् उत्पन्न होता हुआ 'उत्पन्न हुआ' ऐसा कहा जा सकता है । भगवन् ! कौआ, गिद्ध, बिलक, मेंढक और मोर–ये सभी शीलरहित, इत्यादि हों तो पूर्वोक्तवत् उत्पन्न होते हैं ? हाँ, गौतम ! उत्पन्न होते हैं । शेष पूर्ववत् समझना । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-१२ – उद्देशक-९

सूत्र - ५५४

भगवन् ! देव कितने प्रकार के कहे गए हैं ? गौतम ! देव पाँच प्रकार के कहे गए हैं, यथा–भव्यद्रव्यदेव, नरदेव, धर्मदेव, देवाधिदेव, भावदेव ।

भगवन् ! भव्यद्रव्यदेव, 'भव्यद्रव्यदेव' किस कारण से कहलाते हैं ? गौतम ! जो पंचेन्द्रियतिर्यञ्चयोनिक अथवा मनुष्य, देवों में उत्पन्न होने योग्य हैं, वे भविष्य में भावीदेव होने के कारण भव्यद्रव्यदेव कहलाते हैं । भगवन् ! नरदेव 'नरदेव' क्यों कहलाते हैं ? गौतम ! जो ये राजा, पूर्व, पश्चिम और दक्षिण में समुद्र तथा उत्तर में हिमवान् पर्वत

पर्यन्त षट्खण्डपृथ्वी के स्वामी चक्रवर्ती हैं, जिनके यहाँ समस्त रत्नों में प्रधान चक्ररत्न उत्पन्न हुआ है, जो नौ निधियों के अधिपति हैं, जिनके कोष समृद्ध हैं, बत्तीस हजार राजा जिनके मार्गानुसारी हैं, ऐसे महा-सागररूप श्रेष्ठ मेखला पर्यन्त-पृथ्वी के अधिपति और मनुष्यों में इन्द्र सम हैं इस कारण नरदेव 'नरदेव' कहलाते हैं।

भगवन् ! धर्मदेव 'धर्मदेव' किस कारण से कहे जाते हैं ? गौतम ! जो ये अनगार भगवान् ईर्यासमिति आदि समितियों से युक्त, यावत् गुप्तब्रह्मचारी होते हैं; इस कारण से ये धर्म के देव 'धर्मदेव' कहलाते हैं । भगवन् ! देवाधिदेव 'देवाधिदेव' क्यों कहलाते हैं ? गौतम ! जो ये अरिहंत भगवान हैं, वे उत्पन्न हुए केवलज्ञान-केवलदर्शन के धारक हैं, यावत् सर्वदर्शी हैं, इस कारण वे यावत् धर्मदेव कहे जाते हैं । भगवन् ! किस कारण से भावदेव को 'भावदेव' कहा जाता है ? गौतम ! जो ये भवनपति, वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिक देव हैं, जो देवगति (सम्बन्धी) नाम गोत्रकर्म का वेदन कर रहे हैं, इस कारण से, देवभव का वेदन करने वाले, वे 'भावदेव' कहलाते हैं।

सूत्र - ५५५

भगवन् ! भव्यद्रव्यदेव किनमें से (आकर) उत्पन्न होते हैं ? क्या वे नैरयिकों में से उत्पन्न होते हैं, या तिर्यञ्च, मनुष्य अथवा देवों में से (आकर) उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! वे नैरयिकों में से (आकर) उत्पन्न होते हैं, तथा तिर्यञ्च, मनुष्य या देवों में से भी उत्पन्न होते हैं । व्युत्क्रान्ति पद अनुसार भेद कहना चाहिए । इन सभी की उत्पत्ति के विषय में यावत् अनुत्तरोपपातिक तक कहना चाहिए । विशेष बात यह है कि असंख्यातवर्ष की आयु वाले अकर्मभूमिक तथा अन्तरद्वीपक एवं सर्वार्थसिद्ध के जीवों को छोड़कर यावत् अपराजित देवों तक से आकर उत्पन्न होते हैं, किन्तु सर्वार्थसिद्ध के देवों से आकर उत्पन्न नहीं होते ।

भगवन् ! नरदेव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! वे नैरयिकों से आकर उत्पन्न होते हैं, देवों से भी उत्पन्न होते हैं किन्तु न तो मनुष्यों से और न तिर्यञ्चों से आकर उत्पन्न होते हैं । भगवन् ! यदि वे नैरयिकों से (आकर) उत्पन्न होते हैं, तो क्या रत्नप्रभापृथ्वी के नैरयिकों से उत्पन्न होते हैं, (अथवा) यावत् अधःसप्तमपृथ्वी के नैरयिकों से आकर ? गौतम ! वे रत्नप्रभापृथ्वी के नैरयिकों में से उत्पन्न होते हैं, किन्तु शर्कराप्रभा-यावत् अधः-सप्तमपृथ्वी के नैरयिकों से उत्पन्न नहीं होते । भगवन् ! यदि वे देवों से (आकर) उत्पन्न होते हैं, तो क्या भवनवासी देवों से उत्पन्न होते हैं ? अथवा यावत् वैमानिक देवों से उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! भवनवासी देवों से भी वाणव्यन्तर देवों से भी । इस प्रकार सभी देवों से उत्पत्ति के विषय में यावत् सर्वार्थसिद्ध तक, व्युत्क्रान्ति-पद में कथित भेद अनुसार कहना ।

भगवन् ! धर्मदेव कहाँ से (आकर) उत्पन्न होते हैं ? पूर्ववत् प्रश्न । गौतम ! यह सभी उपपात व्युत्क्रान्ति-पद में उक्त भेद सहित यावत्-सर्वार्थसिद्ध तक कहना चाहिए । परन्तु इतना विशेष है कि तमःप्रभा, अधःसप्तम-पृथ्वी तथा तेजस्काय, वायुकाय, असंख्यात वर्ष की आयु वाले अकर्मभूमिक तथा अन्तरद्वीपक जीवों को छोड़कर उत्पन्न होते हैं

भगवन् ! देवाधिदेव कहाँ से (आकर) उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! वे नैरयिकों से (आकर) उत्पन्न होते हैं, किन्तु तिर्यञ्चों से या मनुष्यों से उत्पन्न नहीं होते । देवों से भी (आकर) उत्पन्न होते हैं । यदि नैरयिकों से आकर उत्पन्न होते हैं, तो रत्नप्रभापृथ्वी के नैरयिकों यावत् अधःसप्तमपृथ्वी के नैरयिकों में से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! (वे आदि की) तीन नरकपृथ्वीयों में से आकर उत्पन्न होते हैं । भगवन् ! यदि वे देवों से उत्पन्न होते हैं, तो क्या भवनपति आदि से उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! वे, समस्त वैमानिक देवों से यावत् सर्वार्थसिद्ध से उत्पन्न होते हैं । शेष (देवों से) नहीं ।

भगवन् ! भावदेव किस गति से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! व्युत्क्रान्ति पद में भवनवासियों के उपपात के कथन समान यहाँ भी कहना चाहिए ।

सूत्र - ५५६

भगवन् ! भव्यद्रव्यदेवों की स्थिति कितने काल की कही है ? गौतम ! जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त की है और उत्कृष्टतः तीन पल्योपम की है । भगवन् ! नरदेवों की स्थिति कितने काल की है ? गौतम ! जघन्य ७०० वर्ष, उत्कृष्ट ८४लाख पूर्व है । भगवन् ! धर्मदेवों की स्थिति कितने काल की है ? गौतम ! जघन्य अन्त-मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट देशोन पूर्वकोटि की है । भगवन् ! देवाधिदेवों की स्थिति ? गौतम ! जघन्य बहत्तर वर्ष की और उत्कृष्ट चौरासी लाख पूर्व की

है । भगवन् ! भावदेवों की स्थिति ? गौतम ! जघन्य स्थिति दस हजार वर्ष की और उत्कृष्ट तैंतीस सागरोपम की है ।

सूत्र - ५५७

भगवन् ! क्या भव्यदेव एक रूप की अथवा अनेक रूपों की विकुर्वणा करने में समर्थ हैं ? गौतम ! वह एक रूप की और अनेक रूपों की विकुर्वणा करने में भी समर्थ हैं । एक रूप की विकुर्वणा करता हुआ वह एक एकेन्द्रिय रूप यावत् अथवा एक पंचेन्द्रिय रूप की और अनेक रूपों की विकुर्वणा करता हुआ अनेक एकेन्द्रिय रूपों यावत् अथवा अनेक पंचेन्द्रिय रूपों की विकुर्वणा करता है । वे रूप संख्येय या असंख्येय, सम्बद्ध अथवा असम्बद्ध अथवा सदृश या असदृश विकुर्वित किये जाते हैं । बाद वे अपना यथेष्ट कार्य करते हैं । इसी प्रकार नरदेव और धर्मदेव का विकुर्वणा विषय है ।

देवाधिदेव (के विकुर्वणा-सामर्थ्य) के विषय में प्रश्न-गौतम ! (वे) एक रूप की और अनेक रूपों की विकुर्वणा करने में भी समर्थ हैं । किन्तु शक्ति होते हुए भी उत्सुकता के अभाव में उन्होंने क्रियान्विति रूप में कभी विकुर्वणा नहीं की, नहीं करते हैं और न करेंगे । भव्य-द्रव्यदेव (के विकुर्वणा-सामर्थ्य) के समान ही भावदेव को जानना ।

सूत्र - ५५८

भगवन् ! भव्यद्रव्यदेव मरकर तुरन्त कहाँ जाते हैं, कहाँ उत्पन्न होते हैं ? क्या वे नैरयिकों में उत्पन्न होते हैं, यावत् अथवा देवों में उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! न तो नैरयिकों में उत्पन्न होते हैं, न तिर्यञ्चों में और न मनुष्यों में उत्पन्न होते हैं, किन्तु (एकमात्र) देवों में उत्पन्न होते हैं । यदि (वे) देवों में उत्पन्न होते हैं (तो भवनपति आदि किन देवों में उत्पन्न होते हैं ?) (गौतम !) वे सर्वदेवों में उत्पन्न होते हैं ।

भगवन् ! नरदेव मरकर कहाँ उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! नैरयिकोंमें होते हैं, (किन्तु) तिर्यञ्चों, मनुष्यों और देवों में उत्पन्न नहीं होते । भगवन् ! नैरयिकों कौन-सी नरकों में उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! वे सातों पृथ्वीयों में उत्पन्न होते हैं ।

भगवन् ! धर्मदेव आयुष्य पूर्ण कर तत्काल कहाँ उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! न तो नैरयिकों में उत्पन्न होते हैं, न तिर्यञ्चों में और न मनुष्यों में उत्पन्न होते हैं, किन्तु देवों में उत्पन्न होते हैं । (भगवन् !) यदि वे देवों में उत्पन्न होते हैं तो क्या भवनवासी देवों में उत्पन्न होते हैं, अथवा वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क या वैमानिक देवों में उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! वे न तो भवनवासियों में उत्पन्न होते हैं, न वाणव्यन्तर देवों में और न ज्योतिष्क देवों में उत्पन्न होते हैं, किन्तु वैमानिक देवों में-सभी वैमानिक देवों में उत्पन्न होते हैं । उनमें से कोई-कोई धर्मदेव सिद्ध-बुद्ध-मुक्त होते हैं यावत् सर्व दुःखों का अन्त कर देते हैं ।

भगवन् ! देवाधिदीव आयुष्य पूर्ण कर दूसरे ही क्षण कहाँ ते हैं, कहाँ उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! वे सिद्ध होते हैं, यावत् सर्व दुःखों का अन्त करते हैं । भगवन् ! भावदेव, आयु पूर्ण कर तत्काल कहाँ उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! व्युत्क्रान्तिपद में जिस प्रकार असुरकुमारों की उद्वर्त्तना कही है, उसी प्रकार यहाँ भावदेवों की भी उद्वर्त्तना कहना ।

भगवन् ! भव्यद्रव्यदेव, भव्यद्रव्यदेवरूप से कितने काल तक रहता है ? गौतम ! जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट तीन पल्योपम । इसी प्रकार जिसकी जो (भव-)स्थिति कही है, उसी प्रकार उसकी संस्थिति भी यावत् भावदेव तक कहनी चाहिए । विशेष यह है कि धर्मदेव की (संस्थिति) जघन्य एक समय और उत्कृष्ट देशोन पूर्व-कोटि वर्ष है ।

भगवन् ! भव्यद्रव्यदेव का अन्तर कितने काल का होता है ? गौतम ! जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त अधिक दस हजार वर्ष और उत्कृष्ट अनन्तकाल-वनस्पतिकाल । भगवन् ! नरदेवों का कितने काल का अन्तर होता है ? गौतम ! जघन्य सागरोपम से कुछ अधिक और उत्कृष्ट अनन्त काल, देशोन अपार्द्ध पुद्गलपरावर्त्त-काल । भगवन् ! धर्मदेव का अन्तर कितने काल तक का होता है ? गौतम ! जघन्य पल्योपम-पृथक्त्व तक और उत्कृष्ट अनन्तकाल यावत् देशोन अपार्द्ध पुद्गलपरावर्त्त । भगवन् ! देवाधिदेवों का अन्तर कितने काल का होता है ? गौतम ! देवाधिदेवों का अन्तर नहीं होता । भगवन् ! भावदेव का अन्तर कितने काल का होता है ? गौतम ! जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट अनन्तकाल-वनस्पतिकाल ।

भगवन् ! इन भव्यद्रव्यदेव, नरदेव यावत् भावदेव में से कौन (देव) किन (देवों) से अल्प, बहुत, तुल्य या

विशेषाधिक होते हैं ? गौतम ! सबसे थोड़े नरदेव होते हैं, उनसे देवाधिदेव संख्यात-गुणा (अधिक) होते हैं, उनसे धर्मदेव संख्यातगुण होते हैं, उनसे भव्यद्रव्यदेव असंख्यातगुणे होते हैं, और उनसे भी भावदेव असंख्यात गुणे होते हैं ।

सूत्र - ५५९

भगवन् ! भवनवासी, वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिक, तथा वैमानिकों में भी सौधर्म, ईशान, यावत् अच्युत, ग्रैवेयक एवं अनुत्तरोपपातिक विमानों तक के भावदेवों में कौन (देव) किस (देव) से अल्प, बहुत, तुल्य अथवा विशेषाधिक है ? गौतम ! सबसे थोड़े अनुत्तरोपपातिक भावदेव हैं, उनसे उपरिम ग्रैवेयक के भावदेव संख्यातगुण अधिक हैं, उनसे मध्यम ग्रैवेयक के भावदेव संख्यातगुणे हैं, उनसे नीचे के ग्रैवेयक के भावदेव संख्यात गुणे हैं । उनसे अच्युतकल्प के देव संख्यातगुणे हैं, यावत् आनतकल्प के देव संख्यातगुणे हैं । इससे आगे जीवाभि-गमसूत्र की दूसरी प्रतिपत्ति में देवपुरुषों का अल्पबहुत्व कहा है, उसी प्रकार यहाँ भी ज्योतिषी भावदेव असंख्यात-गुणे (अधिक) हैं तक कहना चाहिए । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-१२ – उद्देशक-१०

सूत्र - ५६०

भगवन् ! आत्मा कितने प्रकार की कही गई है ? गौतम ! आत्मा आठ प्रकार की कही गई है, वह इस प्रकार– द्रव्यात्मा, कषायात्मा, योग-आत्मा, उपयोग-आत्मा, ज्ञान-आत्मा, दर्शन-आत्मा, चारित्र-आत्मा और वीर्यात्मा ।

भगवन् ! जिसके द्रव्यात्मा होती है, क्या उसके कषायात्मा होती है और जिसके कषायात्मा होती है, उसके द्रव्यात्मा होती है ? गौतम ! जिसके द्रव्यात्मा होती है, उसके कषायात्मा कदाचित् होती है और कदाचित् नहीं भी होती । किन्तु जिसके कषायात्मा होती है, उसके द्रव्यात्मा अवश्य होती है । भगवन् ! जिसके द्रव्यात्मा होती है, क्या उसके योग-आत्मा होती है और जिसके योग-आत्मा होती है, उसके द्रव्यात्मा होती है ? गौतम ! द्रव्यात्मा और कषायात्मा के समान द्रव्यात्मा और योग-आत्मा का सम्बन्ध कहना । इसी प्रकार शेष सभी आत्माओं के द्रव्यात्मा के सम्बन्ध में प्रश्न । गौतम ! जिसके द्रव्यात्मा होती है, उसके उपयोगात्मा अवश्य होती है और जिसके उपयोगात्मा होती है उसके द्रव्यात्मा अवश्यमेव होती है । जिसके द्रव्यात्मा होती है उसके ज्ञानात्मा भजना और जिसके ज्ञानात्मा होती है, उसके द्रव्यात्मा अवश्य होती है । जिसके द्रव्यात्मा होती है, उसके दर्शनात्मा अवश्यमेव होती है तथा जिसके दर्शनात्मा होती है, उसके द्रव्यात्मा भी अवश्य होती है । जिसके द्रव्यात्मा होती है, उसके चारित्रात्मा भजना से होती है, जिसके चारित्रात्मा होती है, उसके द्रव्यात्मा अवश्य होती है। जिसके द्रव्यात्मा होती है, उसके वीर्य-आत्मा भजना से होती है, किन्तु जिसके वीर्य-आत्मा होती है, उसके द्रव्यात्मा अवश्यमेव होती है ।

भगवन् ! जिसके कषायात्मा होती है, क्या उसके योगात्मा होती है ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! जिसके कषायात्मा होती है, उसके योग-आत्मा अवश्य होती है, किन्तु जिसके योग-आत्मा होती है, उसके कषायात्मा भजना से होती है । इसी प्रकार उपयोगात्मा के साथ भी कषायात्मा का सम्बन्ध समझ लेना । कषायात्मा और ज्ञानात्मा का परस्पर सम्बन्ध भजना से कहना । कषायात्मा और उपयोगात्मा के समान ही कषायात्मा और दर्शनात्मा को कहना । कषायात्मा और चारित्रात्मा का (सम्बन्ध) भजना से कहना । कषायात्मा और योगात्मा के समान ही कषायात्मा और वीर्यात्मा के सम्बन्ध कहना ।

कषायात्मा के साथ अन्य छह आत्माओं के पारस्परिक सम्बन्ध के समान योगात्मा के साथ भी आगे की पाँच आत्माओं के परस्पर सम्बन्ध समझना । द्रव्यात्मा की वक्तव्यता अनुसार उपयोगात्मा की वक्तव्यता भी आगे की चार आत्माओं के साथ कहनी चाहिए । जिसके ज्ञानात्मा होती है, उसके दर्शनात्मा अवश्य होती है और जिसके दर्शनात्मा होती है, उसके ज्ञानात्मा भजना से होती है । जिसके ज्ञानात्मा होती है, उसके चरित्रात्मा भजना से होती है और जिसके चरित्रात्मा होती है, उसके ज्ञानात्मा अवश्य होती है । ज्ञानात्मा और वीर्यात्मा इन दोनों का परस्पर-सम्बन्ध भजना से कहना । जिसके दर्शनात्मा होती है, उसके चारित्रात्मा और वीर्यात्मा, ये दोनों भजना से होती है; किन्तु जिसके चारित्रात्मा और वीर्यात्मा होती है, उसके दर्शनात्मा अवश्य होती है । जिसके चारित्रात्मा होती है, उसके

वीर्यात्मा अवश्य होती है, किन्तु जिसके वीर्यात्मा होती है, उसके चारित्रात्मा भजना से होत है ।

भगवन् ! द्रव्यात्मा, कषायात्मा यावत् वीर्यात्मा-इनमें से कौन-सी आत्मा, किससे अल्प, बहुत, यावत् विशेषाधिक है ? गौतम ! सबसे थोड़ी चारित्रात्माएं हैं, उनसे ज्ञानात्माएं अनन्तगुणी हैं, उनसे कषायात्माएं अनन्त-गुणी हैं, उनसे योगात्माएं विशेषाधिक हैं, उनसे वीर्यात्माएं विशेषाधिक हैं, उनसे उपयोगात्मा, द्रव्यात्मा और दर्शनात्मा, ये तीनों विशेषाधिक हैं और तीनों तुल्य हैं ।

सूत्र - ५६१

भगवन् ! आत्मा ज्ञानस्वरूप है या अज्ञानस्वरूप है ? गौतम ! आत्मा कदाचित् ज्ञानरूप है, कदाचित् अज्ञानरूप है । (किन्तु) ज्ञान तो नियम से आत्मस्वरूप है ।

भगवन् ! नैरयिकों की आत्मा ज्ञानरूप है अथवा अज्ञानरूप है ? गौतम ! कथञ्चित् ज्ञानरूप है और कथञ्चित् अज्ञानरूप है । किन्तु उनका ज्ञान नियमतः आत्मरूप है । इसी प्रकार 'स्तनितकुमार' तक कहना चाहिए ।

भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीवों की आत्मा क्या अज्ञानरूप है ? क्या पृथ्वीकायिकों का अज्ञान अन्य है ? गौतम पृथ्वीकायिकों की आत्मा नियम से अज्ञानरूप है, परन्तु उनका अज्ञान अवश्य ही आत्मरूप है । इसी प्रकार वनस्पतिकायिक जीवों तक कहना । द्वीन्द्रिय आदि से यावत् वैमानिक जीवों का कथन नैरयिकों के समान जानना ।

भगवन् ! आत्मा दर्शनरूप है, या दर्शन उससे भिन्न है ? गौतम ! आत्मा अवश्य दर्शनरूप है और दर्शन भी नियमतः आत्मरूप है । भगवन् ! नैरयिकों की आत्मा दर्शनरूप है, अथवा नैरयिक जीवों का दर्शन उनसे भिन्न है ? गौतम ! नैरयिक जीवों की आत्मा नियमतः दर्शनरूप है, उनका दर्शन भी नियमतः आत्मरूप है । इसी प्रकार यावत् वैमानिकों तक चौबीस ही दण्डकों के विषय में (कहना चाहिए) ।

सूत्र - ५६२

भगवन् ! रत्नप्रभापृथ्वी आत्मरूप है या वह अन्यरूप है ? गौतम ! रत्नप्रभापृथ्वी कथंचित् आत्मरूप है और कथंचित् नोआत्मरूप है तथा कथंचित् अवक्तव्य है । भगवन् ! किस कारण से आप ऐसा कहते हैं ? गौतम ! रत्नप्रभापृथ्वी अपने स्वरूप से व्यपदिष्ट होने पर आत्मरूप हैं, पररूप से आदिष्ट होने पर नो-आत्मरूप है और उभयरूप की विवक्षा से कथन करने पर सद्-असद्रूप होने से अवक्तव्य है । इसी कारण से हे गौतम ! यावत् उसे अवक्तव्य कहा गया है । भगवन् ! शर्कराप्रभापृथ्वी आत्मरूप है ? इत्यादि प्रश्न । रत्नप्रभापृथ्वी के समान ही शर्कराप्रभा के विषय में भी कहना । इसी प्रकार यावत् अधःसप्तमपृथ्वी तक कहना ।

भगवन् ! सौधर्मकल्प आत्मरूप है ? इत्यादि प्रश्न है । गौतम ! सौधर्मकल्प कथंचित् आत्मरूप है, कथंचित् नो-आत्मरूप है तथा कथंचित् आत्मरूप-नो-आत्मरूप होने से अवक्तव्य हैं । भगवन् ! इस कथन का क्या कारण है ? गौतम ! स्व-स्वरूप की दृष्टि से कथन किये जाने पर आत्मरूप है, पर-रूप की दृष्टि से कहे जान पर नो-आत्मरूप है और उभयरूप की अपेक्षा से अवक्तव्य है । इसी कारण उपर्युक्त रूप से कहा गया है । इसी प्रकार अच्युतकल्प तक जानना चाहिए । भगवन् ! ग्रैवेयकविमान आत्मरूप है ? अथवा वह उससे भिन्न (नो-आत्मरूप) है ? गौतम ! इसका कथन रत्नप्रभापृथ्वी के समान करना चाहिए । इसी प्रकार अनुत्तरविमान तक कहना चाहिए । इसी प्रकार ईषत्प्राग्भारा पृथ्वी तक कहना चाहिए ।

भगवन् ! परमाणु-पुद्गल आत्मरूप अथवा वह अन्य है ? (गौतम !) सौधर्मकल्प के अनुसार परमाणु-पुद्गल के विषय में कहना चाहिए ।

भगवन् ! द्विप्रदेशिक स्कन्ध आत्मरूप है, (अथवा) वह अन्य है ? गौतम ! द्विप्रदेशी स्कन्ध कथंचित् सद्रूप है, कथंचित् असद्रूप है, और सद्-असद्रूप होने से कथंचित् अवक्तव्य है । कथंचित् सद्रूप है और कथंचित् असद्रूप है, कथंचित् स्वरूप है और सद्-असद्-उभयरूप होने से अवक्तव्य है और कथंचित् असद्रूप है और सद्-असद्-उभयरूप होने से अवक्तव्य है । भगवन् ! किस कारण से यावत् कथंचित असद्रूप है और सद्-असद् उभयरूप होने से अवक्तव्य है ? गौतम ! (द्विप्रदेशी स्कन्ध) अपने स्वरूप की अपेक्षा से कथन किये जाने पर

सद्रूप है, पररूप की अपेक्षा से कहे जाने पर असद्रूप है और उभयरूप की अपेक्षा से अवक्तव्य है तथा सद्भावपर्याय वाले अपने एक देश की अपेक्षा से व्यपदिष्ट होने पर सद्रूप है तथा असद्भाव पर्याय वाले द्वीतिय देश से आदिष्ट होने पर, असद्रुप है । (इस दृष्टि से) कथंचित् सद्रूप और कथंचित् असद्रूप है । सद्भाव पर्याय वाले एक देश की अपेक्षा से आदिष्ट होने पर सद्रूप और सद्भाव-असद्भाव वाले दूसरे देश की अपेक्षा से द्विप्रदेशी स्कन्ध सद्रूप-असद्रूप उभयरूप होने से अवक्तव्य हैं । एक देश की अपेक्षा से असद्भाव पर्याय की विवक्षा से तथा द्वितीय देश के सद्भाव-असद्भावरूप उभय-पर्याय की अपेक्षा से द्विप्रदेशी स्कन्ध असद्रूप और अवक्तव्यरूप है ।

भगवन् ! त्रिप्रदेशी स्कन्ध आत्मा है अथवा उससे अन्य है ? गौतम ! त्रिप्रदेशी स्कन्ध-कथंचित् सद्रूप है। कथंचित् असद्रूप है । सद्-असद्-उभयरूप होने से कथंचित् अवक्तव्य है । कथंचित् सद्रूप और कथंचित् असद् रूप है । कथंचित् सद्रूप और अनेक असद्रूप हैं । कथंचित् अनेक असद्रूप तथा असद्रूप है । कथंचित् सद् रूप और सद्-असद्-उभयरूप होने से अवक्तव्य है । कथंचित् आत्मा तथा अनेक सद्-असद्रूप होने से अवक्तव्य है कथंचित् आत्माएं (अनेक असद्रूप) तथा आत्मा-नो आत्मा उभयरूप से-अवक्तव्य है । कथंचित् असद्रूप तथा आत्मा उभयरूप होने से-अवक्तव्य है । कथंचित् असद्रूप तथा उभयरूप होने से-अवक्तव्य है । कथंचित् नो अनेक असद्रूप तथा उभयरूप होने से-अवक्तव्य हैं और कथंचित् सद्रूप, असद्रूप और उभयरूप होने से-अवक्तव्य है

भगवन् ! किस कारण से आप ऐसा कहते हैं ? गौतम ! त्रिप्रदेशी स्कन्ध-अपने आदेश से सद्रूप है; पर के आदेश से असद्रूप है, उभय के आदेश से उभयरूप होने से अवक्तव्य है । एक देश के आदेश से सद्भाव-पर्याय की अपेक्षा से और एक देश के आदेश से असद्भाव-पर्याय की अपेक्षा से वह त्रिप्रदेशी स्कन्ध आत्मा और नो-आत्मारूप है । एक देश के आदेश से सद्भाव पर्याय की अपेक्षा से और बहुत देशों के आदेश से असद्भाव पर्याय की अपेक्षा से, वह त्रिप्रदेशी स्कन्ध आत्मा और नो-आत्माएं हैं । बहुत देशों के आदेश से सद्भाव पर्याय की अपेक्षा से और एक देश के आदेश से असद्भाव पर्याय की अपेक्षा से त्रिप्रदेशी स्कन्ध आत्माएं और नो आत्मा है । एक देश के आदेश से सद् भाव पर्याय की अपेक्षा से और एक देश के आदेश से उभय-पर्याय की अपेक्षा से त्रिप्रदेशी स्कन्ध आत्मा और आत्मा तथा नो आत्मा-उभयरूप से अवक्तव्य है । एक देश के आदेश से, सद्भाव-पर्याय की अपेक्षा से और बहुत देशों के आदेश से, उभयपर्याय की विवक्षा से त्रिप्रदेशी स्कन्ध, आत्मा और आत्माएं तथा न आत्माएं, इस प्रकार उभयरूप से अवक्तव्य है । बहुत देशों के आदेश से सद्भाव-पर्याय की अपेक्षा से और एक देश के आदेश से उभयपर्याय की अपेक्षा से त्रिप्रदेशी स्कन्ध आत्माएं और आत्मा-नो आत्मा-उभयरूप से अवक्तव्य है । ये तीन भंग जानने चाहिए । एक देश के आदेश से असद्भाव पर्याय की अपेक्षा से और एक देश के आदेश से उभयपर्याय की अपेक्षा से त्रिप्रदेशी स्कन्ध नो आत्मा और आत्मा-नो आत्मा-उभयरूप से अवक्तव्य है । एक देश के आदेश से असद्भाव पर्याय को अपेक्षा से और बहुत देशों के आदेश से और तदुभय-पर्याय की अपेक्षा से त्रिप्रदेशी स्कन्ध नो-आत्मा और आत्माएं तथा नो आत्मा इस उभयरूप से अवक्तव्य है । बहुत देशों के आदेश से असद्भाव पर्याय की अपेक्षा से और एक देश के आदेश से तदुभय पर्याय की अपेक्षा से, त्रिप्रदेशी स्कन्ध नो-आत्माएं और आत्मा तथा नो-आत्मा इस उभयरूप से अवक्तव्य है । एक देश के आदेश से सद्भाव पर्याय की अपेक्षा से, एक देश के आदेश से असद्भाव पर्याय की अपेक्षा से और एक देश के आदेश से तदुभय पर्याय की अपेक्षा से, त्रिप्रदेशी स्कन्ध कथंचित् आत्मा, नो आत्मा और आत्मा-नो आत्मा-उभयरूप से अवक्तव्य है । इसलिए हे गौतम ! त्रिप्रदेशी स्कन्ध को कथंचित् आत्मा, यावत्-आत्मा-नो आत्मा उभयरूप से अवक्तव्य कहा गया है ।

भगवन् ! चतुष्प्रदेशी स्कन्ध सद्रूप है, अथवा असद्रूप है ? गौतम ! चतुष्प्रदेशी स्कन्ध-कथंचित् आत्मा है, कथंचित् नो आत्मा है, आत्मा-नोआत्मा उभयरूप होने से-अवक्तव्य है । कथंचित् आत्मा और नो आत्मा है; कथंचित् आत्मा और अवक्तव्य है; कथंचित् नो आत्मा और अवक्तव्य; कथंचित् आत्मा और नो आत्मा तथा आत्मा-नो आत्मा उभयरूप से अवक्तव्य है । कथंचित् आत्मा और नो आत्मा तथा आत्माएं और नो-आत्माएं उभय होने से अवक्तव्य है

कथंचित् आत्मा और नो आत्माएं तथा आत्मा-नो आत्मा उभयरूप होने से-कथंचित् अवक्तव्य है और कथंचित् आत्माएं, नो-आत्मा, तथा आत्मा-नो आत्मा उभयरूप होने से-(कथंचित्) अवक्तव्य हैं। भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहते हैं ? गौतम ! अपने आदेश से सद्रूप है, पर के आदेश से नो आत्मा है; तदुभय के आदेश से अवक्तव्य है । एक देश के आदेश से सद्भाव-पर्याय की अपेक्षा से और एक देश के आदेश से असद्भाव-पर्याय की अपेक्षा से चार भंग होते हैं । सद्भावपर्याय और तदुभयपर्याय की अपेक्षा से चार भंग होत हैं। असद्भावपर्याय और तदुभयपर्याय की अपेक्षा से चार भंग होते हैं । एक देश के आदेश से सद्भावपर्याय की अपेक्षा से, एक देश के आदेश से असद्भाव-पर्याय की अपेक्षा से और बहुत देशों के आदेश से तदुभय-पर्याय की अपेक्षा से चतुष्प्रदेशी स्कन्ध, आत्मा, नो-आत्मा और आत्मा-नो-आत्मा-उभयरूप होने से अवक्तव्य है । एक देश के आदेश से सद्भाव पर्याय की अपेक्षा से, एक देश के आदेश से असद्भावपर्याय की अपेक्षा से और बहुत देशों के आदेश से तदुभय-पर्याय की अपेक्षा से चतुष्प्रदेशी स्कन्ध आत्मा नो आत्मा, और आत्माएं-नो-आत्माएं इस उभयरूप से अवक्तव्य है । एक देश के आदेश से सद् भावपर्याय की अपेक्षा से बहुत देशों के आदेश से असद्भाव-पर्यायों की अपेक्षा से और एक देश के आदेश से तदुभयपर्याय की अपेक्षा से चतुष्प्रदेशी स्कन्ध आत्मा, नो-आत्माएं और आत्मा-नो आत्मा उभयरूप से अवक्तव्य है । बहुत देशों के आदेश से सद्भाव-पर्यायों की अपेक्षा से, एक देश के आदेश से असद्भावपर्याय की अपेक्षा से तथा एक देश के आदेश से तदुभयपर्याय की अपेक्षा से चतुष्प्रदेशी स्कन्ध आत्माएं नो आत्मा और आत्मा-नो आत्मा उभयरूप से अवक्तव्य है । इस कारण हे गौतम ! ऐसा कहा जाता है कि चतुष्प्रदेशी स्कन्ध कथंचित् आत्मा है, कथंचित् नो-आत्मा है और कथंचित् अवक्तव्य है ।

भगवन् ! पंचप्रदेशी स्कन्ध आत्मा है, अथवा अन्य है ? गौतम ! पंचप्रदेशी स्कन्ध कथंचित् आत्मा है, कथंचित् नो आत्मा है, आत्मा-नो-आत्मा उभयरूप होने से कथंचित् अवक्तव्य है । कथंचित् आत्मा और नो आत्मा कथंचित् आत्मा और अवक्तव्य (कथंचित्) नो आत्मा और अवक्तव्य तथा त्रिकसंयोगी आठ भंगों में एक भंग घटित नहीं होता, अर्थात् सात भंग होते हैं । कुल मिलाकर बाईस भंग होते हैं । भगवन् ! ऐसा क्यों कहा गया है ? गौतम ! पंचप्रदेशी स्कन्ध, अपने आदेश से आत्मा है; पर के आदेश से नो-आत्मा है, तदुभय के आदेश से अवक्तव्य है । एक देश के आदेश से, सद्भाव-पर्याय की अपेक्षा से तथा एक देश के आदेश से असद्भाव-पर्याय की अपेक्षा से कथंचित् आत्मा है, कथंचित् नो-आत्मा है । इसी प्रकार द्विकसंयोगी सभी (बारह) भंग बनते हैं । त्रिकसंयोगी (आठ भंग होते हैं, उनमें से एक आठवाँ भंग नहीं बनता) । षट्प्रदेशी स्कन्ध के विषय में ये सभी भंग बनते हैं । षट्प्रदेशी स्कन्ध के समान यावत् अनन्तप्रदेश स्कन्ध तक कहना । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१२ का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

शतक–१३

सूत्र - ५६३

तेरहवें शतक के दस उद्देशक इस प्रकार हैं–पृथ्वी, देव, अनन्तर, पृथ्वी, आहार, उपपात, भाषा, कर्म, अनगार में केयाघटिका और समुद्घात ।

शतक-१३ – उद्देशक-१

सूत्र - ५६४

राजगृह नगर में यावत् पूछा–भगवन् ! (नरक–) पृथ्वीयाँ कितनी हैं ? गौतम ! सात, यथा–रत्नप्रभा यावत् अधःसप्तम पृथ्वी । भगवन् ! इस रत्नप्रभापृथ्वी में कितने लाख नारकावास हैं ? गौतम ! तीस लाख । भगवन् ! वे नारकावास संख्येय (योजन) विस्तृत हैं या असंख्येय (योजन) विस्तृत हैं ? गौतम ! वे संख्येय (योजन) विस्तृत भी हैं और असंख्येय (योजन) विस्तृत भी हैं ।

भगवन् ! इस रत्नप्रभापृथ्वी के तीस लाख नारकावासों में से संख्येयविस्तृत नरकों में एक समय में कितने नैरयिक जीव उत्पन्न होते हैं ? कितने कापोतलेश्या वाले नैरयिक जीव उत्पन्न होते हैं ? कितने कृष्णपाक्षिक जीव उत्पन्न होते हैं ? कितने शुक्लपाक्षिक जीव उत्पन्न होते हैं ? कितने संज्ञी जीव उत्पन्न होते हैं ? कितने असंज्ञी जीव उत्पन्न होते हैं ? कितने भवसिद्धिक जीव उत्पन्न होते हैं ? कितने अभवसिद्धिक जीव उत्पन्न होते हैं ? कितने आभिनिबोधिकज्ञानी उत्पन्न होते हैं ? कितने श्रुतज्ञानी उत्पन्न होते हैं ? कितने अवधिज्ञानी उत्पन्न होते हैं ? कितने मति-अज्ञानी उत्पन्न होते हैं ? कितने श्रुत-अज्ञानी उत्पन्न होते हैं ? कितने विभंगज्ञानी उत्पन्न होते हैं ? कितने चक्षुदर्शनी उत्पन्न होते हैं ? कितने अचक्षुदर्शनी उत्पन्न होते हैं ? कितने अवधिदर्शनी उत्पन्न होते हैं ? कितने आहार - संज्ञा के उपयोग वाले जीव उत्पन्न होते हैं ? कितने भय-संज्ञा के उपयोग वाले जीव उत्पन्न होते हैं ? कितने मैथुन-संज्ञा के उपयोग वाले जीव उत्पन्न होते हैं ? कितने परिग्रह-संज्ञा के उपयोग वाले जीव उत्पन्न होते हैं ? कितने स्त्रीवेदक जीव उत्पन्न होते हैं ? कितने पुरुषवेदक जीव उत्पन्न होते हैं ? कितने नपुंसकवेदक जीव उत्पन्न होते हैं ? कितने क्रोधकषायी जीव उत्पन्न होते हैं ? यावत् कितने लोभकषायी उत्पन्न होते हैं ? कितने श्रोत्रेन्द्रिय के उपयोग वाले उत्पन्न होते हैं ? यावत् कितने स्पर्शेन्द्रिय के उपयोग वाले जीव उत्पन्न होते हैं ? कितने नो-इन्द्रिय (मन) के उपयोग वाले जीव उत्पन्न होते हैं ? कितने मनोयोगी जीव उत्पन्न होते हैं ? कितने वचनयोगी जीव उत्पन्न होते हैं ? कितने काययोगी उत्पन्न होते हैं? कितने साकारोपयोगीवाले जीव उत्पन्न होते हैं ? और कितने अनाकारोपयोगवाले जीव उत्पन्न होते हैं?

गौतम ! इस रत्नप्रभापृथ्वी के तीस लाख नारकावासों में से संख्येयविस्तृत नरकों में एक समय में जघन्य एक, दो या तीन और उत्कृष्ट संख्यात नैरयिक उत्पन्न होते हैं । जघन्य एक, दो या तीन, और उत्कृष्ट संख्यात कापोतलेश्यी जीव उत्पन्न होते हैं । जघन्य एक, दो या तीन और उत्कृष्ट संख्यात कृष्णपाक्षिक उत्पन्न होते हैं । इसी प्रकार शुक्लपाक्षिक, संज्ञी, असंज्ञी, भवसिद्धिक, अभवसिद्धिक, आभिनिबोधिक ज्ञानी, श्रुत-ज्ञानी, मति-अज्ञानी, श्रुत-अज्ञानी, विभंग-ज्ञानी जीवों के विषय में भी जानना । चक्षुदर्शनी जीव उत्पन्न नहीं होते । अचक्षुदर्शनी जीव जघन्य एक, दो या तीन और उत्कृष्ट संख्यात उत्पन्न होते हैं । इसी प्रकार अवधिदर्शनी, आहारसंज्ञोपयुक्त, यावत् परिग्रहसंज्ञोपयुक्त भी जानना । स्त्रीवेदी जीव उत्पन्न नहीं होते, न पुरुषवेदी जीव उत्पन्न होते हैं । नपुंसकवेदी जीव जघन्य एक, दो या तीन और उत्कृष्ट संख्यात उत्पन्न होते हैं । इसी प्रकार क्रोधकषायी यावत् लोभकषायी जीवों को जानना । श्रोत्रेन्द्रियोपयुक्त यावत् स्पर्शेन्द्रियोपयुक्त जीव वहाँ उत्पन्न नहीं होते । नो-इन्द्रियोपयुक्त जीव जघन्य एक, दो या तीन और उत्कृष्ट संख्यात उत्पन्न होते हैं । मनोयोगी और वचनयोगी जीव वहाँ उत्पन्न नहीं होते, काययोगी जीव जघन्य एक, दो, तीन और उत्कृष्ट संख्यात उत्पन्न होते हैं । इसी प्रकार साकारोपयोग वाले एवं अनाकारो-पयोग वाले जीवों के विषय में भी समझना ।

भगवन् ! इस रत्नप्रभापृथ्वी के तीस लाख नारकावासों में से संख्यात योजन विस्तार वाले नरकों में से एक समय में कितने नैरयिक उद्वर्त्तते हैं ? कितने कापोतलेश्यी नैरयिक उद्वर्त्तते हैं ? यावत् कितने अनाकारोपयुक्त नैरयिक

उद्वर्त्तते हैं ? गौतम ! एक समय में जघन्य एक, दो अथवा तीन और उत्कृष्ट संख्यात नैरयिक उद्वर्त्तते हैं । कापोतलेश्यी नैरयिक जघन्य एक, दो या तीन और उत्कृष्ट संख्यात उद्वर्त्तते हैं । इसी प्रकार यावत् संज्ञी जीव तक नैरयिक-उद्वर्त्तना कहना । असंज्ञी जीव नहीं उद्वर्त्तते । भवसिद्धिक नैरयिक जीव जघन्य एक, दो या तीन और उत्कृष्ट संख्यात उद्वर्त्तते हैं । इसी प्रकार यावत् श्रुत-अज्ञानी तक उद्वर्त्तना कहनी चाहिए । विभंगज्ञानी नहीं उद्वर्त्तते। चक्षुदर्शनी भी नहीं उद्वर्त्तते । अचक्षुदर्शनी जीव जघन्य एक, दो या तीन और उत्कृष्ट संख्यात उद्वर्त्तते हैं । इसी प्रकार यावत् लोभकषायी नैरयिक जीवों तक की उद्वर्त्तना कहना । श्रोत्रेन्द्रिय यावत् स्पर्शेन्द्रिय के उपयोग वाले भी नहीं उद्वर्त्तते । नोइन्द्रियोपयोगयुक्त नैरयिक जघन्य एक, दो या तीन और उत्कृष्ट संख्यात उद्वर्त्तते हैं । मनोयोगी और वचनयोगी भी नहीं उद्वर्त्तते । काययोगी जघन्य एक, दो या तीन और उत्कृष्ट संख्यात उद्वर्त्तते हैं । इसी प्रकार साकारोपयोग वाले और अनाकारोपयोग वाले नैरयिक जीवों की उद्वर्त्तना कहना ।

भगवन् ! इस रत्नप्रभापृथ्वी के तीस लाख नारकावासों में से संख्यात योजन विस्तार वाले नरकों में कितने नारक कहे गए हैं ? कितने कापोतलेश्यी यावत् कितने अनाकारोपयोग वाले नैरयिक हैं ? कितने अनन्तरोपपन्नक कहे गए हैं ? कितने परम्परोपपन्नक कहे गए हैं ? कितने अनन्तरावगाढ कहे गए हैं ? कितने परम्परावगाढ कहे गए हैं ? कितने अनन्तराहारक कहे गए हैं ? कितने परम्पराहारक कहे गए हैं ? कितने अनन्तपर्याप्तक कहे गए हैं ? कितने परम्परपर्याप्तक कहे गए हैं ? कितने चरम कहे गए हैं ? और कितने अचरम कहे गए हैं ? गौतम ! संख्यात नैरयिक हैं । संख्यात कापोतलेश्यी जीव हैं । इसी प्रकार यावत् संख्यात संज्ञी जीव हैं । असंज्ञी जीव कदाचित् होते हैं और कदाचित् नहीं होते । यदि होते हैं तो जघन्य एक, दो या तीन और उत्कृष्ट संख्यात होते हैं । भवसिद्धिक जीव संख्यात हैं । इसी प्रकार यावत् परिग्रहसंज्ञा के उपयोग वाले नैरयिक संख्यात हैं । (वहाँ) स्त्रीवेदक नहीं होते, पुरुषवेदक भी नहीं होते । (वहाँ) नपुंसकवेदी संख्यात कहे गए हैं । इसी प्रकार क्रोधकषायी भी संख्यात होते हैं । मानकषायी नैरयिक असंज्ञी नैरयिकों के समान । इसी प्रकार यावत् लोभकषायी नैरयिकों के विषय में भी कहना । श्रोत्रेन्द्रिय यावत् स्पर्शेन्द्रियोपयोगयुक्त नैरयिक संख्यात हैं । नो-इन्द्रियोपयोगयुक्त नारक, असंज्ञी नारक जीवों के समान हैं । मनोयोगी यावत् अनाकारोपयोग वाले नैरयिक संख्यात कहे गए हैं । अनन्तरोपपन्नक नैरयिक कदाचित् होते हैं, कदाचित् नहीं होते; यदि होते हैं तो असंज्ञी जीवों के समान होते हैं । परम्परोपपन्नक नैरयिक संख्यात होते हैं । अनन्तरोपपन्नक के समान अनन्तरावगाढ, अनन्तराहारक और अनन्तरपर्याप्तक के विषय में कहना । परम्परोपपन्नक के समान परम्परावगाढ, परम्पराहारक, परम्परपर्याप्तक, चरम और अचरम (का कथन करना) ।

भगवन् ! इस रत्नप्रभापृथ्वी के तीस लाख नारकावासों में से असंख्यात योजन विस्तार वाले नरकों में एक समय में कितने नैरयिक उत्पन्न होते हैं; यावत् कितने अनाकारोपयोग वाले नैरयिक उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! एक समय में जघन्य एक, दो या तीन और उत्कृष्ट असंख्यात नैरयिक उत्पन्न होते हैं । संख्यात योजन के समान असंख्यात योजन वाले नरकों के विषय में भी तीन आलापक कहने चाहिए । इनमें विशेषता यह है कि 'संख्यात' के बदले 'असंख्यात' कहना चाहिए । शेष सब यावत् 'असंख्यात अचरम कहे गए हैं', यहाँ तक पूर्ववत् कहना चाहिए । इनमें लेश्याओं में नानात्व है । लेश्यासम्बन्धी कथन प्रथम शतक के अनुसार तथा विशेष इतना ही है कि संख्यात योजन और असंख्यात योजन विस्तार वाले नारकावासों में से अवधिज्ञानी और अवधिदर्शनी संख्यात ही उद्वर्त्तन करते हैं, ऐसा कहना । शेष पूर्ववत् ।

भगवन् ! शर्कराप्रभापृथ्वी में कितने नारकावास हैं ? गौतम ! पच्चीस लाख । भगवन् ! वे नारकावास क्या संख्यात योजन विस्तार वाले हैं, अथवा असंख्यात योजन विस्तार वाले ? गौतम ! रत्नप्रभापृथ्वी के अनुसार शर्करा प्रभा के विषयमें कहना । विशेष यह है कि उत्पाद, उद्वर्त्तना और सत्ता, इन तीनों ही आलापकोंमें 'असंज्ञी' नहीं कहना । शेष सभी पूर्ववत् । भगवन् ! बालुकाप्रभापृथ्वी में कितने नारकावास हैं ? गौतम ! पन्द्रह लाख । शेष सब कथन शर्कराप्रभा के समान करना । यहाँ लेश्याओं के विषय में विशेषता है । लेश्या का कथन प्रथम शतक के समान कहना

भगवन् ! पंकप्रभापृथ्वी में कितने नारकावास कहे गए हैं ? गौतम ! दस लाख । शर्कराप्रभा के समान यहाँ

भी कहना । विशेषता यह है कि (इस पृथ्वी से) अवधिज्ञानी और अवधिदर्शनी उद्वर्त्तन नहीं करते । शेष पूर्ववत् । भगवन् ! धूमप्रभापृथ्वी में कितने नारकावास हैं ? गौतम ! तीन लाख । पंकप्रभापृथ्वी के समान यहाँ भी कहना । भगवन् ! तमःप्रभापृथ्वी में कितने नारकावास हैं ? गौतम ! पाँच कम एक लाख । शेष पंकप्रभा के समान जानना। भगवन् ! अधःसप्तमपृथ्वी में अनुत्तर और बहुत बड़े कितने महानारकावास हैं ? गौतम ! पाँच अनुत्तर और बहुत बड़े नारकावास हैं, यथा काल-यावत् अप्रतिष्ठान् ।

भगवन् ! वे नारकावास क्या संख्यात योजन विस्तार वाले हैं, या असंख्यात योजन विस्तार वाले ? गौतम ! एक (मध्य का अप्रतिष्ठान) नारकावास संख्यात योजन विस्तार वाला है, और शेष (चार नारकावास) असंख्यात-योजन विस्तार वाले हैं ।

भगवन् ! अधःसप्तमपृथ्वी के पाँच अनुत्तर और बहुत बड़े यावत् महानरकों में से संख्यात योजन विस्तार वाले अप्रतिष्ठान नारकावास में एक समय में कितने नैरयिक उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! पंकप्रभा के समान कहना । विशेष यह है कि यहाँ तीन ज्ञान वाले न तो उत्पन्न होते हैं, न ही उद्वर्त्तन करते हैं । परन्तु इन पाँचों नारकावासों में रत्नप्रभापृथ्वी आदि के समान तीनों ज्ञान वाले पाये जाते हैं । संख्यात योजन विस्तार वाले असंख्यात योजन विस्तार वाले नारकावासों के विषय में भी कहना । विशेष यह है कि यहाँ 'संख्यात' के स्थान पर 'असंख्यात' पाठ कहना ।

सूत्र - ५६५

भगवन् ! इस रत्नप्रभापृथ्वी के तीस लाख नारकावासों में से संख्यात योजन विस्तार वाले नारकावासों में क्या सम्यग्दृष्टि नैरयिक उत्पन्न होते हैं, मिथ्यादृष्टि नैरयिक उत्पन्न होते हैं, अथवा सम्यग्मिथ्या (मिश्र) दृष्टि नैरयिक उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! सम्यग्दृष्टि नैरयिक भी उत्पन्न होते हैं, मिथ्यादृष्टि नैरयिक भी उत्पन्न होते हैं, किन्तु सम्यग्-मिथ्यादृष्टि नैरयिक उत्पन्न नहीं होते । इस रत्नप्रभापृथ्वी के तीस लाख नारकावासों में से संख्यात योजन-विस्तृत नारकावासों से क्या सम्यग्दृष्टि नैरयिक उद्वर्त्तन करते हैं ? इत्यादि प्रश्न । हे गौतम ! उसी तरह समझना चाहिए ।

भगवन् ! इस रत्नप्रभापृथ्वी के तीस लाख नारकावासों में से संख्यात योजनविस्तृत नारकावास क्या सम्यग्दृष्टि नैरयिकों से अविरहित हैं, मिथ्यादृष्टि नैरयिकों से अविरहित हैं अथवा सम्यग्मिथ्यादृष्टि नैरयिकों से अविरहित हैं ? गौतम ! सम्यग्दृष्टि नैरयिकों से भी अविरहित होते हैं तथा मिथ्यादृष्टि नैरयिकों से भी अविरहित होते हैं और सम्यग्मिथ्यादृष्टि नैरयिकों से (कदाचित्) अविरहित होते हैं और (कदाचित्) विरहित होते हैं । इसी प्रकार असंख्यात योजन विस्तार वाले नारकावासों के विषय में भी तीनों आलापक कहना चाहिए । इसी प्रकार शर्करा-प्रभा से लेकर यावत् तमःप्रभापृथ्वी तक समझना । भगवन् ! अधःसप्तमपृथ्वी के पाँच अनुत्तर यावत् संख्यात योजन विस्तार वाले नारकावासों में क्या सम्यग्दृष्टि नैरयिक उत्पन्न होते हैं ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! (वहाँ) केवल मिथ्यादृष्टि नैरयिक उत्पन्न होते हैं ।

इसी प्रकार उद्वर्त्तना के विषय में भी कहना । रत्नप्रभा में सत्ता के समान यहाँ भी मिथ्यादृष्टि द्वारा अविरहित आदि के विषय में कहना चाहिए । इसी प्रकार असंख्यात योजन विस्तार वाले नारकावासों के विषय में (पूर्वोक्त) तीनों आलापक कहना ।

सूत्र - ५६६

भगवन् ! क्या वास्तव में कृष्णलेश्यी, नीललेश्यी, यावत् शुक्ललेश्यी बनकर (जीव पुनः) कृष्णलेश्यी नैरयिकों में उत्पन्न हो जाता है ? हाँ, गौतम ! हो जाता है । भगवन् ! ऐसा किस कारण से कहते हैं ? गौतम ! उसके लेश्यास्थान संक्लेश को प्राप्त होते-होते कृष्णलेश्या के रूप में परिणत हो जाते हैं और कृष्णलेश्या के रूप में परिणत हो जाने पर वह जीव कृष्णलेश्या वाले नारकों में उत्पन्न हो जाता है । इसलिए, हे गौतम ! ऐसा कहा जाता हे कि यावत् कृष्णलेश्या वाले नारकों में उत्पन्न हो जाता है ।

भगवन् ! क्या कृष्णलेश्यी यावत् शुक्ललेश्यी होकर जीव (पुनः) नीललेश्या वाले नारकों में उत्पन्न हो जाते हैं? हाँ, गौतम ! यावत् उत्पन्न हो जाते हैं । भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहते हैं ? गौतम ! लेश्या के स्थान उत्तरोत्तर

संक्लेश को प्राप्त होते-होते तथा विशुद्ध होते-होते (अन्त में) नीललेश्या के रूप में परिणत हो जाते हैं । नीललेश्या के रूप में परिणत होने पर वह नीललेश्या वाले नैरयिकों में उत्पन्न हो जाते हैं । इसलिए हे गौतम ! (पूर्वोक्त रूप से) यावत् उत्पन्न हो जाते हैं, ऐसा कहा गया है ।

भगवन् ! क्या वस्तुतः कृष्णलेश्यी, नीललेश्यी यावत् शुक्ललेश्यी होकर (जीव पुनः) कापोतलेश्या वाले नैरयिकों में उत्पन्न हो जाते हैं ? जिस प्रकार नीललेश्या के विषय में कहा गया, उसी प्रकार कापोतलेश्या के विषय में भी, यावत्-इस कारण से हे गौतम ! उत्पन्न हो जाते हैं, यहाँ तक कहना चाहिए । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है।

शतक-१३ – उद्देशक-२

सूत्र - ५६७

भगवन् ! देव कितने प्रकार के कहे गए हैं ? गौतम ! देव चार प्रकार के कहे गए हैं, यथा-भवनवासी, वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिक ।

भगवन् ! भवनवासी देव कितने प्रकार के कहे हैं ? गौतम ! दस प्रकार के यथा-असुरकुमार यावत् स्तनित कुमार । इस प्रकार भवनवासी आदि देवों के भेदों का वर्णन द्वीतिय शतक के सप्तम देवोद्देशक के अनुसार यावत् सर्वार्थसिद्ध तक जानना ।

भगवन् ! असुरकुमार देवों के कितने लाख आवास हैं ? गौतम ! चौंसठ लाख । भगवन् ! असुरकुमार देवों के आवास वे संख्यात योजन विस्तार वाले हैं या असंख्यात योजन विस्तार वाले हैं ? गौतम ! (वे) संख्यात योजन विस्तार वाले भी हैं और असंख्यात योजन विस्तार वाले भी हैं । भगवन् ! असुरकुमारों के चौंसठ लाख आवासों में से संख्यात योजन विस्तार वाले असुरकुमारावासों में एक समय में कितने असुरकुमार उत्पन्न होते हैं, यावत् कितने तेजोलेश्यी उत्पन्न होते हैं ? (गौतम !) रत्नप्रभापृथ्वी के प्रश्नोत्तर समान यहाँ भी उसी प्रकार समझ लेना । विशेष यह है कि यहाँ दो वेदों सहित उत्पन्न होते हैं, नपुंसकवेदी उत्पन्न नहीं होते । शेष पूर्ववत् । उद्वर्त्तना के विषय में भी उसी प्रकार जानना विशेषता यह है कि असंज्ञी भी उद्वर्त्तना करते हैं । अवधिज्ञानी और अवधिदर्शनी उद्वर्त्तना नहीं करते । शेष पूर्ववत् । सत्ता के विषय में, प्रथमोद्देशक अनुसार कहना । किन्तु विशेष यह है कि वहाँ संख्यात स्त्रीवेदक हैं और संख्यात पुरुषवेदक हैं, नपुंसकवेदक नहीं हैं । क्रोधकषायी कदाचित् होते हैं, कदाचित् नहीं होते । यदि होते हैं तो जघन्य एक, दो या तीन और उत्कृष्ट संख्यात होते हैं । इसी प्रकार मानकषायी और मायाकषायी के विषय में कहना । लोभकषायी संख्यात कहे गए हैं । शेष कथन पूर्ववत् । (संख्यात विस्तृत आवासों में) उत्पाद, उद्वर्त्तना और सत्ता, इन तीनों के आलापकों में चार लेश्याएं कहना । असंख्यात योजन विस्तार वाले असुरकुमारा-वासों के विषय में भी इसी प्रकार कहना । विशेषता इतनी है कि पूर्वोक्त तीनों आलापकों में 'असंख्यात' कहना तथा 'असंख्यात अचरम कहे गए हैं,' यहाँ तक कहना ।

नागकुमार देवों के कितने लाख आवास कहे गए हैं ? (गौतम !) पूर्वोक्त रूप से (नागकुमार से लेकर) स्तनितकुमार तक (उसी प्रकार) कहना चाहिए । विशेष इतना है कि जहाँ जितने लाख भवन हों, वहाँ उतने लाख भवन कहने चाहिए ।

भगवन् ! वाणव्यन्तर देवों के कितने लाख आवास कहे गए हैं ? गौतम ! असंख्यात लाख आवास । भगवन् ! वे संख्येय विस्तृत हैं अथवा असंख्येय ? गौतम ! वे संख्येय विस्तृत हैं, असंख्येयविस्तृत नहीं हैं । भगवन्! वाणव्यन्तरदेवों के संख्येयविस्तृत आवासों में एक समय में कितने वाणव्यन्तर देव उत्पन्न होते हैं ? (गौतम !) असुरकुमार देवों के संख्येय विस्तृत आवासों के समान वाणव्यन्तर देवों के भी तीनों आलापक कहने चाहिए । भगवन् ! ज्योतिष्क देवों के कितने लाख विमानावास हैं ? गौतम ! असंख्यात लाख । भगवन् ! वे संख्येय विस्तृत हैं या असंख्येय ? गौतम ! संख्येय विस्तृत होते हैं । तथा वाणव्यन्तर देवों के समान ज्योतिष्क देवों के विषय में तीन आलापक कहना । विशेषता यह है कि इनमें केवल एक तेजोलेश्या ही होती है । व्यन्तरदेवों में असंज्ञी उत्पन्न होते हैं, ऐसा कहा गया था, किन्तु इनमें असंज्ञी उत्पन्न नहीं होते (न ही उद्वर्त्तते हैं और न च्यवते हैं) । शेष पूर्ववत् ।

भगवन् ! सौधर्मकल्प में कितने लाख विमानावास हैं ? गौतम ! बत्तीस लाख । भगवन् ! वे विमानावास संख्येय विस्तृत हैं या असंख्येय विस्तृत ? गौतम ! वे संख्येय विस्तृत भी हैं और असंख्येय विस्तृत भी हैं । भगवन् ! सौधर्मकल्प के बत्तीस लाख विमानावासों में से संख्यात योजन विस्तार वाले विमानों में एक समय में कितने सौधर्म देव उत्पन्न होते हैं ? और तेजोलेश्या वाले सौधर्मदेव कितने उत्पन्न होते हैं ? ज्योतिष्कदेवों के समान यहाँ भी तीन आलापक कहने चाहिए । विशेष इतना है कि तीनों आलापकों में 'संख्यात' पाठ कहना तथा अवधिज्ञानी-अवधि-दर्शनी का च्यवन भी कहना । शेष पूर्ववत् । असंख्यात योजन विस्तृत सौधर्म-विमानावासों के भी इसी प्रकार तीनों आलापक कहने चाहिए । विशेष इतना है कि 'संख्यात' के बदले 'असंख्यात' कहना । किन्तु असंख्येय-योजन-विस्तृत विमानावासों में से अवधिज्ञानी और अवधिदर्शनी तो 'संख्यात' ही च्यवते हैं । शेष पूर्ववत् । सौधर्म देवलोक के समान ईशान देवलोक के विषय में भी छह आलापक कहने चाहिए ।

सनत्कुमार देवलोक के विषय में इसी प्रकार जानना । विशेष इतना कि सनत्कुमार देवों में स्त्रीवेदक उत्पन्न नहीं होते, सत्ताविषयक गमकों में भी स्त्रीवेदी नहीं कहे जाते । यहाँ तीनों आलापकों में असंज्ञी पाठ नहीं कहना । शेष पूर्ववत् समझना । इसी प्रकार यावत् सहस्रार देवलोक तक कहना । यहाँ अन्तर विमानों की संख्या और लेश्या के विषय में है । शेष पूर्वोक्तवत् । भगवन् ! आनत और प्राणत देवलोकों में कितने सौ विमानावास हैं ? गौतम ! चार सौ । भगवन् ! वे संख्यात योजन विस्तृत हैं या असंख्यात योजन विस्तृत ? गौतम ! वे संख्यात योजन विस्तृत भी हैं और असंख्यात योजन विस्तृत भी हैं । संख्यात योजन विस्तार वाले विमानावासों के विषय में सहस्रार देवलोक के समान तीन आलापक कहना । असंख्यात योजन विस्तार वाले विमानों में उत्पाद और च्यवन के विषय में 'संख्यात' कहना एवं 'सत्ता' में असंख्यात कहना । इतना विशेष है कि नोइन्द्रियोपयुक्त अनन्तरोपपन्नक, अनन्तरावगाढ, अनन्तराहारक और अनन्तर-पर्याप्तक, ये पाँच जघन्य एक, दो या तीन और उत्कृष्ट संख्यात हैं । शेष असंख्यात कहना । आनत और प्राणत के समान आरण और अच्युत कल्प के विषय में भी कहना । विमानों की संख्या में विभिन्नता है । इसी प्रकार नौ ग्रैवेयक देवलोकों के विषय में भी कहना ।

भगवन् ! अनुत्तर विमान कितने कहे गए हैं ? गौतम ! पाँच । भगवन् ! वे संख्यात योजन विस्तृत हैं या असंख्यात योजन ? गौतम ! (उनमें से एक) संख्यात योजन विस्तृत है और (चार) असंख्यात योजन विस्तृत हैं । भगवन् ! पाँच अनुत्तरविमानों में से संख्यात योजन विस्तार वाले विमान में एक समय में कितने अनुत्तरौपपातिक देव उत्पन्न होते हैं, कितने शुक्ललेश्यी उत्पन्न होते हैं, इत्यादि प्रश्न । गौतम ! पाँच अनुत्तरविमानों में से संख्यात योजन विस्तृत ('सर्वार्थसिद्ध' नामक) अनुतरविमान में एक समय में, जघन्य एक, दो या तीन और उत्कृष्ट संख्यात अनुत्तरौपपातिक देव उत्पन्न होते हैं । संख्यात योजन विस्तृत ग्रैवेयक विमानों के समान यहाँ भी कहना । विशेषता यह है कि कृष्णपाक्षिक अभव्यसिद्धिक तथा तीन अज्ञान वाले जीव, यहाँ उत्पन्न नहीं होते, न ही च्यवते हैं और सत्ता में भी इनका कथन नहीं करना । इसी प्रकार 'अचरम' का निषेध करना, यावत् संख्यात चरम कहे गए हैं । शेष पूर्ववत् । असंख्यात योजन विस्तार वाले चार अनुत्तरविमानों में ये (पूर्वोक्त कृष्णपाक्षिक आदि जीव पूर्वोक्त तीनों आलापकों में) नहीं कहे गए हैं । विशेषता इतनी ही है कि अचरम जीव भी होते हैं । असंख्यात योजन विस्तृत ग्रैवेयक विमानों के समान यहाँ भी अवशिष्ट सब कथन यावत् असंख्यात अचरम जीव कहे गये हैं, यहाँ तक करना।

भगवन् ! क्या असुरकुमार देवों के चौंसठ लाख असुरकुमारावासों में से संख्यात योजन विस्तृत असुर-कुमारावासों में सम्यग्दृष्टि असुरकुमार उत्पन्न होते हैं अथवा मिथ्यादृष्टि उत्पन्न होते हैं, या मिश्र दृष्टि उत्पन्न होते हैं? (गौतम !) रत्नप्रभापृथ्वी के सम्बन्ध में कहे तीन आलापक यहाँ भी कहने चाहिए और असंख्यात योजन विस्तृत असुरकुमारावासों के विषय में भी इसी प्रकार तीन आलापक कहना । इसी प्रकार यावत् ग्रैवेयकविमानों तथा अनुत्तरविमानों में भी इसी प्रकार कहना । विशेष बात यह है कि अनुत्तरविमानों के तीनों आलापकों में मिथ्यादृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि का कथन नहीं करना । शेष पूर्ववत् ।

भगवन् ! क्या कृष्णलेश्यी नीललेश्यी यावत् शुक्ललेश्यी होकर जीव कृष्णलेश्यी देवों में उत्पन्न हो जाता है?

हाँ, गौतम ! जिस प्रकार (तेरहवें शतक के) प्रथम उद्देशक में नैरयिकों के विषय में कहा, उसी प्रकार यहाँ भी कहना चाहिए । नीललेश्यी के विषय में भी उसी प्रकार कहना चाहिए, इसी प्रकार यावत् पद्मलेश्यी देवों के विषय में कहना । शुक्ललेश्यी देवों के विषय में भी इसी प्रकार कहना । विशेषता यह है कि लेश्यास्थान विशुद्ध होते-होते शुक्ललेश्या में परिणत हो जाते हैं । शुक्ललेश्या में परिणत होने के पश्चात् ही (वे जीव) शुक्ललेश्यी देवों में उत्पन्न होते हैं । इस कारण से हे गौतम ! 'उत्पन्न होते हैं' ऐसा कहा गया है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१३ – उद्देशक-३

सूत्र - ५६८

भगवन् ! क्या नैरयिक जीव अनन्तराहारी होते हैं इसके बाद निर्वर्त्तना करते हैं? इत्यादि प्रश्न । (हाँ, गौतम!) वे इसी प्रकार से करते हैं । (इसके उत्तरमें) प्रज्ञापना सूत्र का परिचारणापद समग्र कहना । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है

शतक-१३ – उद्देशक-४

सूत्र - ५६९

भगवन् ! नरकपृथ्वीयाँ कितनी हैं ? गौतम ! सात, यथा-रत्नप्रभा यावत् अधःसप्तमा पृथ्वी । अधःसप्तमा पृथ्वी में पाँच अनुत्तर और महातिमहान् नरकावास यावत् अप्रतिष्ठान तक हैं । वे नरकावास छठी तमःप्रभापृथ्वी के नरकावासों से महत्तर हैं, महाविस्तीर्णतर हैं, महान अवकाश वाले हैं, बहुत रिक्त स्थान वाले हैं; किन्तु वे महाप्रवेश वाले नहीं हैं, वे अत्यन्त आकीर्णतर और व्याकुलतायुक्त नहीं हैं, उन नरकावासों में रहे हुए नैरयिक, छठी तमःप्रभा पृथ्वी के नैरयिकों की अपेक्षा महाकर्म वाले, महाक्रिया वाले, महाश्रव वाले एवं महावेदना वाले हैं । वे न तो अल्पकर्म वाले हैं और न अल्प क्रिया, अल्प आश्रव और अल्पवेदना वाले हैं । वे नैरयिक अल्प ऋद्धि वाले और अल्पद्युति वाले हैं । वैसे वे महान् ऋद्धि वाले और महाद्युति वाले नहीं हैं ।

छठी तमःप्रभा पृथ्वी में पाँच कम एक लाख नारकावास कहे गए हैं । वे नारकावास अधःसप्तमपृथ्वी के नारकावासों के जैसे न तो महत्तर हैं और न ही महाविस्तीर्ण हैं; न ही महान् अवकाश वाले हैं और न शून्य स्थान वाले हैं । वे महाप्रवेश वाले हैं, संकीर्ण हैं, व्याप्त हैं, विशाल हैं । उन नारकावासों में रहे हुए नैरयिक अधःसप्तम पृथ्वी के नैरयिकों की अपेक्षा अल्पकर्म, अल्पक्रिया, अल्प-आश्रव और अल्पवेदना वाले हैं । वे अधःसप्तमपृथ्वी के नारकों के समान महाकर्म, महाक्रिया, महाश्रव और महावेदना वाले नहीं हैं । वे उनकी अपेक्षा महान् ऋद्धि और महाद्युति वाले हैं, किन्तु वे उनकी तरह अल्पऋद्धि वाले और अल्पद्युति वाले नहीं हैं । छठी तमःप्रभानरकपृथ्वी के नारकावास पाँचवीं धूमप्रभानरकपृथ्वी के नारकावासों से महत्तर, महाविस्तीर्ण, महान् अवकाश वाले, महान् रिक्त स्थान वाले हैं । वे पंचम नरकपृथ्वी के नारकावासों की तरह महाप्रवेश वाले, आकीर्ण, व्याकुलतायुक्त एवं विशाल नहीं हैं । छठी पृथ्वी के नारकावासों के नैरयिक पाँचवी धूमप्रभापृथ्वी के नैरयिकों की अपेक्षा महाकर्म, महाक्रिया, महाश्रव तथा महावेदना वाले हैं । उनकी तरह वे अल्पकर्म, अल्पक्रिया, अल्पाश्रव एवं अल्पवेदना वाले नहीं हैं तथा वे उनसे अल्पवृद्धि वाले और अल्पद्युति वाले हैं, किन्तु महान् ऋद्धि वाले और महाद्युति वाले नहीं हैं ।

पाँचवीं धूमप्रभापृथ्वी में तीन लाख नारकावास कहे गए हैं । इसी प्रकार जैसे छठी तमःप्रभापृथ्वी के विषय में परस्पर तारतम्य बताया, वैसे सातों नरकपृथ्वीयों के विषय के परस्पर तारतम्य, यावत् रत्नप्रभा तक कहना चाहिए, वह पाठ यावत् शर्कराप्रभापृथ्वी के नैरयिक, रत्नप्रभापृथ्वी के नैरयिकों की अपेक्षा महाऋद्धि और महाद्युति वाले नहीं हैं । वे उनकी अपेक्षा अल्पऋद्धि और अल्पद्युति वाले हैं, (यहाँ तक) कहना चाहिए ।

सूत्र - ५७०

भगवन् ! रत्नप्रभा के नैरयिक (वहाँ की) पृथ्वी के स्पर्श का कैसा अनुभव करते रहते हैं ? गौतम ! अनिष्ट यावत् मन के प्रतिकूल स्पर्श का अनुभव करते रहते हैं । इसी प्रकार यावत् अधःसप्तमी पृथ्वी के नैरयिकों द्वारा पृथ्वीकाय के स्पर्शानुभव के विषय में कहना । इसी प्रकार अप्कायिक के स्पर्श का (अनुभव करते हुए रहते हैं ।) इसी प्रकार यावत् वनस्पतिकायिक के स्पर्श (के विषय में भी कहना चाहिए) ।

सूत्र - ५७१

भगवन् ! क्या यह रत्नप्रभापृथ्वी, द्वीतिय शर्कराप्रभापृथ्वी की अपेक्षा मोटाई में सबसे मोटी और चारों ओर सबसे छोटी है ? (हाँ, गौतम !) इसी प्रकार है । (शेष सब वर्णन) जीवाभिगमसूत्र के दूसरे नैरयिक उद्देशक में (अनुसार कहना चाहिए) ।

सूत्र - ५७२

भगवन् ! इस रत्नप्रभापृथ्वी के नारकावासों के परिपार्श्व में जो पृथ्वीकायिक (यावत् वनस्पतिकायिक जीव हैं, क्या वे महाकर्म, महाक्रिया, महा-आश्रव और महावेदना वाले हैं ?) इत्यादि प्रश्न । (हाँ, गौतम !) हैं, (इत्यादि पूर्ववत्)

सूत्र - ५७३

भगवन् ! लोक के आयाम का (मध्यभाग) कहाँ कहा गया है ? गौतम ! इस रत्नप्रभापृथ्वी के आकाश-खण्ड के असंख्यातवे भाग का अवगाहन करने पर लोक की लम्बाई का मध्यभाग कहा गया है । भगवन् ! अधोलोक की लम्बाई का मध्यभाग कहाँ कहा गया है ? गौतम ! चौथी पंकप्रभापृथ्वी के आकाशखण्ड के कुछ अधिक अर्द्धभाग का उल्लंघन करने के बाद, अधोलोक की लम्बाई का मध्यभाग कहा गया है । भगवन् ! ऊर्ध्व-लोक की लम्बाई का मध्यभाग कहाँ बताया गया है ? गौतम ! सनत्कुमार और माहेन्द्र देवलोकों के ऊपर और ब्रह्मलोक कल्प के नीचे एवं रिष्ट नामक विमानप्रस्तट में ऊर्ध्वलोक की लम्बाई का मध्यभाग बताया गया है ।

भगवन् ! तिर्यक्लोक की लम्बाई का मध्यभाग कहाँ बताया गया है ? गौतम ! इस जम्बूद्वीप के मन्दराचल के बहुसम मध्यभाग में इस रत्नप्रभापृथ्वी के ऊपर वाले और नीचले दोनों क्षुद्रप्रस्तटों में, तिर्यग्लोक के मध्य भाग रूप आठ रुचक-प्रदेश कहे गए हैं, उन (रुचक प्रदेशों) में से ये दश दिशाएं नीकली हैं । यथा–पूर्वदिशा, पूर्व-दक्षिण दिशा इत्यादि, (शेष समग्र वर्णन) दशवें शतक के अनुसार, दिशाओं के दश नाम ये हैं; (यहाँ तक) कहना ।

सूत्र - ५७४

भगवन् ! इन्द्रा (पूर्व) दिशा के आदि में क्या है ? वह कहाँ से नीकली है ? उसके आदि में कितने प्रदेश हैं ? उत्तरोत्तर कितने प्रदेशों की वृद्धि होती है ? वह कितने प्रदेश वाली है ? उसका पर्यवसान कहाँ होता है ? और उसका संस्थान कैसा है ? गौतम ! ऐन्द्री दिशा के प्रारम्भ में रुचक प्रदेश है । वह रुचक प्रदेशों से नीकली है । उसके प्रारम्भ में दो प्रदेश होते हैं । आगे दो-दो प्रदेशों की उत्तरोत्तर वृद्धि होती है । वह लोक की अपेक्षा से असंख्यातप्रदेश वाली है और अलोक की अपेक्षा से अनन्तप्रदेश वाली है । लोक-आश्रयी वह सादि-सान्त है और अलोक-आश्रयी वह सादि-अनन्त है । लोक-आश्रयी वह मुरज के आकर की है, और अलोक-आश्रयी वह ऊर्ध्व-शकटाकार की है ।

भगवन् ! आग्नेयी दिशा के आदि में क्या है ? उसका उद्गम कहाँ से है ? उसके आदि में कितने प्रदेश हैं? वह कितने प्रदेशों के विस्तार वाली है ? वह कितने प्रदेशों वाली है ? उसका अन्त कहाँ होता है ? और उसका संस्थान कैसा है ? गौतम ! आग्नेयी दिशा के आदि में रुचकप्रदेश हैं । उसका उद्गम भी रुचकप्रदेश से हैं । उसके आदि में एक प्रदेश है । वह अन्त तक एक-एक प्रदेश के विस्तार वाली है । वह अनुत्तर है । वह लोक की अपेक्षा असंख्यातप्रदेश वाली है और अलोक की अपेक्षा अनन्तप्रदेश वाली है । वह लोक-आश्रयी सादि-सान्त है और अलोक-आश्रयी सादि-अनन्त है । उसका आकार टूटी हुई मुक्तावली के समान है । याम्या का स्वरूप ऐन्द्री के समान समझना चाहिए । नैऋती का स्वरूप आग्नेयी के समान मानना चाहिए । (संक्षेप में) ऐन्द्री दिशा के समान चारों दिशाओं का तथा आग्नेयी दिशा के समान चारों विदिशाओं का स्वरूप जानना चाहिए ।

भगवन् ! विमला (ऊर्ध्व) दिशा के आदि में क्या है ? इत्यादि आग्नेयी के समान प्रश्न । गौतम ! विमल दिशा के आदि में रुचक प्रदेश है । वह रुचकप्रदेशों से नीकली है । उसके आदि में चार प्रदेश हैं । वह अन्त तक दो प्रदेशों के विस्तार वाली है । वह अनुत्तर है । लोक-आश्रयी वह असंख्यात प्रदेश वाली है, जबकि अलोक आश्रयी अनन्त प्रदेश वाली है, इत्यादि शेष सब वर्णन आग्नेयी के समान कहना चाहिए । विशेषता यह है कि वह रुचका-कार है । तमा (अधो) दिशा के विषय में भी (कहना चाहिए) ।

सूत्र - ५७५

भगवन् ! यह लोक क्या कहलाता है–लोक का स्वरूप क्या है ? गौतम ! पंचास्तिकायों का समूहरूप ही यह लोक कहलाता है । वे पंचास्तिकाय इस प्रकार है–धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, यावत् पुद्गलास्तिकाय ।

भगवन् ! धर्मास्तिकाय से जीवों की क्या प्रवृत्ति होती है ? गौतम ! धर्मास्तिकाय से जीवों के आगमन, गमन, भाषा, उन्मेष, मनोयोग, वचनयोग और काययोग प्रवृत्त होते हैं । ये और इस प्रकार के जितने भी चल भाव हैं वे सब धर्मास्तिकाय द्वारा प्रवृत्त होते हैं । धर्मास्तिकाय का लक्षण गतिरूप है । भगवन् ! अधर्मास्तिकाय से जीवो की क्या प्रवृत्ति होती है ? गौतम ! अधर्मास्तिकाय से जीवों के स्थान, निषीदन, त्वग्वर्त्तन और मन को एकाग्र करना (आदि की प्रवृत्ति होती है) । ये तथा इस प्रकार के जितने भी स्थिर भाव हैं, वे सब अधर्मास्तिकाय से प्रवृत्त होते हैं । अधर्मास्तिकाय का लक्षण स्थितिरूप है । भगवन् ! आकाशास्तिकाय से जीवों और अजीवों की क्या प्रवृत्ति होती है ? गौतम ! आकाशास्तिकाय, जीवद्रव्यों और अजीवद्रव्यों का आश्रयरूप होता है ।

सूत्र - ५७६

एक परमाणु से पूर्ण या दो परमाणुओं से पूर्ण (एक आकाशप्रदेश में) सौ परमाणु भी समा सकते हैं । सौ करोड़ परमाणुओं से पूर्ण एक आकाशप्रदेश में एक हजार करोड़ परमाणु भी समा सकते हैं ।

सूत्र - ५७७

आकाशास्तिकाय का लक्षण 'अवगाहना' रूप है ।

भगवन् ! जीवास्तिकाय से जीवों की क्या प्रवृत्ति होती है ? गौतम ! जीवास्तिकाय के द्वारा जीव अनन्त आभिनिबोधिकज्ञान की पर्यायों को, अनन्त श्रुतज्ञान की पर्यायों को प्राप्त करता है; (इत्यादि सब कथन) द्वीतिय शतक के दसवें अस्तिकाय उद्देशक के अनुसार; यावत् वह उपयोग को प्राप्त होता है, (यहाँ तक कहना चाहिए) । जीव का लक्षण उपयोग-रूप है । भगवन् ! पुद्गलास्तिकाय से जीवों की क्या प्रवृत्ति होती है ? गौतम ! पुद्गला-स्तिकाय से जीवों के औदारिक, वैक्रिय, आहारक, तैजस, कार्मण, श्रोत्रेन्द्रिय, चक्षुरिन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, जिह्वेन्द्रिय, स्पर्शेन्द्रिय, मनोयोग, वचनयोग, काययोग और श्वास-उच्छ्वास का ग्रहण करने की प्रवृत्ति होती है । पुद्गलास्ति-काय का लक्षण 'ग्रहण' रूप है ।

सूत्र - ५७८

भगवन् ! धर्मास्तिकाय का एक प्रदेश, कितने धर्मास्तिकाय के प्रदेशों द्वारा स्पृष्ट होता है ? गौतम ! वह जघन्य पद में तीन प्रदेशों से और उत्कृष्ट पद में छह प्रदेशों से स्पृष्ट होता है । अधर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट होता है ? (गौतम ! वह) जघन्य पद में चार प्रदेशों से और उत्कृष्ट पद में सात अधर्मास्तिकाय प्रदेशों से स्पृष्ट होता है । वह आकाशास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट होता है ? (गौतम ! वह) सात (आकाश –) प्रदेशों से स्पृष्ट होता है । जीवास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट होता है ? अनन्त (जीव –) प्रदेशों से स्पृष्ट होता है । पुद्ग-लास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट होता है ? (गौतम ! वह) अनन्त प्रदेशों से स्पृष्ट होता है । अद्धाकाल के कितने समयों से स्पृष्ट होता है ? (गौतम ! वह) कथंचित् स्पृष्ट होता है और कथंचित् स्पृष्ट नहीं होता । यदि स्पृष्ट होता है तो नियमतः अनन्त समयों से स्पृष्ट होता है ।

भगवन् ! अधर्मास्तिकाय का एक प्रदेश, धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट होता है ? (गौतम !) धर्मास्तिकाय के जघन्य पद में चार और उत्कृष्ट पद में सात प्रदेशों से स्पृष्ट होता है । कितने अधर्मास्तिकाय के प्रदेशों से स्पृष्ट होता है ? जघन्य पद में तीन और उत्कृष्ट पद में छह प्रदेशों से स्पृष्ट होता है । शेष सभी वर्णन धर्मास्तिकाय के वर्णन के समान समझना । भगवन् ! धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट होता है ? कदाचित् स्पृष्ट होता है, कदाचित् स्पृष्ट नहीं होता । यदि स्पृष्ट होता है तो जघन्य पद में एक, दो, तीन या चार प्रदेशों से और उत्कृष्ट पद में सात प्रदेशो से स्पृष्ट होता है । इसी प्रकार अधर्मास्तिकाय के प्रदेशों से स्पृष्ट के विषय में जानना ।

(भगवन् ! आकाशास्तिकाय का एक प्रदेश) आकाशास्तिकाय के कितने प्रदेशों से (स्पृष्ट होता है ?) गौतम!

वह छह प्रदेशों से (स्पृष्ट होता है) । जीवास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट होता है ? वह कदाचित् स्पृष्ट होता है, कदाचित् नहीं । यदि स्पृष्ट होता है तो नियमतः अनन्त प्रदेशों से स्पृष्ट होता है । इसी प्रकार पुद्गलास्ति-काय के प्रदेशों से तथा अद्धाकाल के समयों से स्पृष्ट होने के विषय में जानना चाहिए ।

सूत्र - ५७९

भगवन् ! जीवास्तिकाय का एक प्रदेश धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशों में स्पृष्ट होता है ? गौतम ! वह जघन्य पद में धर्मास्तिकाय के चार प्रदेशों से और उत्कृष्टपद में सात प्रदेशों से स्पृष्ट होता है । इसी प्रकार वह अधर्मास्तिकाय के प्रदेशों से स्पृष्ट होता है । (भगवन् !) आकाशास्तिकाय के कितने प्रदेशों से वह स्पृष्ट होता है ? (गौतम ! वह) आकाशास्तिकाय के सात प्रदेशों से स्पृष्ट होता है । भगवन् ! जीवास्तिकाय के कितने प्रदेशों से वह (जीवास्तिकायिक एक प्रदेश) स्पृष्ट होता है ? (गौतम !) शेष सभी कथन धर्मास्तिकाय के प्रदेश के समान (समझना चाहिए) । भगवन् ! एक पुद्गलास्तिकायिक प्रदेश धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट होता है ? गौतम ! जीवास्तिकाय के एक प्रदेश अनुसार जानना ।

भगवन् ! पुद्गलास्तिकाय के दो प्रदेश, धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट हैं ? गौतम ! वे जघन्य पद में धर्मास्तिकाय के छह प्रदेशों से और उत्कृष्ट पद में बारह प्रदेशों से स्पृष्ट हैं । इसी प्रकार अधर्मास्तिकाय के प्रदेशों से भी वे स्पृष्ट होते हैं । भगवन् ! वे आकाशास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट होते हैं ? गौतम ! वे आकाशास्ति-काय के १२ प्रदेशों से स्पृष्ट हैं । शेष सभी वर्णन धर्मास्तिकाय के समान जानना चाहिए ।

भगवन् ! पुद्गलास्तिकाय के तीन प्रदेश, धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट होते हैं ? गौतम ! जघन्य पद में आठ प्रदेशों और उत्कृष्ट पद में १७ प्रदेशों से । इसी प्रकार अधर्मास्तिकाय के प्रदेशों से भी वे स्पृष्ट होते हैं । भगवन् आकाशास्तिकाय के कितने प्रदेशों से (वे स्पृष्ट होते हैं ?) गौतम ! सत्तरह प्रदेशों से । शेष धर्मास्तिकाय के समान जानना । इसी आलापक के समान यावत् दश प्रदेशों तक कहना । विशेषता यह है कि जघन्य पद में दो और उत्कृष्ट पद में पाँच का प्रक्षेप करना ।

(भगवन् !) पुद्गलास्तिकाय के चार प्रदेश धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट होते हैं ? जघन्य पद में दस प्रदेशों से और उत्कृष्ट पद में बाईस प्रदेशों से स्पृष्ट होते हैं । (भगवन् !) पुद्गलास्तिकाय के पाँच प्रदेश ? जघन्य बारह प्रदेशों से और उत्कृष्ट सत्ताईस प्रदेशों से । (भगवन् !) पुद्गलास्तिकाय के छह प्रदेश ? (गौतम !) जघन्यपद में चौदह और उत्कृष्ट पद में बत्तीस प्रदेशों से । (भगवन् !) पुद्गलास्तिकाय के सात प्रदेश ? (गौतम !) जघन्य पद में सोलह और उत्कृष्ट पद में सैंतीस प्रदेशों से ।

(भगवन् !) पुद्गलास्तिकाय के आठ प्रदेश धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट होते हैं ? (गौतम ! वे) जघन्य पद में १८ और उत्कृष्ट पद में बयालीस प्रदेशों से (स्पृष्ट होते हैं ।) (भगवन् !) पुद्गलास्तिकाय के नौ प्रदेश ? (गौतम !) जघन्य पद में बीस और उत्कृष्ट पद में छयालीस प्रदेशों से । (भगवन् !) पुद्गलास्तिकाय के दश प्रदेश ? (गौतम !) जघन्य पद में बाईस और उत्कृष्ट पद में बावन प्रदेशों से । आकाशास्तिकाय के लिए सर्वत्र उत्कृष्ट पद ही कहना चाहिए । भगवन् ! पुद्गलास्तिकाय के संख्यात प्रदेश ? गौतम ! जघन्य पद में उन्हीं संख्यात प्रदेशों को दुगुने करके उनमें दो रूप और अधिक जोड़े और उत्कृष्ट पद में उन्हीं संख्यात प्रदेशों को पाँच गुने करके उनमें दो रूप और अधिक जोड़ें, उतने प्रदेशों से वे स्पृष्ट होते हैं । अधर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट होते हैं? पूर्ववत् ।

भगवन् ! आकाशास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट होते हैं ? (गौतम !) उन्हीं संख्यात प्रदेशों को पाँच गुणे करके उनमें दो रूप और जोड़ें, उतने प्रदेशों से स्पृष्ट होते हैं । (भगवन् !) वे जीवास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट होते हैं ? (गौतम !) अनन्त प्रदेशों से । (भगवन् !) पुद्गलास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट होते हैं ? (गौतम !) अनन्त प्रदेशों से । (भगवन् !) अद्धाकाल के कितने समयों से स्पृष्ट होते हैं ? (गौतम !) कदाचित् स्पृष्ट होते हैं, कदाचित् स्पृष्ट नहीं होते, यावत् अनन्त समयों से स्पृष्ट होते हैं । भगवन् ! पुद्गलास्तिकाय के असंख्यात प्रदेश धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट होते हैं ? गौतम ! जघन्य पद में उन्हीं असंख्यात प्रदेशों को दुगुने करके उनमें दो रूप अधिक

जोड़ दें, उतने प्रदेशों से स्पृष्ट होते हैं और उत्कृष्ट पद में उन्हीं असंख्यात प्रदेशों को पाँच गुण करके उनमें दो रूप अधिक जोड़ दें, उतने प्रदेशों से स्पृष्ट होते हैं । शेष सभी वर्णन संख्यात प्रदेशों के समान जानना चाहिए, यावत् नियमतः अनन्त प्रदेशों से स्पृष्ट होते हैं, (यहाँ तक कहना चाहिए) । भगवन् ! पुद्गलास्ति-काय के अनन्त प्रदेश धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट होते हैं ? (गौतम !) असंख्यात प्रदेशों के अनुसार कथन करना चाहिए ।

भगवन् ! अद्धाकाल का एक समय धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट होता है ? सात प्रदेशों से । (भगवन् !) अधर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशों से ? पूर्ववत् जानना । इसी प्रकार आकाशास्तिकाय के प्रदेशों से भी (कहना) । जीवास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट होता है ? (गौतम !) अनन्त प्रदेशों से । इसी प्रकार यावत् अनन्त अद्धासमयों से स्पृष्ट होता है ।

भगवन् ! धर्मास्तिकाय द्रव्य, धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट होता है ? गौतम ! वह एक भी प्रदेश से स्पृष्ट नहीं होता । (भगवन् ! वह) धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट होता है ? (गौतम !) असंख्येय प्रदेशों से । (भगवन् ! वह) आकाशास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट होता है ? (गौतम !) असंख्येय प्रदेशों से । (भगवन् वह) जीवास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट होता है ? (गौतम !) अनन्त प्रदेशों से । (भगवन् ! वह) पुद्गलास्ति-काय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट होता है ? (गौतम !) अनन्त प्रदेशों से । (भगवन् !) अद्धाकाल के कितने समयों से स्पृष्ट होता है? (गौतम ! वह) कदाचित् स्पृष्ट होता है, और कदाचित् नहीं होता । यदि स्पृष्ट होता है तो नियमतः अनन्त समयों से ।

भगवन् ! अधर्मास्तिकाय द्रव्य धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट होता है ? (गौतम !) असंख्यात प्रदेशों से । भगवन् ! वह अधर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट होता है ? गौतम ! वह उसके एक भी प्रदेश से (स्पृष्ट नहीं होता) शेष सभी (द्रव्यों के प्रदेशों) से स्पर्शना के विषय के धर्मास्तिकाय के समान (जानना चाहिए) ।

इसी प्रकार सभी द्रव्य स्वस्थान में एक भी प्रदेश से स्पृष्ट नहीं होते, (किन्तु) परस्थान में आदि के तीनों के असंख्यात प्रदेशोंसे स्पर्शना कहना, पीछे के तीन स्थानों के अनन्तप्रदेशों से स्पर्शना अद्धासमय तक कहना । (यथा -) ''अद्धाकाल, कितने अद्धासमयों से स्पृष्ट होता है ?'' एक भी समय से स्पृष्ट नहीं होता ।

सूत्र - ५८०

भगवन् ! जहाँ धर्मास्तिकाय का एक प्रदेश अवगाढ़ है, वहाँ धर्मास्तिकाय के दूसरे कितने प्रदेश अवगाढ़ है? गौतम ! दूसरा एक भी प्रदेश अवगाढ़ नहीं है । भगवन् ! वहाँ अधर्मास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाढ़ हैं ? (गौतम !) वहाँ एक प्रदेश अववाढ़ होता है । (भगवन् ! वहाँ) आकाशास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाढ़ होते हैं ? (गौतम !) एक प्रदेश अवगाढ़ होता है । (भगवन् !) जीवास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाढ़ होते हैं ? (गौतम !) अनन्त प्रदेश अवगाढ़ होते हैं । (भगवन् ! वहाँ) पुद्गलास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाढ़ होते हैं ? (गौतम !) अनन्त प्रदेश । अद्धासमय कदाचित् अवगाढ़ होते हैं कदाचित् नहीं होते । यदि अवगाढ़ होते हैं तो अनन्त अद्धा-समय अवगाढ़ होते हैं ।

भगवन् ! जहाँ अधर्मास्तिकाय का एक प्रदेश अवगाढ़ होता है, वहाँ धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाढ़ होते हैं ? (गौतम !) एक प्रदेश । (वहाँ) अधर्मास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाढ़ होते हैं ? एक भी नहीं । शेष धर्मास्तिकाय के समान । भगवन् ! जहाँ आकाशास्तिकाय का एक प्रदेश अवगाढ़ होता है, वहाँ धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाढ़ होते हैं ? गौतम ! वहाँ धर्मास्तिकाय के प्रदेश कदाचित् अवगाढ़ होते हैं कदाचित् नहीं होते । यदि अवगाढ़ होते हैं तो एक प्रदेश अवगाढ़ होता है । इसी प्रकार अधर्मास्तिकाय के प्रदेशों के विषय में भी जानना। आकाशास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाढ़ होते हैं ? एक भी नहीं । (भगवन् ! वहाँ) जीवास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाढ़ होते हैं ? (गौतम ! वे) कदाचित् अवगाढ़ होते हैं कदाचित् नहीं होते । यदि अवगाढ़ होते हैं तो अनन्त प्रदेश अवगाढ़ होते हैं । इसी प्रकार यावत् अद्धासमय तक कहना ।

भगवन् ! जहाँ जीवास्तिकाय का एक प्रदेश अवगाढ़ होता है, वहाँ धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाढ़ होते हैं ? एक प्रदेश । इसी प्रकार अधर्मास्तिकाय और आकाशास्तिकाय के प्रदेशों में जानना । जीवास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाढ़ होते हैं ? अनन्त प्रदेश । शेष कथन धर्मास्तिकाय के समान समझना ।

भगवन् ! जहाँ पुद्गलास्तिकाय का एक प्रदेश अवगाढ़ है, वहाँ धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाढ़ हैं ? (गौतम !) जीवास्तिकाय के प्रदेशों के समान कथन करना । भगवन् ! जहाँ पुद्गलास्तिकाय के दो प्रदेश अवगाढ़ होते हैं, वहाँ धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाढ़ होते हैं ? कदाचित् एक या कदाचित् दो प्रदेश अवगाढ़ होते हैं । इसी प्रकार अधर्मास्तिकाय तथा आकाशास्तिकाय के प्रदेश के विषय में कहना । शेष कथन धर्मास्तिकाय के समान ।

भगवन् ! जहाँ पुद्गलास्तिकाय के तीन प्रदेश अवगाढ़ होते हैं, वहाँ धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाढ़ होते हैं? (गौतम!) कदाचित् एक, कदाचित् दो या कदाचित् तीन । इसी प्रकार अधर्मास्तिकाय तथा आका-शास्तिकाय के विषयमें भी कहना । शेष तीनों के विषय के, दो पुद्गलप्रदेशों के समान तीन पुद्गलप्रदेशों के विषय में भी कहना ।

आदि के तीन अस्तिकायों के साथ एक-एक प्रदेश बढ़ाना चाहिए । शेष विषय में दो पुद्गल प्रदेशों के समान यावत् दस प्रदेशों कहना । जहाँ पुद्गलास्तिकाय के संख्यात प्रदेश अवगाढ़ होते हैं, वहाँ धर्मास्तिकाय के कदाचित् एक, दो, तीन यावत् कदाचित् दस प्रदेश यावत् कदाचित् संख्यात प्रदेश अवगाढ़ होते हैं । जहाँ पुद्ग-लास्तिकाय के असंख्यात प्रदेश अवगाढ़ होते हैं, वहाँ धर्मास्तिकाय के कदाचित् एक प्रदेश यावत् कदाचित् संख्यात प्रदेश और कदाचित् असंख्यात प्रदेश अवगाढ़ होते हैं । पुद्गलास्तिकाय के समान अनन्त प्रदेशों के विषयमें भी कहना ।

भगवन् ! जहाँ एक अद्धासमय अवगाढ़ होता है, वहाँ धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाढ़ होते हैं ? एक प्रदेश अवगाढ़ होता है । (भगवन् ! वहाँ) अधर्मास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाढ़ होते हैं ? एक प्रदेश । (भगवन् ! वहाँ) आकाशास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाढ़ होते हैं ? एक प्रदेश । (भगवन् ! वहाँ) जीवास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाढ़ होते हैं ? अनन्त प्रदेश । इसी प्रकार अद्धासमय तक कहना चाहिए ।

भगवन् ! जहाँ एक धर्मास्तिकाय-द्रव्य अवगाढ़ होता है, वहाँ धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाढ़ होते हैं? (गौतम !) एक भी प्रदेश नहीं । (भगवन् ! वहाँ) अधर्मास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाढ़ होते हैं ? (गौतम !) असंख्येय प्रदेश । (वहाँ) आकाशास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाढ़ होते हैं ? असंख्येय प्रदेश । (वहाँ) जीवास्ति-काय के कितने प्रदेश अवगाढ़ होते हैं ? अनन्त प्रदेश । इसी प्रकार यावत् अद्धासमय (तक कहना चाहिए) ।

भगवन् ! जहाँ एक अधर्मास्तिकाय द्रव्य अवगाढ़ होता है, वहाँ धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाढ़ होते हैं? (गौतम !) असंख्येय प्रदेश । (वहाँ) अधर्मास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाढ़ होते हैं ? एक भी प्रदेश नहीं । शेष सभी कथन धर्मास्तिकाय के समान करना चाहिए । इसी प्रकार धर्मास्तिकायादि सब द्रव्यों के 'स्वस्थान' में एक भी प्रदेश नहीं होता; किन्तु परस्थान में प्रथम के तीन द्रव्यों के असंख्येय प्रदेश कहने चाहिए, और पीछे के तीन द्रव्यों के अनन्त प्रदेश कहने चाहिए । यावत्-(एक अद्धाकाल द्रव्य में) कितने अद्धासमय अवगाढ़ होते हैं ? एक भी अवगाढ़ नहीं होता; तक कहना चाहिए ।

भगवन् ! जहाँ एक पृथ्वीकायिक जीव अवगाढ़ होता है, वहाँ दूसरे कितने पृथ्वीकायिक जीव अवगाढ़ होते हैं? (गौतम !) असंख्य । कितने अप्कायिक जीव अवगाढ़ होते हैं ? (गौतम !) असंख्य । कितने तेजस्कायिक जीव अवगाढ़ होते हैं ? (गौतम !) असंख्य जीव । वायुकायिक जीव कितने अवगाढ़ होते हैं ? (गौतम !) असंख्य जीव । कितने वनस्पतिकायिक जीव अवगाढ़ होते हैं ? (गौतम !) अनन्त ।

भगवन् ! जहाँ एक अप्कायिक जीव अवगाढ़ होता है, वहाँ कितने पृथ्वीकायिक जीव अवगाढ़ होते हैं ? (गौतम !) असंख्य । (भगवन् ! वहाँ) अन्य अप्कायिक जीव कितने अवगाढ़ होते हैं ? (गौतम !) असंख्य । पृथ्वी-कायिक जीवों के समान अन्यकायिक जीवों की समस्त वक्तव्यता, यावत् वनस्पतिकायिक तक कहनी चाहिए ।

सूत्र - ५८१

भगवन् ! इन धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय और आकाशास्तिकाय पर कोई व्यक्ति बैठने, सोने, खड़ा रहने नीचे बैठने और लेटने में समर्थ हो सकता है ? (गौतम !) यह अर्थ समर्थ नहीं है । उस स्थान पर अनन्त जीव अवगाढ़ होते हैं । भगवन् ! यह किसलिए कहा जाता है कि इन धर्मास्तिकायादि पर कोई भी व्यक्ति ठहरने, सोने आदि में समर्थ नहीं हो सकता, यावत् वहाँ अनन्त जीव अवगाढ़ होते हैं ? गौतम ! जैसे कोई कूटागारशाला हो, जो बाहर और

भीतर दोनों ओर से लीपी हुई हो, चारों ओर से ढँकी हुई हो, उसके द्वार भी गुप्त हो, इत्यादि राजप्रश्नीय सूत्रा-नुसार, यावत्-द्वार के कपाट बंद कर देता है, उस कूटागारशाला के द्वारों के कपाटों को बन्द करके ठीक मध्यभाग में (कोई) जघन्य एक, दो या तीन और उत्कृष्ट एक हजार दीपक जला दे, तो हे गौतम ! उन दीपकों की प्रभाएं परस्पर एक दूसरे से सम्बद्ध होकर, एक दूसरे को छूकर यावत् परस्पर एकरूप होकर रहती हैं न ? (गौतम) हाँ, भगवन् रहती हैं । हे गौतम ! क्या कोई व्यक्ति उन प्रदीप प्रभाओं पर बैठने, सोने यावत् करवट बदलने में समर्थ हो सकता है ? (गौतम) भगवन् ! यह अर्थ समर्थ नहीं है । उन प्रभाओं पर अनन्त जीव अवगाहित होकर रहते हैं । (भगवन्) इसी कारण से हे गौतम ! मैंने ऐसा कहा है ।

सूत्र - ५८२

भगवन् ! लोक का बहु-समभाग कहाँ है ? (तथा) हे भगवन् ! लोक का सर्वसंक्षिप्त भाग कहाँ कहा गया है ? गौतम ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी के ऊपर के और नीचे के क्षुद्र प्रतरों में लोक का बहुसम भाग है और यहीं लोक का सर्वसंक्षिप्त भाग कहा गया है । भगवन् ! लोक का विग्रह-विग्रहिक भाग कहाँ कहा गया है ? गौतम ! जहाँ विग्रह-कण्डक है, वहीं लोक का विग्रह-विग्रहिक भाग कहा गया है ।

सूत्र - ५८३

भगवन् ! इस लोक का संस्थान किस प्रकार का है ? गौतम ! सुप्रतिष्ठक के आकार का है । यह लोक नीचे विस्तीर्ण है, मध्य में संक्षिप्त है, इत्यादि वर्णन सप्तम शतक के प्रथम उद्देशक के अनुसार कहना ।

भगवन् ! अधोलोक, तिर्यग्लोक और ऊर्ध्वलोक में, कौन-सा लोक किस लोक से छोटा यावत् बहुत, सम अथवा विशेषाधिक है ? गौतम ! सबसे छोटा तिर्यक् लोक है । (उससे) ऊर्ध्वलोक असंख्यात गुणा है और उससे अधोलोक विशेषाधिक है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१३ – उद्देशक-५

सूत्र - ५८४

भगवन् ! नैरयिक सचित्ताहारी हैं, अचित्ताहारी हैं या मिश्राहारी हैं ? गौतम ! नैरयिक न तो सचित्ताहारी हैं और न मिश्राहारी हैं । यहाँ आहारपद का समग्र प्रथम उद्देशक कहना चाहिए । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१३ – उद्देशक-६

सूत्र - ५८५

राजगृह नगर में यावत् पूछा-भगवन् ! नैरयिक सान्तर उत्पन्न होते हैं या निरन्तर उत्पन्न होते रहते हैं ? गौतम ! नैरयिक सान्तर भी उत्पन्न होते हैं और निरन्तर भी । असुरकुमार भी इसी तरह उत्पन्न होते हैं । इसी प्रकार जैसे नौवे शतक के बत्तीसवें गांगेय उद्देशक में उत्पाद और उद्वर्त्तना के सम्बन्ध में दो दण्डक कहे हैं, वैसे ही यहाँ भी, यावत् वैमानिक सान्तर भी च्यवते हैं और निरन्तर भी च्यवते रहते हैं ।

भगवन् ! असुरेन्द्र और असुरकुमारराज 'चमर' का 'चमरचंच' नामक आवास कहाँ कहा गया है ? गौतम! जम्बूद्वीप में मन्दर (मेरु) पर्वत से दक्षिण में तिरछे असंख्य द्वीप-समुद्रों को पार करने के बाद, द्वीतिय शतक के आठवें उद्देशक अनुसार समग्र वक्तव्यता समझ लेना । यावत् तिगिञ्चकूट के उत्पातपर्वत का, चमरचंचा राजधानी का, चमरचंच नामक आवास-पर्वत का और अन्य बहुत-से द्वीप आदि तक का वर्णन उसी प्रकार कहना, यावत् तीन लाख सोलह हजार दो सौ सत्ताईस योजन तीन गाऊ, दो सौ अट्ठाईस धनुष और कुछ विशेषाधिक साढ़े तेरह अंगुल परिधि है । चमरचंचा राजधानी से नैऋत्यकोण में ६५५ करोड़, ३५ लाख, ५० हजार योजन दूर अरुणोदक समुद्र में तिरछे पार करने के बाद वहाँ असुरेन्द्र एवं असुरकुमारों के राजा चमर का चमरचंच नामक आवास है; जो लम्बाई-चौड़ाई में ८४ हजार योजन है । उसकी परिधि दो लाख पैंसठ हजार छहसौ बत्तीस योजन से कुछ अधिक है । यह आवास एक प्रकार से चारों ओर से घिरा हुआ है । वह प्राकार ऊंचाई में डेढ़ सौ योजन ऊंचा है । इस प्रकार चमरचंचा राजधानी की सारी वक्तव्यता, सभा को छोड़कर, यावत् चार प्रासाद-पंक्तियाँ हैं तक कहना ।

सूत्र - ५८६

भगवन् ! असुरेन्द्र असुरकुमारराज चमर क्या उस 'चमरचंच' आवास में निवास करके रहता है ? गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है । भगवन् ! फिर किस कारण से चमरेन्द्र का आवास 'चमरचंच' आवास कहलाता है ? गौतम ! यहाँ मनुष्यलोक में औपकारिक लयन, उद्यान में बनाये हुए घर, नगर-प्रदेश-गृह, अथवा नगर-निर्गम गृह- जिसमें पानी के फव्वारे लगे हों, ऐसे घर होते हैं, वहाँ बहुत-से मनुष्य एवं स्त्रियाँ आदि बैठते हैं, इत्यादि वर्णन राजप्रश्नीयसूत्र अनुसार, यावत्-कल्याणरूप फल और वृत्ति विशेष का अनुभव करते हुए वहाँ विहरण करते हैं, किन्तु उनका निवास अन्यत्र होता है । वैसे हे गौतम ! असुरेन्द्र असुरकुमारराज चमर का चमरचंच नामक आवास केवल क्रीड़ा और रति के लिए है, वह अन्यत्र निवास करता है । इसलिए हे गौतम ! ऐसा कहा गया है कि चमरेन्द्र चमरचंच नामक आवास में निवास नहीं करता । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

सूत्र - ५८७

तदनन्तर श्रमण भगवान महावीर किसी अन्य दिन राजगृह नगर के गुणशील चैत्य से यावत् विहार कर देते हैं । उस काल, उस समय में चम्पा नगरी थी । पूर्णभद्र नामका चैत्य था । किसी दिन श्रमण भगवान महावीर पूर्वानुपूर्वी से विचरण करते हुए यावत् विहार करते हुए जहाँ चम्पा नगरी थी और जहाँ पूर्णभद्र नामक चैत्य था, वहाँ पधारे यावत् विचरण करने लगे । उस काल, उस समय सिन्धु-सौवीर जनपदों में वीतिभय नगर था । उस के बाहर ईशानकोण में मृगवन नामक उद्यान था । वह सभी ऋतुओं के पुष्प आदि से समृद्ध था, इत्यादि । उस वीतिभय नगर में उदायन राजा था । वह महान् हिमवान् पर्वत के समान था । उस उदायन राजा की प्रभावती नाम की देवी (पटरानी) थी । वह सुकुमाल थी, इत्यादि वर्णन यावत्-विचरण करती थी, उस उदायन राजा का पुत्र और प्रभावती देवी का आत्मज अभीचि कुमार था । वह सुकुमाल था । उसका शेष वर्णन शिवभद्र के समान यावत् वह राज्य का निरीक्षण करता हुआ रहता था, (यहाँ तक) जानना । उस उदायन राजा का अपना भानजा केशी कुमार था । वह भी सुकुमाल यावत् सुरूप था । वह उदायन राजा सिन्धुसौवीर आदि सोलह जनपदों का, वीतिभय-प्रमुख तीन सौ श्रेष्ठ नगरों और आकरों का स्वामी था । जिन्हें छत्र, चामर और बाल-व्यंजन (पंखे) दिये गए थे, ऐसे महासेन-प्रमुख दस मुकुटबद्ध राजा तथा अन्य बहुत-से राजा, ऐश्वर्यसम्पन्न व्यक्ति, तलवर, यावत् सार्थवाह-प्रभृति जनों पर आधिपत्य करता हुआ तथा राज्य का पालन करता हुआ यावत् विचरता था । वह जीव-अजीवआदि तत्त्वों का ज्ञाता यावत् श्रमणोपासक था

एक दिन वह उदायन राजा जहाँ (अपनी) पौषधशाला थी, वहाँ आए और शंख श्रमणोपासक के समान पौषध करके यावत् विचरने लगे । पूर्वरात्रि व्यतीत हो जाने पर पिछली रात्रि के समय में धर्मजागरिकापूर्वक जागरण करते हुए उदायन राजा को अध्यवसाय उत्पन्न हुआ-'धन्य है वे ग्राम, आकर, नगर, खेड़, कर्बट, मडम्ब, द्रोणमुख, पत्तन, आश्रम, संवाह एवं सन्निवेश; जहाँ श्रमण भगवन् महावीर विचरण करते हैं ! धन्य हैं वे राजा, श्रेष्ठी, तलवर यावत् सार्थवाह-प्रभृति जन, जो श्रमण भगवान महावीर को वन्दन-नमस्कार करते हैं, यावत् उनकी पर्युपासना करते हैं । यदि श्रमण भगवान महावीर स्वामी पूर्वानुपूर्वी से विचरण करते हुए एवं एक ग्राम से दूसरे ग्राम यावत् विहार करते हुए यहाँ पधारें, यहाँ उनका समवसरण हो और यहीं वीतिभय नगर के बाहर मृगवन नामक उद्यान में यथायोग्य अवग्रह करके संयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए यावत् विचरण करें, तो मैं श्रमण भगवान महावीर स्वामी को वन्दना-नमस्कार करूँ, यावत् उनकी पर्युपासना करूँ । तदनन्तर श्रमण भगवान महावीर स्वामी, उदायन राजा के इस प्रकार के समुत्पन्न हुए अध्यवसाय यावत् संकल्प को जानकर चम्पा नगरी के पूर्णभद्र नामक चैत्य से नीकले और क्रमशः विचरण करते हुए, ग्रामानुग्राम यावत् विहार करते हुए जहाँ सिन्धु-सौवीर जनपद था, जहाँ वीतिभय नगर था और उसमें मृगवन नामक उद्यान था, वहाँ पधारे यावत् विचरने लगे । वीतिभय नगर में शृंगाटक आदि मार्गों में (भगवान के पधारने की चर्चा होने लगी) यावत् परीषद् पर्युपासना करने लगी ।

उस समय बात को सूनकर उदायन राजा हर्षित एवं सन्तुष्ट हुआ । उसने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया और उनसे कहा-'देवानुप्रियो ! तुम शीघ्र ही वीतिभय नगर को भीतर और बाहर से स्वच्छ करवाओ, इत्यादि कूणिक का

वर्णन है, तदनुसार यहाँ भी पर्युपासना करता है; प्रभावती-प्रमुख रानियाँ भी उसी प्रकार यावत् पर्युपासना करती है। धर्मकथा कही । उस अवसर पर श्रमण भगवान महावीर से धर्मोपदेश सूनकर एवं हृदय में अवधारण करके उदायन नरेश अत्यन्त हर्षित एवं सन्तुष्ट हुए । वे खड़े हुए और फिर श्रमण भगवान महावीर को तीन बार प्रदक्षिणा की यावत् नमस्कार करके बोले-भगवन् ! जैसा आपने कहा, वैसा ही है, भगवन् ! यही तथ्य है, यथार्थ है, यावत् जिस प्रकार आपने कहा है, उसी प्रकार है । यों कहकर आगे विशेषरूप से कहने लगे-'हे देवानुप्रिय ! अभीचि कुमार का राज्याभिषेक करके उसे राज पर बिठा दूँ, तब मैं आप देवानुप्रिय के पास मुण्डित होकर यावत् प्रव्रजित हो जाएं ।' 'हे देवानुप्रिय ! तुम्हें जैसा सुख हो, (वैसा करो), विलम्ब मत करो ।' श्रमण भगवान महावीर द्वारा इस प्रकार कहे जाने पर उदयन राजा हृष्ट-तुष्ट एवं आनन्दित हुए । उदायन नरेश ने श्रमण भगवान महावीर को वन्दना-नमस्कार किया और फिर उसी अभिषेक-योग्य पट्टहस्ती पर आरूढ़ होकर श्रमण भगवान महावीर के पास से, मृगवान् उद्यान से नीकले और वीतिभय नगर जाने के लिए प्रस्थान किया ।

तत्पश्चात् उदायन राजा को इस प्रकार का अध्यवसाय यावत् उत्पन्न हुआ-'वास्तव में अभीचि कुमार मेरा एक ही पुत्र है, वह मुझे अत्यन्त इष्ट एवं प्रिय है; यावत् उसका नाम-श्रवण भी दुर्लभ है तो फिर उनके दर्शन दुर्लभ हों, इसमें तो कहना ही क्या ? अतः यदि मैं अभीचि कुमार को राजसिंहासन पर बिठाकर श्रमण भगवान महावीर के पास मुण्डित होकर यावत् प्रव्रजित हो जाऊं तो अभीचि कुमार राज्य और राष्ट्र में, यावत् जनपद में और मनुष्य सम्बन्धी कामभोगों में मूर्च्छित, गृद्ध, ग्रथित एवं अत्यधिक तल्लीन होकर अनादि, अनन्त दीर्घमार्ग वाले चतुर्गति-रूप संसार-अटवी में परिभ्रमण करेगा । अतः मेरे लिए अभीचि कुमार को राज्यारूढ कर श्रमण भगवान महावीर स्वामी के पास मुण्डित होकर यावत् प्रव्रजित होना श्रेयस्कर नहीं है । अपितु मेरे लिए यह श्रेयस्कर है कि मैं अपने भानजे केशी कुमार को राज्यारूढ़ करके श्रमण भगवान महावीर के पास यावत् प्रव्रजित हो जाऊं ।' उदायन नृप इस प्रकार अन्तर्मन्थन करता हुआ वीतिभय नगर के निकट आया । वीतिभय नगर के मध्य में होता हुआ अपने राजभवन के बाहर की उपस्थानशाला में आया और अभिषेक योग्य पट्टहस्ती को खड़ा किया । फिर उस पर से नीचे ऊतरा । तत्पश्चात् वह राजसभा में सिंहासन के पास आया और पूर्वदिशा की ओर मुख करके उक्त सिंहासन पर बैठा । तदनन्तर अपने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाकर उन्हें इस प्रकार का आदेश दिया-देवानुप्रियो ! वीतिभय नगर को भीतर और बाहर से शीघ्र ही स्वच्छ करवाओ, यावत् कौटुम्बिक पुरुषों ने नगर की भीतर और बाहर से सफाई करवा कर यावत् उनके आदेश-पालन का निवेदन किया ।

तदनन्तर उदायन राजा ने दूसरी बार कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया और उन्हें इस प्रकार की आज्ञा दी-'देवानुप्रियो ! केशी कुमार के महार्थक, महामूल्य, महान् जनों के योग्य यावत् राज्याभिषेक की तैयारी करो ।' इसका समग्र वर्णन शिवभद्र कुमार के राज्याभिषेक के समान यावत्-परम दीर्घायु हो, इष्टजनों से परिवृत्त होकर सिन्धुसौवीर-प्रमुख सोलह जनपदों, वीतिभय-प्रमुख तीन सौ तिरेसठ नगरों और आकरों तथा मुकुटबद्ध महासेन-प्रमुख दस राजाओं एवं अन्य अनेक राजाओं, श्रेष्ठियों, कोतवाल आदि पर आधिपत्य करते तथा राज्य का परि-पालन करते हुए विचरो, यों कहकर जय-जय शब्द का प्रयोग किया । इसके पश्चात् केशी कुमार राजा बना । वह महाहिमवान् पर्वत के समान इत्यादि वर्णन युक्त यावत् विचरण करता है ।

तदनन्तर उदायन राजा ने केशी राजा से दीक्षा ग्रहण करने के विषय में अनुमति प्राप्त की । तब केशी राजा ने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया और जमाली कुमार के समान नगर को भीतर-बाहर से स्वच्छ कराया और उसी प्रकार यावत् निष्क्रमणाभिषेक की तैयारी करने में लगा दिया । फिर केशी राजा ने अनेक गणनायकों आदि से यावत् परिवृत्त होकर, उदायन राजा को उत्तम सिंहासन पर पूर्वाभिमुख आसीन किया और एक सौ आठ स्वर्ण-कलशों से उनका अभिषेक किया, इत्यादि सब वर्णन जमाली के समान कहना चाहिए, यावत् केशी राजा ने इस प्रकार कहा-'कहिए, स्वामिन् ! हम आपको क्या दें, क्या अर्पण करें, आपका क्या प्रयोजन है ?' इस पर उदायन राजा ने केशी राजा से इस प्रकार कहा-देवानुप्रिय ! कुत्रिकापण से हमारे लिए रजोहरण और पात्र मंगवाओ । इत्यादि, विशेषता

इतनी ही है कि प्रियवियोग का दुःसह अनुभव करने वाली रानी पद्मावती ने उनके अग्रकेश ग्रहण किए ।

तदनन्तर केशी राजा ने दूसरी बार उत्तरदिशा में सिंहासन रखवा कर उदायन राजा का पुनः चाँदी के और सोने के कलशों से अभिषेक किया, इत्यादि शेष वर्णन जमाली के समान, यावत् वह शिबिका में बैठ गए । इसी प्रकार धायमाता के विषय में भी जानना चाहिए । विशेष यह है कि यहाँ पद्मावती रानी हंसलक्षण वाले एक पट्टाम्बर को लेकर बैठी । शेष वर्णन जमाली के वर्णनानुसार है, यावत् वह उदायन राजा शिबिका से नीचे ऊतरा और जहाँ श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे, उनके समीप आया, भगवन को तीन बार वन्दना-नमस्कार कर ईशानकोण में गया । वहाँ उसने स्वयमेव आभूषण, माला, और अलंकार उतारे इत्यादि पूर्ववत् । उनको पद्मावती देवी ने रख लिया । यावत् वह बोली–'स्वामिन् ! संयम में प्रयत्नशील रहें, यावत् प्रमाद न करें'– यों कहकर केशी राजा और पद्मावती रानी ने श्रमण भगवान महावीर को वन्दना-नमस्कार किया और अपने स्थान को वापस चले गए । इसके पश्चात् उदायन राजा ने स्वयं पंचमुष्टिक लोच किया । शेष वृत्तान्त ऋषभदत्त के अनुसार यावत्–सर्व दुःखों से रहित हो गए ।

सूत्र - ५८८

तत्पश्चात् किसी दिन रात्रि के पीछले प्रहर में कुटुम्ब-जागरण करते हुए अभीचिकुमार के मन में इस प्रकार का विचार यावत् उत्पन्न हुआ–'मैं उदायन राजा का पुत्र और प्रभावती देवी का आत्मज हूँ । फिर भी उदायन राजा ने मुझे छोड़कर अपने भानजे केशी कुमार को राजसिंहासन पर स्थापित करके श्रमण भगवान महावीर के पास यावत् प्रव्रज्या ग्रहण की है ।' इस प्रकार के इस महान् अप्रतीति–रूप मनो-मानसिक दुःख से अभिभूत बना हुआ अभीचि कुमार अपने अन्तःपुर-परिवार-सहित अपने भाण्डमात्रोपकरण को लेकर वीतिभय नगर से नीकल गया और अनुक्रम से गमन करता और ग्रामानुग्राम चलता हुआ चम्पा नगरी में कूणिक राजा के पास पहुँचा । कूणिक राजा से मिलकर उसका आश्रय ग्रहण करके रहने लगा । यहाँ भी वह विपुल भोग-सामग्री से सम्पन्न हो गया । उस समय अभीचि कुमार श्रमणोपासक बना । वह जीव-अजीव आदि तत्त्वों का ज्ञाता यावत् जीवनयापन करता था । (अभीचि कुमार) उदायन राजर्षि के प्रति वैर के अनुबन्ध से युक्त था ।

उस काल, उस समय में (भगवान महावीर ने) इस रत्नप्रभापृथ्वी के नरकावासों के परिपार्श्व में असुर-कुमारों के चौंसठ लाख असुरकुमारावास कहे हैं । उस अभीचि कुमार ने बहुत वर्षों तक श्रमणोपासक-पर्याय का पालन किया और उस समय में अर्द्धमासिक संलेखना से तीस भक्त अनशन का छेदन किया । उस समय (उदायन राजर्षि के प्रति पूर्वोक्त वैरानुबन्धरूप पाप) स्थान की आलोचना एवं प्रतिक्रमण किये बिना मरण के समय कालधर्म को प्राप्त करके इस रत्नप्रभापृथ्वी के नरकावासों के निकटवर्ती चौंसठ लाख आताप नामक असुरकु-मारावासों में से किसी आताप नामक असुरकुमारावास में आतापरूप असुरकुमार देव के रूप में उत्पन्न हुआ । वहाँ अभीचि देव की स्थिति भी एक पल्योपम की है । भगवन् ! वह अभीचि देव उस देवलोक से आयु-क्षय, भव-क्षय और स्थिति-क्षय होने के अनन्तर उद्वर्त्तन करके कहाँ जाएगा, कहाँ उत्पन्न होगा ? गौतम ! वह वहाँ से च्यवकर महाविदेह-वर्ष (क्षेत्र) में सिद्ध होगा, यावत् सर्व दुःखों का अन्त करेगा । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१३ – उद्देशक-७

सूत्र - ५८९

राजगृह नगर में यावत् पूछा–भगवन् ! भाषा आत्मा है या अन्य है ? गौतम ! भाषा आत्मा नहीं है, अन्य (आत्मा से भिन्न पुद्गलरूप) है । भगवन् ! भाषा रूपी है या अरूपी है ? गौतम ! भाषा रूपी है, वह अरूपी नहीं है । भगवन् ! भाषा सचित्त है या अचित्त है ? गौतम ! भाषा सचित्त नहीं है, अचित्त है । भगवन् ! भाषा जीव है, अथवा अजीव है ? गौतम ! भाषा जीव नहीं है, वह अजीव है ।

भगवन् ! भाषा जीवों के होती है या अजीवों के होती है ? गौतम ! भाषा जीवों के होती है, अजीवों के भाषा नहीं होती । भगवन् ! (बोलने से) पूर्व भाषा कहलाती है या बोलते समय भाषा कहलाती है, अथवा बोलने का समय बीत जाने के पश्चात् भाषा कहलाती है ? गौतम ! बोलने से पूर्व भाषा नहीं कहलाती, बोलते समय भाषा कहलाती है;

किन्तु बोलने का समय बीत जाने के बाद भी भाषा नहीं कहलाती । भगवन् ! (बोलने से) पूर्व भाषा का भेदन होता है, या बोलते समय भाषा का भेदन होता है, अथवा बोलने का समय बीत जाने के बाद भाषा का भेदन होता है ? गौतम ! (बोलने से) पूर्व भाषा का भेदन नहीं होता, बोलते समय भाषा का भेदन होता है, किन्तु बोलने के बाद भेदन नहीं होता

भगवन् ! भाषा कितने प्रकार की है ? गौतम ! भाषा चार प्रकार की है । यथा-सत्य भाषा, असत्य भाषा, सत्यामृषा भाषा और असत्यामृषा (व्यवहार) भाषा ।

सूत्र - ५९०

भगवन् ! मन आत्मा है, अथवा आत्मा से भिन्न ? गौतम ! आत्मा मन नहीं है । मन अन्य है; इत्यादि । भाषा के (प्रश्नोत्तर) समान मन के विषय में भी यावत्-अजीवों के मन नहीं होता; (यहाँ तक) कहना । भगवन् ! (मनन से) पूर्व मन कहलाता है, या मनन के समय, अथवा मनन के बाद मन कहलाता है ? गौतम ! भाषा के अनुसार कहना । भगवन् ! (मनन से) पूर्व मन का भेदन होता है, अथवा मनन करते या मनन-समय व्यतीत हो जाने पर ? गौतम ! भाषा अनुसार कहना ।

भगवन् ! मन कितने प्रकार का कहा गया है ? गौतम ! मन चार प्रकार का कहा गया है । यथा-सत्यमन, मृषामन, सत्यमृषा-(मिश्र) मन और असत्यामृषा (व्यवहार) मन ।

सूत्र - ५९१

भगवन् ! काय आत्मा है, अथवा अन्य है ? गौतम ! काय आत्मा भी है और आत्मा से भिन्न भी है । भगवन् ! काय रूपी है अथवा अरूपी ? गौतम ! काय रूपी भी है और अरूपी भी है । इसी प्रकार काय सचित्त भी है और अचित्त भी है । इसी प्रकार एक-एक प्रश्न करना चाहिए । काय जीवरूप भी है और अजीवरूप भी है । काय जीवों के भी होता है, अजीवों के भी होता है ।

भगवन् ! (जीव का सम्बन्ध होने से) पूर्व काया होती है, (अथवा कायिकपुद्गलों) के ग्रहण होते समय या काया-समय बीत जाने पर भी काया होती है ? गौतम ! पूर्व भी, चीयमान होते समय भी और काया-समय बीत जाने पर भी काया होती है । भगवन् ! (कायरूप से ग्रहण करने के समय से) पूर्व, ग्रहण करते या काया-समय बीत जाने पर काया का भेदन होता है ? गौतम ! (कायरूप से ग्रहण करने के समय से) पूर्व भी, पुद्गलों का ग्रहण होते समय भी और काय-समय बीत जाने पर भी काय का भेदन होता है ।

भगवन् ! काय कितने प्रकार का कहा गया है ? गौतम ! सात प्रकार का-औदारिक, औदारिकमिश्र, वैक्रिय, वैक्रियमिश्र, आहारक, आहारकमिश्र और कार्मण ।

सूत्र - ५९२

भगवन् ! मरण कितने प्रकार का है ? गौतम ! पाँच प्रकार का-आवीचिकमरण, अवधिमरण, आत्यन्तिक-मरण, बालमरण और पण्डितमरण । भगवन् ! आवीचिकमरण कितने प्रकार का है ? गौतम ! पाँच प्रकार का । द्रव्यावीचिकमरण, क्षेत्रावीचिकमरण, कालावीचिकमरण, भवावीचिकमरण और भावावीचिकमरण । भगवन् ! द्रव्यावीचिकमरण कितने प्रकार का है ? गौतम ! वह चार प्रकार का है । नैरयिक-द्रव्यावीचिकमरण, तिर्यग्योनिक द्रव्यावीचिकमरण, मनुष्य-द्रव्यावीचिकमरण और देव-द्रव्यावीचिकमरण ।

भगवन् ! नैरयिक-द्रव्यावीचिकमरण को नैरयिक-द्रव्यावीचिकमरण किसलिए कहते हैं ? गौतम ! नारक-द्रव्य रूप से वर्तमान नैरयिक ने जिन द्रव्यों को नारकायुष्य रूप में स्पर्श रूप से ग्रहण किया है, बन्धन रूप से बाँधा है, प्रदेशरूप से प्रक्षिप्त कर पुष्ट किया है, अनुभाग रूप से विशिष्ट रसयुक्त किया है, स्थिति-सम्पादनरूप से स्थापित किया है, जीवप्रदेशों में निविष्ट किया है, अभिनिविष्ट किया है तथा जो द्रव्य अभिसमन्वागत है, उन द्रव्यों को वे प्रतिसमय निरन्तर छोड़ते रहते हैं । इस कारण से हे गौतम ! यावत् नैरयिकद्रव्यावीचिकमरण कहते हैं । इसी प्रकार यावत् देव-द्रव्यावीचिकमरण के विषय में कहना ।

भगवन् ! क्षेत्रावीचिकमरण कितने प्रकार का है ? गौतम ! चार प्रकार का । यथा-नैरयिकक्षेत्रावीचिक-मरण

यावत् देवक्षेत्रावीचिकमरण । भगवन् ! नैरयिक-क्षेत्रावीचिकमरण नैरयिक-क्षेत्रावीचिकमरण क्यों कहा जाता है ? गौतम ! नैरयिक क्षेत्र में रहे हुए जिन द्रव्यों को नारकायुष्यरूप में नैरयिकजीव ने स्पर्शरूप से ग्रहण किया है, यावत् उन द्रव्यों को (भोगकर) वे प्रतिसमय निरन्तर छोड़ते रहते हैं, इत्यादि सब कथन द्रव्यावीचिकमरण के समान करना । इसी प्रकार भावावीचिकमरण तक कहना ।

भगवन् ! अवधिमरण कितने प्रकार का है ? गौतम ! पाँच प्रकार का है, यथा-द्रव्यावधिमरण, क्षेत्रावधि-मरण यावत् भावावधिमरण । भगवन् ! द्रव्यावधिमरण कितने प्रकार का है ? गौतम ! चार प्रकार का है-नैरयिक-द्रव्यावधिमरण, यावत् देवद्रव्यावधिमरण । भगवन् ! नैरयिक-द्रव्यावधिमरण नैरयिक-द्रव्यावधिमरण क्यों कहलाता है ? गौतम ! नैरयिकद्रव्य के रूप में रहे हुए नैरयिक जीव जिन द्रव्यों को इस समय में छोड़ते हैं, फिर वे ही जीव पुनः नैरयिक हो कर उन्हीं द्रव्यों को ग्रहण कर भविष्य में फिर छोड़ेंगे; इस कारण हे गौतम ! यावत् कहलाता है । इसी प्रकार तिर्यञ्चयोनिक-द्रव्यावधिमरण, मनुष्य-द्रव्यावधिमरण और देव-द्रव्यावधिमरण भी कहना । इसी प्रकार के आलापक क्षेत्रावधिमरण, कालावधिमरण, भवावधिमरण और भावावधिमरण के विषय में भी कहने चाहिए ।

भगवन् ! आत्यन्तिकमरण कितने प्रकार का है ? गौतम ! पाँच प्रकार का, यथा-द्रव्यात्यन्तिकमरण, क्षेत्रा-त्यन्तिकमरण यावत् भावात्यन्तिकमरण । भगवन् ! द्रव्यात्यन्तिकमरण कितने प्रकार का है ? गोतम ! चार प्रकार का यथा-नैरयिक-द्रव्यात्यन्तिकमरण यावत् देव-द्रव्यात्यन्तिकमरण । भगवन् ! नैरयिक-द्रव्यात्यन्तिकमरण नैरयिक-द्रव्यात्यन्तिकमरण क्यों कहलाता है ? गौतम ! नैरयिक द्रव्य रूप में रहे हुए नैरयिक जीव जिन द्रव्यों को इस समय छोड़ते हैं, वे नैरयिक जीव उन द्रव्यों को भविष्यत्काल में फिर कभी नहीं छोड़ेंगे । इस कारण हे गौतम ! यावत् कहलाता है । इसी प्रकार तिर्यञ्चयोनिक-द्रव्यात्यन्तिकमरण, मनुष्य-द्रव्यात्यन्तिकमरण एवं देवद्रव्यात्यन्ति-कमरण के विषय में कहना । इसी प्रकार क्षेत्रात्यन्तिकमरण, यावत् भावात्यन्तिकमरण भी जानना ।

भगवन् ! बालमरण कितने प्रकार का कहा गया है ? गौतम ! बारह प्रकार का । यथा-वलयमरण इत्यादि, द्वीतिय स्कन्दकाधिकार के अनुसार, यावत् गृध्रपृष्ठमरण जानना ।

भगवन् ! पण्डितमरण कितने प्रकार का कहा गया है ? गौतम ! दो प्रकार का, यथा-पादपोपगमनमरण और भक्तप्रत्याख्यानमरण । भगवन् ! पादपोपगमनमरण कितने प्रकार का कहा गया है ? गौतम ! दो प्रकार का । यथा-निर्हारिम और अनिर्हारिम । (दोनों) नियमतः अप्रतिकर्म (शरीर-संस्काररहित) होता है । भगवन् ! भक्तप्रत्या-ख्यानमरण कितने प्रकार का कहा गया है ? पूर्ववत् दो प्रकार का है, विशेषता यह है कि दोनों प्रकार का यह मरण नियमतः सप्रतिकर्म (शरीर-संस्काररहित) होता है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१३ – उद्देशक-८

सूत्र - ५९३

भगवन् ! कर्मप्रकृतियाँ कितनी हैं ? गौतम ! आठ । प्रज्ञापनासूत्र के बन्धस्थिति-उद्देशक का सम्पूर्ण कथन करना । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१३ – उद्देशक-९

सूत्र - ५९४

राजगृह नगर में यावत् पूछा-भगवन् ! जैसे कोई पुरुष रस्सी से बंधी हुई घटिका लेकर चलता है, क्या उसी प्रकार भावितात्मा अनगार भी रस्सी से बंधी हुई घटिका स्वयं हाथ में लेकर ऊंचे आकाश में उड़ सकता है ? हाँ, गौतम ! उड़ सकता है । भगवन् ! भावितात्मा अनगार रस्सी से बंधी हुई घटिका हाथ में ग्रहण करने रूप कितने रूपों की विकुर्वणा करने में समर्थ है ? गौतम ! तृतीय शतक में जैसे युवती-युवक के हस्तग्रहण का दृष्टान्त देकर समझाया है, वैसे ही यहाँ समझना । यावत् यह उसकी शक्तिमात्र है । सम्प्राप्ति द्वारा कभी इतने रूपों की विक्रिया की नहीं, करता नहीं, करेगा नहीं ।

भगवन् ! जैसे कोई पुरुष हिरण्य की मंजूषा लेकर चलता है, वैसे ही, क्या भावितात्मा अनगार भी हिरण्य-

मंजूषा हाथ में लेकर स्वयं ऊंचे आकाश में उड़ सकता है ? हाँ, गौतम ! पूर्ववत् समझना । इसी प्रकार स्वर्णमंजूषा, रत्नमंजूषा, वज्रमंजूषा, वस्त्रमंजूषा एवं आभरणमंजूषा इत्यादि पूर्ववत् । इसी प्रकार बाँस की चटाई, वीरणघास की चटाई, चमड़े की चटाई य खाट आदि एवं कम्बल का बिछौना इत्यादि प्रश्नोत्तर पूर्ववत् कहना । इसी प्रकार लोहे का भार, तांबे का भार, कलई का भार, शीशे का भार, हिरण्य का भार, सोने का भार और वज्र का भार इत्यादि पूर्ववत् प्रश्नोत्तर कहना ।

भगवन् ! जैसे कोई वग्गुलीपक्षी अपने दोनों पैर लटका-लटका कर पैरों को ऊपर और शिर को नीचा किये रहती है, क्या उसी प्रकार भावितात्मा अनगार भी उक्त चमगादड़ की तरह अपने रूप की विकुर्वणा करके स्वयं ऊंचे आकाश में ऊड़ सकता है ? हाँ, गौतम ! वह ऊड़ सकता है । इसी प्रकार यज्ञोपवित-सम्बन्धी वक्तव्यता भी कहनी चाहिए ।

(भगवन् !) जैसे कोई जलौका अपने शरीर को उत्प्रेरित करके पानी में चलती है; क्या उसी प्रकार भावि-तात्मा अनगार भी...इत्यादि प्रश्न पूर्ववत् । (गौतम !) वग्गुलीपक्षी के समान जानना चाहिए । भगवन् ! जैसे कोई बीजंबीज पक्षी अपने दोनों पैरों को घोड़े की तरह एक हाथ उठाता-उठाता हुआ गमन करता है, क्या उसी प्रकार भावितात्मा अनगार भी...इत्यादि प्रश्न पूर्ववत् ! (हाँ, गौतम ! ऊड़ सकता है), शेष पूर्ववत् । (भगवन् !) जिस प्रकार कोई पक्षीबिडालक एक वृक्ष से दूसरे वृक्ष को लांघता-लांघता जाता है, क्या उसी प्रकार भावितात्मा अनगार भी...इत्यादि प्रश्न । (हाँ, गौतम ! ऊड़ सकता है ।) शेष पूर्ववत् ।

(भगवन् !) जैसे कोई जीवंजीवक पक्षी अपने दोनों पैरों को घोड़े के समान एक साथ उठाता-उठाता गमन करता है; क्या उसी प्रकार भावितात्मा अनगार भी...इत्यादि प्रश्न पूर्ववत् । (हाँ, गौतम ! ऊड़ सकता है) शेष पूर्ववत् । (भगवन् !) जैसे कोई हंस एक किनारे से दूसरे किनारे पर क्रीड़ा करता-करता चला जाता है, क्या वैसे ही भावितात्मा अनगार भी हंसवत् विकुर्वणा करके गगन में ऊड़ सकता है ? (हाँ, गौतम ! ऊड़ सकता है) शेष पूर्ववत् (भगवन् !) जैसे कोई समुद्रवायस एक लहर से दूसरी लहर का अतिक्रमण करता-करता चला जाता है, क्या वैसे ही भावितात्मा अनगार भी...इत्यादि प्रश्न । पूर्ववत् समझना ।

(भगवन् !) जैसे कोई पुरुष हाथ में चक्र लेकर चलता है, क्या वैसे ही भावितात्मा अनगार भी तदनुसार विकुर्वणा करके चक्र हाथ में लेकर स्वयं ऊंचे आकाश में ऊड़ सकता है ? (हाँ, गौतम !) सभी कथन रज्जुबद्ध-घटिका के समान जानना चाहिए । इसी प्रकार छत्र और चर्म के सम्बन्ध में भी कथन करना । (भगवन् !) जैसे कोई पुरुष रत्न लेकर गमन करता है, (क्या उसी प्रकार भावितात्मा अनगार भी...इत्यादि पूर्ववत् प्रश्न) । (गौतम !) पूर्ववत् । इसी प्रकार वज्र, वैडूर्य यावत् रिष्टरत्न तक पूर्ववत् कहना ।

इसी प्रकार उत्पल हाथ में लेकर, पद्म हाथ में लेकर एवं कुमुद हाथ में लेकर तथा जैसे कोई पुरुष यावत् सहस्त्रपत्र हाथ में लेकर गमन करता है, क्या उसी प्रकार भावितात्मा अनगार भी...इत्यादि पूर्ववत् प्रश्न । (हाँ, गौतम !) पूर्ववत् जानना । जिस प्रकार कोई पुरुष कमल की डंडी को तोड़ता-तोड़ता चलता है, क्या उसी प्रकार भावितात्मा अनगार भी स्वयं इस प्रकार के रूप की विकुर्वणा करके ऊंचे आकाश में ऊड़ सकता है ? (हाँ, गौतम!) शेष पूर्ववत् । जैसे कोई मृणालिका हो और वह अपने शरीर को पानी में डुबाए रखती है तथा उसका मुख बाहर बहता है; क्या उसी प्रकार भावितात्मा अनगार भी...इत्यादि पूर्ववत् प्रश्न । (हाँ, गौतम !) शेष कथन वग्गुली के समान जानना ।

(भगवन् !) जिस प्रकार कोई वनखण्ड हो, जो काला, काले प्रकाश वाला, नीला, नीले आभास वाला, हरा, हरे आभास वाला यावत् महामेघसमूह के समान प्रसन्नतादायक, दर्शनीय, अभिरूप एवं प्रतिरूप हो; क्या इसी प्रकार भावितात्मा अनगार भी-स्वयं वनखण्ड के समान विकुर्वणा करके ऊंचे आकाश में ऊड़ सकता है ? (हाँ, गौतम !) शेष पूर्ववत् । (भगवन् !) जैसे कोई पुष्करिणी हो, जो चतुष्कोण और समतीर हो तथा अनुक्रम से जो शीतल गंभीर जल से सुशोभित हो, यावत् विविध पक्षियों के मधुर स्वर-नाद आदि से युक्त हो तथा प्रसन्नतादायिनी, दर्शनीय, अभिरूप और प्रतिरूप हो, क्या इसी प्रकार भावितात्मा अनगार भी उस पुष्करिणी के समान रूप की विकुर्वणा करके स्वयं ऊंचे

आकाश में ऊड़ सकता है ? हाँ, गौतम ! वह ऊड़ सकता है । भगवन् ! भावितात्मा अनगार पुष्करिणी के समान कितने रूपों की विकुर्वणा कर सकता है ? (हे गौतम !) शेष पूर्ववत् ।

भगवन् ! क्या (पूर्वोक्त) विकुर्वणा मायी (अनगार) करता है, अथवा अमायी ? गौतम ! मायी विकुर्वणा करता है, अमायी (अनगार) विकुर्वणा नहीं करता । मायी अनगार यदि उस स्थान की आलोचना और प्रतिक्रमण किये बिना ही कालधर्म को प्राप्त हो जाए तो उसके आराधना नहीं होती; इत्यादि तीसरे शतक के चतुर्थ उद्देशक के अनुसार यावत्-उसके आराधना होती है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१३ – उद्देशक-१०

सूत्र - ५९५

भगवन् ! छाद्मस्थिक समुद्घात कितने प्रकार का है ? गौतम ! छह प्रकार का है । वेदनासमुद्घात इत्यादि, छाद्मस्थिक समुद्घातों के विषय में प्रज्ञापनासूत्र के अनुसार यावत् आहारकसमुद्घात कहना । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१३ का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

शतक–१४

सूत्र - ५९६

चौदहवें शतक के दस उद्देशक इस प्रकार हैं–चरम, उन्माद, शरीर, पुद्गल, अग्नि तथा किमाहार, संश्लिष्ट, अन्तर, अनगार और केवली ।

शतक-१४ – उद्देशक-१

सूत्र - ५९७

राजगृह नगर में यावत् पूछा–भगवन् ! (कोई) भावितात्मा अनगार, (जिसने) चरम देवलोक का उल्लंघन कर लिया हो, किन्तु परम को प्राप्त न हुआ हो, यदि वह इस मध्य में ही काल कर जाए तो भन्ते ! उसकी कौन-सी गति होती है, कहाँ उपपात होता है ? गौतम ! जो वहाँ परिपार्श्व में उस लेश्या वाले देवावास होते हैं, वही उसकी गति होती है और वहीं उसका उपपात होता है । वह अनगार यदि वहाँ जाकर अपनी पूर्वलेश्या को विराधता है, तो कर्मलेश्या से ही गिरता है और यदि वह वहाँ जाकर उस लेश्या को नहीं विराधता है, तो वह उसी लेश्या का आश्रय करके विचरता है

सूत्र - ५९८

भगवन् ! (कोई) भावितात्मा अनगार, जो चरम असुरकुमारावास का उल्लंघन कर गया और परम असुर-कुमारावास को प्राप्त नहीं हुआ, यदि बीच में ही वह काल कर जाए तो उसकी कौन-सी गति होती है, उसका कहाँ उपपात होता है? गौतम ! पूर्ववत् । इसी प्रकार स्तनितकुमारावास, ज्योतिष्कावास और वैमानिकावास पर्यन्त जानना

भगवन् ! नैरयिक जीवों की शीघ्र गति कैसी है ? और उनकी शीघ्रगति का विषय किस प्रकार का है ? गौतम ! जैसे कोई तरुण, बलवान एवं युगवान यावत् निपुण एवं शिल्पशास्त्र का ज्ञाता हो, वह अपनी संकुचित बाँह को शीघ्रता से फैलाए और फैलाई हुई बाँह को संकुचित करे; खुली हुई मुट्ठी बंद करे और बंद मुट्ठी खोले; खुली हुई आँख बंद करे और बंद आँख खोले तो क्या नैरयिक जीवों की इस प्रकार की शीघ्र गति होती है तथा शीघ्र गति का विषय होता है ? (भगवन् !) यह अर्थ समर्थ नहीं है । (गौतम !) नैरयिक जीव एक समय की, दो समय की, अथवा तीन समय की विग्रहगति से उत्पन्न होते हैं । नैरयिकों की ऐसी शीघ्र गति यावत् विषय हैं । इसी प्रकार वैमानिकों तक जानना । एकेन्द्रियों में उत्कृष्ट चार समय की विग्रहगति कहना । शेष पूर्ववत् ।

सूत्र - ५९९

भगवन् ! क्या नैरयिक अनन्तरोपपन्नक हैं, परम्परोपपन्नक हैं, अथवा अनन्तरपरम्परानुपपन्नक हैं ? गौतम! नैरयिक अनन्तरोपपन्नक भी हैं, परम्परोपपन्नक भी हैं और अनन्तरपरम्परानुपपन्नक भी हैं । भगवन् ! किस हेतु से ऐसा कहा है कि नैरयिक यावत् अनन्तरपरम्परानुपपन्नक भी हैं ? गौतम ! जिन नैरयिकों को उत्पन्न हुए अभी प्रथम समय ही हुआ है, वे अनन्तरोपपन्नक हैं । जिन नैरयिकों को उत्पन्न हुए अभी दो, तीन आदि समय हो चूके हैं, वे परम्परोपपन्नक हैं और जो नैरयिक जीव नरक में उत्पन्न होने के लिए (अभी) विग्रहगति में चल रहे हैं, वे अनन्तर-परम्परानुपपन्नक हैं । इस कारण से हे गौतम ! नैरयिक जीव यावत् अनन्तर-परम्परानुपपन्नक भी हैं । इसी प्रकार निरन्तर यावत् वैमानिक तक कहना ।

भगवन् ! अनन्तरोपपन्नक नैरयिक, नैरयिक का आयुष्य बाँधते हैं, अथवा तिर्यञ्च मनुष्य या देव का आयुष्य बाँधते हैं ? गौतम ! वे नैरयिक का आयुष्य नहीं बाँधते, यावत् देव का आयुष्य भी नहीं बाँधते । भगवन् ! परम्परोपपन्नक नैरयिक, क्या नैरयिक का आयुष्य यावत् देवायुष्य बाँधते हैं ? गौतम ! वे नैरयिक का आयुष्य नहीं बाँधते, वे तिर्यञ्च का आयुष्य बाँधते हैं, मनुष्य का आयुष्य भी बाँधते हैं, (किन्तु) देवायुष्य नहीं बाँधते । भगवन् ! अनन्तर-परम्परानुपपन्नक नैरयिक, क्या नैरयिक का आयुष्य बाँधते हैं ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! वे नैरयिक का आयुष्य नहीं बाँधते, यावत् देव का आयुष्य नहीं बाँधते । इसी प्रकार वैमानिकों तक समझना । विशेषता यह है कि परम्परो-पपन्नक पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चयोनिक और मनुष्य नारकादि, चारों प्रकार का आयुष्य बाँधते हैं । शेष पूर्ववत् समझना ।

भगवन् ! क्या नारक जीव अनन्तर-निर्गत हैं, परम्पर-निर्गत हैं या अनन्तर-परम्पर-अनिर्गत हैं ? गौतम !

नैरयिक अनन्तर-निर्गत भी होते हैं, परम्पर-निर्गत भी होते हैं और अनन्तर-परम्पर-अनिर्गत भी होते हैं । भगवन् ! ऐसा किस कारण से कहा जाता है ? गौतम ! जिन नैरयिकों को नरक से नीकले प्रथम समय ही है, वे अनन्तर-निर्गत हैं, जो नैरयिक अप्रथम निर्गत हुए हैं, वे 'परम्पर-निर्गत' हैं और जो नैरयिक विग्रहगति-समापन्नक हैं, वे 'अनन्तर-परम्पर-अनिर्गत' हैं । इसी कारण, हे गौतम ! ऐसा कहा गया है कि नैरयिक जीव, यावत् अनन्तर-परम्पर -अनिर्गत भी हैं । इसी प्रकार वैमानिकों तक कहना ।

भगवन् ! अनन्तरनिर्गत नैरयिक जीव, क्या नारकायुष्य बाँधते हैं यावत् देवायुष्य बाँधते हैं ? गौतम ! वे न तो नरकायुष्य यावत् न ही देवायुष्य बाँधते हैं । भगवन् ! परम्पर-निर्गत नैरयिक, क्या नरकायु बाँधते हैं ? इत्यादि पृच्छा । गौतम ! वे नरकायुष्य भी बाँधते हैं, यावत् देवायुष्य भी बाँधते हैं । भगवन् ! अनन्तर-परम्पर-अनिर्गत नैरयिक, क्या नारकायुष्य बाँधते हैं ? इत्यादि पूर्ववत् प्रश्न । गौतम ! वे न तो नारकायुष्य बाँधते, यावत् न देवायुष्य बाँधते हैं । इसी प्रकार वैमानिकों तक कहना । भगवन् ! नैरयिक जीव क्या अनन्तर-खेदोपपन्नक हैं, परम्पर-खेदो-पपन्नक है अथवा अनन्तरपरम्परा-खेदानुपपन्नक हैं ? गौतम ! नैरयिक जीव, अनन्तर-खेदोपपन्नक भी हैं, परम्पर-खेदोपपन्नक भी हैं और अनन्तर-परम्पर-खेदानुपपन्नक भी हैं । पूर्वोक्त चार दण्डक कहना । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१४ – उद्देशक-२

सूत्र - ६००

भगवन् ! उन्माद कितने प्रकार का कहा गया है ? गौतम ! उन्माद दो प्रकार का कहा गया है, यथा-यक्षावेश से और मोहनीयकर्म के उदय से । इनमें से जो यक्षावेशरूप उन्माद है, उसका सुखपूर्वक वेदन किया जा सकता है और वह सुखपूर्वक छुड़ाया जा सकता है । (किन्तु) इनमें से जो मोहनीयकर्म के उदय से होने वाला उन्माद है, उसका दुःखपूर्वक वेदन होता है और दुःखपूर्वक ही उससे छूटकारा पाया जा सकता है ।

भगवन् ! नारक जीवों में कितने प्रकार का उन्माद है ? गौतम ! दो प्रकार का, यथा-यक्षावेशरूप उन्माद और मोहनीयकर्म के उदय से होने वाला उन्माद । भगवन् ! ऐसा क्यों कहा जाता है ? गौतम ! यदि कोई देव, नैरयिक जीव पर अशुभ पुद्गलों का प्रक्षेप करता है, तो उन अशुभ पुद्गलों के प्रक्षेप से वह नैरयिक जीव यक्षा-वेशरूप उन्माद को प्राप्त होता है और मोहनीयकर्म के उदय से मोहनीयकर्मजन्य-उन्माद को प्राप्त होता है । इस कारण, हे गौतम ! दो प्रकार का उन्माद कहा गया है ।

भगवन् ! असुरकुमारों में कितने प्रकार का उन्माद कहा गया है ? गौतम ! नैरयिकों के समान उनमें भी दो प्रकार का उन्माद कहा गया है । विशेषता यह है कि उनकी अपेक्षा महर्द्धिक देव, उन असुरकुमारों पर अशुभ पुद्गलों का प्रक्षेप करता है और वह उन अशुभ पुद्गलों के प्रक्षेप से यक्षावेशरूप उन्माद को प्राप्त हो जाता है तथा मोहनीयकर्म के उदय से मोहनीयकर्मजन्य-उन्माद को प्राप्त होता है । शेष पूर्ववत् । इसी प्रकार स्तनितकुमारों के विषय में समझना । पृथ्वीकायिकों से लेकर मनुष्यों तक नैरयिकों के समान कहना । वाणव्यन्तर, ज्योतिष्कदेव और वैमानिकदेवों के विषय में भी असुरकुमारों के समान कहना ।

सूत्र - ६०१

भगवन् ! कालवर्षी मेघ वृष्टिकाय बरसाता है ? हाँ, गौतम ! वह बरसाता है । भगवन् ! जब देवेन्द्र देवराज शक्र वृष्टि करने की ईच्छा करता है, तब वह किस प्रकार वृष्टि करता है ? गौतम ! वह आभ्यन्तर परीषद् के देवों को बुलाता है । वे आभ्यन्तर परीषद् के देव मध्यम परीषद् के देवों को बुलाते हैं । वे मध्यम परीषद् के देव, बाह्य परीषद् के देवों को बुलाते हैं, वे बाह्य-परीषद् के देव बाह्य-बाह्य के देवों को बुलाते हैं । वे देव आभियोगिक देवों को बुलाते हैं । वे आभियोगिक देव वृष्टिकायिक देवों को बुलाते हैं और वृष्टिकायिक देव वृष्टि करते हैं । इस प्रकार देवेन्द्र देवराज शक्र वृष्टि करता है ।

भगवन् ! क्या असुरकुमार देव भी वृष्टि करते हैं ? हाँ, गौतम ! करते हैं । भगवन् ! असुरकुमार देव किस प्रयोजन से वृष्टि करते हैं ? गौतम ! जो ये अरिहंत भगवान होते हैं, उनके जन्म-महोत्सवों पर, निष्क्रमण महोत्सवों पर,

ज्ञान की उत्पत्ति के महोत्सवों पर, परिनिर्वाण-महोत्सवों जैसे अवसरों पर हे गौतम ! असुरकुमार देव वृष्टि करते हैं । इसी प्रकार नागकुमार देव भी वृष्टि करते हैं । स्तनितकुमारों तक भी इसी प्रकार कहना चाहिए । वाण-व्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिक देवों के विषय में भी इसी प्रकार कहना चाहिए ।

सूत्र - ६०२

भगवन् ! देवेन्द्र देवराज ईशान तमस्काय करना चाहता है, तब किस प्रकार करता है ? गौतम ! वह आभ्यन्तर परीषद् के देवों को बुलाता है, वे आभ्यन्तर परीषद् के देव मध्यम परीषद् के देवों को बुलाते हैं, इत्यादि सब वर्णन; यावत्-'तब बुलाये हुए वे आभियोगिक देव तमस्कायिक देवों को बुलाते हैं, और फिर वे समाहूत तमस्कायिक देव तमस्काय करते हैं; यहाँ तक शक्रेन्द्र के समान जानना । हे गौतम ! इस प्रकार देवेन्द्र देवराज ईशान तमस्काय करता है । भगवन् ! क्या असुरकुमार देव भी तमस्काय करते हैं ? हाँ, गौतम ! करते हैं । भगवन्! असुरकुमार देव किस कारण से तमस्काय करते हैं ? गौतम ! क्रीड़ा और रति के निमित्त, शत्रु को विमोहित करने के लिए, गोपनीय धनादि की सुरक्षा के हेतु, अथवा अपने शरीर को प्रच्छादित करने के लिए, हे गौतम ! इन कारणों से असुरकुमार देव भी तमस्काय करते हैं । इसी प्रकार वैमानिकों तक कहना । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१४ – उद्देशक-३

सूत्र - ६०३

भगवन् ! क्या महाकाय और महाशरीर देव भावितात्मा अनगार के बीच में होकर-नीकल जाता है ? गौतम ! कोई नीकल जाता है, और कोई नहीं जाता है । भगवन् ! ऐसा क्यों कहा जाता है ? गौतम ! देव दो प्रकार के हैं, मायी-मिथ्यादृष्टि-उपपन्नक एवं अमायी-सम्यग्दृष्टि-उपपन्नक । इन दोनों में से जो मायी-मिथ्यादृष्टि-उपपन्नक देव होता है, वह भावितात्मा अनगार को देखता है, (किन्तु) देखकर न तो वन्दना-नमस्कार करता है, न सत्कार-सम्मान करता है और न ही कल्याणरूप, मंगलरूप, देवतारूप एवं ज्ञानवान मानता है, यावत् न पर्युपासना करता है । ऐसा वह देव भावितात्मा अनगारके बीचहोकर चला जाता है, किन्तु जो अमायी-सम्यग्दृष्टि-उपपन्नक देव होता है, वह भावितात्मा अनगार को देखता है । देखकर वन्दना-नमस्कार, सत्कार-सम्मान करता है, यावत् पर्युपासना करता है । ऐसा वह देव भावितात्मा अनगार के बीचमें होकर नहीं जाता । भगवन् ! क्या महाकाय और महाशरीर असुरकुमार देव भावितात्मा अनगार के मध्यमें होकर जाता है ? गौतम ! पूर्ववत् समझना । इसी प्रकार देव-दण्डक वैमानिकों तक कहना ।

सूत्र - ६०४

भगवन् ! क्या नारकजीवों में (परस्पर) सत्कार, सम्मान, कृतिकर्म, अभ्युत्थान, अंजलिप्रग्रह, आसना-भिग्रह, आसनाऽनुप्रदान, अथवा नारक के सम्मुख जाना, बैठे हुए आदरणीय व्यक्ति की सेवा करना, उठकर जाते हुए के पीछे जाना इत्यादि विनय-भक्ति है ? गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है । भगवन् ! असुरकुमारों में (परस्पर) सत्कार, सम्मान यावत् अनुगमन आदि विनयभक्ति होती है ? हाँ, गौतम ! इसी प्रकार स्तनितकुमार देवों तक (कहना चाहिए) । नैरयिकों के अनुसार पृथ्वीकायादि से लेकर चतुरिन्द्रिय जीवों तक जानना । भगवन् ! क्या पंचे-न्द्रियतिर्यञ्चयोनिक जीवों में सत्कार, सम्मान, यावत् अनुगमन आदि विनय हैं ? हाँ, गौतम ! हैं, परन्तु इनमें आसनाभिग्रह या आसनाऽनुप्रदानरूप विनय नहीं है । असुरकुमारों के समान मनुष्यों से लेकर वैमानिकों तक कहना ।

सूत्र - ६०५

भगवन् ! अल्पऋद्धि वाला देव, क्या महर्द्धिक देव के मध्य में होकर जा सकता है ? गौतम ! यह अर्थ शक्य नहीं है । भगवन् ! समर्द्धिक देव, सम-ऋद्धि वाले देव के मध्य में से होकर जा सकता है ? गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है; किन्तु प्रमत्त हो तो जा सकता है । भगवन् ! मध्य में होकर जाने वाले देव, शस्त्र का प्रहार करके जा सकता है या बिना प्रहार किये ही जा सकता है ? गौतम ! वह शस्त्राक्रमण करके जा सकता है, बिना शस्त्राक्रमण किये नहीं । भगवन् ! वह देव, पहले शस्त्र का आक्रमण करके पीछे जाता है, अथवा पहले जाकर तत्पश्चात् शस्त्र से आक्रमण करता है ? गौतम ! पहले शस्त्र का प्रहार करके फिर जाता है, किन्तु पहले जाकर फिर शस्त्र-प्रहार नहीं करता । इस

प्रकार दशवें शतक के तीसरे उद्देशक के अनुसार समग्र रूप से चारों दण्डक कहना, यावत् महा-ऋद्धि वाली वैमानिक देवी, अल्पऋद्धि वाली वैमानिक देवी के मध्य में से होकर जा सकती है ।

भगवन् ! महर्द्धिक देव, अल्पर्द्धिक देव के मध्य में होकर जा सकता है ? हाँ, गौतम ! जा सकता है । भगवन् ! महर्द्धिक देव शस्त्राक्रमण करके जा सकता है या शस्त्राक्रमण किये बिना ही जा सकता है ? गौतम ! शस्त्राक्रमण करके भी जा सकता है और शस्त्राक्रमण किये बिना भी जा सकता है । भगवन् ! पहले शस्त्राक्रमण करके पीछे जाता है या पहले जाकर बाद में शस्त्राक्रमण करता है ? गौतम ! वह पहले शस्त्राक्रमण करके पीछे भी जा सकता है अथवा पहले जाकर बाद में भी शस्त्राक्रमण कर सकता है ।

सूत्र - ६०६

भगवन् ! रत्नप्रभापृथ्वी के नैरयिक किस प्रकार के पुद्गलपरिणामों का अनुभव करते रहते हैं ? गौतम ! वे अनिष्ट यावत् अमनाम का अनुभव करते रहते हैं । इसी प्रकार अधःसप्तमपृथ्वी के नैरयिकों तक कहना । इसी प्रकार वेदना-परिणाम का भी (अनुभव करते हैं) । इसी प्रकार जीवाभिगमसूत्र के नैरयिक उद्देशक समान यहाँ भी वे समग्र आलापक कहने चाहिए, यावत्-भगवन् ! अधःसप्तमपृथ्वी के नैरयिक, किस प्रकार के परिग्रहसंज्ञा-परिणाम का अनुभव करते रहते हैं ? गौतम ! वे अनिष्ट यावत् अमनाम परिग्रहसंज्ञा-परिणाम का अनुभव करते हैं, हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, इसी प्रकार है ।

शतक-१४ – उद्देशक-४

सूत्र - ६०७

भगवन् ! क्या यह पुद्गल अनन्त, अपरिमित और शाश्वत अतीतकाल में एक समय तक रूक्ष स्पर्श वाला रहा, एक समय तक अरूक्ष स्पर्श वाला और एक समय तक रूक्ष और स्निग्ध दोनों प्रकार के स्पर्श वाला रहा ? (तथा) पहले करण के द्वारा अनेक वर्ण और अनेक रूप वाले परिणाम से परिणत हुआ और उसके बाद उस अनेक वर्णादि परिणाम के क्षीण होने पर वह एक वर्ण और एक रूप वाला भी हुआ था ? हाँ, गौतम ! यह पुद्गल... अतीतकाल में...इत्यादि सर्वकथन, यावत्-'एक रूप वाला भी हुआ था' । भगवन् ! यह पुद्गल शाश्वत वर्तमान-काल में एक समय तक...? इत्यादि पूर्ववत् प्रश्न । गौतम ! पूर्वोक्त कथनानुसार जानना । इसी प्रकार अनन्त और शाश्वत अनागत काल में एक समय तक, (इत्यादि प्रश्नोत्तर) । भगवन् ! यह स्कन्ध अनन्त शाश्वत अतीत, काल में, एक समय तक, इत्यादि प्रश्न पूर्ववत् । गौतम ! पुद्गल के अनुसार स्कन्ध के विषय में कहना ।

सूत्र - ६०८

भगवन् ! क्या यह जीव अनन्त और शाश्वत अतीत काल में, एक समय में दुःखी, एक समय में अदुःखी-तथा एक समय में दुःखी और अदुःखी था ? तथा पहले करण द्वारा अनेक भाव वाले अनेकभूत परिणाम से परिणत हुआ था ? और इसके बाद वेदनीयकर्म की निर्जरा होने पर जीव एकभाव वाला और एकरूप वाला था ? हाँ, गौतम ! यह जीव...यावत् एकरूप वाला था । इसी प्रकार शाश्वत वर्तमान काल के विषय में भी समझना चाहिए । अनन्त अनागतकाल के विषय में भी इसी प्रकार समझना चाहिए ।

सूत्र - ६०९

भगवन् ! परमाणु-पुद्गल शाश्वत हैं या अशाश्वत ? गौतम ! वह कथंचित् शाश्वत हैं और कथंचित् अशाश्वत हैं भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहा जाता है ? गौतम ! द्रव्यार्थरूप से शाश्वत हैं और वर्ण यावत् स्पर्श-पर्यायों की अपेक्षा से अशाश्वत हैं । हे गौतम ! इस कारण से ऐसा कहा जाता है कि यावत् कथंचित् अशाश्वत हैं ।

सूत्र - ६१०

भगवन् ! परमाणु-पुद्गल चरम है, या अचरम है ? गौतम ! द्रव्य की अपेक्षा चरम नहीं, अचरम हैं; क्षेत्र की अपेक्षा कथंचित् चरम हैं और कथंचित् अचरम हैं; काल की अपेक्षा कदाचित् चरम हैं और कदाचित् अचरम हैं तथा भावादेश से भी कथंचित् चरम हैं और कथंचित् अचरम हैं ।

सूत्र - ६११

भगवन् ! परिणाम कितने प्रकार का कहा है ? गौतम ! दो प्रकार का । यथा-जीवपरिणाम और अजीव-परिणाम । इस प्रकार यहाँ परिणामपद कहना चाहिए । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, यह इसी प्रकार है ।

शतक-१४ – उद्देशक-५

सूत्र - ६१२

भगवन् ! नैरयिक जीव अग्निकाय के मध्य में होकर जा सकता है ? गौतम ! कोई नैरयिक जा सकता है और कोई नहीं जा सकता । भगवन् ! यह किस कारण से कहते हैं ? गौतम ! नैरयिक दो प्रकार के हैं यथा-विग्रह गति-समापन्नक और अविग्रहगति-समापन्नक । उनमें से जो विग्रहगति-समापन्नक नैरयिक हैं, वे अग्निकाय के मध्य में होकर जा सकते हैं । भगवन् ! क्या वे अग्नि से जल जाते हैं ? गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है, क्योंकि उन पर अग्निरूप शस्त्र नहीं चल सकता । उनमें से जो अविग्रहगति समापन्नक नैरयिक हैं वे अग्निकाय के मध्य में होकर नहीं जा सकते, इसलिए हे गौतम ! ऐसा कहा जाता है कि कोइ नैरयिक जा सकता है और कोई नहीं जा सकता ।

भगवन् ! असुरकुमार देव अग्निकाय के मध्य में होकर जा सकते हैं ? गौतम ! कोई जा सकता है और कोई नहीं जा सकता । भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहा जाता है ? गौतम ! असुरकुमार दो प्रकार के कहे गए हैं, यथा-विग्रहगति-समापन्नक और अविग्रहगति-समापन्नक । उनमें से जो विग्रहगति-समापन्नक असुरकुमार हैं, वे नैरयिकों के समान हैं, यावत् उन पर अग्नि-शस्त्र असर नहीं कर सकता । उनमें जो अविग्रहगति-समापन्नक असुर-कुमार हैं, उनमें से कोई अग्नि के मध्य में होकर जा सकता है और कोई नहीं जा सकता । जो अग्नि के मध्य में होकर जाता है, क्या वह जल जाता है ? गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है, क्योंकि उस पर अग्नि आदि शस्त्र का असर नहीं होता । इसी कारण हे गौतम ! ऐसा कहा जाता है कि कोई असुरकुमार जा सकता है और कोई नहीं जा सकता । इसी प्रकार स्तनितकुमार देव तक कहना । एकेन्द्रियों के विषय में नैरयिकों के समान कहना ।

भगवन् ! द्वीन्द्रिय जीव अग्निकाय के मध्य में से होकर जा सकते हैं ? असुरकुमारों के अनुसार द्वीन्द्रियों के विषय में कहना । परन्तु इतनी विशेषता है-भगवन् ! जो द्वीन्द्रिय जीव अग्नि के बीच में होकर जाते हैं, वे जल जाते हैं ? हाँ, वे जल जाते हैं । शेष पूर्ववत् । इसी प्रकार का कथन चतुरिन्द्रिय तक करना । भगवन् ! पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक जीव अग्नि के मध्य में होकर जा सकते हैं ? गौतम ! कोई जा सकता है और कोई नहीं जा सकता । भगवन् ! ऐसा क्यों कहा जाता है ? गौतम ! पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक जीव दो प्रकार के हैं, यथा-विग्रहगति समापन्नक और अविग्रहगति समापन्नक । जो विग्रहगति समापन्नक पंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिक हैं, उनका कथन नैरयिक के समान जानना, यावत् उन पर शस्त्र असर नहीं करता । अविग्रहसमापन्नक पंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिक दो प्रकार के हैं-ऋद्धिप्राप्त और अनृद्धिप्राप्त । जो ऋद्धिप्राप्त, पंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिक हैं, उनमें से कोई अग्नि के मध्य में होकर जाता है और कोई नहीं जाता है । जो अग्नि में होकर जाता है, क्या वह जल जाता है ? यह अर्थ समर्थ नहीं, क्योंकि उस पर शस्त्र असर नहीं करता । परन्तु जो ऋद्धि-अप्राप्त पंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिक हैं, उनमें से भी कोई अग्नि में होकर जाता है और कोई नहीं जाता है । जो अग्नि में से होकर जाता है, क्या वह जल जाता है ? हाँ, वह जल जाता है । इसी कारण हे गौतम ! ऐसा कहा गया है कि कोई अग्नि में से होकर जाता है और कोई नहीं जाता है । इसी प्रकार मनुष्य के विषय में भी कहना । वाणव्यन्तरों, ज्योतिष्कों और वैमानिकों के विषय में असुर-कुमारों के समान कहना ।

सूत्र - ६१३

नैरयिक जीव दस स्थानों का अनुभव करते रहते हैं । यथा-अनिष्ट शब्द, अनिष्ट रूप, अनिष्ट गन्ध, अनिष्ट रस, अनिष्ट स्पर्श, अनिष्ट गति, अनिष्ट स्थिति, अनिष्ट लावण्य, अनिष्ट यशःकीर्ति और अनिष्ट उत्थान, कर्म, बल, वीर्य और पुरुषकार-पराक्रम । असुरकुमार दस स्थानों का अनुभव करते रहते हैं, यथा-इष्ट शब्द, इष्ट रूप यावत् इष्ट उत्थान, कर्म, बल, वीर्य, पुरुषकार-पराक्रम । इसी प्रकार स्तनितकुमारों तक कहना चाहिए ।

पृथ्वीकायिक जीव छह स्थानों का अनुभव करते रहते हैं । यथा-इष्ट-अनिष्ट स्पर्श, इष्ट-अनिष्ट गति, यावत्

इष्टानिष्ट उत्थान, कर्म, बल, वीर्य, पुरुषकार पराक्रम । इसी प्रकार वनस्पतिकायिक जीवों तक कहना । द्वीन्द्रिय जीव सात स्थानों का अनुभव करते रहते हैं, यथा-इष्टानिष्ट रस इत्यादि, शेष एकेन्द्रिय जीवों के समान । त्रीन्द्रिय जीव आठ स्थानों का अनुभव करते हैं, यथा-इष्टानिष्ट गन्ध इत्यादि, शेष द्वीन्द्रिय जीवों के समान । चतुरिन्द्रिय जीव नौ स्थानों का अनुभव करते हैं, यथा-इष्टानिष्ट रूप इत्यादि शेष त्रीन्द्रिय जीवों के समान । पंचेन्द्रिय तिर्यंच-योनिक जीव दस स्थानों का अनुभव करते हैं, यथा-इष्टानिष्ट शब्द यावत् इष्टानिष्ट पुरुषकार-पराक्रम । इसी प्रकार मनुष्यों के विषय में भी कहना । वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिकों तक असुरकुमारों के समान कहना ।

सूत्र - ६१४

भगवन् ! क्या महर्द्धिक यावत् महासुख वाला देव बाह्य पुद्गलों को ग्रहण किये बिना तिरछे पर्वत को या तिरछी भींत को एक बार उल्लंघन करने अथवा बार-बार उल्लंघन करने में समर्थ है ? गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है । भगवन् ! क्या महर्द्धिक यावत् महासुख वाला देव बाह्य पुद्गलों को ग्रहण करके तिरछे पर्वत को या तिरछी भींत को उल्लंघन एवं प्रलंघन करने में समर्थ है ? हाँ, समर्थ है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१४ – उद्देशक-६

सूत्र - ६१५

राजगृह नगर में यावत् पूछा-भगवन् ! नैरयिक जीव किन द्रव्यों का आहार करते हैं ? किस तरह परिणमाते हैं? उनकी योनि क्या है ? उनकी स्थिति का क्या कारण है ? गौतम ! नैरयिक जीव पुद्गलों का आहार करते हैं और उसका पुद्गल-रूप परिणाम होता है । उनकी योनि शीतादि स्पर्शमय पुद्गलों वाली है । आयुष्य कर्म के पुद्गल उनकी स्थिति के कारण हैं । बन्ध द्वारा वे ज्ञानावरणीयादि कर्म के पुद्गलों को प्राप्त हैं । उनके नारक-त्वनिमित्तभूत कर्म निमित्तरूप हैं । कर्मपुद्गलों के कारण उनकी स्थिति है । कर्मों के कारण ही वे विपर्यास को प्राप्त होते हैं । इसी प्रकार वैमानिकों तक कहना ।

सूत्र - ६१६

भगवन् ! नैरयिक जीव वीचिद्रव्यों का आहार करते हैं अथवा अवीचिद्रव्यों का ? गौतम ! नैरयिक जीव वीचिद्रव्यों का भी आहार करते हैं और अवीचिद्रव्यों का भी आहार करते हैं । भगवन् ! ऐसा किस कारण से कहा जाता है कि नैरयिक...यावत् अवीचिद्रव्यों का भी आहार करते हैं ? गौतम ! जो नैरयिक एक प्रदेश न्यून द्रव्यों का आहार करते हैं, वे वीचिद्रव्यों का आहार करते हैं और जो परिपूर्ण द्रव्यों का आहार करते हैं, वे नैरयिक अवीचि-द्रव्यों का आहार करते हैं । इसी प्रकार वैमानिकों तक कहना चाहिए ।

सूत्र - ६१७

भगवन् ! जब देवेन्द्र देवराज शक्र भोग्य मनोज्ञ दिव्य स्पर्शादि विषयभोगों को उपभोग करना चाहता है, तब वह किस प्रकार करता है ? गौतम ! उस समय देवेन्द्र देवराज शक्र, एक महान् चक्र के सदृश गोलाकार स्थान की विकुर्वणा करता है, जो लम्बाई-चौड़ाई में एक लाख योजन होता है । उसकी परिधि तीन लाख कुछ अधिक साढ़े तेरह अंगुल होती है । चक्र के समान गोलाकार उस स्थान के ऊपर अत्यन्त समतल एवं रमणीय भूभाग होता है, यावत् मणियों का मनोज्ञ स्पर्श होता है; वह उस चक्राकार स्थान के ठीक मध्यभाग में एक महान् प्रासादावतं-सक की विकुर्वणा करता है । जो ऊंचाई में पाँच सौ योजन होता है । उसका विष्कम्भ ढाई सौ योजन होता है । वह प्रासाद अत्यन्त ऊंचा और प्रभापुञ्ज से व्याप्त होने से मानो वह हँस रहा हो, इत्यादि यावत्-वह दर्शनीय, अभिरूप और प्रतिरूप होता है उस प्रासादावतंसक का उपरितल पद्मलताओं के चित्रण से विचित्र यावत् प्रतिरूप होता है । भीतर का भूभाग अत्यन्त सम और रमणीय होता है, इत्यादि वर्णन-वहाँ मणियों का स्पर्श होता है, तक जानना । वहाँ लम्बाई-चौड़ाई में आठ योजन की मणिपीठिका होती है, जो वैमानिक देवों के मणिपीठिका के समान होती है। उस मणिपीठिका के ऊपर वह एक महान् देवशय्या की विकुर्वणा करता है । उस देवशय्या का वर्णन करना चाहिए। वहाँ देवेन्द्र देवराज शक्र अपने-अपने परिवार सहित आठ अग्रमहिषियों के साथ गन्धर्वानीक और नाट्यानीक, के साथ

जोर-जोर से आहरत हुए नाट्य, गीत और वाद्य के शब्दों द्वारा यावत् दिव्य भोग्य भोगों का उपभोग करता है ।

भगवन् ! जब देवेन्द्र देवराज ईशान दिव्य भोग्य भोगों का उपभोग करना चाहता है, तब वह कैसे करता है? शक्र के अनुसार समग्र कथन ईशान इन्द्र के लिए करना चाहिए । इसी प्रकार सनत्कुमार के विषय में भी कहना चाहिए । विशेषता यह है कि उनके प्रासादावतंसक की ऊंचाई छह सौ योजन और विस्तार तीन सौ योजन होता है। आठ योजन की मणिपीठिका का उसी प्रकार वर्णन करना चाहिए । उस मणिपीठिका के ऊपर वह अपने परिवार के योग्य आसनों सहित एक महान् सिंहासन की विकुर्वणा करता है । वहाँ देवेन्द्र देवराज सनत्कुमार बहत्तर हजार सामानिक देवों के साथ यावत् दो लाख ८८ हजार आत्मरक्षक देवों के साथ और सनत्कुमार कल्पवासी बहुत-से वैमानिक देव-देवियों के साथ प्रवृत्त होकर महान् गीत और वाद्य के शब्दों द्वारा यावत् दिव्य भोग्य विषयभोगों का उपभोग करता हुआ विचरण करता है । सनत्कुमार के समान प्राणत और अच्युत देवेन्द्र तक कहना । विशेष यह है कि जिसका जितना परिवार हो, उतना कहना । अपने-अपने कल्प के विमानों की ऊंचाई के बराबर प्रासाद की ऊंचाई तथा उनकी ऊंचाई से आधा विस्तार कहना, यावत् अच्युत देवलोक का प्रासादावतंसक नौ सौ योजन ऊंचा है और चार सौ पचास योजन विस्तृत है । हे गौतम ! उसमें देवेन्द्र देवराज अच्युत, दस हजार सामानिक देवों के साथ यावत् भोगों का उपभोग करता हुआ विचरता है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१४ – उद्देशक-७

सूत्र - ६१८

राजगृह नगर में यावत् परीषद् धर्मोपदेश श्रवण कर लौट गई । श्रमण भगवान महावीर ने कहा–गौतम ! तू मेरे साथ चिर-संश्लिष्ट है, हे गौतम ! तू मेरा चिर-संस्तृत है, तू मेरा चिर-परिचित भी है । गौतम ! तू मेरे साथ चिर-सेवित या चिरप्रीत है । चिरकाल से हे गौतम ! तू मेरा अनुगामी है । तू मेरे साथ चिरानुवृत्ति है, गौतम ! इससे पूर्व के भवों में (स्नेह सम्बन्ध था) । अधिक क्या कहा जाए, इस भव में मृत्यु के पश्चात्, इस शरीर से छूट जाने पर, इस मनुष्यभव से च्युत होकर हम दोनों तुल्य और एकार्थ तथा विशेषतारहित एवं किसी भी प्रकार के भेदभाव से रहित हो जाएंगे ।

सूत्र - ६१९

भगवन् ! जिस प्रकार हम दोनों इस अर्थ को जानते-देखते हैं, क्या उसी प्रकार अनुत्तरौपपातिक देव भी इस अर्थ को जानते-देखते हैं ? हाँ, गौतम ! हम दोनों के समान अनुत्तरौपपातिक देव भी इस अर्थ को जानते-देखते हैं ।

भगवन् ! क्या कारण है कि जिस प्रकार हम दोनों इस बात को जानते-देखते हैं, उसी प्रकार अनुत्तरौपपातिक देव भी जानते-देखते हैं ? गौतम ! अनुत्तरौपपातिक देवों को (अवधिज्ञान की लब्धि से) मनोद्रव्य की अनन्त वर्गणाएं लब्ध हैं, प्राप्त हैं, अभिसमन्वागत होती हैं । इस कारण हे गौतम! ऐसा कहा गया है कि यावत् जानते-देखते हैं

सूत्र - ६२०

भगवन् ! तुल्य कितने प्रकार का कहा गया है ? गौतम छह प्रकार का यथा–द्रव्यतुल्य, क्षेत्रतुल्य, काल-तुल्य, भवतुल्य, भावतुल्य और संस्थानतुल्य ।

भगवन् ! 'द्रव्यतुल्य' द्रव्यतुल्य क्यों कहलाता है ? गौतम ! एक परमाणु-पुद्गल, दूसरे परमाणु-पुद्गल से द्रव्यतः तुल्य है, किन्तु परमाणु-पुद्गल से भिन्न दूसरे पदार्थों के साथ द्रव्य से तुल्य नहीं है । इसी प्रकार एक द्विप्रदेशिक स्कन्ध दूसरे द्विप्रदेशिक स्कन्ध से द्रव्य की अपेक्षा से तुल्य है, किन्तु द्विप्रदेशिक स्कन्ध से व्यतिरिक्त दूसरे स्कन्ध के साथ द्विप्रदेशिक स्कन्ध द्रव्य से तुल्य नहीं है । इसी प्रकार यावत् दशप्रदेशिक स्कन्ध तक कहना चाहिए । एक तुल्य-संख्यात-प्रदेशिक-स्कन्ध, दूसरे तुल्य-संख्यात-प्रदेशिक स्कन्ध के साथ द्रव्य से तुल्य है परन्तु तुल्य-संख्यात-प्रदेशिक-स्कन्ध से व्यतिरिक्त दूसरे स्कन्ध के साथ द्रव्य से तुल्य नहीं है । इसी प्रकार तुल्य-असंख्यात-प्रदेशिक-स्कन्ध के विषय में भी कहना चाहिए । तुल्य-अनन्त-प्रदेशिक-स्कन्ध के विषय में भी इसी प्रकार जानना । इसी कारण से हे गौतम ! 'द्रव्यतुल्य' द्रव्यतुल्य कहलाता है ।

भगवन् ! 'क्षेत्रतुल्य' क्षेत्रतुल्य क्यों कहलाता है ? गौतम ! एकप्रदेशावगाढ़ पुद्गल दूसरे एकप्रदेशावगाढ़ पुद्

गल के साथ क्षेत्र से तुल्य कहलाता है; परन्तु एकप्रदेशावगाढ़-व्यतिरिक्त पुद्गल के साथ, एकप्रदेशावगाढ़ पुद्गल क्षेत्र से तुल्य नहीं है । इसी प्रकार यावत्-दस-प्रदेशावगाढ़ पुद्गल के विषय में भी कहना चाहिए तथा एक तुल्य संख्यात-प्रदेशावगाढ़ पुद्गल, अन्य पुद्गल, अन्य तुल्य संख्यात-प्रदेशावगाढ़ पुद्गल के साथ तुल्य होता है । इसी प्रकार तुल्य असंख्यात-प्रदेशावगाढ़ पुद्गल के विषय में भी कहना चाहिए । इसी कारण से, हे गौतम ! 'क्षेत्र-तुल्य' क्षेत्रतुल्य कहलाता है ।

भगवन् ! 'कालतुल्य' कालतुल्य क्यों कहलाता है ? गौतम ! एक समय की स्थिति वाला पुद्गल अन्य एक समय की स्थिति वाले पुद्गल के साथ काल से तुल्य है; किन्तु एक समय की स्थिति वाले पुद्गल के अतिरिक्त दूसरे पुद्गलों के साथ, एक समय की स्थिति वाला पुद्गल काल से तुल्य नहीं है । इसी प्रकार यावत् दस समय की स्थिति वाले पुद्गल तक के विषय में कहना । तुल्य संख्यातसमय की स्थिति वाले पुद्गल तक के विषय में भी इसी प्रकार कहना और तुल्य असंख्यातसमय की स्थिति वाले पुद्गल के विषय में भी इसी प्रकार कहना । इस कारण से, हे गौतम ! 'कालतुल्य' कालतुल्य कहलाता है ।

भगवन् ! 'भवतुल्य' भवतुल्य क्यों कहलाता है ? गौतम ! एक नैरयिक जीव दूसरे नैरयिक जीव (या जीवों) के साथ भव-तुल्य है, किन्तु नैरयिक जीवों के अतिरिक्त (तिर्यंच-मनुष्यादि दूसरे जीवों) के साथ नैरयिक जीव, भव से तुल्य नहीं है । इसी प्रकार तिर्यंचयोनिकों के विषय में समझना चाहिए । मनुष्यों के तथा देवों के विषय में भी इसी प्रकार समझना चाहिए । इस कारण, हे गौतम ! 'भवतुल्य' भवतुल्य कहलाता है ।

भगवन् ! 'भावतुल्य' भावतुल्य किस कारण से कहलाता है ? गौतम ! एकगुण काले वर्ण वाला पुद्गल, दूसरे एकगुण काले वर्ण वाले पुद्गल के साथ भव से तुल्य है किन्तु एक गुण काले वर्ण वाला पुद्गल, एक गुण काले वर्ण से अतिरिक्त दूसरे पुद्गलों के साथ भाव से तुल्य नहीं है । इसी प्रकार यावत् दस गुण काले पुद्गल तक कहना चाहिए इसी प्रकार तुल्य संख्यातगुण काला पुद्गल तुल्य संख्यातगुण काले पुद्गल के साथ, तुल्य असंख्यातगुण काला पुद्गल, तुल्य असंख्यातगुण काले पुद्गल के साथ और तुल्य अनन्तगुण काला पुद्गल, तुल्य अनन्तगुण काले पुद्गल के साथ भाव से तुल्य है । जिस प्रकार काला वर्ण कहा, उसी प्रकार नीले, लाल, पीले और श्वेत वर्ण के विषय में भी कहना चाहिए । इसी प्रकार सुरभिगन्ध और दुरभिगन्ध और इसी प्रकार तिक्त यावत् मधुर रस तथा कर्कश यावत् रूक्ष स्पर्श वाले पुद्गल के विषय में भावतुल्य का कथन करना चाहिए । औदयिक भाव औदयिक भाव के साथ (भाव-)तुल्य है, किन्तु वह औदयिक भाव के सिवाय अन्य भावों के साथ भावतः तुल्य नहीं है । इसी प्रकार औपशमिक, क्षायिक, क्षायोपशमिक तथा पारिणामिक भाव के विषय में भी कहना चाहिए । सान्निपातिक भाव, सान्निपातिक भाव के साथ भाव से तुल्य है । इसी कारण से, हे गौतम ! 'भावतुल्य' भावतुल्य कहलाता है ।

भगवन् ! 'संस्थानतुल्य' को संस्थानतुल्य क्यों कहा जाता है ? गौतम ! परिमण्डलसंस्थान, अन्य परिमण्डलसंस्थान के साथ संस्थानतुल्य है, किन्तु दूसरे संस्थानों के साथ संस्थान से तुल्य नहीं है । इसी प्रकार वृत्त-संस्थान, त्र्यस्र-संस्थान, चतुरस्रसंस्थान एवं आयतसंस्थान के विषय में भी कहना । एक समचतुरस्रसंस्थान अन्य समचतुरस्रसंस्थान के साथ संस्थान-तुल्य है, परन्तु समचतुरस्र के अतिरिक्त दूसरे संस्थानों के साथ संस्थान-तुल्य नहीं है । इसी प्रकार न्यग्रोध-परिमण्डल यावत् हुण्डकसंस्थान तक कहना चाहिए । इसी कारण से, हे गौतम ! 'संस्थान-तुल्य' संस्थान-तुल्य कहलाता है ।

सूत्र - ६२१

भगवन् ! भक्तप्रत्याख्यान करने वाला अनगार क्या (पहले) मूर्च्छित यावत् अत्यन्त आसक्त होकर आहार ग्रहण करता है, इसके पश्चात् स्वाभाविक रूप से काल करता है और तदनन्तर अमूर्च्छित, अगृद्ध यावत् अनासक्त होकर आहार करता है ? हाँ, गौतम ! भक्तप्रत्याख्यान करने वाला अनगार पूर्वोक्त रूप से आहार करता है । भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहा गया कि भक्तप्रत्याख्यान करने वाला अनगार...पूर्वोक्त रूप से आहार करता है? गौतम ! भक्तप्रत्याख्यान करने वाला अनगार (प्रथम) मूर्च्छित यावत् अत्यन्त आसक्त होकर आहार करता है । इसके पश्चात्

स्वाभाविक रूप से काल करता है । इसके बाद आहार के विषय में अमूर्च्छित यावत् अगृद्ध होकर आहार करता है ।

सूत्र - ६२२

भगवन् ! क्या लवसप्तम देव 'लवसप्तम' होते हैं ? हाँ, गौतम ! होते हैं । भगवन् ! उन्हें 'लवसप्तम' देव क्यों कहते हैं ? गौतम ! जैसे कोई तरुण पुरुष यावत् शिल्पकला में निपुण एवं सिद्धहस्त हो, वह परिपक्व, काटने योग्य अवस्था को प्राप्त, पीले पड़े हुए तथा पीले जाल वाले, शालि, व्रीहि, गेहूँ, जौ, और जवजव की बिखरी हुई नालों को हाथ से इकट्ठा करके मुट्ठी में पकड़कर नई धार पर चढ़ाई हुई तीखी दरांती से शीघ्रतापूर्वक 'ये काटे, ये काटे'-इस प्रकार सात लवों को जितने समय में काट लेता है, हे गौतम ! यदि उन देवों का इतना अधिक आयुष्य होता तो वे उसी भवमें सिद्ध हो जाते, यावत् सर्व दुःखों का अन्त कर देते । इसी कारण से, हे गौतम ! उन देवों को 'लवसप्तम' कहते हैं

सूत्र - ६२३

भगवन् ! क्या अनुत्तरौपपातिक देव, अनुत्तरौपपातिक होते हैं ? हाँ, गौतम ! होते हैं । भगवन् ! वे अनुत्तरौपपातिक देव क्यों कहलाते हैं ? गौतम ! अनुत्तरौपपातिक देवों को अनुत्तर शब्द, यावत्-अनुत्तर स्पर्श प्राप्त होते हैं, इस कारण, हे गौतम ! अनुत्तरौपपातिक देवों को अनुत्तरौपपातिक देव कहते हैं । भगवन् ! कितने कर्म शेष रहने पर अनुत्तरौपपातिक देव, अनुत्तरौपपातिक देवरूप में उत्पन्न हुए हैं ? गौतम ! श्रमणनिर्ग्रन्थ षष्ठ-भक्त तप द्वारा जितने कर्मों की निर्जरा करता है, उतने कर्म शेष रहने पर अनुत्तरौपपातिक-योग्य साधु, अनुत्तरौपपातिक देवरूप में उत्पन्न हुए हैं । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१४ – उद्देशक-८

सूत्र - ६२४

भगवन् ! इस रत्नप्रभापृथ्वी और शर्कराप्रभा पृथ्वी का कितना अबाधा-अन्तर है ? गौतम ! असंख्यात हजार योजन का है । भगवन् ! शर्कराप्रभापृथ्वी और बालुकाप्रभापृथ्वी का कितना अबाधा-अन्तर है ? गौतम ! पूर्ववत् । इसी प्रकार तमःप्रभा और अधःसप्तमपृथ्वी तक कहना । भगवन् ! अधःसप्तमपृथ्वी और अलोक का कितना अबाधा-अन्तर है ? गौतम ! असंख्यात हजार योजन का है ।

भगवन् ! इस रत्नप्रभापृथ्वी और ज्योतिष्क-विमानों का कितना अबाधा-अन्तर है ? गौतम ! ७९० योजन। भगवन् ! ज्योतिष्क विमानों और सौधर्म-ईशानकल्पों का अबाधा-अन्तर कितना है ? गौतम ! यावत् असंख्यात योजन है । भगवन् ! सौधर्म-ईशानकल्प और सनत्कुमार-माहेन्द्रकल्पों का कितना अबाधान्तर है ? गौतम ! (पूर्ववत्) । भगवन् ! सनत्कुमार-माहेन्द्रकल्प और ब्रह्मलोककल्प का अबाधान्तर कितना है ? गौतम ! पूर्ववत् । भगवन् ! ब्रह्मलोककल्प और लान्तककल्प के अबाधान्तर ? गौतम ! पूर्ववत् । भगवन् ! लान्तककल्प और महाशुक्र कल्प का अबाधान्तर ? गौतम ! पूर्ववत् । इसी प्रकार महाशुक्रकल्प और सहस्रारकल्प का, सहस्रारकल्प और आनत-प्राणतकल्पों का, आनत-प्राणतकल्पों और आरण-अच्युतकल्पों का, इसी प्रकार आरण-अच्युतकल्पों और ग्रैवेयक विमानों का, इसी प्रकार ग्रैवेयक विमानों और अनुत्तर विमानों का अबाधान्तर समझना ।

भगवन् ! अनुत्तरविमानों और ईषत्प्राग्भारा पृथ्वी का अबाधान्तर कितना है ? गौतम ! १२ योजन है। भगवन् ईषत्प्राग्भारा पृथ्वी और अलोक का कितना अबाधान्तर है ? गौतम ! अबाधान्तर देशोन योजन का कहा गया है ।

सूत्र - ६२५

भगवन् ! सूर्य की गर्मी से पीड़ित, तृषा से व्याकुल, दावानल की ज्वाला से झुलसा हुआ यह शालवृक्ष काल मास में काल करके कहाँ जाएगा, कहाँ उत्पन्न होगा ? गौतम ! यह शालवृक्ष, इसी राजगृहनगर में पुनः शालवृक्ष के रूपमें उत्पन्न होगा । वहाँ पर अर्चित, वन्दित, पूजित, सत्कृत, सम्मानित और दिव्य, सत्य, सत्यावपात, सन्निहित-प्रातिहार्य होगा तथा इसका पीठ, लीपा-पोता हुआ एवं पूजनीय होगा । भगवन् ! वह शालवृक्ष वहाँ से मरकर कहाँ जाएगा, कहाँ उत्पन्न होगा ? गौतम ! वह महाविदेह क्षेत्रमें जन्म लेकर सिद्ध होगा, यावत् सब दुःखों का अन्त करेगा ।

भगवन् ! सूर्य के ताप से पीड़ित, तृषा से व्याकुल तथा दावानल की ज्वाला से प्रज्वलित यह शाल-यष्टिका

कालमास में काल करके कहाँ जाएगी ? कहाँ उत्पन्न होगी ? गौतम ! इसी जम्बूद्वीप के भारतवर्ष में विन्ध्याचल के पादमूल में स्थित माहेश्वरी नगरी में शाल्मली वृक्ष के रूप में पुनः उत्पन्न होगी । वहाँ वह अर्चित, वन्दित और पूजित होगी; यावत् उसका चबूतरा लीपा-पोता हुआ होगा और वह पूजनीय होगा । भगवन् ! वह वहाँ से काल करके कहाँ जाएगी ? कहाँ उत्पन्न होगी ? गौतम शालवृक्ष के समान जानना ।

सूत्र - ६२६

भगवन् ! दृश्यमान सूर्य की उष्णता से संतप्त, तृषा से पीड़ित और दावानल की ज्वाला से प्रज्वलित यह उदुम्बरयष्टिका कालमास में काल करके कहाँ जाएगी ? कहाँ उत्पन्न होगी ? गौतम ! इसी जम्बूद्वीप के भारतवर्ष में पाटलिपुत्र नामक नगर में पाटली वृक्ष के रूप में पुनः उत्पन्न होगी । वह वहाँ अर्चित, वन्दित यावत् पूजनीय होगी । भगवन् ! वह यहाँ से काल करके कहाँ जाएगी ? कहाँ उत्पन्न होगी ? गौतम ! पूर्ववत् जानना ।

उस काल, उस समय अम्बड परिव्राजक के सात सौ शिष्य ग्रीष्म ऋतु के समय में विहार कर रहे थे, इत्यादि समस्त वर्णन औपपातिक सूत्रानुसार, यावत्-वे आराधक हुए ।

सूत्र - ६२७

भगवन् ! बहुत-से लोग परस्पर एक दूसरे से इस प्रकार कहते हैं यावत् प्ररूपणा करते हैं कि अम्बड परिव्राजक काम्पिल्यपुर नगर में सौ घरों में भोजन करता है तथा रहता है, (इत्यादि प्रश्न) । हाँ, गौतम ! यह सत्य है; इत्यादि औपपातिकसूत्रमें कथित अम्बड-सम्बन्धी वक्तव्यता, यावत्-महर्द्धिक दृढप्रतिज्ञ होकर सर्व दुःख अन्त करेगा

सूत्र - ६२८

भगवन् ! किसी को बाधा-पीड़ा नहीं पहुँचाने वाले अव्याबाध देव हैं ? हाँ, गौतम ! हैं । भगवन् ! अव्या-बाध देव, अव्याबाध देव किस कारण से कहे जाते हैं ? गौतम ! प्रत्येक अव्याबाध देव, प्रत्येक पुरुष की, प्रत्येक आँख की पलक पर दिव्य देवर्द्धि, दिव्य देवद्युति, दिव्य देवानुभाव और बत्तीस प्रकार की दिव्य नाट्यविधि दिखलाने में समर्थ हैं ऐसा करके वह देव उस पुरुष को किंचित् मात्र भी आबाधा या व्याबाधा नहीं पहुँचाता और न उसके अवयव का छेदन करता है । इतनी सूक्ष्मतासे वह देव नाट्यविधि दिखला सकता है । इस कारण, हे गौतम! वे अव्याबाध देव कहलाते हैं

सूत्र - ६२९

भगवन् ! क्या देवेन्द्र देवराज शक्र, अपने हाथ में ग्रहण की हुई तलवार से, किसी पुरुष का मस्तक काट कर कमण्डलू में डालने में समर्थ हैं ? हाँ, गौतम ! हैं । भगवन् ! वह किस प्रकार डालता है ? गौतम ! शक्रेन्द्र उस पुरुष के मस्तक को छिन्न-भिन्न करके डालता है । या भिन्न-भिन्न करके डालता है । अथवा वह कूट-कूट कर डालता है। या चूर्ण कर करके डालता है । तत्पश्चात् शीघ्र ही मस्तक के उन खण्डित अवयवों को एकत्रित करता है और पुनः मस्तक बना देता है । इस प्रक्रिया में उक्त पुरुष के मस्तक का छेदन करते हुए भी वह (शक्रेन्द्र) उस पुरुष को थोड़ी या अधिक पीड़ा नहीं पहुँचाता । इस प्रकार सूक्ष्मतापूर्वक मस्तक काट कर वह उसे कमण्डलु में डालता है ।

सूत्र - ६३०

भगवन् ! क्या जृम्भक देव होते हैं ? हाँ, गौतम ! होते हैं । भगवन् ! वे जृम्भक देव किस कारण कहलाते हैं? गौतम ! जृम्भक देव, सदा प्रमोदी, अतीव क्रीड़ाशील, कन्दर्प में रत और मोहन शील होते हैं । जो व्यक्ति उन देवों को क्रुद्ध हुए देखता है, वह महान् अपयश प्राप्त करता है और जो उन देवों को तुष्ट हुए देखता है, वह महान् यश को प्राप्त करता है । इस कारण, हे गौतम ! वे जृम्भक देव कहलाते हैं ।

भगवन् ! जृम्भक देव कितने प्रकार के हैं ? गौतम ! दस प्रकार के । अन्न-जृम्भक, पान-जृम्भक, वस्त्र-जृम्भक, लयन-जृम्भक, पुष्प-जृम्भक, फल-जृम्भक, पुष्प-फल-जृम्भक, विद्या-जृम्भक और अव्यक्त-जृम्भक । भगवन् ! जृम्भक देव कहाँ निवास करते हैं ? गौतम ! सभी दीर्घ वैताढ्य पर्वतों में, चित्र-विचित्र यमक पर्वतों में तथा कांचन पर्वतों में निवास करते हैं । भगवन् ! जृम्भक देवों की स्थिति कितने काल की है ? गौतम ! एक पल्योपम की । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१४ – उद्देशक-९

सूत्र - ६३१

भगवन् ! अपनी कर्मलेश्या को नहीं जानने-देखने वाला भावितात्मा अनगार, क्या सरूपी (सशरीर) और कर्मलेश्या-सहित जीव को जानता-देखता है ? हाँ, गौतम ! भावितात्मा अनगार, जो अपनी कर्मलेश्या को नहीं जानता-देखता, वह सशरीर एवं कर्मलेश्या वाले जीव को जानता-देखता है । भगवन् ! क्या सरूपी, सकर्मलेश्य पुद्गलस्कन्ध अवभासित यावत् प्रभासित होते हैं ? हाँ, गौतम ! होते हैं । भगवन् ! वे सरूपी कर्मलेश्य पुद्गल कौन से हैं, जो अवभासित यावत् प्रभासित होते हैं ? गौतम चन्द्र और सूर्य देवों के विमानों से बाहर नीकली हुई लेश्याएं प्रकाशीत यावत् प्रभासित होती हैं, जिनसे सरूपी सकर्म लेश्य पुद्गल यावत् प्रभासित होते हैं ।

सूत्र - ६३२

भगवन् ! नैरयिकों के आत्त (सुखकारक) पुद्गल होते हैं अथवा अनात्त (दुःखकारक) पुद्गल होते हैं ? गौतम! उसके आत्त पुद्गल नहीं होते, अनात्त पुद्गल होते हैं । भगवन् ! असुरकुमारों के आत्त पुद्गल होते हैं, अथवा अनात्त ? गौतम ! उसके आत्त पुद्गल होते हैं, अनात्त पुद्गल नहीं होते । इसी प्रकार स्तनितकुमारों तक कहना । भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीवों के आत्त पुद्गल होते हैं अथवा अनात्त ? गौतम ! उसके आत्त पुद्गल भी होते हैं और अनात्त पुद्गल भी होते हैं । इसी प्रकार मनुष्यों तक कहना । वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिकों के विषय में असुरकुमारों के समान कहना ।

भगवन् ! नैरयिकों के पुद्गल इष्ट होते हैं या अनिष्ट होते हैं ? गौतम ! उनके पुद्गल इष्ट नहीं होते, अनिष्ट पुद्गल होते हैं । जिस प्रकार आत्त पुद्गलों के विषय में कहा है, उसी प्रकार इष्ट, कान्त, प्रिय तथा मनोज्ञ पुद्गलों के विषय में कहना चाहिए ।

सूत्र - ६३३

भगवन् ! महर्द्धिक यावत् महासुखी देव क्या हजार रूपों की विकुर्वणा करके, हजार भाषाएं बोलने में समर्थ है ? हाँ, (गौतम !) वह समर्थ है । भगवन् ! वह एक भाषा है या हजार भाषाएं हैं ? गौतम ! वह एक भाषा है, हजार भाषाएं नहीं ।

सूत्र - ६३४

उस काल, उस समय में भगवान गौतम स्वामी ने तत्काल उदित हुए जासुमन नामक वृक्ष के फूलों के समान लाल बालसूर्य को देखा । सूर्य को देखकर गौतमस्वामी को श्रद्धा उत्पन्न हुई, यावत् उन्हें कौतूहल उत्पन्न हुआ, फलतः जहाँ श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे, वहाँ उनके निकट आए और यावत् उन्हें वन्दन-नमस्कार किया और पूछा–भगवन्! सूर्य क्या है ? तथा सूर्य का अर्थ क्या है ? गौतम ! सूर्य शुभ पदार्थ है तथा सूर्य का अर्थ भी शुभ है । भगवन् ! 'सूर्य' क्या है और 'सूर्य की प्रभा' क्या है ? गौतम ! पूर्ववत् । इसी प्रकार छाया के और लेश्या के विषय में जानना ।

सूत्र - ६३५

भगवन् ! जो ये श्रमण निर्ग्रन्थ आर्यत्वयुक्त होकर विचरण करते हैं, वे किसकी तेजोलेश्या का अतिक्रमण करते हैं ? गौतम ! एक मास के दीक्षापर्याय वाला श्रमण-निर्ग्रन्थ वाणव्यन्तर देवों की तेजोलेश्या का अतिक्रमण करता है; दो मास के दीक्षापर्याय वाला श्रमण-निर्ग्रन्थ असुरेन्द्र के सिवाय (समस्त) भवनवासी देवों की तेजोलेश्या का अतिक्रमण करता है । इसी प्रकार तीन मास की पर्याय वाला, (असुरेन्द्र-सहित) असुरकुमार देवों की तेजोलेश्या का अतिक्रमण करता है । चार मास की पर्याय वाला ग्रहगण-नक्षत्र-तारारूप ज्योतिष्क देवों की, पाँच मास की पर्याय वाला ज्योतिष्केन्द्र-ज्योतिष्कराज चन्द्र और सूर्य की, छह मास की पर्याय वाला सौधर्म और ईशान-कल्पवासी देवों की, सात मास की पर्याय वाला सनत्कुमार और माहेन्द्र देवों की, आठ मास की पर्याय वाला ब्रह्मलोक और लान्तक देवों की, नौ मास की पर्याय वाला महाशुक्र और सहस्रार देवों की, दस मास की पर्याय वाला आनत, प्राणत, आरण और अच्युत देवों की, ग्यारह मास की पर्याय वाला ग्रैवेयक देवों की और बारह मास की पर्याय वाला अनुत्तरौपपातिक

देवों की तेजोलेश्या का अतिक्रमण कर जाता है । इसके बाद शुक्ल एवं परम शुक्ल होकर फिर वह सिद्ध होता है, यावत् समस्त दुःखों का अन्त करता है । भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१४ – उद्देशक-१०

सूत्र - ६३६

भगवन् ! क्या केवलज्ञानी छद्मस्थ को जानते-देखते हैं ? हाँ (गौतम !) जानते-देखते हैं । भगवन् ! केवल-ज्ञानी, छद्मस्थ के समान सिद्ध भगवन् भी छद्मस्थ को जानते-देखते हैं ? हाँ, (गौतम !) जानते-देखते हैं । भगवन् ! क्या केवलज्ञानी, आधोवधिक को जानते-देखते हैं ? हाँ, गौतम ! जानते-देखते हैं । इसी प्रकार परमावधिज्ञानी को भी (केवली एवं सिद्ध जानते-देखते हैं) । इसी प्रकार केवलज्ञानी एवं सिद्ध यावत् केवलज्ञानी को जानते-देखते हैं । इसी प्रकार केवलज्ञानी भी सिद्ध को जानते-देखते हैं । किन्तु प्रश्न यह है कि जिस प्रकार केवलज्ञानी सिद्ध को जानते-देखते हैं, क्या उसी प्रकार सिद्ध भी (दूसरे) सिद्ध को जानते-देखते हैं ? हाँ, (गौतम !) वे जानते-देखते हैं ।

भगवन् ! क्या केवलज्ञानी बोलते हैं, अथवा प्रश्न का उत्तर देते हैं ? हाँ, गौतम ! वे बोलते भी हैं और प्रश्न का उत्तर भी देते हैं । भगवन् ! केवली की तरह क्या सिद्ध भी बोलते हैं और प्रश्न का उत्तर देते हैं ? यह अर्थ समर्थ नहीं है भगवन् ! ऐसा क्यों कहते हैं ? गौतम ! केवलज्ञानी उत्थान, कर्म, बल, वीर्य एवं पुरुषकार-पराक्रम से सहित हैं, जबकि सिद्ध भगवान उत्थानादि यावत् पुरुषकार-पराक्रम से रहित हैं । इस कारण से, हे गौतम ! सिद्ध भगवान केवलज्ञानी के समान नहीं बोलते और न प्रश्न का उत्तर देते हैं ।

भगवन् ! केवलज्ञानी अपनी आँखें खोलते हैं, अथवा मूँदते हैं ? हाँ, गौतम ! वे आँखें खोलते और बंद करते हैं इसी प्रकार सिद्ध के विषय में पूर्ववत् इन दोनों बातों का निषेध समझना चाहिए । इसी प्रकार (केवल-ज्ञानी शरीर को) संकुचित करते हैं और पसारते भी हैं । इसी प्रकार वे खड़े रहते हैं; वसति में रहते हैं एवं निषीधिका करते हैं ।

भगवन् ! क्या केवलज्ञानी रत्नप्रभापृथ्वी को 'यह रत्नप्रभापृथ्वी है' इस प्रकार जानते-देखते हैं ? हाँ (गौतम !) वे जानते-देखते हैं । भगवन् ! केवली की तरह क्या सिद्ध भी, यह रत्नप्रभापृथ्वी है, इस प्रकार जानते-देखते हैं ? हाँ, (गौतम !) वे जानते-देखते हैं । इसी प्रकार अधःसप्तम पृथ्वी तक समझना । भगवन् ! क्या केवल-ज्ञानी सौधर्मकल्प को 'यह सौधर्मकल्प है'– इस प्रकार जानते-देखते हैं ? हाँ, गौतम ! हैं । इसी प्रकार यावत् अच्युतकल्प के विषय में कहना । भगवन् ! क्या केवली भगवान ग्रैवेयकविमान को 'ग्रैवेयकविमान है'–इस प्रकार जानते-देखते हैं ? हाँ, गौतम! हैं । इसी प्रकार (पाँच) अनुत्तर विमानों के विषय में (कहना) । भगवन् ! क्या केवलज्ञानी ईषत्प्राग्भारा पृथ्वी को 'ईषत्प्राग्भारा पृथ्वी है'–इस प्रकार जानते-देखते हैं ? (हाँ, गौतम !) हैं ।

भगवन् ! क्या केवलज्ञानी परमाणुपुद्गल को 'यह परमाणुपुद्गल है'–इस प्रकार जानते-देखते हैं ? हाँ, गौतम ! हैं । इसी प्रकार द्विप्रदेशी स्कन्ध के विषय में समझना चाहिए । इसी प्रकार यावत्–'यह अनन्तप्रदेशिक स्कन्ध है'–इसी प्रकार जानते-देखते हैं, क्या वैसे ही सिद्ध भी अनन्तप्रदेशिक स्कन्ध को–'अनन्तप्रदेशिक स्कन्ध है', इस प्रकार जानते-देखते हैं ? हाँ, (गौतम !) वे जानते-देखते हैं । भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१४ का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

शतक–१५

सूत्र - ६३७

भगवती श्रुतदेवता को नमस्कार हो ।

उस काल उस समय में श्रावस्ती नाम की नगरी थी । उस श्रावस्ती नगरी के बाहर उत्तरपूर्व-दिशाभाग में कोष्ठक नामक चैत्य था । उस श्रावस्ती नगरी में आजीविक (गोशालक) मत की उपासिका हालाहला नामकी कुम्भारिन रहती थी । वह आढ्य यावत् अपरिभूत थी । उसने आजीविकसिद्धान्त का अर्थ प्राप्त कर लिया था, सिद्धान्त के अर्थ को ग्रहण कर लिया था, उसका अर्थ पूछ लिया था, अर्थ का निश्चय कर लिया था । उसकी अस्थि और मज्जा प्रेमानुराग से रंग गई थी । 'हे आयुष्मन् ! यह आजीविकसिद्धान्त ही सच्चा अर्थ है, यही परमार्थ है, शेष सब अनर्थ हैं,' इस प्रकार वह आजीविकसिद्धान्त से अपनी आत्मा को भावित करती हुई रहती थी । उस काल उस समय में चौबीस वर्ष की दीक्षापर्याय वाला मंखलिपुत्र गोशालक, हालाहला कुम्भारिन की कुम्भकारापण में आजीवकसंघ से परिवृत्त होकर आजीविकसिद्धान्त से अपनी आत्मा को भावित करता हुआ विचरण करता था।

तदनन्तर किसी दिन उस मंखलिपुत्र गोशालक के पास ये छह दिशाचर आए यथा–शोण, कनन्द, कर्णिकार, अच्छिद्र, अग्निवैश्यायन और गौतम पुत्र अर्जुन । तत्पश्चात् उन छह दिशाचरों ने पूर्वश्रुत में कथित अष्टांग निमित्त, (नौवें गीत–) मार्ग तथा दसवें (नृत्य–) मार्ग को अपने अपने मति-दर्शनों से पूर्वश्रुत में से उद्धृत किया, फिर मंखलिपुत्र गोशालक के पास उपस्थित हुए । तदनन्तर वह मंखलिपुत्र गोशालक, उस अष्टांग महा-निमित्त के किसी उपदेश द्वारा सर्व प्राणों, सभी भूतों, समस्त जीवों और सभी सत्त्वों के लिए इन छह अतिनिक्र-मणीय बातों के विषय में उत्तर देने लगा । वे छह बातें यह हैं–लाभ, अलाभ, सुख, दुःख, जीवन और मरण । और तब मंखलिपुत्र गोशालक, अष्टांग महा-निमित्त के स्वल्पदेशमात्र से श्रावस्ती नगरी में जिन नहीं होते हुए भी, 'मैं जिन हूँ' इस प्रकार प्रलाप करता हुआ, अर्हन्त न होते हुए भी, 'मैं अर्हन्त हूँ', इस प्रकार का बकवास करता हुआ, केवली न होते हुए भी, 'मैं केवली हूँ,' इस प्रकार का मिथ्याभाषण करता हुआ, सर्वज्ञ न होते हुए भी 'मैं सर्वज्ञ हूँ,' इस प्रकार मृषाकथन करता हुआ और जिन न होते हुए भी अपने लिए 'जिनशब्द' का प्रयोग करता था ।

सूत्र - ६३८

इसके बाद श्रावस्ती नगरी में शृंगाटक पर, यावत् राजमार्गों पर बहुत-से लोग एक दूसरे से इस प्रकार कहने लगे, यावत् इस प्रकार प्ररूपणा करने लगे–हे देवानुप्रियो ! निश्चित है कि गोशालक मंखलिपुत्र 'जिन' होकर अपने आप को 'जिन' कहता हुआ, यावत् 'जिन' शब्द में अपने आपको प्रकट करता हुआ विचरता है, तो इसे ऐसा कैसे माना जाए ? उस काल, उस समय में श्रमण भगवान महावीर वहाँ पधारे, यावत् परीषद् धर्मोपदेश सूनकर वापिस चली गई । श्रमण भगवान महावीर के ज्येष्ठ अन्तेवासी गौतमगोत्रीय इन्द्रभूति नामक अनगार यावत् छठ-छठ पारणा करते थे; इत्यादि वर्णन दूसरे शतक के पाँचवे निर्ग्रन्थ-उद्देशक के अनुसार समझना । यावत् गोचरी के लिए भ्रमण करते हुए गौतमस्वामी ने बहुत-से लोगों के शब्द सूने, बहुत-से लोक परस्पर इस प्रकार कह रहे थे, यावत् प्ररूपणा कर रहे थे कि देवानुप्रियो ! मंखलिपुत्र गोशालक जिन होकर अपने आपको जिन कहता हुआ, यावत् जिन शब्द से स्वयं को प्रकट करता हुआ विचरता है । उसकी यह बात कैसे मानी जाए ? भगवान गौतम को बहुत-से लोगों से यह बात सूनकर एवं मनमें अवधारण कर यावत् प्रश्न पूछने की श्रद्धा उत्पन्न हुई, यावत् भगवान को आहार-पानी दिखाया फिर यावत् पर्युपासना करते हुए बोले–यावत् गोशालक 'जिन' शब्द से स्वयं को प्रकट करता हुआ विचरता है, तो हे भगवन् ! उसका यह कथन कैसा है? मैं मंखलिपुत्र गोशालक का जन्मसे लेकर अन्त तक का वृत्तान्त सूनना चाहता हूँ

श्रमण भगवान महावीर ने भगवान गौतम से कहा–गौतम ! बहुत-से लोग, जो परस्पर एक दूसरे से इस प्रकार कहते हैं यावत् प्ररूपित करते हैं कि मंखलिपुत्र गोशालक 'जिन' होकर तथा अपने आपको 'जिन' कहता हुआ यावत् 'जिन' शब्द से स्वयं को प्रकट करता हुआ विचरता है, यह बात मिथ्या है । हे गौतम ! मैं कहता हूँ यावत् प्ररूपणा करता हूँ कि मंखलिपुत्र गोशालक का, मंखजाति का मंखली नामक पिता था । उस मंखजातीय मंखली की भद्रा नाम

की भार्या थी । वह सुकुमाल हाथ-पैर वाली यावत् प्रतिरूप थी । किसी समय वह भद्रा नामक भार्या गर्भवती हुई 'शरवण' सन्निवेश था । वह ऋद्धि-सम्पन्न, उपद्रव-रहित यावत् देवलोक के समान प्रकाशवाला और मन को प्रसन्न करनेवाला था, यावत् प्रतिरूप था । उन सन्निवेशमें 'गोबहुल' नामक ब्राह्मण रहता था । वह आढ्य यावत् अपराभूत था । वह ऋग्वेद आदि वैदिकशास्त्रों के विषय में भलीभाँति निपुण था । उस गोबहुल ब्राह्मण की एक गोशाला थी ।

एक दिन वह मंखली नामक भिक्षाचर (मंख) अपनी गर्भवती भार्या भद्रा को साथ लेकर नीकला । वह चित्रफलक हाथ में लिए हुए चित्र बताकर आजीविका करने वाले भिक्षुकों की वृत्ति से (मंखत्व से) अपना जीवन यापन करता हुआ, क्रमशः ग्रामानुग्राम विचरण करता हुआ जहाँ शरवण नामक सन्निवेश था और जहाँ गोबहुल ब्राह्मण की गोशाला थी, वहाँ आया । फिर उसने गोबहुल ब्राह्मण की गोशाला के एक भाग में अपना भाण्डोपकरण रखा । वह शरवण सन्निवेश में उच्च-नीच-मध्यम कुलों के गृहसमूह में भिक्षाचर्या के लिए घूमता हुआ वसति में चारों ओर सर्वत्र अपने निवास के लिए स्थान की खोज करने लगा । सर्वत्र पूछताछ और गवेषणा करने पर भी जब कोई निवासयोग्य स्थान नहीं मिला तो उसने उसी गोबहुल ब्राह्मण की गोशाला के एक भाग में वर्षावास बिताने के लिए निवास किया । उस भद्रा भार्या ने पूरे नौ मास और साढ़े सात रात्रिदिन व्यतीत होने पर एक सुकुमाल हाथ-पैर वाले यावत् सुरूप पुत्र को जन्म दिया । ग्यारहवाँ दिन बीत जाने पर यावत् बारहवें दिन उस बालक के माता-पिता ने इस प्रकार का गौण, गुणनिष्पन्न नामकरण किया कि–हमारा यह बालक गोबहुल ब्राह्मण की गोशाला में जन्मा है, इसलिए हमारे इस बालक का नाम गोशालक हो । तदनन्तर वह बालक गोशालक बाल्यावस्था को पार करके एवं विज्ञान से परिपक्व बुद्धि वाला होकर यौवन अवस्था को प्राप्त हुआ । तब उसने स्वयं व्यक्तिगत रूप से चित्र-फलक तैयार किया । उस चित्रफलक को स्वयं हाथ में लेकर मंखवृत्ति से आत्मा को भावित करता हुआ विचरण करने लगा ।

सूत्र - ६३९

उस काल उस समय में, हे गौतम ! मैं तीस वर्ष तक गृहवास में रहकर, माता-पिता के दिवंगत हो जाने पर भावना नामक अध्ययन के अनुसार यावत् एक देवदूष्य वस्त्र ग्रहण करके मुण्डित हुआ और गृहस्थावास को त्याग कर अनगार धर्म में प्रव्रजित हुआ । हे गौतम ! मैं प्रथम वर्ष में अर्द्धमास-अर्द्धमास क्षमण करते हुए अस्थिक ग्राम की निश्रा में, प्रथम वर्षाऋतु अवसर पर वर्षावास के लिए आया । दूसरे वर्ष में मैं मास-मास-क्षमण करता हुआ, क्रमशः विचरण करता और ग्रामानुग्राम विहार करता हुआ राजगृह नगर में नालन्दा पाड़ा के बाहर, जहाँ तन्तुवाय शाला थी, वहाँ आया । उस के एक भाग में यथायोग्य अवग्रह करके मैं वर्षावास के लिए रहा । हे गौतम ! मैं प्रथम मासक्षमण (तप) स्वीकार करके कालयापन करने लगा । उस समय वह मंखलिपुत्र गोशालक चित्रफलक हाथ में लिए हुए मंखपन से आजीविका करता हुआ क्रमशः विचरण करते हुए एक ग्राम से दूसरे ग्राम जाता हुआ, राजगृह नगर में नालंदा पाड़ा के बाहरी भाग में, जहाँ तन्तुवायशाला थी, वहाँ आया । तन्तुवायशाला के एक भाग में उसने अपना भाण्डोपकरण रखा । राजगृह नगर में उच्च, नीच और मध्यम कुल में भिक्षाटन करते हुए उसने वर्षावास के लिए दूसरा स्थान ढूँढ़ने का बहुत प्रयत्न किया, किन्तु उसे अन्यत्र कहीं भी निवासस्थान नहीं मिला, तब उसी तन्तु-वायशाला के एक भाग में, हे गौतम ! जहाँ मैं रहा हुआ था, वहीं, वह भी वर्षावास के लिए रहने लगा ।

तदनन्तर, हे गौतम ! मैं प्रथम मासक्षमण के पारणे के दिन तन्तुवायशाला से नीकला और फिर नालन्दा के बाहरी भाग के मध्य में होता हुआ राजगृह नगर में आया । वहाँ ऊंच, नीच और मध्यम कुलों में यावत् भिक्षाटन करते हुए मैंने विजय नामक गाथापति के घर में प्रवेश किया । उस समय विजय गाथापति मुझे आते हुए देख अत्यन्त हर्षित एवं सन्तुष्ट हुआ । वह शीघ्र ही अपने सिंहासन से उठा और पादपीठ से नीचे ऊतरा । फिर उसने पैर से खड़ाऊं नीकाली । एक पट वाले वस्त्र का उत्तरासंग किया । दोनों हाथ जोड़कर सात-आठ कदम मेरे सम्मुख आया और मुझे तीन बार प्रदक्षिणा करके वन्दन-नमस्कार किया । फिर वह ऐसा विचार करके अत्यन्त संतुष्ट हुआ कि मैं आज भगवान को विपुल अशन, पान, खादिम और स्वादिम रूप आहार से प्रतिलाभूंगा । वह प्रतिलाभ लेता हुआ भी संतुष्ट हो रहा था और प्रतिलाभित होने के बाद भी सन्तुष्ट रहा । उस विजय गाथापति ने उस दान में द्रव्य शुद्धि से, दायक

शुद्धि से और पात्रशुद्धि के कारण तथा तीन करण और कृत, कारित और अनुमोदित की शुद्धि-पूर्वक मुझे प्रतिलाभित करने से उसने देव का आयुष्य-बन्ध किया, संसार परिमित किया । उसके घर में ये पाँच दिव्य प्रादुर्भूत हुए, यथा-वसुधारा की वृष्टि, पाँच वर्णों के फूलों की वृष्टि, ध्वजारूप वस्त्र की वृष्टि, देवदुन्दुभि का वादन और आकाश में 'अहो दानम्, अहो दानम्' की घोषणा ।

उस समय राजगृह नगर में शृंगाटक, त्रिक, चतुष्क मार्गों यावत् राजमार्गों में बहुत-से मनुष्य परस्पर इस प्रकार कहने लगे, यावत् प्ररूपणा करने लगे कि-हे देवानुप्रियो ! विजय गाथापति धन्य है, देवानुप्रियो ! विजय गाथापति कृतार्थ है, कृतपुण्य है, कृतलक्षण है, उभयलोक सार्थक है और विजय गाथापति का मनुष्य जन्म और जीवन रूप फल सुलब्ध है कि जिसके घर में तथारूप सौम्यरूप साधु को प्रतिलाभित करने से ये पाँच दिव्य प्रकट हुए हैं । अतः विजय गाथापति धन्य है, कृतार्थ है, कृतपुण्य है, कृतलक्षण है । उसके दोनों लोक सार्थक हैं । विजय गाथापति का मानव जन्म एवं जीवन सफल है-प्रशसनीय है । उस अवसर पर मंखलिपुत्र गोशालक ने भी बहुत-से लोगों से यह बात सूनी और समझी । इससे उसके मन में पहले संशय और फिर कुतूहल उत्पन्न हुआ । वह विजय गाथापति के घर आया । बरसी हुई वसुंधरा तथा पाँच वर्ण के निष्पन्न कुसुम भी देखे । उसने मुझे भी विजय गाथापति के घर से बाहर नीकलते हुए देखा । वह हर्षित और सन्तुष्ट हुआ । फिर मेरे पास आकर उसने तीन बार दाहिनी ओर से प्रदक्षिणा करके वन्दन-नमस्कार किया । मुझसे बोला-'भगवन् ! आप मेरे धर्माचार्य हैं और मैं आपका धर्मशिष्य हूँ' हे गौतम! इस प्रकार मैंने मंखलिपुत्र गोशालक की इस बात का आदर नहीं किया । स्वीकार नहीं किया । मैं मौन रहा ।

हे गौतम ! मैं राजगृह नगर से नीकला और नालन्दा पाड़ा से बाहर मध्य में होता हुआ उस तन्तुवायशाला में आया । वहाँ में द्वीतिय मासक्षमण स्वीकार करके रहने लगा । फिर, हे गौतम ! मैं दूसरे मासक्षमण के पारणे नालन्दा के बाहरी भाग के मध्य में से होता हुआ राजगृह नगर में यावत् भिक्षाटन करता हुआ आनन्द गाथापति के घर में प्रविष्ट हुआ । आनन्द गाथापति ने मुझे आते हुए देखा, इत्यादि सारा वृत्तान्त विजय गाथापति के समान । विशेषता यह है कि-'मैं विपुल खण्ड-खाद्यादि भोजन-सामग्री से प्रतिलाभूंगा'; यों विचार कर सन्तुष्ट हुआ । यावत्-'मैं तृतीय मासक्षमण स्वीकार करके रहा ।'

हे गौतम ! तीसरे मासक्षमण के पारणे के लिए मैंने यावत् सुनन्द गाथापति के घर में प्रवेश किया । तब सुनन्द गाथापति ने ज्यों ही मुझे आते हुए देखा, इत्यादि सारा वर्णन विजय गाथापति के समान । विशेषता यह है कि उसने मुझे सर्वकामगुणित भोजन से प्रतिलाभित किया । यावत् मैं चतुर्थ मासक्षमण स्वीकार करके विचरण करने लगा । उस नालन्दा के बाहरी भाग से कुछ दूर 'कोल्लाक' नाम सन्निवेश था । उस में बहुल नामक ब्राह्मण रहता था । यह आढ्य यावत् अपरिभूत था और ऋग्वेद में यावत् निपुण था । उस बहुल ब्राह्मण ने कार्तिकी चौमासी की प्रतिपदा के दिन प्रचुर मधु और घृत से संयुक्त परमान्न का भोजन ब्राह्मणों को कराया एवं आचामित कराया । तभी मैं चतुर्थ मासक्षमण के पारणे के लिए नालन्दा के बाहरी भाग के मध्य में होकर कोल्लाक सन्निवेश आया । वहाँ उच्च, नीच, मध्यम कुलों में भिक्षार्थ पर्यटन करता हुआ में बहुल ब्राह्मण के घर में प्रविष्ट हुआ ।

उस समय बहुल ब्राह्मण ने मुझे आते देखा; यावत्-'मैं मधु और घी से संयुक्त परमान्न से प्रतिलाभित करूँगा;' ऐसा विचार कर वह सन्तुष्ट हुआ । यावत्-'बहुल ब्राह्मण का मनुष्यजन्म और जीवनफल प्रशंसनीय है ।' उस समय मंखलिपुत्र गोशालक ने मुझे तन्तुवायशाला में नहीं देखा तो, राजगृह नगर के बाहर और भीतर सब ओर मेरी खोज की; परन्तु कहीं भी मेरी श्रुति, क्षुति और प्रवृत्ति न पाकर पुनः तन्तुवायशाला में लौट गया । वहाँ उसने शाटिकाएं, पाटिकाएं, कुण्डिकाएं, उपानत् एवं चित्रपट आदि ब्राह्मणों को दे दिए । फिर दाढ़ी-मूँछ सहित मुण्डन करवाया । इसके पश्चात् वह तन्तुवायशाला से बाहर नीकला और नालन्दा से बाहरी भाग के मध्य में से चलता हुआ कोल्लाक सन्निवेश में आया । उस समय उस कोल्लाक सन्निवेश के बाहर बहुत-से लोग परस्पर एक दूसरे से इस प्रकार कह रहे थे, यावत् प्ररूपणा कर रहे थे-'देवानुप्रियो ! धन्य है बहुल ब्राह्मण !' यावत्-बहुल ब्राह्मण का मानवजन्म और जीवनरूप फल प्रशंसनीय है ।

उस समय बहुत-से लोगों से इस बात को सूनकर एवं अवधारण करके उस मंखलिपुत्र गोशालक के हृदय में इस प्रकार का अध्यवसाय यावत् संकल्प समुत्पन्न हुआ–मेरे धर्माचार्य एवं धर्मोपदेशक श्रमण भगवान महावीर को जैसी ऋद्धि, द्युति, यश, बल, वीर्य तथा पुरुषकार-पराक्रम आदि उपलब्ध, प्राप्त और अभिसमन्वागत हुए हैं, वैसी ऋद्धि, द्युति, यश, बल, वीर्य और पुरुषकार-पराक्रम आदि अन्य किसी भी तथारूप श्रमण या माहन को उपलब्ध, प्राप्त और अभिसमन्वागत नहीं है । इसलिए निःसन्देह मेरे धर्माचार्य, धर्मोपदेशक श्रमण भगवान महावीर स्वामी अवश्य यहीं होंगे, ऐसा विचार करके वह कोल्लाक-सन्निवेश के बाहर और भीतर सब ओर मेरी शोध-खोज करने लगा सर्वत्र मेरी खोज करते हुए कोल्लाक-सन्निवेश के बाहर के भाग की मनोज्ञ भूमि में मेरे साथ उसकी भेंट हुई । उस समय मंखलिपुत्र गोशालक ने प्रसन्न और सन्तुष्ट होकर तीन बार दाहिनी ओर से मेरी प्रदक्षिणा की, यावत् वन्दन-नमस्कार करके इस प्रकार कहा–भगवन् ! आप मेरे धर्माचार्य हैं और मैं आपका अन्तेवासी हूँ । तब हे गौतम ! मैंने मंखलिपुत्र गोशालक की इस बात को स्वीकार किया । तत्पश्चात् हे गौतम ! मैं मंखलिपुत्र गोशालक के साथ उस प्रणीत भूमि में छह वर्ष तक लाभ-अलाभ, सुख-दुःख, सत्कार-असत्कार का अनुभव करता हुआ अनित्यता-जागरिका करता हुआ विहार करता रहा ।

सूत्र - ६४०

तदनन्तर, हे गौतम ! किसी दिन प्रथम शरत्-काल के समय, जब वृष्टि का अभाव था; मंखलिपुत्र गोशालक के साथ सिद्धार्थग्राम नामक नगर से कूर्मग्राम नामक नगर की ओर विहार के लिए प्रस्थान कर चूका था। उस समय सिद्धार्थग्राम और कूर्मग्राम के बीच में तिल का एक बड़ा पौधा था । जो पत्र-पुष्प युक्त था, हराभरा होने की श्री से अतीव शोभायमान हो रहा था । गोशालक ने उस तिल के पौधे को देखा । फिर मेरे पास आकर वन्दन-नमस्कार करके पूछा–भगवन् ! यह तिल का पौधा निष्पन्न होगा या नहीं ? इन सात तिलपुष्पों के जीव मरकर कहाँ जाएंगे, कहाँ उत्पन्न होंगे ? इस पर हे गौतम ! मैंने मंखलिपुत्र गोशालक से इस प्रकार कहा–गोशालक ! यह तिल का पौधा निष्पन्न होगा । नहीं निष्पन्न होगा, ऐसी बात नहीं है और ये सात तिल के फूल मरकर इसी तिल के पौधे की एक तिलफली में सात तिलों के रूप में उत्पन्न होंगे ।

इस पर मेरे द्वारा कही गई इस बात पर मंखलिपुत्र गोशालक ने न श्रद्धा की, न प्रतीति की और न ही रुचि की इस बात पर श्रद्धा, प्रतीति और रुचि नहीं करता हुआ, मेरे निमित्त से यह मिथ्यावादी हो जाएं, ऐसा सोचकर गोशालक मेरे पास से धीरे धीरे पीछे खिसका और उस तिल के पौधे के पास जाकर उस तिल के पौधे को मिट्टी सहित समूल उखाड़ कर एक ओर फैंक दिया । पौधा उखाड़ने के बाद तत्काल आकाश में दिव्य बादल प्रकट हुए। वे बादल शीघ्र ही जोर-जोर से गरजने लगे । तत्काल बीजली चमकने लगी और अधिक पानी और अधिक मिट्टी का कीचड़ न हो, इस प्रकार से कहीं-कहीं पानी की बूंदाबांदी होकर रज और धूल को शान्त करने वाली दिव्य जलवृष्टि हुई; जिससे तिल का पौधा वहीं जम गया । वह पुनः उगा और बद्धमूल होकर वहीं प्रतिष्ठित हो गया और वे सात तिल के फूलों के जीव मरकर पुनः उसी तिल के पौधे की एक फली में सात तिल के रूप में उत्पन्न हो गए ।

सूत्र - ६४१

तदनन्तर, हे गौतम ! मैं गोशालक के साथ कूर्मग्राम नगर में आया । उस समय कूर्मग्राम नगर के बाहर वैश्यायन नामक बालतपस्वी निरन्तर छठ-छठ तपःकर्म करने के साथ-साथ दोनों भुजाएं ऊंची रखकर सूर्य के सम्मुख खड़ा होकर आतापनभूमि में आतापना ले रहा था । सूर्य की गरमी से तपी हुई जूएं चारों ओर उसके सिर से नीचे गिरती थीं और वह तपस्वी प्राण, भूत, जीव और सत्त्वों की दया के लिए बार-बार पड़ती हुई उन जूओं को उठा कर बार-बार वहीं की वहीं रखता जाता था ।

तभी मंखलिपुत्र गोशालक ने वैश्यायन बालतपस्वी को देखा, मेरे पास से धीरे-धीरे खिसक कर वैश्यायन बालतपस्वी के निकट आया और उससे कहा–'क्या आप तत्त्वज्ञ या तपस्वी मुनि हैं या जूओं के शय्यातर हैं ?' वैश्यायन बालतपस्वी ने गोशालक के इस कथन को आदर नहीं दिया और न ही इसे स्वीकार किया, किन्तु वह मौन

रहा । इस पर मंखलिपुत्र गोशालक ने दूसरी और तीसरी बार वैश्यायन बालतपस्वी को फिर इसी प्रकार वही प्रश्न पूछा-तब वह शीघ्र कुपित हो उठा यावत् क्रोध से दाँत पीसता हुआ आतापनाभूमि से नीचे उतरा । फिर तैजस-समुद् घात करके वह सात-आठ कदम पीछे हटा । इस प्रकार मंखलिपुत्र गोशालक को भस्म करने के लिए उसने अपने शरीर से तेजोलेश्या बाहर नीकाली । तदनन्तर, हे गौतम ! मैंने मंखलिपुत्र गोशालक पर अनुकम्पा करने के लिए, वैश्यायन बालतपस्वी की तेजोलेश्या का प्रतिसंहरण करने के लिए शीतल तेजोलेश्या बाहर नीकाली । जिससे मेरी तेजोलेश्या से वैश्यायन बालतपस्वी की उष्ण तेजोलेश्या का प्रतिघात हो गया । मेरी शीतल तेजोलेश्या से अपनी उष्ण तेजोलेश्या का प्रतिघात हुआ तथा गोशालक के शरीर को थोड़ी या अधिक पीड़ा या अवयवक्षति नहीं हुई जानकर वैश्यायन बालतपस्वी ने अपनी उष्ण तेजोलेश्या वापस खींच ली और उष्ण तेजोलेश्या को समेट कर उसने मुझसे कहा-'भगवन् ! मैंने जान लिया, भगवन् ! मैं समझ गया ।'

मंखलिपुत्र गोशालक ने मुझसे यों पूछा-'भगवन् ! इस जूओं के शय्यातर ने आपको क्या कहा-'भगवन् ! मैंने जान लिया, भगवन् ! मैं समझ गया ?' इस पर हे गौतम ! मंखलिपुत्र गोशालक से मैंने यों कहा-'हे गोशालक! ज्यों ही तुमने वैश्यायन बालतपस्वी को देखा, त्यों ही तुम मेरे पास से शनैः शनैः खिसक गए और जहाँ वैश्यायन बालतपस्वी था, वहाँ पहुँच गए । यावत् तब वह एकदम कुपित हुआ, यावत् वह पीछे हटा और तुम्हारा वध करने के लिए उसने अपने शरीर से तेजोलेश्या नीकाली । हे गोशालक ! तब मैंने तुझ पर अनुकम्पा करने के लिए वैश्यायन बालतपस्वी की उष्ण तेजोलेश्या का प्रतिसंहरण करने के लिए अपने अन्तर से शीतल तेजोलेश्या नीकाली; यावत् उसने अपनी उष्ण तेजोलेश्या वापस खींच ली । फिर मुझे कहा-'भगवन् ! मैं जान गया, भगवन् ! मैंन भलीभाँति समझ लिया ।' मंखलिपुत्र गोशालक मेरे से यह बात सूनकर और अवधारण करके डरा; यावत् भयभीत होकर मुझे वन्दन-नमस्कार करके बोला-'भगवन् ! संक्षिप्त और विपुल तेजोलेश्या कैसे प्राप्त होती है ?' हे गौतम ! तब मैंने मंखलिपुत्र गोशालक से कहा-'गोशालक ! नखसहित बन्द की हुई मुट्ठी में जितने उड़द के बाकुले आवें तथा एक विकटाशय जल से निरन्तर छठ-छठ तपश्चरण के साथ दोनों भुजाएं ऊंची रख कर यावत् आतापना लेता रहता है, उस व्यक्ति को छह महीने के अन्त में संक्षिप्त और विपुल तेजोलेश्या प्राप्त होती है ।' यह सूनकर मंखलिपुत्र गोशालक ने मेरे इस कथन को विनयपूर्वक सम्यक् रूप से स्वीकार किया ।

सूत्र - ६४२

हे गौतम ! इसके पश्चात् किसी एक दिन मंखलिपुत्र गोशालक के साथ मैंने कूर्मग्रामनगर से सिद्धार्थग्राम-नगर की ओर विहार के लिए प्रस्थान किया । जब हम उस स्थान के निकट आए, जहाँ वह तिल का पौधा था, तब गोशालक मंखलिपुत्र ने मुझसे कहा-'भगवन् ! आपने मुझे उस समय कहा था, यावत् प्ररूपणा की थी की हे गोशालक ! यह तिल का पौधा निष्पन्न होगा, यावत् तिलपुष्प के सप्त जीव मरकर सात तिल के रूप में पुनः उत्पन्न होंगे, किन्तु आपकी वह बात मिथ्या हुई, क्योंकि यह प्रत्यक्ष दिख रहा है कि यह तिल का पौधा उगा ही नहीं हे गौतम ! तब मैंने मंखलिपुत्र गोशालक से कहा-हे गोशालक ! जब मैंने तुझ से ऐसा कहा था, यावत् ऐसी प्ररूपणा की थी, तब तूने मेरी उस बात पर न तो श्रद्धा की, न प्रतीति की, न ही उस पर रुचि की, बल्कि उक्त कथन पर श्रद्धा, प्रतीति या रुचि न करके तू मुझे लक्ष्य करके कि 'यह मिथ्यावादी हो जाएं' ऐसा विचार कर यावत् उस तिल के पौधे को तूने मिट्टी सहित उखाड़ कर एकान्त में फैंक दिया । लेकिन हे गोशालक ! उसी समय आकाश में दिव्य बादल प्रकट हुए यावत् गरजने लगे, इत्यादि यावत् वे तिलपुष्प तिल के पौधे की एक तिलफली में सात तिल के रूप में उत्पन्न हो गए हैं । अतः हे गोशालक ! यही वह तिल का पौधा है, जो निष्पन्न हुआ है, अनिष्पन्न नहीं रहा है और वे ही सात तिलपुष्प के जीव मरकर इसी तिल के पौधे की एक तिलफली में सात तिल के रूप में उत्पन्न हुए हैं। हे गोशालक ! वनस्पतिकायिक जीव मर-मर कर उसी वनस्पतिकायिक के शरीर में पुनः उत्पन्न हो जाते हैं । तब मंखलिपुत्र गोशालक ने मेरे इस कथन यावत् प्ररूपण पर श्रद्धा, प्रतीति और रुचि नहीं की । बल्कि उस कथन के प्रति अश्रद्धा, अप्रतीति और अरुचि करता हुआ वह उस तिल के पौधे के पास पहुँचा और उसकी तिलफली तोड़ी, फिर उसे हथेली

पर मसलकर सात तिल बाहर नीकाले । उस मंखलिपुत्र गोशालक को उन सात तिलों को गिनते हुए इस प्रकार का अध्यवसाय यावत् संकल्प उत्पन्न हुआ-सभी जीव इस प्रकार परिवृत्त्य-परिहार करते हैं । हे गौतम ! मंखलिपुत्र गोशालक का यह परिवर्त्त हैं और हे गौतम ! मुझसे मंखलिपुत्र गोशालक का यह अपना पृथक् विचरण है ।

सूत्र - ६४३

तत्पश्चात् मंखलिपुत्र गोशालक नखसहित एक मुट्ठी में आवें, इतने उड़द के बाकलों से तथा एक चुल्लूभर पानी से निरन्तर छठ-छठ के तपश्चरण के साथ दोनों बाहें ऊंची करके सूर्य के सम्मुख खड़ा रहकर आतापना-भूमि में यावत् आतापना लेने लगा । ऐसा करते हुए गोशालक को छह मास के अन्त में, संक्षिप्त-विपुल-तेजोलेश्या प्राप्त हो गई ।

सूत्र - ६४४

इसके बाद मंखलिपुत्र गोशालक के पास किसी दिन ये छह दिशाचर प्रकट हुए । यथा-शोण इत्यादि सब कथन पूर्ववत्, यावत्-जिन न होते हुए भी अपने आपको जिन शब्द से प्रकट करता हुआ विचरण करने लगा है । अतः हे गौतम ! वास्तव में मंखलिपुत्र गोशालक 'जिन' नहीं है, वह 'जिन' शब्द का प्रलाप करता हुआ यावत् 'जिन' शब्द से स्वयं को प्रसिद्ध करता हुआ विचरता है । वस्तुतः मंखलिपुत्र गोशालक अजिन है; जिनप्रलापी है, यावत् जिन शब्द से स्वयं को प्रकट करता हुआ विचरता है । तदनन्तर वह अत्यन्त बड़ी परीषद् शिवराजर्षि के समान धर्मोपदेश सूनकर यावत् वन्दना-नमस्कार कर वापस लौट गई ।

तदनन्तर श्रावस्ती नगरी में शृंगाटक यावत् राजमार्गों पर बहुत-से लोग एक दूसरे से यावत् प्ररूपणा करने लगे-हे देवानुप्रियो ! जो यह गोशालक मंखलिपुत्र अपने-आपको 'जिन' होकर, 'जिन' कहता यावत् फिरता है; यह बात मिथ्या है । श्रमण भगवान महावीर कहते हैं, यावत् प्ररूपणा करते हैं कि उस मंखलिपुत्र गोशालक को 'मंखली' नामक मंख पिता था । उस समय उस मंखली का...इत्यादि पूर्वोक्त समस्त वर्णन; यावत्-वह जिन नहीं होते हुए भी 'जिन' शब्द से अपने आपको प्रकट करता है । यावत् विचरता है । श्रमण भगवान महावीर 'जिन' हैं, 'जिन' कहते हुए यावत् 'जिन' शब्द का प्रकाश करते हुए विचरते हैं । जब गोशालक ने बहुत-से लोगों से यह बात सूनी, तब उसे सूनकर और अवधारण करके वह अत्यन्त क्रुद्ध हुआ, यावत्, मिसमिसाहट करता हुआ आतापना-भूमि से नीचे ऊतरा और श्रावस्ती नगरी के मध्य में होता हुआ हालाहला कुम्भारिन की बर्तनों की दुकान पर आया। वह हालाहला कुम्भारिन की बर्तनों की दुकान पर आजीविकसंघ से परिवृत्त होकर अत्यन्त अमर्ष धारण करता हुआ इसी प्रकार विचरने लगा ।

सूत्र - ६४५

उस काल उस समय में श्रमण भगवान महावीर का अन्तेवासी आनन्द नामक स्थविर था । वह प्रकृति से भद्र यावत् विनीत था और निरन्तर छठ-छठ का तपश्चरण करता हुआ और संयम एवं तप से अपनी आत्मा को भावित करता हुआ विचरता था । उस दिन आनन्द स्थविर ने अपने छठक्षमण के पारणे के दिन प्रथम पौरुषी में स्वाध्याय किया, यावत्-गौतमस्वामी के समान भगवान से आज्ञा मांगी और उसी प्रकार ऊंच, नीच और मध्यम कुलों में यावत् भिक्षार्थ पर्यटन करता हुआ हालाहला कुम्भारिन की बर्तनों की दुकान के पास से गुजरा । जब मंखलिपुत्र गोशालक ने आनन्द स्थविर को हालाहला कुम्भारिन की बर्तनों की दुकान के निकट से जाते हुए देखा, तो बोला-'अरे आनन्द ! यहाँ आओ, एक महान दृष्टान्त सून लो ।' गोशालक के द्वार इस प्रकार कहने पर आनन्द स्थविर, हालाहला कुम्भारिन की बर्तनों की दुकान में (बैठे) गोशालक के पास आया ।

तदनन्तर मंखलिपुत्र गोशालक ने आनन्द स्थविर से इस प्रकार कहा-हे आनन्द ! आज से बहुत वर्षों पहले की बात है । कईं उच्च एवं नीची स्थिति के धनार्थी, धनलोलुप, धन के गवेषक, अर्थाकांक्षी, अर्थपीपासु वणिक्, धन की खोज में नाना प्रकार के किराने की सुन्दर वस्तुएं, अनेक गाड़े-गाड़ियों में भरकर और पर्याप्त भोजन-पान रूप पाथेय लेकर ग्रामरहित, जल-प्रवाह से रहित सार्थ आदि के आगमन से विहीन तथा लम्बे पथ वाली एक महा-अटवी

में प्रविष्ट हुए । 'ग्रामरहित, जल-प्रवाहरहित, सार्थों के आवागमन से रहित उस दीर्घमार्ग वाली अटवी के कुछ भाग में, उन वणिकों के पहुँचने के बाद, अपने साथ पहले का लिया हुआ पानी क्रमशः पीते-पीते समाप्त हो गया ।

'जल समाप्त हो जाने से तृषा से पीड़ित वे वणिक् एक दूसरे को बुलाकर इस प्रकार कहने लगे–'देवानुप्रियो ! इस अग्राम्य यावत् महाअटवी के कुछ भाग से पहुँचते ही हमारे साथ में पहले से लिया पानी क्रमशः पीते-पीते समाप्त हो गया है, इसलिए अब हमें इसी अग्राम्य यावत् अटवी में चारों ओर पानी की शोध-खोज करना श्रेयस्कर है । इस प्रकार विचार करके उन वणिकों ने परस्पर इस बात को स्वीकार किया और उस ग्रामरहित यावत् अटवी में वे सब चारों ओर पानी की शोध-खोज करने लगे । तब वे एक महान् वनखण्ड में पहुँचे, जो श्याम, श्याम-आभा से युक्त यावत् प्रसन्नता उत्पन्न करने वाला यावत् सुन्दर था । उस वनखण्ड के ठीक मध्यभाग में उन्होंने एक बड़ा वल्मीक देखा । उस वल्मीक के सिंह के स्कन्ध के केसराल के समान ऊंचे उठे हुए चार शिखराकार-शरीर थे । वे शिखर तिरछे फैले हुए थे । नीचे अर्द्धसर्प के समान थे । अर्द्ध सर्पाकार वल्मीक आह्लादोत्पादक यावत् सुन्दर थे। 'उस वाल्मीक को देखकर वे वणिक् हर्षित और सन्तुष्ट होकर और परस्पर एक दूसरे को बुलाकर यों कहने लगे–'हे देवानुप्रियो ! इस अग्राम्य यावत् अटवी में सब ओर पानी की शोध-खोज करते हुए हमें यह महान् वन-खण्ड मिला है, जो श्याम एवं श्याम-आभा के समान है, इत्यादि । इस वल्मीक के चार ऊंचे उठे हुए यावत् सुन्दर शिखर है । इसलिए हे देवानुप्रियो ! हमें इस वल्मीक के प्रथम शिखर को तोड़ना श्रेयस्कर है; जिससे हमें यहाँ बहुत-सा उत्तम उदक मिलेगा ।' फिर उस वल्मीक के प्रथम शिखर को तोड़ते हैं, जिसमें से उन्हें स्वच्छ, पथ्य-कारक, उत्तम, हल्का और स्फटिक के वर्ण जैसा श्वेत बहुत-सा श्रेष्ठ जल प्राप्त हुआ । 'इसके बाद वे वणिक हर्षित और सन्तुष्ट हुए । उन्होंने वह पानी पिया, अपने बैलों आदि वाहनों को पिलाया और पानी के बर्तन भर लिए ।

'तत्पश्चात् उन्होंने दूसरी बार भी परस्पर इस प्रकार वार्तालाप किया–हे देवानुप्रियो ! हमें इस वल्मीक के प्रथम शिखर को तोड़ने से बहुत-सा उत्तम जल प्राप्त हुआ है । अतः देवानुप्रियो ! अब हमें इस वल्मीक के द्वीतिय शिखर को तोड़ना श्रेयस्कर है, जिससे हमें पर्याप्त उत्तम स्वर्ण प्राप्त हो । उन्होंने उस वल्मीक के द्वीतिय शिखर को भी तोड़ा । उसमें से उन्हें स्वच्छ उत्तम जाति का, ताप को सहन करने योग्य महार्घ-महार्ह पर्याप्त स्वर्णरत्न मिला । 'स्वर्ण प्राप्त होने से वे वणिक् हर्षित और सन्तुष्ट हुए । फिर उन्होंने अपने बर्तन भर लिए और वाहनों को भी भर लिया' 'फिर तीसरी बार भी उन्होंने परस्पर इस प्रकार परामर्श किया–देवानुप्रियो ! हमने इस वल्मीक के प्रथम शिखर को तोड़ने से प्रचुर उत्तम जल प्राप्त किया, फिर दूसरे शिखर को तोड़ने से विपुल उत्तम स्वर्ण प्राप्त किया । अतः हे देवानुप्रियो ! हमें अब इस वल्मीक के तृतीय शिखर को तोड़ना श्रेयस्कर है, जिससे कि हमें वहाँ उदार मणिरत्न प्राप्त हों । उन्होंने उस वल्मीक के तृतीय शिखर को भी तोड़ डाला । उसमें से उन्हें विमल, निर्मल, अत्यन्त गोल, निष्कल महान् अर्थ वाले, महामूल्यवान्, महार्ह, उदार मणिरत्न प्राप्त हुए । 'इन्हें देखकर वे वणिक् अत्यन्त प्रसन्न एवं सन्तुष्ट हुए । उन्होंने मणियों से अपने बर्तन भर लिए, फिर उन्होंने अपने वाहन भी भर लिए ।

तत्पश्चात् वे वणिक् चौथी बार भी परस्पर विचार-विमर्श करने लगे–हे देवानुप्रियो ! हमें इस वल्मीक के प्रथम शिखर को तोड़ने से प्रचुर उत्तम जल प्राप्त हुआ, यावत् तीसरे शिखर को तोड़ने से हमें उदार मणिरत्न प्राप्त हुए । अतः अब हमें इस वल्मीक के चौथे शिखर को भी तोड़ना श्रेयस्कर है, जिससे हे देवानुप्रियो ! हमें उसमें से उत्तम, महामूल्यवान, महार्ह एवं उदार वज्ररत्न प्राप्त होंगे । 'यह सूनकर उन वणिकों में एक वणिक्' जो उन सबका हितैषी, सुखकामी, पथ्यकामी, अनुकम्पक और निःश्रेयसकारी तथा हित-सुख-निःश्रेयसकामी था, उसने अपने उन साथी वणिकों से कहा–देवानुप्रियो ! अतः अब बस कीजिए । अपने लिए इतना ही पर्याप्त है । अब यह चौथा शिखर मत तोड़ो । कदाचित् चौथा शिखर तोड़ना हमारे लिए उपद्रवकारी हो सकता है । 'उस समय हितैषी, सुखकामी यावत् हित-सुख-निःश्रेयस्कामी उस वणिक् ने इस कथन यावत् प्ररूपण पर उन वणिकों ने श्रद्धा, प्रतीति और रुचि नहीं की । उन्होंने उस वल्मीक के चतुर्थ शिखर को भी तोड़ डाला । शिखर टूटते ही वहाँ उन्हें एक दृष्टिविष सर्प का स्पर्श हुआ, जो उग्रविष वाला, प्रचण्ड विषधर, घोरविषयुक्त, महाविष से युक्त, अतिकाय, महाकाय, मसि और मूषा के समान

काला, दृष्टि के विष से रोषपूर्ण, अंजन-पुंज के समान कान्ति वाला, लाल-लाल आँखों वाला, चपल एवं चलती हुई दो जिह्वा वाला, पृथ्वीतल की वेणी के समान, उत्कट स्पष्ट कुटिल जटिल कर्कश विकट फटाटोप करने में दक्ष, लोहार की धौंकनी के समान धमधमायमान शब्द करने वाला, अप्रत्याशित प्रचण्ड एवं तीव्र रोष वाला, कुक्कुर के मुख से भसने के समान, त्वरित चपल एवं धम-धम शब्द वाला था । उस दृष्टिविष सर्प का उन वणिकों से स्पर्श होते ही वह अत्यन्त कुपित हुआ । यावत् मिसमिसाट शब्द करता हुआ शनैः शनैः उठा और सरसराहट करता हुआ वल्मीक के शिखर-तल पर चढ़ गया । फिर उसने सूर्य की ओर टकटकी लगा कर देखा । उसने उस वणिक्वर्ग की ओर अनिमेष दृष्टि से चारों ओर देखा । उस दृष्टिविष सर्प द्वारा वे वणिक् सब ओर अनिमेष दृष्टि से देखने पर किराने के समान आदि माल एवं बर्तनों व उपकरणों सहित एक ही प्रहार से कूटाघात के समान तत्काल जलाकर राख का ढेर कर दिए गए । उन वणिकों में से जो वणिक् उन वणिकों का हितकामी यावत् हित-सुख-निःश्रेयसकामी था उस पर नागदेवता ने अनुकम्पायुक्त होकर भण्डोपकरण सहित उसे अपने नगर में पहुँचा दिया ।

'इसी प्रकार, हे आनन्द ! तुम्हारे धर्माचार्य, धर्मोपदेशक श्रमण ज्ञातपुत्र ने उदार पर्याय प्राप्त की है । देवों, मनुष्यों और असुरों सहित इस लोक में 'श्रमण भगवान महावीर', श्रमण भगवान महावीर' इस रूप में उनकी उदार कीर्ति, वर्ण, शब्द और श्लोक फैल रहे हैं, गुंजायमान हो रहे हैं, स्तुति के विषय बन रहे हैं । इससे अधिक की लालसा करके यदि वे आज से मुझे कुछ भी कहेंगे, तो जिस प्रकार उस सर्पराज ने एक ही प्रहार से उन वणिकों को कूटाघात के समान जलाकर भस्मराशि कर डाला, उसी प्रकार मैं भी अपने तप और तेज से एक ही प्रहार में उन्हें भस्मराशि कर डालूँगा । जिस प्रकार उन वणिकों के हितकामी यावत् निःश्रेयसकामी वणिक पर उस नागदेवता ने अनुकम्पा की और उसे भण्डोपकरण सहित अपने नगर में पहुँचा दिया था, उसी प्रकार हे आनन्द ! मैं भी तुम्हारा संरक्षण और संगोपन करूँगा । इसलिए, हे आनन्द ! तुम जाओ और अपने धर्माचार्य धर्मोपदेशक श्रमण ज्ञातपुत्र को यह बात कह दो ।' उस समय मंखलिपुत्र गोशालक के द्वारा आनन्द स्थविर को इस प्रकार कहे जाने पर आनन्द स्थविर भयभीत हो गए, यावत् उनके मन में डर बैठ गया । वह मंखलिपुत्र गोशालक के पास से हालाहला कुम्भकारी की दुकान से नीकले और शीघ्र एवं त्वरितगति से श्रावस्ती नगरी के मध्य में से होकर जहाँ कोष्ठक उद्यान में श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे, वहाँ आए । तीन बार दाहिनी ओर से प्रदक्षिणा की, फिर वन्दन-नमस्कार करके यों बोले-भगवन् ! मैं आज छठ-खमण के पारणे के लिए आपकी आज्ञा प्राप्त कर श्रावस्ती नगरी में यावत् जा रहा था, तब मंखलिपुत्र गोशालक ने मुझे देखा और बुलाकर कहा-'हे आनन्द ! यहाँ आओ और मेरे एक दृष्टान्त को सून लो ।' 'हे आनन्द ! आज से बहुत काल पहले कईं उन्नत और अवनत वणिक् इत्यादि समग्र वर्णन पूर्ववत्, यावत्-अपने नगर पहुँचा दिया' अतः हे आनन्द ! तुम जाओ और अपने धर्मोपदेशक को यावत् कह देना ।

सूत्र - ६४६

(आनन्द स्थविर-) [प्र.] 'भगवन् ! क्या मंखलिपुत्र गोशालक अपने तप-तेज से एक ही प्रहार में कूटाघात के समान जलाकर भस्मराशि करने में समर्थ हैं ? भगवन् ! मंखलिपुत्र गोशालक का यह यावत् विषयमात्र है अथवा वह ऐसा करने में समर्थ भी हैं ?' 'हे आनन्द ! मंखलिपुत्र गोशालक अपने तप-तेज से यावत् भस्म करने में समर्थ हैं । हे आनन्द ! मंखलिपुत्र गोशालक का यह विषय है । हे आनन्द ! गोशालक ऐसा करने में भी समर्थ है; परन्तु अरिहंत भगवंतों को नहीं है । तथापि वह उन्हें परिताप उत्पन्न करने में समर्थ हैं । हे आनन्द ! मंखलिपुत्र गोशालक का जितना तप-तेज है, उससे अनन्त-गुण विशिष्टतर तप-तेज अनगार भगवंतों का है, अनगार भगवंत क्षान्तिक्षम होते हैं । हे आनन्द ! अनगार से अनन्तगुण विशिष्टतर तप-तेज स्थविर भगवंतों का है, क्योंकि स्थविर भगवंत क्षान्तिक्षम होते हैं और हे आनन्द ! स्थविर भगवंतों से अनन्त-गुण विशिष्टतर तप-तेज अर्हन्त भगवंतों का होता है, क्योंकि अर्हन्त भगवंत क्षान्तिक्षम होते हैं । अतः हे आनन्द ! मंखलिपुत्र गोशालक अपने तप-तेज द्वारा यावत् भस्म करने में प्रभु है । हे आनन्द ! यह उसका विषय है और हे आनन्द ! वह वैसा करने में समर्थ भी है; परन्तु अर्हन्त भगवंतों को भस्म करने में समर्थ नहीं, केवल परिताप उत्पन्न कर सकता है ।'

सूत्र - ६४७

(भगवन्–) 'इसलिए हे आनन्द ! तू जा और गौतम आदि श्रमण-निर्ग्रन्थों को यह बात कही कि–हे आर्यो! मंखलिपुत्र गोशालक के साथ कोई भी धार्मिक चर्चा न करे, धर्मसम्बन्धी प्रतिसारणा न करावे तथा धर्मसम्बन्धी प्रत्युपचार पूर्वक कोई प्रत्युपचार (तिरस्कार) न करे । क्योंकि (अब) मंखलिपुत्र गोशालक ने श्रमण-निर्ग्रन्थों के प्रति विशेष रूप से मिथ्यात्व भाव धारण कर लिया है ।' वह आनन्द स्थविर श्रमण भगवान महावीर से यह सन्देश सूनकर वन्दना-नमस्कार करके जहाँ गौतम आदि श्रमण-निर्ग्रन्थ थे, वहाँ आए । फिर गौतमादि श्रमण-निर्ग्रन्थों को बुलाकर उन्हें कहा–'हे आर्यो ! आज मैं छठक्षमण के पारणे के लिए श्रमण भगवान महावीर से अनुज्ञा प्राप्त करके श्रावस्ती नगरी में उच्च-नीच-मध्यम कुलों में इत्यादि समग्र वर्णन पूर्ववत् यावत्–ज्ञातपुत्र को यह बात कहना यावत् हे आर्यो ! तुम में से कोई भी गोशालक के साथ उसके धर्म, मत सम्बन्धी प्रतिकूल प्रेरणा मत करना, यावत् मिथ्यात्व को विशेष रूप से अंगीकार कर लिया है ।

सूत्र - ६४८

जब आनन्द स्थविर, गौतम आदि श्रमणनिर्ग्रन्थों को भगवान का आदेश कह रहे थे, तभी मंखलिपुत्र गोशालक आजीवकसंघ से परिवृत्त होकर हालाहला कुम्भकारी की दुकान से नीकलकर अत्यन्त रोष धारण किए शीघ्र एवं त्वरित गति से श्रावस्ती नगरी के मध्य में होकर कोष्ठक उद्यान में श्रमण भगवान महावीर स्वामी के पास आया । फिर श्रमण भगवान महावीर स्वामी से न अति दूर और न अति निकट खड़ा रहकर उन्हें इस प्रकार कहने लगा–आयुष्मन् काश्यप ! तुम मेरे विषय में अच्छा कहते हो ! हे आयुष्मन् ! तुम मेरे प्रति ठीक कहते हो कि मंखलिपुत्र गोशालक मेरा धर्मान्तेवासी है, गोशालक मंखलिपुत्र मेरा धर्म-शिष्य है । जो मंखलिपुत्र गोशालक तुम्हारा धर्मान्तेवासी था, वह तो शुक्ल और शुक्लाभिजात होकर काल के समय काल करके किसी देवलोक में देवरूप में उत्पन्न हो चूका है । मैं तो कौण्डिन्यायन-गोत्रीय उदायी हूँ । मैंने गौतम पुत्र अर्जुन के शरीर का त्याग किया, फिर मंखलिपुत्र गोशालक के शरीर में प्रवेश किया । मंखलिपुत्र गोशालक के शरीर में प्रवेश करके मैंने यह सातवां परिवृत्त-परिहार किया है ।

हे आयुष्मन् काश्यप ! हमारे सिद्धान्त के अनुसार जो भी सिद्ध हुए हैं, सिद्ध होते हैं, अथवा सिद्ध होंगे, वे सब (पहले) चौरासी लाख महाकल्प, सात दिव्य, सात संयूथनिकाय, सात संज्ञीगर्भ सात परिवृत्त-परिहार और पाँच लाख, साठ हजार छह-सौ तीन कर्मों के भेदों को अनुक्रम से क्षय करके तत्पश्चात् सिद्ध होते हैं, बुद्ध होते हैं, मुक्त होते हैं, निर्वाण प्राप्त करते हैं और समस्त दुःखों का अन्त करते हैं । भूतकाल में ऐसा किया है, वर्तमान में करते हैं और भविष्य में ऐसा करेंगे । जिस प्रकारी गंगा महानदी जहाँ से नीकलती है, और जहाँ समाप्त होती है; उसका वह मार्ग लम्बाई में ५०० योजन है और चौड़ाई में आधा योजन है तथा गहराई में पाँच-सौ धनुष हैं । उस गंगा के प्रमाण वाली सात गंगाएं मिलकर एक महागंगा होती है । सात महागंगाएं मिलकर एक सादीनगंगा होती है । सात सादीन-गंगाएं मिलकर एक मृतगंगा होती है । सात मृतगंगाएं मिलकर एक लोहितगंगा होती है । सात लोहितगंगाएं मिल कर एक अवन्तीगंगा होती है । सात अवन्तीगंगाएं मिलकर परमावतीगंगा होती है । इस प्रकार पूर्वापर मिलकर कुल एक लाख, सत्रह हजार, छह सौ उनचास गंगा नदियाँ हैं ।

उन (गंगानदियों के बालुकाकण) का दो प्रकार का उद्धार कहा गया है । यथा–सूक्ष्मबोन्दिकलेवररूप और बादर-बोन्दि-कलेवररूप । उनमें से जो सूक्ष्मबोंदि-कलेवररूप उद्धार है, वह स्थाप्य है । उनमें से जो बादर-बोंदिक-लेवररूप उद्धार हैं, उनमें से सौ-सौ वर्षों में गंगा की बालू का एक-एक कण नीकाला जाए और जितने काल में वह गंगा-समूहरूप कोठा समाप्त हो जाए, रजरहित निर्लेप और निष्ठित हो जाए, तब एक 'शरप्रमाण' काल कहलाता है । इस प्रकार के तीन लाख शरप्रमाण काल द्वारा एक महाकल्प होता है । चौरासी लाख महाकल्पों का एक महामानस होता है । अनन्त संयूथ से जीव च्यवकर संयूथ-देवभव में उपरितन मानस द्वारा उत्पन्न होता है । वह वहाँ दिव्यभोगों का उपभोग करता रहता है । उस देवलोक का आयुष्य-क्षय, देवभव का क्षय और देवस्थिति का क्षय होने पर तुरन्त

च्यवकर प्रथम संज्ञीगर्भ जीव में उत्पन्न होता है । फिर वह वहाँ से अन्तररहित मरकर मध्यम मानस द्वारा संयूथ देवनिकाय में उत्पन्न होता है । वह वहाँ दिव्य भोगों का उपभोग करता है । वहाँ से देवलोक का आयुष्य, भव और स्थिति का क्षय होने पर दूसरी बार फिर संज्ञीगर्भ में जन्म लेता है । वहाँ से तुरन्त मरकर अधस्तन मानस आयुष्य द्वारा संयूथ में उत्पन्न होता है । वह वहाँ दिव्य भोग भोगकर यावत् वहाँ से च्यवकर तीसरे संज्ञीगर्भ में उत्पन्न होता है । फिर वह वहाँ से मरकर उपरितन मानसोत्तर आयुष्य द्वारा संयूथ देवनिकाय में उत्पन्न होता है । वहाँ वह दिव्यभोग भोगकर यावत् चतुर्थ संज्ञीगर्भ में जन्म लेता है । वहाँ से मरकर तुरन्त मध्यम मानसोत्तर आयुष्य द्वारा संयूथ में उत्पन्न होता है वहाँ वह दिव्यभोगों का उपभोग कर यावत् वहाँ से च्यवकर पाँचवें संज्ञीगर्भ में उत्पन्न होता है । वहाँ से मरकर तुरन्त अधस्तन मानसोत्तर आयुष्य द्वारा संयूथ-देव में उत्पन्न होता है । वह वहाँ दिव्य भोगों का उपभोग करके यावत् च्यवकर छठे संज्ञीगर्भ जीव में जन्म लेता है ।

वह वहाँ से मरकर तुरन्त ब्रह्मलोक नामक कल्प में देवरूप में उत्पन्न होता है, वह पूर्व-पश्चिम में लम्बा है, उत्तर-दक्षिण में चाड़ा है । यावत्–उसमें पाँच अवतंसक विमान कहे गए हैं । यथा–अशोकावतंसक, यावत् वे प्रतिरूप हैं । इन्हीं अवतंसकों में वह देवरूप में उत्पन्न होता है । वह वहाँ दस सागरोपम तक दिव्य भोगों का उपभोग कर यावत् वहाँ से च्यवकर सातवें संज्ञीगर्भ जीव में उत्पन्न होता है । वहाँ नौ मास और साढ़े सात रात्रि-दिवस यावत् व्यतीत होने पर सुकुमाल, भद्र, मृदु तथा कुण्डल के समान कुंचित केश वाला, कान के आभूषणों से जिसके कपोलस्थल चमक रहे थे, ऐसे देवकुमारसम कान्ति वाले बालक को जन्म दिया । हे काश्यप ! वही मैं हूँ । कुमारावस्था में ली हुई प्रव्रज्या से, कुमारावस्था में ब्रह्मचर्यवास से जब मैं अविद्धकर्म था, तभी मुझे प्रव्रज्या ग्रहण करने की बुद्धि प्राप्त हुई । फिर मैंने सात परिवृत्त-परिहार में संचार किया, यथा–ऐणेयक, मल्लरामक, मण्डिक, रौह, भारद्वाज, गौतमपुत्र अर्जुनक और मंखलिपुत्र गोशालक के (शरीर में प्रवेश किया) ।

इनमें से जो प्रथम परिवृत्त-परिहार हुआ, वह राजगृह नगर के बाहर मंडिककुक्षि नामक उद्यान में, कुण्डियायण गोत्रीय उदायी के शरीर का त्याग करके ऐणेयक के शरीर में प्रवेश किया । वहाँ मैंने बाईस वर्ष तक प्रथम परिवृत्त-परिहार किया । इनमें से जो द्वीतिय परिवृत्त-परिहार हुआ, वह उद्दण्डपुर नगर के बाहर चन्द्रावतरण नामक उद्यान में मैंने ऐणेयक के शरीर का त्याग किया और मल्लरामक के शरीर में प्रवेश किया । वहाँ मैंने इक्कीस वर्ष तक दूसरे परिवृत्त-परिहार का उपभोग किया । इनमें से जो तृतीय परिवृत्त-परिहार हुआ, वह चम्पानगरी के बाहर अंगमंदिर नामक उद्यान में मल्लरामक के शरीर का परित्याग किया । फिर मैंने मण्डिक के शरीर में प्रवेश किया । वहाँ मैंने बीस वर्ष तक तृतीय परिवृत्त-परिहार का उपभोग किया । इनमें से जो चतुर्थ परिवृत्त-परिहार हुआ, वह वाराणसी नगरी के बाहर काम-महावन नामक उद्यान के मण्डिक के शरीर का मैंने त्याग किया और रोहक के शरीर में प्रवेश किया । वहाँ मैंने उन्नीस वर्ष तक चतुर्थ परिवृत्त-परिहार का उपभोग किया । उनमें से जो पंचम परिवृत्त-परिहार हुआ, वह आलभिका नगरी के बाहर प्राप्तकालक नाम के उद्यान में हुआ । उसमें मैं रोहक के शरीर का परित्याग करके भारद्वाज के शरीर में प्रविष्ट हुआ । वहाँ अठारह वर्ष तक पाँचवे परिवृत्त-परिहार का उपभोग किया। उनमें से जो छठा परिवृत्त-परिहार हुआ, उसमें मैंने वैशाली नगर के बाहर कुण्डियायन नामक उद्यान में भारद्वाज के शरीर का परित्याग किया और गौतमपुत्र अर्जुनक के शरीर में प्रवेश किया । वहाँ मैंने सत्रह वर्ष तक छठे परिवृत्त-परिहार का उपभोग किया । उनमें से जो सातवाँ परिवृत्त-परिहार हुआ, उसमें मैंने इसी श्रावस्ती नगरी में हालाहला कुम्भकारी की बर्तनों की दुकान में गौतमपुत्र अर्जुनक के शरीर का परित्याग किया । फिर मैंने समर्थ, स्थिर, ध्रुव, धारण करने योग्य, शीतसहिष्णु, उष्णसहिष्णु, क्षुधासहिष्णु, विविध दंश-मशकादिपरीषह-उपसर्ग-सहनशील, एवं स्थिर संहनन वाला जानकर, मंखलिपुत्र गोशालक के उस शरीर में प्रवेश किया । उसमें प्रवेश करके मैं सोलह वर्ष तक इस सातवे परिवृत्त-परिहार का उपभोग करता हूँ ।

इसी प्रकार हे आयुष्मन् काश्यप ! इन १३३ वर्षों में मेरे ये सात परिवृत्त-परिहार हुए हैं, ऐसा मैंने कहा था । इसलिए आयुष्मन् काश्यप ! तुम ठीक कहते हो कि मंखलिपुत्र गोशालक मेरा धर्मान्तेवासी है ।

सूत्र - ६४९

श्रमण भगवान महावीर ने कहा–गोशालक ! जैसे कोई चोर हो और वह ग्रामवासी लोगों के द्वारा पराभव पाता हुआ कहीं गड्ढा, गुफा, दुर्ग, निम्न स्थान, पहाड़ या विषम नहीं पा कर अपने आपको एक बड़े ऊन के रोम से, सण के रोम से, कपास के बने हुए रोम से, तिनकों के अग्रभाग से आवृत्त करके बैठ जाए, और नहीं ढँका हुआ भी स्वयं को ढँका हुआ माने, अप्रच्छन्न होते हुए भी प्रच्छन्न माने, लुप्त न होने पर भी अपने को लुप्त माने, पलायित न होते हुए भी अपने को पलायित माने, उसी प्रकार तू अन्य न होते हुए भी अपने आपको अन्य बता रहा है । अतः गोशालक ! ऐसा मत कर । यह तेरे लिए उचित नहीं है । तू वही है । तेरी वही छाया है, तू अन्य नहीं है ।

सूत्र - ६५०

श्रमण भगवान महावीर ने जब मंखलिपुत्र गोशालक को इस प्रकार कहा तब वह तुरन्त अत्यन्त क्रुद्ध हो उठा क्रोध से तिलमिला कर वह श्रमण भगवान महावीर की अनेक प्रकार के ऊटपटांग आक्रोशवचनों से भर्त्सना करने लगा, उद्घर्षणायुक्त वचनों से अपमान करने लगा, अनेक प्रकार की अनर्गल निर्भर्त्सना द्वारा भर्त्सना करने लगा, अनेक प्रकार के दुर्वचनों से उन्हें तिरस्कृत करने लगा । फिर गोशालक बोला–कदाचित् तुम नष्ट हो गए हो, कदाचित् आज तुम विनष्ट हो गए हो, कदाचित् आज तुम भ्रष्ट हो गए हो, कदाचित् तुम नष्ट, विनष्ट और भ्रष्ट हो चूके हो । आज तुम जीवित नहीं रहोगे । मेरे द्वारा तुम्हारा शुभ होने वाला नहीं है ।

सूत्र - ६५१

उस काल और उस समय में श्रमण भगवान महावीर के पूर्व देश में जन्मे हुए सर्वानुभूति नामक अनगार थे, जो प्रकृति से भद्र यावत् विनीत थे । वह अपने धर्माचार्य के प्रति अनुरागवश गोशालक के प्रलाप के प्रति अश्रद्धा करते हुए उठे और मंखलिपुत्र गोशालक के पास आकर कहने लगे–हे गोशालक ! जो मनुष्य तथारूप श्रमण या माहन से एक भी आर्य धार्मिक सुवचन सूनता है, वह उन्हें वन्दना-नमस्कार करता है, यावत् उन्हें कल्याणरूप, मंगलरूप, देवस्वरूप, एवं ज्ञानरूप मानकर उनकी पर्युपासना करता है, तो हे गोशालक ! तुम्हारे लिए तो कहना ही क्या ? भगवान ने तुम्हें प्रव्रजित किया, मुण्डित किया, भगवान ने तुम्हें साधना सिखाई, भगवान ने तुम्हें शिक्षित किया, भगवान ने तुम्हें बहुश्रुत किया, तुम भगवान के प्रति मिथ्यापन अंगीकार कर रहे हो । हे गोशालक ! तुम ऐसा मत करो तुम्हें ऐसा करना उचित नहीं है । हे गोशालक ! तुम वही गोशालक हो, दूसरे नहीं, तुम्हारी वही प्रकृति है, दूसरी नहीं । सर्वानुभूति अनगार ने जब मंखलिपुत्र गोशालक से इस प्रकार की बातें कही तब वह एकदम क्रोध से आगबबूला हो उठा और अपने तपोजन्य तेज से उसने एक ही प्रहार में कूटाघात की तरह सर्वानुभूति अनगार को भस्म कर दिया । सर्वानुभूति अनगार को भस्म करके वह मंखलिपुत्र गोशालक फिर दूसरी बार श्रमण भगवान महावीर को अनेक प्रकार के ऊटपटांग आक्रोशवचनों से तिरस्कृत करने लगा ।

उस काल उस समय में श्रमण भगवान महावीर का कोशल जनपदीय में उत्पन्न अन्तेवासी सुनक्षत्र नामक अनगार था । वह भी प्रकृति से भद्र यावत् विनीत था । उसने धर्माचार्य के प्रति अनुरागवश सर्वानुभूति अनगार के समान गोशालक को यथार्थ बात कही, यावत्–'हे गोशालक ! तू वही है, तेरी प्रकृति वही है, तू अन्य नहीं है ।' सुनक्षत्र अनगार के ऐसा कहने पर गोशालक अत्यन्त कुपित हुआ और अपने तप-तेज से सुनक्षत्र अनगार को भी परितापित कर (जला) दिया । मंखलिपुत्र गोशालक के तप-तेज से जले हुए सुनक्षत्र अनगार ने श्रमण भगवान महावीर स्वामी के समीप आकर और तीन बार दाहिनी ओर से प्रदक्षिणा करके उन्हें वन्दना-नमस्कार किया । फिर स्वयमेव पंच महाव्रतों का आरोपण किया और सभी श्रमण-श्रमणियों से क्षमायाचना की । तदनन्तर आलोचना और प्रतिक्रमण करके समाधि प्राप्त कर अनुक्रम से कालधर्म प्राप्त किया । अपने तप-तेज से सुनक्षत्र अनगार को जलाने के बाद फिर तीसरी बार मंखलिपुत्र गोशालक, श्रमण भगवान महावीर को अनेक प्रकार के आक्रोशपूर्ण वचनों से तिरस्कृत करने लगा; इत्यादि पूर्ववत् ।

श्रमण भगवान महावीर ने, गोशालक से कहा–जो तथारूप श्रमण या माहन से एक भी आर्य धार्मिक सुवचन

सूनता है, इत्यादि पूर्ववत्, वह भी उसकी पर्युपासना करता है, तो हे गोशालक ! तेरे विषय में तो कहना ही क्या ? मैंने तुझे प्रव्रजित किया, यावत् मैंने तुझे बहुश्रुत बनाया, अब मेरे साथ ही तूने इस प्रकार का मिथ्यात्व अपनाया है । गोशालक ! ऐसा मत कर । ऐसा करना तुझे योग्य नहीं है । यावत्-तू वही है, अन्य नहीं है । तेरी वही प्रकृति है, अन्य नहीं । श्रमण भगवान महावीर द्वारा इस प्रकार कहने पर मंखलिपुत्र गोशालक पुनः एकदम क्रुद्ध हो उठा । उसने तैजस समुद्घात किया । फिर वह सात-आठ कदम पीछे हटा और श्रमण भगवान महावीर का वध करने के लिए उसने अपने शरीर में से तेजोलेश्या नीकाली । जिस प्रकार वातोत्कलिका वातमण्डलिका पर्वत, भींत, स्तम्भ या स्तूप से आवारित एवं निवारित होती हुई उन शैल आदि पर अपना थोड़ा-सा भी प्रभाव नहीं दिखाती । इसी प्रकार श्रमण भगवान महावीर का वध करने के लिए गोशालक द्वारा अपन शरीर में से बाहर नीकाली हुई तपोजन्य तेजोलेश्या, भगवान महावीर पर अपना थोड़ा या बहुत कुछ भी प्रभाव न दिखा सकी । उसने गमनागमन (ही) किया । फिर उसने प्रदक्षिणा की और ऊपर आकाश में उछल गई । फिर वह वहाँ से नीचे गिरी और वापिस लौटकर उसी मंखलिपुत्र गोशालक के शरीर को बार-बार जलाती हुई अन्त में उसी के शरीर के भीतर प्रविष्ट हो गई ।

तत्पश्चात् मंखलिपुत्र गोशालक अपनी तेजोलेश्या से स्वयमेव पराभूत हो गया । अतः (क्रुद्ध होकर) श्रमण भगवान महावीर से इस प्रकार कहने लगा-'आयुष्मन् काश्यप ! तुम मेरी तपोजन्य तेजोलेश्या से पराभूत होकर पित्तज्वर से ग्रस्त शरीर वाले होकर दाह की पीड़ा से छह मास के अन्त में छद्मस्थ अवस्था में ही काल कर जाओगे।' इस पर श्रमण भगवान महावीर स्वामी ने मंखलिपुत्र गोशालक से इस प्रकार कहा-'हे गोशालक ! तेरी तपोजन्य तेजोलेश्या से पराभव को प्राप्त होकर मैं छह मास के अन्तमें, यावत् काल नहीं करूँगा, किन्तु अगले १६वर्ष-पर्यन्त जिन अवस्थामें गन्ध-हस्ती के समान विचरूँगा । परन्तु हे गोशालक ! तू स्वयं अपनी तेजोलेश्या से पराभव को प्राप्त होकर सात रात्रियोंके अन्तमें पित्तज्वर से शारीरिक पीड़ाग्रस्त होकर यावत् छद्मस्थ अवस्थामें ही काल कर जाएगा ।'

तदनन्तर श्रावस्ती नगरी के शृंगाटक यावत् राजमार्गों पर बहुत-से लोग परस्पर एक दूसरे से कहने लगे, यावत् प्ररूपणा करने लगे-देवानुप्रियो ! श्रावस्ती नगरी के बाहर कोष्ठक चैत्य में दो जिन परस्पर संलाप कर रहे हैं। एक कहता है-'तू पहले काल कर जाएगा ।' दूसरा उसे कहता है-'तू पहले मर जाएगा ।' इन दोनों में कौन सम्यग्वादी है, कौन मिथ्यावादी है ? उनमें से जो प्रधान मनुष्य था, उसने कहा-'श्रमण भगवान महावीर सत्यवादी है, मंखलिपुत्र गोशालक मिथ्यावादी है ।'

सूत्र - ६५२

श्रमण भगवान महावीर ने कहा-'हे आर्यो ! जिस प्रकार तृणराशि, काष्ठराशि, पत्रराशि, त्वचा राशि, तुष-राशि, भूसे की राशि, गोमय की राशि और अवकर राशि को अग्नि से थोड़ा-सा जल जाने पर, आग में झोंक देने पर एवं अग्नि से परिणामान्तर होने पर उसका तेज हत हो जाता है, उसका तेज चला जाता है, उसका तेज नष्ट और भ्रष्ट हो जाता है, उसका तेज लुप्त एवं विनष्ट हो जाता है; इसी प्रकार मंखलिपुत्र गोशालक द्वारा मेरे वध के लिए अपने शरीर से तेजोलेश्या नीकाल देने पर, अब उसका तेज हत हो गया है, यावत् उसका तेज विनष्ट हो गया है । इसलिए, आर्यो ! अब तुम भले ही मंखलिपुत्र गोशालक को धर्मसम्बन्धी प्रतिमोदना से प्रतिप्रेरित करो, धर्म-सम्बन्धी प्रतिस्मारणा करा कर स्मृति कराओ । फिर धार्मिक प्रत्युपचार द्वारा उसका प्रत्युपचार करो, इसके बाद अर्थ, हेतु, प्रश्न व्याकरण और कारणों के सम्बन्ध में प्रश्न पूछकर उसे निरुत्तर कर दो ।'

जब श्रमण भगवान महावीर स्वामी ने ऐसा कहा, तब उन श्रमण-निर्ग्रन्थों ने श्रमण भगवान महावीर को वन्दना-नमस्कार किया । फिर जहाँ मंखलिपुत्र गोशालक था, वहाँ आए और उसे धर्म-सम्बन्धी प्रतिप्रेरणा की, धर्मसम्बन्धी प्रतिस्मारणा की तथा धार्मिक प्रत्युपचार से उसे तिरस्कृत किया, एवं अर्थ, हेतु, प्रश्न व्याकरण और कारणों से उसे निरुत्तर कर दिया । इसके बाद गोशालक मंखलिपुत्र अत्यन्त कुपित हुआ यावत् मिसमिसाता हुआ क्रोध से अत्यन्त प्रज्वलित हो उठा । किन्तु अब वह श्रमण-निर्ग्रन्थों के शरीर को कुछ भी पीड़ा या उपद्रव पहुँचाने अथवा छविच्छेद करने में समर्थ नहीं हुआ ।

जब आजीविक स्थविरों ने यह देखा कि श्रमण निर्ग्रन्थों द्वारा धर्म-सम्बन्धी प्रतिप्रेरणा से यावत् गोशालक को

निरुत्तर कर दिया गया है, जिससे गोशालक अत्यन्त कुपित यावत् मिसमिसायमान होकर क्रोध से प्रज्वलित हो उठा, किन्तु श्रमण-निर्ग्रन्थों के शरीर को तनिक भी पीड़ित या उपद्रवित नहीं कर सका एवं उनका छविच्छेद नहीं कर सका, तब कुछ आजीविक स्थविर गोशालक मंखलिपुत्र के पास से अपने आप ही चल पड़े । वहाँ से चलकर वे श्रमण भगवान महावीर के पास आ गए । श्रमण भगवान महावीर की दाहिनी ओर से तीन बार प्रदक्षिणा की और उन्हें वन्दना-नमस्कार किया । तत्पश्चात् वे श्रमण भगवान महावीर का आश्रय स्वीकार करके विचरण करने लगे । कितने ही ऐसे आजीविक स्थविर थे, जो मंखलिपुत्र गोशालक का आश्रय ग्रहण करके ही विचरते रहे ।

मंखलिपुत्र गोशालक जिस कार्य को सिद्ध करने के लिए एकदम आया था, उस कार्य को सिद्ध नहीं कर सका, तब वह चारों दिशाओं में लम्बी दृष्टि फैंकता हुआ, दीर्घ और उष्ण निःश्वास छोड़ता हुआ, दाढ़ी के बालों को नोचता हुआ, गरदन के पीछे के भाग को खुजलाता हुआ, बैठक के कूल्हे के प्रदेश को ठोकता हुआ, हाथों को हिलाता हुआ और दोनों पैरों से भूमि को पीटता हुआ; 'हाय, हाय ! ओह मैं मारा गया' यों बड़बड़ाता हुआ, श्रमण भगवान महावीर के पास से, कोष्ठक-उद्यान से नीकला और हालाहला कुम्भकारी की दुकान थी, वहाँ आया । वहाँ आम्रफल हाथमें लिए हुए मद्यपान करता, बार-बार गाता और नाचता हुआ, बारबार हालाहला कुम्भारिन को अंजलिकर्म करता हुआ, मिट्टी के बर्तन में रखे हुए मिट्टी मिले हुए शीतल जल से अपने शरीर का परिसिंचन करता हुआ विचरने लगा ।

श्रमण भगवान महावीर ने कहा–हे आर्यो ! मंखलिपुत्र गोशालक ने मेरा वध करने के लिए अपने शरीर में से जितनी तेजोलेश्या नीकाली थी, वह सोलह जनपदों का घात करने, वध करने, उच्छेदन करने और भस्म करने में पूरी तरह पर्याप्त थी । वे सोलह जनपद ये हैं–अंग, बंग, मगध, मलयदेश, मालवदेश, अच्छ, वत्सदेश, कौत्सदेश, पाट, लाढ़देश, वज्रदेश, मौली, काशी, कौशल, अवध और सुम्भुत्तर । हे आर्यो ! मंखलिपुत्र गोशालक, जो हालाहला कुम्भारिन की दुकान में आम्रफल हाथ में लिए हुए मद्यपान करता हुआ यावत् बारबार अंजलिकर्म करता हुआ विचरता है, वह अपने उस पाप को प्रच्छादन करने के लिए इन आठ चरमों की प्ररूपणा करता है । यथा–चरम पान, चरमगान, चरम नाट्य, चरम अंजलिकर्म, चरम पुष्कल-संवर्तक महामेघ, चरम सेचनक गन्धहस्ती, चरम महाशिलाकण्टक संग्राम और 'मैं (मंखलिपुत्र गोशालक) इस अवसर्पिणी काल में चौबीस तीर्थंकरों में से चरम तीर्थंकर होकर सिद्ध होऊंगा यावत् सब दुःखों का अन्त करूँगा ।'

हे आर्यो ! गोशालक मिट्टी के बर्तन में मिट्टी-मिश्रित शीतल पानी द्वारा अपने शरीर का सिंचन करता हुआ विचरता है; वह भी इस पाप को छिपाने के लिए चार प्रकार के पानक और चार प्रकार के अपानक की प्ररूपणा करता है । पानक क्या है ? पानक चार प्रकार का है–गाय की पीठ से गिरा हुआ, हाथ से मसला हुआ, सूर्य के ताप से तपा हुआ और शिला से गिरा हुआ । अपानक क्या है ? अपानक चार प्रकार का है । स्थाल का पानी, वृक्षादि की छाल का पानी, सिम्बली का पानी और शुद्ध पानी ।

वह स्थाल-पानक क्या है ? जो पानी से भीगा हुआ स्थाल हो, पानी से भीगा हुआ वारक हो, पानी से भीगा हुआ बड़ा घड़ा हो अथवा पानी से भीगा हुआ कलश हो, या पानी से भीगा हुआ मिट्टी का बर्तन हो जिसे हाथों से स्पर्श किया जाए, किन्तु पानी पीया न जाए, यह स्थाल-पानक कहा गया है । त्वचा-पानक किस प्रकार का होता है? जो आम्र, अम्बाडग इत्यादि प्रज्ञापना सूत्र के सोलहवे प्रयोग पद में कहे अनुसार, यावत् बेर, तिन्दुरुक पर्यन्त हो, तथा जो तरुण एवं अपक्व हो, (उसकी छाल को) मुख में रखकर थोड़ा चूसे या विशेष रूप से चूसे, परन्तु उसका पानी न पीए यह त्वचा-पानक कहलाता है । वह सिम्बली-पानक किस प्रकार का होता है ? जो कलाय की फली, मूँग की फली, उड़द की फली अथवा सिम्बली की फली आदि, तरुण और अपक्व हो, उसे कोई मुँह से थोड़ा चबाता है या विशेष चबाता है, परन्तु उसका पानी नहीं पीता । वही सिम्बली-पानक होता है । वह शुद्ध पानी किस प्रकार का होता है ? व्यक्ति छह महीने तक शुद्ध खादिम आहार खाता है, छह महीनों में से दो महीने तक पृथ्वी-संस्तारक पर सोता है, दो महीने तक काष्ठ के संस्तारक पर सोता है, दो महीने तक दर्भ के संस्तारक पर सोता है; इस प्रकार छह महीने परिपूर्ण हो जाने पर अन्तिम रात्रि में उसके पास ये दो महर्द्धिक यावत् महासुख-सम्पन्न देव प्रकट होते हैं, यथा–पूर्णभद्र और

माणिभद्र । फिर वे दोनों देव शीतल और गीले हाथों से उसके शरीर के अवयवों का स्पर्श करते हैं । उन देवों का जो अनुमोदन करता है, वह आशीविष रूप से कर्म करता है, और जो उन देवों का अनुमोदन नहीं करता, उसके स्वयं के शरीर में अग्निकाय उत्पन्न हो जाता है । वह अग्निकाय अपने तेज से उसके शरीर को जलाता है । इस प्रकार शरीर को जला देने के पश्चात् वह सिद्ध हो जाता है; यावत् सर्व दुःखों का अन्त कर देता है । यही वह शुद्ध पानक है ।

उसी श्रावस्ती नगरी में अयंपुल नामका आजीविकोपासक रहता था । वह ऋद्धि सम्पन्न यावत् अपराभूत था वह हालाहला कुम्भारिन के समान आजीविक मत के सिद्धान्त से अपनी आत्मा को भावित करता हुआ विचरता था । किसी दिन उस अयंपुल आजीविकोपासक को रात्रि के पीछले प्रहर में कुटुम्बजागरणा करते हुए इस प्रकार का अध्यवसाय यावत् संकल्प समुत्पन्न हुआ–'हल्ला नामक कीट-विशेष का आकार कैसा बताया गया है ?' तदनन्तर उस आजीविकोपासक अयंपुल को ऐसा अध्यवसाय यावत् मनोगत-संकल्प उत्पन्न हुआ कि 'मेरे धर्माचार्य धर्मोपदेशक मंखलिपुत्र गोशालक, उत्पन्न ज्ञान-दर्शन के धारक, यावत् सर्वज्ञ-सर्वदर्शी हैं । वे इसी श्रावस्ती नगरी में हालाहला कुम्भारिन की दुकान में आजीविकसंघ सहित आजीविक-सिद्धान्त से अपनी आत्मा को भावित करते हुए विचरते हैं अतः कल प्रातःकाल यावत् तेजी से जाज्वल्यमान सूर्योदय होने पर मंखलिपुत्र गोशालक को वन्दना यावत् पर्युपासना करके ऐसा यह प्रश्न पूछना श्रेयस्कर होगा ।' दूसरे दिन प्रातः सूर्योदय होने पर स्नान-बलिकर्म किया । फिर अल्पभार और महामूल्य वाले आभूषणों से अपने शरीर को अलंकृत कर वह अपने घर से नीकला और पैदल चलकर श्रावस्ती नगरी के मध्य में से होता हुआ हालाहला कुम्भारिन की दुकान पर आया । मंखलिपुत्र-गोशालक को हाथ में आम्रफल लिए हुए, यावत् हालाहला कुम्भारिन को अंजलिकर्म करते हुए, मिट्टी मिले हुए जल से अपने शरीर के अवयवों को बार-बार सिंचन करते हुए देखा तो देखते ही लज्जित, उदास और व्रीडित हो गया और धीरे-धीरे पीछे खिसकने लगा ।

जब आजीविक-स्थविरों ने आजीविकोपासक अयंपुल को लज्जित होकर यावत् पीछे जाते हुए देखा, तो कहा–'हे अयंपुल ! यहाँ आओ ।' आजीविक-स्थविरों द्वारा बुलाने पर अयंपुल आजीविकोपासक उनके पास आया और उन्हें वन्दना-नमस्कार करके उनसे न अन्यन्त निकट और न अत्यन्त दूर बैठकर यावत् पर्युपासना करने लगा । आजीविक-स्थविरों ने कहा–हे अयंपुल ! आज पीछली रात्रि के समय यावत् तुझे ऐसा मनोगत संकल्प उत्पन्न हुआ कि 'हल्ला' की आकृति कैसी होती है ? इसके पश्चात् हे अयंपुल ! तुझे ऐसा विचार उत्पन्न हुआ कि मैं अपने धर्माचार्य...से पूछकर निर्णय करूँ, इत्यादि । 'हे अयंपुल ! क्या यह बात सत्य है ?' (अयंपल–) 'हाँ, सत्य है।' (स्थविर–) हे अयंपुल ! तुम्हारे धर्माचार्य धर्मोपदेशक मंखलिपुत्र गोशालक जो हालाहला कुम्भारिन की दुकान में आम्रफल हाथमें लिए हुए यावत् अंजलिकर्म करते हुए विचरते हैं, वह वे भगवान गोशालक इस सम्बन्ध में इन आठ चरमों की प्ररूपणा करते हैं । यथा–चरम पान, यावत् सर्व दुःखों का अन्त करेंगे । हे अयंपुल ! जो ये तुम्हारे धर्माचार्य धर्मोपदेशक मंखलिपुत्र गोशालक मिट्टी मिश्रित शीतल पानी से अपने शरीर के अवयवों पर सिंचन करते हुए यावत् विचरते हैं । इस विषय में भी वे भगवान चार पानक और चार अपानक की प्ररूपणा करते हैं । यावत्... इसके पश्चात् वे सिद्ध होते हैं, यावत् सर्व दुःखों का अन्त करते हैं । अतः हे अयंपुल ! तू जा और अपने इन धर्माचार्य धर्मोपदेशक मंखलिपुत्र गोशालक से अपने इस प्रश्न को पूछ । वह अयंपुल आजीविकोपासक हर्षित एवं सन्तुष्ट हुआ और वहाँ से उठकर गोशालक मंखलिपुत्र के पास जाने लगा । तत्पश्चात् उन आजीविक स्थविरों ने उक्त आम्रफल को एकान्त में डालने का गोशालक को संकेत किया । इस पर मंखलिपुत्र गोशालक ने आजीविक स्थविरों का संकेत ग्रहण किया और उस आम्रफल को एकान्त में एक ओर डाल दिया ।

इसके पश्चात् अयंपुल आजीविकोपासक मंखलिपुत्र गोशालक के पास आया और मंखलिपुत्र गोशालक की तीन बार दाहिनी ओर से प्रदक्षिणा की, फिर यावत् पर्युपासना करने लगा । गोशालक ने पूछा–'हे अयंपुल ! रात्रि के पीछले प्रहर में यावत् तुझे ऐसा मनोगत संकल्प उत्पन्न हुआ यावत् इसी से तू मेरे पास आया है, हे अयंपुल! क्या यह बात सत्य है ?' (अयंपुल) हाँ, सत्य है । (गोशालक–) (हे अयंपुल !) मेरे हाथ में वह आम्र की गुठली नहीं थी, किन्तु

आम्रफल की छाल थी । हल्ला का आकार कैसा होता है ? (अयंपुल) हल्ला का आकार बाँस के मूल के आकार जैसा होता है । (उन्मादवश गोशालक ने कहा) 'हे वीरो ! वीणा बजाओ ! वीरो ! वीणा बजाओ ।' गोशालक से अपने प्रश्न का इस प्रकार समाधान पाकर आजीविकोपासक अयंपुल अतीव हृष्ट-तुष्ट हुआ यावत् हृदय में अत्यन्त आनन्दित हुआ । फिर उसने मंखलिपुत्र गोशालक को वन्दना-नमस्कार किया; कईं प्रश्न पूछे, अर्थ ग्रहण किया । फिर वह उठा और पुनः मंखलिपुत्र गोशालक को वन्दना-नमस्कार करके यावत् अपने स्थान पर लौट गया ।

गोशालक ने अपना मरण (निकट) जानकर आजीविक स्थविरों को अपने पास बुलाया और कहा–हे देवानुप्रियो ! मुझे कालधर्म को प्राप्त हुआ जानकर तुम लोग मुझे सुगन्धित गन्धोदक से स्नान कराना, फिर रोएंदार कोमल गन्धकाषायिक वस्त्र से मेरे शरीर को पोंछना, सरस गोशीर्ष चन्दन से मेरे शरीर के अंगों पर विलेपन करना। हंसवत् श्वेत महामूल्यवान् पटशाटक मुझे पहनाना । मुझे समस्त अलंकारों से विभूषित करना । मुझे हजार पुरुषों से उठाई जाने योग्य शिबिका में बिठाना । शिबिकारूढ़ करके श्रावस्ती नगरी के शृंगाटक यावत् महापथों में उच्च स्वर से उद्घोषणा करते हुए कहना–यह मंखलिपुत्र गोशालक जिन, जिनप्रलापी है, यावत् जिन शब्द का प्रकाश करता हुआ विचरण कर इस अवसर्पिणी काल के चौबीस तीर्थंकरों में से अन्तिम तीर्थंकर होकर सिद्ध हुआ है, यावत् समस्त दुःखों से रहित हुआ है । इस प्रकार ऋद्धि और सत्कार के साथ मेरे शरीर का नीहरण करना । उन आजीविक स्थविरों ने गोशालक की बात को विनयपूर्वक स्वीकार किया ।

सूत्र - ६५३

इसके पश्चात् जब सातवीं रात्रि व्यतीत हो रही थी, तब मंखलिपुत्र गोशालक को सम्यक्त्व प्राप्त हुआ । उसके साथ ही उसे इस प्रकार का अध्यवसाय यावत् मनोगत संकल्प समुत्पन्न हुआ–'मैं वास्तव में जिन नहीं हूँ, तथापि मैं जिन-प्रलापी यावत् जिन शब्द से स्वयं को प्रकट करता हुआ विचरा हूँ । मैं मंखलिपुत्र गोशालक श्रमणों का घातक, श्रमणों को मारने वाला, श्रमणों का प्रत्यनीक, आचार्य-उपाध्याय का अपयश करने वाला, अवर्णवाद-कर्ता और अपकीर्तिकर्ता हूँ । मैं अत्यधिक असद्भावनापूर्ण मिथ्यात्वाभिनिवेश से, अपने आपको, दूसरों को तथा स्वपर-उभय को व्युद्ग्राहित करता हुआ, व्युत्पादित करता हुआ विचरा, और फिर अपनी ही तेजोलेश्या से पराभूत होकर, पित्तज्वराक्रान्त तथा दाह से जलता हुआ सात रात्रि के अन्त में छद्मस्थ अवस्था में ही काल करूँगा । वस्तुतः श्रमण भगवान महावीर ही जिन हैं, और जिनप्रलापी हैं यावत् जिन शब्द से स्वयं को प्रकट करते हैं ।

(गोशालक ने अन्तिम समय में) इस प्रकार सम्प्रेक्षण किया । फिर उसने आजीविक स्थविरों को बुलाया, अनेक प्रकार की शपथों से युक्त करके इस प्रकार कहा–'मैं वास्तव में जिन नहीं हूँ, फिर भी जिनप्रलापी तथा जिन शब्द से स्वयं को प्रकट करता हुआ विचरा । मैं वही मंखलिपुत्र गोशालक एवं श्रमणों का घातक हूँ, यावत् छद्मस्थ अवस्था में ही काल कर जाऊंगा । श्रमण भगवान महावीर स्वामी ही वास्तव में जिन हैं, जिनप्रलापी हैं, यावत् स्वयं को जिन शब्द से प्रकट करते हुए विहार करते हैं । अतः हे देवानुप्रियो ! मुझे कालधर्म को प्राप्त जानकर मेरे बाएं पैर को मूंज की रस्सी से बाँधना और तीन बार मेरे मुँह में थूकना । तदनन्तर शृंगाटक यावत् राजमार्गों में इधर-उधर घसीटते हुए उच्च स्वर से उद्घोषणा करते हुए इस प्रकार कहना–'देवानुप्रियो ! मंखलिपुत्र गोशालक 'जिन' नहीं है, किन्तु वह जिनप्रलापी यावत् जिन शब्द से स्वयं को प्रकाशित करता हुआ विचरा है । यावत् श्रमण भगवान महावीर ही वास्तव में जिन हैं, जिनप्रलापी हैं यावत् जिन शब्द का प्रकाश करते हुए विचरते हैं ।' इस प्रकार वहती अऋद्धि पूर्वक मेरे मृत शरीर का नीहरण करना; यों कहकर गोशालक कालधर्म को प्राप्त हुआ ।

सूत्र - ६५४

तदनन्तर उन आजीविक स्थविरों ने मंखलिपुत्र गोशालक को कालधर्म-प्राप्त हुआ जानकर हालाहला कुम्भारिन की दुकान के द्वार बन्द कर दिए । फिर हालाहला कुम्भारिन की दुकान के ठीक बीचों बीच श्रावस्ती नगरी का चित्र बनाया । फिर मंखलिपुत्र गोशालक के बाएं पैर को मूंज की रस्सी से बाँधा । तीन बार उसके मुख में थूका । फिर उक्त चित्रित की हुई श्रावस्ती नगरी के शृंगाटक यावत् राजमार्गों पर इधर-उधर घसीटते हुए मन्द-मन्द स्वर से उद्

घोषणा करते हुए यावत् पूर्ववत् कथन करना । इस प्रकार शपथ से मुक्त हुए । इसके पश्चात् मंखलिपुत्र गोशालक के प्रति पूजा-सत्कार (की भावना) को स्थिरीकरण करने के लिए मंखलिपुत्र गोशालक के बाएं पैर में बंधी मूंज की रस्सी खोल दी और हालाहला कुम्भारिन की दुकान के द्वार भी खोल दिए । फिर मंखलिपुत्र गोशालक के मृत शरीर को सुगन्धित गन्धोदक से नहलाया, इत्यादि पूर्वोक्त वर्णनानुसार यावत् महान् ऋद्धि-सत्कार-समुदाय के साथ मंखलिपुत्र गोशालक के मृत शरीर का निष्क्रमण किया ।

सूत्र - ६५५

तदनन्तर किसी दिन भगवान महावीर श्रावस्ती नगरी के कोष्ठक उद्यान से नीकले और उससे बाहर अन्य जनपदों में विचरण करने लगे । उस काल उस समय मेंढिकग्राम नगर था । उसके बाहर उत्तरपूर्व दिशा में शालकोष्ठक उद्यान था । यावत् पृथ्वी-शिलापट्टक था, उस शालकोष्ठक उद्यान के निकट एक महान् मालुकाकच्छ था वह श्याम, श्यामप्रभावाला, यावत् महामेघ मान था, पत्रित, पुष्पित, फलित और हरियाली से अत्यन्त लहलहाता हुआ, वनश्री से अतीव शोभायमान रहता था । उस मेंढिकग्राम नगरमें रेवती गाथापत्नी रहती थी । वह आढ्य यावत् अपराभूत थी ।

किसी दिन श्रमण भगवान महावीर स्वामी क्रमशः विचरण करते हुए मेंढिकग्राम नगर के बाहर, जहाँ शालकोष्ठक उद्यान था, वहाँ पधारे; यावत् परीषद् वन्दना करके लौट गई । उस समय श्रमण भगवान महावीर के शरीर में महापीड़ाकारी व्याधि उत्पन्न हुई, जो उज्ज्वल यावत् दुरधिसह्य थी । उसने पित्तज्वर से सारे शरीर को व्याप्त कर लिया था, और शरीर में अत्यन्त दाह होने लगी । तथा उन्हें रक्त-युक्त दस्तें भी लगने लगीं । भगवान के शरीर की ऐसी स्थिति जानकर चारों वर्ण के लोग इस प्रकार कहने लगे-श्रमण भगवान महावीर मंखलिपुत्र गोशालक की तपोजन्य तेजोलेश्या से पराभूत होकर पित्तज्वर एवं दाह से पीड़ित होकर छह मास के अन्दर छद्मस्थ-अवस्था में ही मृत्यु प्राप्त करेंगे ।

उस काल और उस समय में श्रमण भगवान महावीर के एक अन्तेवासी सिंह नामक अनगार थे, जो प्रकृति से भद्र यावत् विनीत थे । वे मालुकाकच्छ के निकट निरन्तर छठ-छठ तपश्चरण के साथ अपनी दोनों भुजाएं ऊपर उठाकर यावत् आतापना लेते थे । उस समय की बात है, जब सिंह अनगार ध्यानान्तरिका में प्रवृत्त हो रहे थे; तभी उन्हें इस प्रकार का आत्मगत यावत् चिन्तन उत्पन्न हुआ-मेरे धर्माचार्य धर्मोपदेशक श्रमण भगवान महावीर के शरीर में विपुल रोगांतक प्रकट हुआ, जो अत्यन्त दाहजनक है, इत्यादि । तब अन्यतीर्थिक कहेंगे-'वे छद्मस्थ अवस्था में ही कालधर्म को प्राप्त हो गए ।' इस प्रकार के इस महामानसिक मनोगत दुःख से पीड़ित बने हुए सिंह अनगार आतापनाभूमि से नीचे ऊतरे । फिर वे मालुकाकच्छ में आए और जोर-जोर से रोने लगे । (उस समय) श्रमण भगवान महावीर ने कहा-'हे आर्यो ! आज मेरा अन्तेवासी प्रकृतिभद्र यावत् विनीत सिंह अनगार, इत्यादि सब वर्णन पूर्ववत् कहना; यावत् अत्यन्त जोर-जोर से रो रहा है ।' इसलिए, हे आर्यो ! तुम जाओ और सिंह अनगार को यहाँ बुला लाओ

श्रमण भगवान महावीर ने जब उन श्रमण-निर्ग्रन्थों से इस प्रकार कहा, तो उन्होंने श्रमण भगवान महावीर को वन्दन-नमस्कार किया । फिर भगवान् महावीर के पास से मालकोष्ठक उद्यान से नीकलकर, वे मालुकाकच्छ वन में, जहाँ सिंह अनगार था, वहाँ आए और सिंह अनगार से कहा-'हे सिंह ! धर्माचार्य तुम्हें बुलाते हैं ।' तब सिंह अनगार उन श्रमण-निर्ग्रन्थों के साथ जहाँ श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे, वहाँ आए और श्रमण भगवान महावीर को तीन बार दाहिनी ओर से प्रदक्षिणा करके यावत् पर्युपासना करने लगे । श्रमण भगवान महावीर ने कहा-'हे सिंह ! ध्यानान्तरिका में प्रवृत्त होते हुए तुम्हें इस प्रकार की चिन्ता उत्पन्न हुई यावत् तुम फूट-फूट कर रोने लगे, तो हे सिंह ! क्या यह बात सत्य है ?' 'हाँ, भगवन् ! सत्य है ।' हे सिंह ! मंखलिपुत्र गोशालक के तपतेज द्वारा पराभूत होकर मैं छह मास के अन्दर, यावत् काल नहीं करूँगा । मैं साढ़े पन्द्रह वर्ष तक गन्धहस्ती के समान जिन रूप में विचरूँगा । हे सिंह! तुम मेंढिकग्राम नगर में रेवती गाथापत्नी के घर जाओ और वहाँ रेवती गाथापत्नी ने मेरे लिए कोहले के दो फल संस्कारित करके तैयार किए हैं, उनसे मुझे प्रयोजन नहीं है, किन्तु उसके यहाँ मार्जार नामक वायु को शान्त करने के लिए जो बिजौरापाक है, उसे ले आओ । उसीसे मुझे प्रयोजन है ।

श्रमण भगवान महावीर से आदेश पाकर सिंह अनगार हर्षित सन्तुष्ट यावत् हृदय में प्रफुल्लित हुए और श्रमण भगवान महावीर को वन्दन-नमस्कार किया, फिर त्वरा, चपलता और उतावली से रहित होकर मुखवस्त्रिका का प्रतिलेखन किया । गौतमस्वामी की तरह भगवान महावीर स्वामी के पास आए, वन्दन-नमस्कार करके शाल-कोष्ठक उद्यान से नीकले । फिर यावत् मेंढिकग्राम नगर के मध्य भाग में होकर रेवती गाथापत्नी के घर में प्रवेश किया तदनन्तर रेवती गाथापत्नी ने सिंह अनगार को ज्यों ही आते देखा, त्यों ही हर्षित एवं सन्तुष्ट होकर शीघ्र अपने आसन से उठी । सिंह अनगार के समक्ष सात-आठ कदम गई और तीन बार दाहिनी ओर से प्रदक्षिणा करके वन्दन-नमस्कार कर बोली-'देवानुप्रिय ! कहिए, किस प्रयोजन से आपका पधारना हुआ ?' तब सिंह अनगार ने रेवती गाथापत्नी से कहा-हे देवानुप्रिये ! श्रमण भगवान महावीर के लिए तुमने जो कोहले के दो फल संस्कारित करके तैयार किए हैं, उनसे प्रयोजन नहीं है, किन्तु मार्जार नामक वायु को शान्त करने वाला बिजौरापाक, जो कल का बनाया हुआ है, वह मुझे दो, उसी से प्रयोजन है ।' इस पर रेवती गाथापत्नी ने सिंह अनगार से कहा-हे सिंह अनगार ! ऐसे कौन ज्ञानी अथवा तपस्वी हैं, जिन्होंने मेरे अन्तर की यह रहस्यमय बात जान ली और आप से कह दी, जिससे की आप यह जानते हैं ? सिंह अनगार ने (कहा-) यावत्-'भगवान के कहने से मैं जानता हूँ ।'

तब सिंह अनगार से यह बात सूनकर एवं अवधारण करके वह रेवती गाथापत्नी हर्षित एवं सन्तुष्ट हुई । रसोईघर गई और बर्तन को लेकर सिंह अनगार के पास आई और सारा पाक सम्यक् प्रकार से डाल दिया । रेवती गाथापत्नी ने उस द्रव्यशुद्धि, दाता की शुद्धि एवं पात्र की शुद्धि से युक्त, यावत् प्रशस्त भावों से दिए गए दान से सिंह अनगार को प्रतिलाभित करने से देवायु का बन्ध किया यावत्-'रेवती गाथापत्नी ने जन्म और जीवन का सुफल प्राप्त किया, रेवती गाथापत्नी ने जन्म और जीवन सफल कर लिया ।' इसक पश्चात् वे सिंह अनगार, रेवती गाथापत्नी के घर से नीकले और मेंढिकग्राम नगर के मध्य में से होते हुए भगवान के पास पहुँचे और गौतम स्वामी के समान यावत् आहार-पानी दिखाया । श्रमण भगवान महावीर स्वामी के हाथ में सम्यक् प्रकार से रख (दे) दिया।

तब भगवान महावीरने अमूर्च्छित यावत् लालसारहित बिलमें सर्प-प्रवेश समान उस आहार को शरीर रूपी कोठेमें डाल दिया । आहार करने के बाद महापीड़ाकारी रोगांतक शीघ्र शान्त हो गया। वे हृष्ट-पुष्ट, रोगरहित, शरीर से बलिष्ठ हो गए । इससे सभी श्रमण तुष्ट हुए, श्रमणियाँ तुष्ट हुईं, श्रावक तुष्ट हुए, श्राविकाएं तुष्ट हुईं, देव तुष्ट हुए, देवियाँ तुष्ट हुईं, देव-मनुष्य-असुरों सहित समग्र लोक तुष्ट एवं हर्षित हो गया । (कहने लगे-) 'श्रमण भगवान महावीर हृष्ट हुए

सूत्र - ६५६

गौतम स्वामी ने श्रमण भगवान महावीर स्वामी को वन्दन-नमस्कार करके पूछा-'भगवन् ! देवानुप्रिय का अन्तेवासी पूर्वदेश में उत्पन्न सर्वानुभूति नामक अनगार, जो कि प्रकृति से भद्र यावत् विनीत था, और जिसे मंखलिपुत्र गोशालक ने अपने तप-तेज से भस्म कर दिया था, वह मरकर कहाँ गया, कहाँ उत्पन्न हुआ ? हे गौतम! वह ऊपर चन्द्र और सूर्य का यावत् ब्रह्मलोक, लान्तक और महाशुक्र कल्प का अतिक्रमण कर सहस्रारकल्प में देवरूप में उत्पन्न हुआ है । वहाँ सर्वानुभूति देव की स्थिति अठारह सागरोपम की है । वह सर्वानुभूति देव उस देवलोक से आयुष्यक्षय, भवक्षय और स्थितिक्षय होने पर यावत् महाविदेह वर्ष में सिद्ध होगा यावत् सर्व दुःखों का अन्त करेगा ।

भगवन् ! आप देवानुप्रिय का अन्तेवासी कौशलजनपदोत्पन्न सुनक्षत्र नामक अनगार, जो प्रकृति से भद्र यावत् विनीत था, वह मंखलिपुत्र गोशालक द्वारा अपने तप-तेज से परितापित किये जाने पर काल के अवसर पर काल करके कहाँ गया ? कहाँ उत्पन्न हुआ ? गौतम ! वह ऊपर चन्द्र और सूर्य को यावत् आनत-प्राणत और आरण - कल्प का अतिक्रमण करके वह अच्युतकल्प में देवरूप में उत्पन्न हुआ है । वहाँ सुनक्षत्र देव की स्थिति बाईस सागरोपम की है । शेष सभी वर्णन सर्वानुभूति अनगार के समान, यावत्-सभी दुःखों का अन्त करेगा ।

सूत्र - ६५७

भगवन् ! देवानुप्रिय का अन्तेवासी कुशिष्य गोशालक मंखलिपुत्र काल के अवसर में काल करके कहाँ गया, कहाँ उत्पन्न हुआ ? हे गौतम ! वह ऊंचे चन्द्र और सूर्य का यावत् उल्लंघन करके अच्युतकल्प में देवरूप में उत्पन्न हुआ

है । वहाँ गोशालक की स्थिति भी बाईस सागरोपम की है ।

भगवन् ! वह गोशालक देव उस देवलोक से आयुष्य, भव और स्थिति का क्षय होने पर, देवलोक से च्यव कर यावत् कहाँ उत्पन्न होगा ? गौतम ! इसी जम्बूद्वीप के भारतवर्ष में विन्ध्यपर्वत के पादमूल में, पुण्ड्र जनपद के शतद्वार नामक नगर में सन्मूर्ति नाम के राजा की भद्रा-भार्या की कुक्षि में पुत्ररूप से उत्पन्न होगा । वह वहाँ नौ महीने और साढ़े सात रात्रिदिवस यावत् भलीभाँति व्यतीत होने पर यावत् सुन्दर बालक के रूप में जन्म लेगा । जिस रात्रि में उस बालक का जन्म होगा, उस रात्रि में शतद्वार नगर के भीतर और बाहर, अनेक भार-प्रमाण और अनेक कुम्भप्रमाण पद्मों एवं रत्नों की वर्षा होगी । तब उस बालक के माता-पिता ग्यारह दिन बीत जाने पर बारहवे दिन उस बालक का गुणयुक्त एवं गुणनिष्पन्न नामकरण करेंगे-क्योंकि हमारे इस बालक का जब जन्म हुआ, तब पद्मों और रत्नों की वर्षा हुई थी, इसलिए हमारे इस बालक का नाम-'महापद्म' हो । तत्पश्चात् उस महापद्म बालक के माता-पिता उसे कुछ अधिक आठ वर्ष का जानकर शुभ तिथि, करण, दिवस, नक्षत्र और मुहूर्त्त में बहुत बड़े राज्याभिषेक से अभिषिक्त करेंगे । इस प्रकार वह वहाँ का राजा बन जाएगा । -वह महाहिमवान् आदि पर्वत के समान महान एवं बलशाली होगा, यावत् वह (राज्यभोग करता हुआ) विचरेगा । किसी समय दो महर्द्धिक यावत् महासौख्यसम्पन्न देव उस महापद्म राजा का सेनापतित्व करेंगे । वे दो देव इस प्रकार हैं-पूर्णभद्र और माणिभद्र । यह देखकर शतद्वार नगर के बहुत-से राजेश्वर, तलवर, राजा, युवराज यावत् सार्थवाह आदि परस्पर एक दूसरे को बुलायेंगे और कहेंगे-देवानुप्रियो ! हमारे महापद्म राजा के महर्द्धिक यावत् महासौख्यशाली दो देव सेनाकर्म करते हैं। इसलिए देवानुप्रियो ! हमारे महापद्म राजा का दूसरा नाम देवसेन हो ।

तदनन्तर किसी दिन उस देवसेन राजा के शंखतल के समान निर्मल एवं श्वेत चार दाँतों वाला हस्तिरत्न समुत्पन्न होगा । तब वह देवसेन राजा उस शंखतल के समान श्वेत एवं निर्मल चार दाँत वाले हस्तिरत्न पर आरूढ़ होकर शतद्वार नगर के मध्य में होकर बार-बार बाहर जाएगा और आएगा । यह देखकर बहुत-से राजेश्वर यावत् सार्थवाह प्रभृति परस्पर एक दूसरे को बुलाएंगे और फिर इस प्रकार कहेंगे-'देवानुप्रियो ! हमारे देवसेन राजा के यहाँ शंखतल के समान श्वेत, निर्मल एवं चार दाँतों वाला हस्तिरत्न समुत्पन्न हुआ है, अतः हे देवानुप्रियो ! हमारे देवसेन राजा का तीसरा नाम 'विमलवाहन' भी हो ।' किसी दिन विमलवाहन राजा श्रमण-निर्ग्रन्थों के प्रति मिथ्या-भिमान को अपना लेगा । वह कईं श्रमण निर्ग्रन्थों के प्रति आक्रोश करेगा, किन्हीं का उपहास करेगा, कतिपय साधुओं को एक दूसरे से पृथक्-पृथक् कर देगा, कईयों की भर्त्सना करेगा, बांधेगा, निरोध करेगा, अंगच्छेदन करेगा, मारेगा, उपद्रव करेगा, श्रमणों के वस्त्र, पात्र, कम्बल और पादप्रोंछन को छिन्नभिन्न कर देगा, नष्ट कर देगा, चीर-फाड़ देगा या अपहरण कर लेगा । आहार-पानी का विच्छेद करेगा और कईं श्रमणों को नगर और देश से निर्वासित करेगा । शतद्वारनगर के बहुत-से राजा, ऐश्वर्यशाली यावत् सार्थवाह आदि परस्पर यावत् कहने लगेंगे-देवानुप्रियो ! विमलवाहन राजा ने श्रमण निर्ग्रन्थों के प्रति अनार्यपन अपना लिया है, यावत् कितने ही श्रमणों को इसने देश से निर्वासित कर दिया है, इत्यादि । अतः देवानुप्रियो ! यह हमारे लिए श्रेयस्कर नहीं है । यह न विमल-वाहन राजा के लिए श्रेयस्कर है और न राज्य, राष्ट्र, बल, वाहन, पुर अन्तःपुर अथवा जनपद के लिए श्रेयस्कर है कि विमलवाहन राजा श्रमण-निर्ग्रन्थों के प्रति अनार्यत्व को अंगीकार करे । अतः देवानुप्रियो ! हमारे लिए यह उचित है कि हम विमलवाहन राजा को इस विषय में विनयपूर्वक निवेदन करें । इस प्रकार वे विमलवाहन राजा के पास आएंगे । करबद्ध होकर विमलवाहन राजा को जय-विजय शब्दों से बधाई देंगे । फिर कहेंगे-हे देवानुप्रिय ! श्रमण-निर्ग्रन्थों के प्रति आपने अनार्यत्व अपनाया है; कईयों पर आप आक्रोश करते हैं, यावत् कईं श्रमणों को आप देश-निर्वासित करते हैं । अतः हे देवानुप्रिय ! यह आपके लिए श्रेयस्कर नहीं है, न हमारे लिए यह श्रेयस्कर है यावत् आप देवानुप्रिय श्रमण-निर्ग्रन्थों के प्रति अनार्यत्व स्वीकार करें । अतः हे देवानुप्रिय ! आप इस अकार्य को करने से रुकें । तदनन्तर इस प्रकार जब वे राजेश्वर यावत् सार्थवाह आदि विनयपूर्वक राजा विमलवाहन से बिनती करेंगे, तब वह राजा-धर्म (कुछ) नहीं, तप निरर्थक है, इस प्रकार की बुद्धि होते हुए भी मिथ्या-विनय बताकर उनकी इस बिनती को मान लेगा । उस

शतद्वारनगर के बाहर उत्तरपूर्व दिशा में सुभूमिभाग नाम का उद्यान होगा, जो सब ऋतुओं में फल-पुष्पों से समृद्ध होगा, इत्यादि वर्णन पूर्ववत् ।

उस काल उस समय में विमल नामक तीर्थंकर के प्रपौत्र-शिष्य 'सुमंगल' होंगे । उनका वर्णन धर्मघोष अनगार के समान, यावत् संक्षिप्त-विपुल तेजोलेश्या वाले, तीन ज्ञानों से युक्त वह सुमंगल नामक अनगार, सुभूमि-भाग उद्यान से न अति दूर और न अति निकट निरन्तर छठ-छठ तप के साथ यावत् आतापना लेते हुए विचरेंगे । वह विमलवाहन राजा किसी दिन रथचर्या करने के लिए नीकलेगा । जब सुभूमिभाग उद्यान से थोड़ी दूर रथचर्या करता हुआ वह विमलवाहन राजा, निरन्तर छठ-छठ तप के साथ आतापना लेते हुए सुमंगल अनगार को देखेगा; तब उन्हें देखते ही वह एकदम क्रुद्ध होकर यावत् मिसमिसायमान होता हुआ रथ के अग्रभाग से सुमंगल अनगार को टक्कर मारकर नीचे गिरा देगा । विमलवाहन राजा द्वारा रथ के अग्रभाग से टक्कर मारकर सुमंगल अनगार को नीचे गिरा देने पर वह धीरे-धीरे उठेंगे और दूसरी बार फिर बाहें ऊंची करके यावत् आतापना लेते हुए विचरेंगे ।

तब वह विमलवाहन राजा फिर दूसरी बार रथ के अग्रभाग से टक्कर मारकर नीचे गिरा देगा, अतः सुमंगल अनगार फिर दूसरी बार शनैः शनैः उठेंगे, अवधिज्ञान का उपयोग लगाकर विमलवाहनराजा के अतीतकाल को देखेंगे फिर वह कहेंगे–'तुम वास्तव में विमलवाहन राजा नहीं हो, तुम देवसेन राजा भी नहीं हो, और न ही तुम महापद्म राजा हो; किन्तु तुम इससे पूर्व तीसरे भव में श्रमणों के घातक गोशालक नामक मंखलिपुत्र थे, यावत् तुम छद्मस्थ अवस्था में ही काल कर गए थे । उस समय समर्थ होते हुए भी सर्वानुभूति अनगार ने तुम्हारे अपराध को सम्यक् प्रकार से सहन कर लिया था, क्षमा कर दिया था, तितिक्षा की थी और उसे अध्यासित किया था । इसी प्रकार सुनक्षत्र अनगार ने भी समर्थ होते हुए यावत् अध्यासित किया था । उस समय श्रमण भगवान महावीर ने समर्थ होते हुए भी यावत् अध्यासित कर लिया था । किन्तु मैं इस प्रकार सहन यावत् अध्यासित नहीं करूँगा । मैं तुम्हें अपने तप-तेज से घोड़े, रथ और सारथि सहित एक ही प्रहार में कूटाघात के समान राख का ढेर कर दूँगा । जब सुमंगल अनगार विमलवाहन राजा से ऐसा कहेंगे, तब वह एकदम कुपित यावत् क्रोध से आगबबूला हो उठेगा और फिर तीसरी बार भी रथ के सिरे से टक्कर मारकर सुमंगल अनगार को नीचे गिरा देगा । तब सुमंगल अनगार अतीव क्रुद्ध यावत् कोपावेश से मिसमिसाहट करते हुए आतापनाभूमि से नीचे ऊतरेंगे और तैजस-समुद्घात करके सात-आठ कदम पीछे हटेंगे, फिर विमलवाहन राजा को अपने तप-तेज से घोड़े, रथ और सारथि सहित एक ही प्रहार से यावत् राख का ढेर कर देंगे ।

भगवन् ! सुमंगल अनगार, अश्व, रथ और सारथि सहित (राजा विमलवाहन को) भस्म का ढेर करके, स्वयं काल करके कहाँ जाएंगे, कहाँ उत्पन्न होंगे ? गौतम ! सुमंगल अनगार बहुत-से उपवास, बेला, तेला, चौला, पंचौला यावत् विचित्र प्रकार के तपश्चरणों से अपनी आत्मा को भावित करते हुए बहुत वर्षों तक श्रामण्य-पर्याय का पालन करेंगे । फिर एक मास की संलेखना से आठ भक्त अनशन का यावत् छेदन करेंगे और आलोचना एवं प्रतिक्रमण करके समाधिप्राप्त होकर काल के अवसर में काल करेंगे । फिर वे ऊपर चन्द्र, सूर्य, यावत् ग्रैवेयक विमानावासों का अतिक्रमण करके सर्वार्थसिद्ध महाविमान में देवरूप से उत्पन्न होंगे । वहाँ सुमंगल देव की अजघन्यानुत्कृष्ट तैंतीस सागरोपम की स्थिति होगी । भगवन् ! वह सुमंगल देव उस देवलोक से च्यवकर कहाँ जाएगा, कहाँ उत्पन्न होगा ? गौतम ! वह यावत् महाविदेह क्षेत्र में जन्म लेकर, यावत् सर्व दुःखों का अन्त करेगा ।

सूत्र - ६५८

भगवन् ! सुमंगल अनगार द्वारा अश्व, रथ और सारथि-सहित भस्म किया हुआ विमलवाहन राजा कहाँ उत्पन्न होगा ? गौतम ! वह अधःसप्तम पृथ्वी में, उत्कृष्ट काल की स्थिति वाले नरकों में नैरयिकरूप से उत्पन्न होगा। वहाँ से यावत् उद्वर्त्त कर मत्स्यों में उत्पन्न होगा । वहाँ भी शस्त्र के द्वारा वध होने पर दाहज्वर की पीड़ा से काल करके दूसरी बार फिर अधःसप्तम पृथ्वी में उत्कृष्ट काल की स्थिति वाले नारकावासों में नैरयिकरूप में उत्पन्न होगा । वहाँ से उद्वर्त्त कर फिर सीधा दूसरी बार मत्स्यों में उत्पन्न होगा । वहाँ भी शस्त्र से वध होने पर काल कर छठी तमःप्रभा पृथ्वी में उत्कृष्टकाल की स्थिति वाले नारकावासों में नैरयिकरूप से उत्पन्न होगा ।

वहाँ से वह यावत् नीकलकर स्त्रीरूप में उत्पन्न होगा । वहाँ भी शस्त्राघात से मरकर दाहज्वर की वेदना से यावत् दूसरी बार पुनः छठी तमःप्रभा पृथ्वी में उत्कृष्ट काल की स्थिति वाले नारकावासों में नैरयिक होगा । पुनः दूसरी बार स्त्रीरूप में उत्पन्न होगा । वहाँ भी शस्त्र से वध होने पर यावत् काल करके पंचम धूमप्रभा पृथ्वी में उत्कृष्ट काल की स्थिति वाला नैरयिक होगा । मरकर उरःपरिसर्पों में उत्पन्न होगा । वहाँ भी शस्त्राघात से यावत् मरकर दूसरी बार पंचम नरकपृथ्वी में, यावत् पुनः उरःपरिसर्पों में उत्पन्न होगा । वहाँ से यावत् काल करके चौथी पंकप्रभा पृथ्वी में उत्कृष्ट काल की स्थिति वाले नारकावासों में नैरयिक रूप में उत्पन्न होगा, यावत् वहाँ से नीकलकर सिंहों में उत्पन्न होगा । वहाँ भी शस्त्र द्वारा मारा जाकर यावत् दूसरी बार चौथे नरक में उत्पन्न होगा । दूसरी बार सिंहों में उत्पन्न होगा । काल करके तीसरी बालुकाप्रभा नरकपृथ्वी में उत्कृष्ट काल की स्थिति वाले नैरयिकों में उत्पन्न होगा । वहाँ से नीकलकर पक्षियों में उत्पन्न होगा । वहाँ से यावत् शस्त्राघात से मरकर फिर दूसरी बार तीसरी बालुकाप्रभा पृथ्वी में उत्पन्न होगा । वहाँ से यावत् शस्त्राघात से मरकर दूसरी बार पक्षियों में उत्पन्न होगा । वहाँ से यावत् काल करके दूसरी शर्कराप्रभा पृथ्वी में उत्पन्न होगा । वहाँ से यावत् नीकलकर सरीसृपों में उत्पन्न होगा । वहाँ भी शस्त्र से मारा जाकर यावत् दूसरी बार भी शर्कराप्रभा पृथ्वी में उत्पन्न होगा । वहाँ से यावत् काल करके दूसरी बार पुनः सरीसृपों में उत्पन्न होगा । वहाँ से यावत् काल करके इस रत्नप्रभा पृथ्वी की उत्कृष्ट काल की स्थिति वाले नरकावासों में नैरयिक रूप में उत्पन्न होगा । वहाँ से यावत् नीकलकर संज्ञीजीवों में उत्पन्न होगा । वहाँ भी शस्त्र द्वारा मारा जाकर यावत् काल करके असंज्ञीजीवों में उत्पन्न होगा । वहाँ भी शस्त्रा-घात से यावत् काल करके दूसरी बार इसी रत्नप्रभापृथ्वी में पल्योपम के असंख्यातवे भाग की स्थिति वाले नरका-वासों में नैरयिकरूप में उत्पन्न होगा ।

वह वहाँ से नीकलकर जो ये खेचरजीवों के भेद हैं, जैसे कि-चर्मपक्षी, लोमपक्षी, समुद्गकपक्षी, विततपक्षी, उनमें अनेक लाख बार मर-मर कर बार-बार वहीं उत्पन्न होता रहेगा । सर्वत्र शस्त्र से मारा जाकर दाह-वेदना से काल के अवसरमें काल करके जो ये भूजपरिसर्प के भेद हैं, जैसे कि-गोह, नकुल इत्यादि यावत् जाहक आदि चौपाये जीवों में अनेक लाख बार मरकर बार-बार उन्हींमें उत्पन्न होगा । शेष सब खेचरवत् जानना, यावत् काल करके जो ये उरःपरिसर्प के भेद होते हैं, जैसे कि-सर्प, अजगर, आशालिका, महोरग आदि, इनमें अनेक लाख बार मर-मरकर बार-बार इन्हीं में उत्पन्न होगा । यावत् वहाँ से काल करके जो ये चतुष्पद जीवों के भेद हैं, जैसे कि एक खुरवाला, दो खुर वाला गण्डीपद, सनखपद, इनमें अनेक लाख बार उत्पन्न होगा । वहाँ से यावत् काल करके जो ये जलचरजीव-भेद हैं, जैसे कि-मत्स्य, कच्छप यावत् सुंसुमार इत्यादि, उनमें लाख बार उत्पन्न होगा । फिर वहाँ से यावत् काल करके जो ये चतुरिन्द्रिय जीवों के भेद हैं, जैसे कि-अन्धिक, पौत्रिक इत्यादि, यावत् गोमय-कीटों में अनेक लाख बार उत्पन्न होगा । फिर वहाँ से यावत् काल करके जो ये त्रीन्द्रियजीवों के भेद हैं, जैसे कि-उपचित यावत् हस्तिशौण्ड आदि, इनमें अनेक लाख बार मरकर पुनःपुनः उत्पन्न होगा । वहाँ से यावत् काल करके जो ये द्वीन्द्रिय जीवों के भेद हैं, जैसे कि-पुलाकृमि यावत् समुद्दलिक्षा इत्यादि, इनमें अनेक लाख बार मर मरकर, पुनः पुनः उन्हीं में उत्पन्न होगा ।

फिर वहाँ से यावत् काल करके जो ये वनस्पति के भेद हैं, जैसे कि-वृक्ष, गुच्छ यावत् कुहुना इत्यादि; इनमें अनेक लाख बार मर मरकर यावत् पुनः पुनः इन्हीं में उत्पन्न होगा । विशेषतया कटुरस वाले वृक्षों और बेलों में उत्पन्न होगा । सभी स्थानों में शस्त्राघात से वध होगा । फिर वहाँ से यावत् काल करके जो ये वायुकायिक जीवों के भेद हैं, जैसे कि-पूर्ववायु, यावत् शुद्धवायु इत्यादि इनमें अनेक लाख बार मर मरकर पुनः पुनः उत्पन्न होगा । फिर वहाँ से काल करके जो ये तेजस्कायिक जीवों के भेद हैं, जैसे कि-अंगार यावत् सूर्यकान्त मणिनिःसृत अग्नि इत्यादि, उनमें अनेक लाख बार मर मरकर पुनः पुनः उत्पन्न होगा । फिर वहाँ से यावत् काल करके जो ये अप्कायिक जीवों के भेद हैं, यथा-ओस का पानी, यावत् खाई का पानी इत्यादि; उनमें अनेक लाख बार-उत्पन्न होगा । सभी स्थानों में शस्त्र द्वारा घात होगा । वहाँ से यावत् काल करके जो ये पृथ्वीकायिक जीवों के भेद हैं, जैसे कि-पृथ्वी, शर्करा यावत् सूर्यकान्तमणि; उनमें अनेक लाख बार उत्पन्न होगा, विशेषतया खर-बादर पृथ्वीकाकाय में उत्पन्न होगा । सर्वत्र शस्त्र से वध होगा । वहाँ से यावत् काल करके राजगृह नगर के बाहर वेश्यारूप में उत्पन्न होगा। वहाँ शस्त्र से वध होने से

यावत् काल करके दूसरी बार राजगृह नगर के भीतर (विशिष्ट) वेश्या के रूप में उत्पन्न होगा ।

सूत्र - ६५९

वहाँ भी शस्त्र से वध होने पर यावत् काल करके इसी जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में विन्ध्य-पर्वत के पादमूल में बेभेल सन्निवेश में ब्राह्मणकुल में बालिका के रूप में उत्पन्न होगा । वह कन्या जब बाल्यावस्था का त्याग करके यौवनवय को प्राप्त होगी, तब उसके माता-पिता उचित शुल्क और उचित विनय द्वारा पति को भार्या के रूप में अर्पण करेंगे । वह उसकी भार्या होगी । वह इष्ट, कान्त, यावत् अनुमत, बहुमूल्य सामान के पिटारे के समान, तेल की कुप्पी के समान अत्यन्त सुरक्षित, वस्त्र की पेटी के समान सुसंगृहीत, रत्न के पिटारे के समान सुरक्षित तथा शीत, उष्ण यावत् परीषह उपसर्ग उसे स्पर्श न करें, इस दृष्टि से अत्यन्त संगोपित होगी । वह ब्राह्मण-पुत्री गर्भवती होगी और एक दिन किसी समय अपने ससुराल से पीहर ले जाई जाती हुई मार्ग में दावाग्नि की ज्वाला से पीड़ित होकर काल के अवसर में काल करके दक्षिण दिशा के अग्निकुमार देवों में देवरूप में उत्पन्न होगी ।

वहाँ से च्यवकर वह मनुष्य शरीर को प्राप्त करेगा । फिर वह केवलबोधि (सम्यक्त्व) प्राप्त करेगा । तत्पश्चात् मुण्डित होकर अगारवास का परित्याग करके अनगार धर्म को प्राप्त करेगा । किन्तु वहाँ श्रामण्य की विराधना करके काल के अवसर में काल करके दक्षिण दिशा के असुरकुमार देवों में देवरूप से उत्पन्न होगा । वहाँ से च्यवकर वह मनुष्य शरीर प्राप्त करेगा, फिर केवलबोधि आदि पूर्ववत्, यावत् प्रव्रजित होकर चारित्र की विराधना करके काल के समय में काल करके दक्षिणनिकाय के नागकुमार देवों में देवरूप से उत्पन्न होगा । वहाँ से च्यवकर वह मनुष्यशरीर प्राप्त करेगा, इत्यादि पूर्ववत् । दक्षिणनिकाय सुपर्णकुमार देवों में उत्पन्न होगा, फिर दक्षिणनिकाय के विद्युत्कुमार देवों में उत्पन्न होगा, इसी प्रकार अग्निकुमार देवों को छोड़कर यावत् के स्तनितकुमार देवों में देवरूप से उत्पन्न होगा ।

वह वहाँ से यावत् नीकलकर मनुष्य शरीर प्राप्त करेगा, यावत् श्रामण्य की विराधना करके ज्योतिष्क देवों में उत्पन्न होगा । वह वहाँ से च्यवकर मनुष्य-शरीर प्राप्त करेगा, फिर केवलबोधि (सम्यक्त्व) प्राप्त करेगा । यावत् चारित्र की विराधना किये बिना काल के अवसरमें काल करके सौधर्मकल्पमें देव रूपमें उत्पन्न होगा । वहाँ से च्यवकर मनुष्य शरीर प्राप्त करेगा, केवलबोधि भी प्राप्त करेगा । वहाँ भी चारित्र की विराधना किये बिना काल कर ईशान देवलोक में देवरूपमें उत्पन्न होगा । वहाँ से च्यवकर मनुष्य-शरीर प्राप्त करेगा, केवलबोधि प्राप्त करेगा । वहाँ भी चारित्र की विराधना किये बिना काल करके सनत्कुमार कल्पमें देवरूपमें उत्पन्न होगा । वहाँ से च्यवकर, सनत्कुमार के देवलोक के समान ब्रह्मलोक, महाशुक्र, आनत, आरण देवलोकोंमें उत्पत्ति के विषय में कहना चाहिए । वहाँ से च्यवकर वह मनुष्य होगा, यावत् चारित्र की विराधना किये बिना काल करके सर्वार्थसिद्ध महाविमान में देव के रूप में उत्पन्न होगा

वहाँ से बिना अन्तर के च्यवकर महाविदेहक्षेत्र में, जो ये कुल हैं, जैसे कि-आढ्य यावत् अपराभूत कुल; तथाप्रकार के कुलों में पुरुष रूप से उत्पन्न होगा । दृढ़प्रतिज्ञ के समान यावत्-उत्तम केवलज्ञान-केवलदर्शन उत्पन्न होगा । तदनन्तर (गोशालक का जीव) दृढ़प्रतिज्ञ केवली अतीत काल को उपयोगपूर्वक देखेंगे । अतीतकाल-निरीक्षण कर वे श्रमण-निर्ग्रन्थों को कहेंगे-हे आर्यो ! मैं आज से चिरकाल पहले गोशालक नामक मंखलिपुत्र था । मैंने श्रमणों की घात की थी । यावत् छद्मस्थ अवस्था में ही कालधर्म को प्राप्त हो गया था । आर्यो ! उसी महापाप-मूलक मैं अनादि-अनन्त और दीर्घमार्ग वाले चारगति रूप संसार-कान्तार में बारबार पर्यटन करता रहा । इसलिए हे आर्यो ! तुम में से कोई भी आचार्य-प्रत्यनीक, उपाध्याय-प्रत्यनीक आचार्य और उपाध्याय के अपयश करने वाले, अवर्णवाद करने वाले और अकीर्ति करनेवाले मत होना, संसाराटवीमें परिभ्रमण मत करना । उस समय दृढ़प्रतिज्ञ केवली से यह बात सूनकर और अवधारण कर वे श्रमणनिग्रन्थ भयभीत होंगे, त्रस्त होंगे, और संसार के भय से उद्विग्न होकर दृढ़प्रतिज्ञ केवली को वन्दन-नमस्कार करेंगे । वे उस स्थान की आलोचना और निन्दना करेंगे यावत् तपश्चरण स्वीकार करेंगे ।

दृढ़प्रतिज्ञ केवली बहुत वर्षों तक केवलज्ञानी-पर्याय का पालन करेंगे, अंत में भक्तप्रत्याख्यान करेंगे यावत् सर्व दुःखों का अन्त करेंगे । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१५ का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

शतक–१६

सूत्र - ६६०

सोलहवें शतक में चौदह उद्देशक हैं । यथा–अधिकरणी, जरा, कर्म, यावतीय, गंगदत्त, स्वप्न, उपयोग, लोक, बलि, अवधि, द्वीप, उदधि, दिशा और स्तनित ।

शतक-१६ – उद्देशक-१

सूत्र - ६६१

उस काल उस समय में राजगृह नगर में यावत् पर्युपासना करते हुए गौतम स्वामी ने इस प्रकार पूछा–भगवन्! क्या अधिकरणीय पर (हथौड़ा मारते समय) वायुकाय उत्पन्न होता है ? हाँ, गौतम ! होता है । भगवन् ! उस (वायुकाय) का स्पर्श होने पर वह मरता है या बिना स्पर्श हुए मर जाता है ? गौतम ! उसका दूसरे पदार्थ के साथ स्पर्श होने पर ही वह मरता है, बिना स्पर्श हुए नहीं मरता। भगवन् ! वह (मृत वायुकाय) शरीरसहित (भवान्तरमें) जाता है या शरीररहित है ? गौतम ! इस विषय में स्कन्दक-प्रकरण के अनुसार, यावत्-शरीर-रहित हो कर नहीं जाता; (तक) जानना चाहिए ।

सूत्र - ६६२

भगवन् ! अंगारकारिकामें अग्निकाय कितने काल तक रहता है ? गौतम ! जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त, उत्कृष्ट तीन रात-दिन तक, वहाँ अन्य वायुकायिक जीव भी उत्पन्न होते हैं; क्योंकि वायुकाय बिना अग्निकाय प्रज्वलित नहीं होता

सूत्र - ६६३

भगवन् ! लोहा तपाने की भट्ठी में तपे हुए लोहे का लोहे की संडासी से ऊंचा-नीचा करने वाले पुरुष को कितनी क्रियाएं लगती हैं ? गौतम ! जब तक वह पुरुष लोहा तपाने की भट्ठी में लोहे की संडासी से लोहे को ऊंचा या नीचा करता है, तब तक वह पुरुष कायिकी से लेकर प्राणातिपातिकी क्रिया तक पाँचों क्रियाओं से स्पृष्ट होता है तथा जिन जीवों के शरीर से लोहा बना है, लोहे की भट्ठी बनी है, संडासी बनी है, अंगारे बने हैं, अंगारे नीकालने की लोहे की छड़ी बनी है और धमण बनी है, वे सभी जीव भी कायिकी से लेकर यावत् प्राणातिपातिकी तक पाँचों क्रियाओं से स्पृष्ट होते हैं ।

भगवन् ! लोहे की भट्ठी में से, लोहे को, लोहे की संडासी से पकड़कर एहरन पर रखते और उठाते हुए पुरुष को कितनी क्रियाएं लगती हैं ? गौतम ! जब तक लोहा तपाने की भट्ठीमें से लोहे को संडासी से पकड़कर यावत् रखता है, तब तक वह पुरुष कायिकी यावत् प्राणातिपातिकी तक पाँचों क्रियाओं से स्पृष्ट होता है । जिन जीवों के शरीर से लोहा बना है, संडासी बनी है, घन बना है, हथौड़ा बना है, एहरन बनी है, एहरन का लकड़ा बना है, गर्म लोहे को ठंड़े करने की उदकद्रोणी बनी है, तथा अधिकरणशाला बनी है, वे जीव भी कायिकी आदि पाँचों क्रियाओं से स्पृष्ट होते हैं

सूत्र - ६६४

भगवन् ! जीव अधिकरणी है या अधिकरण है ? गौतम ! जीव अधिकरणी भी है और अधिकरण भी है । भगवन् ! किस कारण से यह कहा जाता है ? गौतम ! अविरति की अपेक्षा जीव अधिकरणी भी है और अधिकरण भी है । भगवन् ! नैरयिक जीव अधिकरणी हैं या अधिकरण हैं ? गौतम ! वह अधिकरणी भी हैं और अधिकरण भी हैं । (सामान्य) के अनुसार नैरयिक के विषय में भी जानना चाहिए । इसी प्रकार वैमानिक तक जानना ।

भगवन् ! जीव साधिकरणी है या निरधिकरणी है ? गौतम ! जीव साधिकरणी है, निरधिकरणी नहीं है । भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहा है ? गौतम ! अविरति की अपेक्षा जीव साधिकरणी है, निरधिकरणी नहीं है । इसी प्रकार वैमानिकों तक कहना ।

भगवन् ! जीव आत्माधिकरणी है, पराधिकरणी है, या उभयाधिकरणी है ? गौतम ! जीव आत्माधिकरणी भी हैं, पराधिकरणी भी हैं और तदुभयाधिकरणी भी हैं । भगवन् ! ऐसा किस हेतु से कहा गया है ? अविरति की अपेक्षा । इसी प्रकार वैमानिक तक जानना ।

भगवन् ! जीवों का अधिकरण आत्मप्रयोग से होता है, परप्रयोग से निष्पन्न होता है अथवा तदुभवप्रयोग से

होता है ? गौतम ! जीवों का अधिकरण आत्मप्रयोग से भी निष्पन्न होता है, परप्रयोग से भी और तदुभयप्रयोग से भी निष्पन्न होता है । भगवन् ! ऐसा किस कारण से कहा है ? गौतम ! अविरति की अपेक्षा से यावत् तदुभयप्रयोग से भी निष्पन्न होता है । इसलिए हे गौतम ! ऐसा कहा है । इसी प्रकार वैमानिकों तक जानना ।

सूत्र - ६६५

भगवन् ! शरीर कितने प्रकार के कहे गए हैं ? गौतम ! पाँच प्रकार के यथा-औदारिक यावत् कार्मण । भगवन् इन्द्रियाँ कितनी कही गई है ? गौतम ! पाँच, यथा-श्रोत्रेन्द्रिय यावत् स्पर्शेन्द्रिय । भगवन् ! योग कितने प्रकार के कहे गए हैं ? गौतम ! तीन प्रकार के, यथा-मनोयोग, वचनयोग और काययोग ।

भगवन् ! औदारिकशरीर को बांधता हुआ जीव अधिकरणी है या अधिकरण है ? गौतम ! वह अधिकरणी भी है और अधिकरण भी है । भगवन् ! ऐसा क्यों कहा जाता है कि वह अधिकरणी भी है और अधिकरण भी है ? गौतम ! अविरति के कारण वह यावत् अधिकरण भी है । भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीव, औदारिकशरीर को बांधता हुआ अधिकरणी है या अधिकरण है ? गौतम ! पूर्ववत् । इसी प्रकार मनुष्य तक जानना । इसी प्रकार वैक्रियशरीर के विषय में भी जानना । विशेष यह है कि जिन जीवों के शरीर हों, उनके कहना ।

भगवन् ! आहारकशरीर बांधता हुआ जीव अधिकरणी है या अधिकरण है ? गौतम ! वह अधिकरणी भी है और अधिकरण भी है । भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहा है ? गौतम ! प्रमाद की अपेक्षा से । इसी प्रकार मनुष्य के विषय में जानना । तैजसशरीर का कथन औदारिकशरीर के समान जानना । विशेष यह है कि तैजस-शरीर सम्बन्धी वक्तव्य सभी जीवों के विषय में कहना । इसी प्रकार कार्मणशरीर को भी जानना ।

भगवन् ! श्रोत्रेन्द्रिय को बांधता हुआ जीव अधिकरणी है या अधिकरण है ? गौतम ! औदारिकशरीर के वक्तव्य के समान श्रोत्रेन्द्रिय के सम्बन्ध में भी कहना चाहिए । परन्तु जिन जीवों के श्रोत्रेन्द्रिय हो, उनकी अपेक्षा ही यह कथन है । इसी प्रकार चक्षुरिन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, जिह्वेन्द्रिय और स्पर्शेन्द्रिय के विषय में जानना चाहिए । विशेष, जिन जीवों के जितनी इन्द्रियाँ हों, उनके विषय में उसी प्रकार जानना चाहिए ।

भगवन् ! मनोयोग को बांधता हुआ जीव अधिकरणी है या अधिकरण है ? श्रोत्रेन्द्रिय के समान सब मनोयोग के विषय में भी कहना । वचनयोग के विषय में भी इसी प्रकार जानना । विशेष, वचनयोग में एकेन्द्रियों का कथन नहीं करना । इसी प्रकार काययोग के विषय में भी कहना । विशेष यह है कि काययोग सभी जीवों के होता है । वैमानिकों तक इसी प्रकार जानना । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१६ – उद्देशक-२

सूत्र - ६६६

राजगृह नगर में यावत् पूछा-भगवन् ! क्या जीवों के जरा और शोक होता है ? गौतम ! जीवों के जरा भी होती है और शोक भी होता है । भगवन् ! किस कारण से जीवों को जरा भी होती है और शोक भी होता है ? गौतम ! जो जीव शारीरिक वेदना वेदते हैं, उन जीवों को जरा होती है और जो जीव मानसिक वेदना वेदते हैं, उनको शोक होता है इस कारण से हे गौतम ! ऐसा कहा गया है । इसी प्रकार नैरयिकों के भी समझ लेना । इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमारों के विषय में भी जानना ।

भन्ते ! क्या पृथ्वीकायिक जीवों के जरा और शोक होता है ? गौतम ! पृथ्वीकायिक जीवों के जरा होती है, शोक नहीं होता है । भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीवों के जरा होती है, शोक क्यों नहीं होता है ? गौतम ! पृथ्वीकायिक जीव शारीरिक वेदना वेदते हैं, मानसिक वेदना नहीं वेदते; इसी कारण से । इसी प्रकार चतुरिन्द्रिय जीवों तक जानना शेष जीवों का कथन सामान्य जीवों के समान वैमानिकों तक । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

सूत्र - ६६७

उस काल एवं उस समय में शक्र देवेन्द्र देवराज, वज्रपाणि, पुरन्दर यावत् उपभोग करता हुआ विचरता था। वह इस सम्पूर्ण जम्बूद्वीप की ओर अपने विपुल अवधिज्ञान का उपयोग लगा-लगाकर जम्बूद्वीप में श्रमण भगवान

महावीर को देख रहा था । यहाँ तृतीय शतक में कथित ईशानेन्द्र की वक्तव्यता के समान शक्रेन्द्र कहना । विशेषता यह है कि शक्रेन्द्र आभियोगिक देवों को नहीं बुलाता । इसकी पैदल-सेना का अधिपति हरिणैगमेषी देव है, (जो) सुघोषा घंटा (बजाता) है । विमाननिर्माता पालक देव हैं । इसके नीकलने का मार्ग उत्तरदिशा है । अग्नि-कोण में रतिकर पर्वत है । शेष सभी वर्णन उसी प्रकार यावत् शक्रेन्द्र भगवान के निकट उपस्थित हुआ और अपना नाम बतलाकर भगवान की पर्युपासना करने लगा (भगवान ने) धर्मकथा कही; यावत् परीषद् वापिस लौट गई ।

तदनन्तर देवेन्द्र देवराज शक्र श्रमण भगवान महावीर से धर्म श्रवण कर एवं अवधारण करके अत्यन्त हर्षित एवं सन्तुष्ट हुआ । उसने श्रमण भगवान महावीर स्वामी को वन्दना-नमस्कार करके इस प्रकार प्रश्न पूछा-भगवन् ! अवग्रह कितने प्रकार का कहा गया है ? हे शक्र ! पाँच प्रकार का, यथा-देवेन्द्रावग्रह, राजावग्रह, गाथापति अवग्रह, सागारिकावग्रह और साधर्मिकाऽवग्रह । भगवन् ! आजकल जो ये श्रमण निर्ग्रन्थ विचरण करते हैं, उन्हें मैं अवग्रह की अनुज्ञा देता हूँ । यों कहकर श्रमण भगवान महावीर को वन्दन-नमस्कार करके शक्रेन्द्र, उसी दिव्य यान विमान पर चढ़ा और फिर जिस दिशा से आया था, उसी दिशा की ओर लौट गया । भगवन् ! इस प्रकार सम्बोधन करके भगवान गौतम ने श्रमण भगवान महावीर स्वामी को वन्दन-नमस्कार करके इस प्रकार पूछा-भगवन् ! देवेन्द्र देवराज शक्र ने आपसे पूर्वोक्त रूप से अवग्रह सम्बन्धी जो अर्थ कहा, क्या वह सत्य है ? हाँ, गौतम ! वह अर्थ सत्य है ।

सूत्र - ६६८

भगवन् ! क्या देवेन्द्र देवराज शक्र सम्यग्वादी है अथवा मिथ्यावादी है ? गौतम ! वह सम्यग्वादी है, मिथ्या-वादी नहीं है । भगवन् ! देवेन्द्र देवराज शक्र क्या सत्य भाषा बोलता है, मृषा बोलता है, सत्यामृषा भाषा बोलता है, अथवा असत्यामृषा भाषा बोलता है ? गौतम ! वह सत्य भाषा भी बोलता है, यावत् असत्यामृषा भाषा भी बोलता है ।

भगवन् ! देवेन्द्र देवराज शक्र क्या सावद्य भाषा बोलता है या निरवद्य भाषा बोलता है ? गौतम ! वह सावद्य भाषा भी बोलता है और निरवद्य भाषा भी बोलता है । भगवन् ! ऐसा क्यों कहा गया है ? गौतम ! जब देवेन्द्र देवराज शक्र सूक्ष्म काय से मुख ढँके बिना बोलता है, तब वह सावद्य भाषा बोलता है और जब वह मुख को ढँक कर बोलता है, तब वह निरवद्य भाषा बोलता है । इसी कारण से यह कहा जाता है ।

भगवन् ! देवेन्द्र देवराज शक्र भवसिद्धिक हे या अभवसिद्धिक है ? सम्यग्दृष्टि है या मिथ्यादृष्टि है ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! तृतीय शतक के प्रथम मोका उद्देशक में उक्त सनत्कुमार के अनुसार यहाँ भी अचरम नहीं है तक कहना

सूत्र - ६६९

भगवन् ! जीवों के कर्म चेतनकृत होते हैं या अचेतनकृत होते हैं ? गौतम ! जीवों के कर्म चेतनकृत होते हैं, अचेतनकृत नहीं होते हैं । भगवन् ! ऐसा क्यों कहा जाता है ? गौतम ! जीवों के आहार रूप से उपचित जो पुद्गल हैं, शरीररूप से जो संचित पुद्गल हैं और कलेवर रूप से जो उपचित पुद्गल हैं, वे तथा-तथा रूप से परिणत होते हैं, इसलिए हे आयुष्मन् श्रमणों ! कर्म अचेतनकृत नहीं है । वे पुद्गल दुःस्थान रूप से, दुःशय्या रूप से और दुर्निषद्या रूप से तथा-तथा रूप से परिणत होते हैं । इसलिए हे आयुष्मन् श्रमणों ! कर्म अचेतनकृत नहीं है । वे पुद्गल आतंक रूप से परिणत होकर जीव के वध के लिए होते हैं; वे संकल्प रूप से परिणत होकर जीव के वध के लिए होते हैं, वे पुद्गल मरणान्त रूप से परिणत होकर जीव के वध के लिए होते हैं । इसलिए हे आयुष्मन् श्रमणों ! कर्म अचेतनकृत नहीं है । हे गौतम ! इसीलिए कहा जाता है, यावत् कर्म चेतनकृत होते हैं । इसी प्रकार नैरयिकों के कर्म भी चेतनकृत होते हैं । इसी प्रकार वैमानिकों तक के कर्मों के विषय में कहना चाहिए । हे भगवन्! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१६ – उद्देशक-३

सूत्र - ६७०

राजगृह नगर में (गौतमस्वामी ने) यावत् इस प्रकार पूछा-भगवन् ! कर्मप्रकृतियाँ कितनी हैं ? गौतम ! आठ हैं, यथा-ज्ञानावरणीय यावत् अन्तराय । इस प्रकार यावत् वैमानिकों तक कहना चाहिए ।

भगवन् ! ज्ञानावरणीय कर्म को वेदता हुआ जीव कितनी कर्मप्रकृतियों का वेदन करता है ? गौतम ! आठ कर्मप्रकृतियों को वेदता है । यहाँ प्रज्ञापनासूत्र के 'वेद-वेद' नामक पद में कथित समग्र कथन करना चाहिए । वेद-बन्ध, बन्ध-वेद और बन्ध-बन्ध उद्देशक भी, यावत् वैमानिकों तक कहना चाहिए । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

सूत्र - ६७१

किसी समय एक दिन श्रमण भगवान महावीर राजगृहनगर के गुणशीलक नामक उद्यान से नीकले और बाहर के (अन्य) जनपदों में विहार करने लगे । उस काल उस समय में उल्लूकतीर नामका नगर था । (वर्णन) उस उल्लूकतीर नगर के बाहर ईशानकोण में 'एकजम्बुक' उद्यान था । एक बार किसी दिन श्रमण भगवान महावीर स्वामी अनुक्रम से विचरण करते हुए यावत् 'एकजम्बूक' उद्यान में पधारे । यावत् परीषद् लौट गई ।

गौतम स्वामी ने श्रमण भगवान महावीर को वन्दन-नमस्कार किया और पूछा-भगवन् ! निरन्तर छठ-छठ के तपश्चरण के साथ यावत् आतापना लेते हुए भावितात्मा अनगार को दिवस के पूर्वार्द्ध में अपने हाथ, पैर, बांह या उरु को सिकोड़ना या पसारना कल्पनीय नहीं है, किन्तु दिवस के पश्चिमार्द्ध में अपने हाथ, पैर या यावत् उरु को सिकोड़ना या फैलाना कल्पनीय है । इस प्रकार कायोत्सर्गस्थित उस भावितात्मा अनगार की नासिका में अर्श लटक रहा हो, उस अर्श को किसी वैद्य ने देखा और यदि वह वैद्य उस अर्श को काटने के लिए उस ऋषि को भूमि पर लैटाए, फिर उसके अर्श को काटे; तो हे भगवन् ! क्या जो वैद्य अर्श को काटता है, उसे क्रिया लगती है ? तथा जिस (अनगार) का अर्श काटा जा रहा है, उसे एकमात्र धर्मान्तरायिक क्रिया के सिवाय दूसरी क्रिया तो नहीं लगती? हाँ, गौतम ! ऐसा ही है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१६ - उद्देशक-४

सूत्र - ६७२

राजगृह नगर में यावत् पूछा-भगवन् ! अन्नग्लायक श्रमण निर्ग्रन्थ जितने कर्मों की निर्जरा करता है, क्या उतने कर्म नरकों में नैरयिक जीव एक वर्ष में, अनेक वर्षों में अथवा सौ वर्षों में क्षय कर देते हैं ? गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं ।

भगवन् ! चतुर्थ भक्त करने वाले श्रमण-निर्ग्रन्थ जितने कर्मों की निर्जरा करता है, क्या उतने कर्म नरकों से नैरयिक जीव सौ वर्षों में, अनेक सौ वर्षों में या एक हजार वर्षों में खपाते हैं ? गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं । भगवन् ! षष्ठभक्त करने वाला श्रमण निर्ग्रन्थ जितने कर्मों की निर्जरा करता है, क्या उतने कर्म नरकों में नैरयिक जीव एक हजार वर्षों में, अनेक हजार वर्षों में, अथवा एक लाख वर्षों में क्षय कर पाता है ? गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं । भगवन् ! अष्टमभक्त करने वाला श्रमण निर्ग्रन्थ जितने कर्मों की निर्जरा करता है, क्या उतने कर्म नरकों में नैरयिक जीव एक लाख वर्षों में, अनेक लाख वर्षों में या एक करोड़ वर्षों में क्षय कर पाता है ? गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं । भगवन् ! दशमभक्त करने वाला श्रमण निर्ग्रन्थ जितने कर्मों की निर्जरा करता है, क्या उतने कर्म नरकों में नैरयिक जीव, एक करोड़ वर्षों में, अनेक करोड़ वर्षों में या कोटाकोटी वर्षों में क्षय कर पाता है ? गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं । भगवन् ! ऐसा किस कारण से कहा जाता है ? गौतम ! जैसे कोई वृद्ध पुरुष है । वृद्धावस्था के कारण उसका शरीर जर्जरित हो गया है । चमड़ी शिथिल होने से सिकुड़कर सलवटों से व्याप्त है । दाँतों की पंक्ति में बहुत-से दाँत गिर जाने से थोड़े-से दाँत रह गए हैं, जो गर्मी से व्याकुल है, प्यास से पीड़ित है, जो आतुर, भूखा, प्यासा, दुर्बल और क्लान्त है । वह वृद्ध पुरुष एक बड़ी कोशम्बवृक्ष की सूखी, टेढ़ी, मेढ़ी, गाँठ-गठीली, चिकनी, बांकी, निराधार रही हुई गण्डिका पर एक कुण्ठित कुल्हाड़े से जोर-जोर से शब्द करता हुआ प्रहार करे, तो भी वह उस लकड़ी के बड़े-बड़े टुकड़े नहीं कर सकता, इसी प्रकार हे गौतम ! नैरयिक जीवों ने अपने पापकर्म गाढ़ किए हैं, चिकने किए हैं, इत्यादि छठे शतक के अनुसार यावत्-वे महापर्यवसान वाले नहीं होते।

जिस प्रकार कोई पुरुष एहरन पर घन की चोट मारता हुआ, जोर-जोर से शब्द करता हुआ, (एहरन के स्थूल पुद्गलों को तोड़ने में समर्थ नहीं होता, इसी प्रकार नैरयिक जीव भी गाढ़ कर्म वाले होते हैं), इसलिए वे यावत्

महापर्यवसान वाले नहीं होते । जिस प्रकार कोई पुरुष तरुण है, बलवान है, यावत् मेधावी, निपुण और शिल्पकार है, वह एक बड़े शाल्मली वृक्ष की गीली, अजटिल, अगंठित, चिकनाई से रहित, सीधी और आधार पर टिकी गण्डिका पर तीक्ष्ण कुल्हाड़े से प्रहार करे तो जोर-जोर से शब्द किये बिना ही आसानी से उसके बड़े-बड़े टुकड़े कर देता है । इसी प्रकार हे गौतम ! जिन श्रमण निर्ग्रन्थों ने अपने कर्म यथा-स्थूल, शिथिल यावत् निष्ठित किये हैं, यावत् वे कर्म शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं । और वे श्रमण निर्ग्रन्थ यावत् महापर्यवसान वाले होते हैं । हे गौतम! जैसे कोई पुरुष सूखे हुए घास के पूले को यावत् अग्नि में डाले तो वह शीघ्र ही जल जाता है, इसी प्रकार श्रमण निर्ग्रन्थों के यथाबादर कर्म भी शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं । जैसे कोई पुरुष, पानी की बूँद को तपाये हुए लोहे के कड़ाह पर डाले तो वह शीघ्र ही नष्ट हो जाती है, उसी प्रकार श्रमण निर्ग्रन्थों के भी यथाबादर कर्म शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं । छठे शतक के अनुसार यावत् वे महापर्यवसान वाले होते हैं । इसीलिए हे गौतम ! ऐसा कहा गया है कि अन्नग्लायक श्रमण निर्ग्रन्थ जितने कर्मों का क्षय करता है, इत्यादि, यावत् उतने कर्मों का नैरयिक जीव कोटाकोटी वर्षों में भी क्षय नहीं कर पाते । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१६ – उद्देशक-५

सूत्र - ६७३

उस काल उस समय में उल्लूकतीर नामक नगर था । वहाँ एकजम्बूक नामका उद्यान था । उसका वर्णन पूर्ववत् । उस काल उस समय श्रमण भगवान महावीर वहाँ पधारे, यावत् परीषद् ने पर्युपासना की । उस काल उस समय में देवेन्द्र देवराज वज्रपाणि शक्र इत्यादि सोलहवे शतक के द्वीतिय उद्देशक में कथित वर्णन के अनुसार दिव्य यान विमान से वहाँ आया और श्रमण भगवान महावीर को वन्दना-नमस्कार कर उसने इस प्रकार पूछा-

भगवन् ! क्या महर्द्धिक यावत् महासौख्यसम्पन्न देव बाह्य पुद्गलों को ग्रहण किए बिना यहाँ आने में समर्थ हैं ? हे शक्र ! यह अर्थ समर्थ नहीं । भगवन् ! क्या महर्द्धिक यावत् महासौख्यसम्पन्न देव बाह्य पुद्गलों को ग्रहण करके यहाँ आने में समर्थ हैं ? भगवन् ! महर्द्धिक यावत् महासुख वाला देव क्या बाह्य पुद्गलों को ग्रहण करके गमन करने, बोलने, या उत्तर देने या आँखे खोलने और बन्द करने, या शरीर के अवयवों को सिकोड़ने और पसारने में, या स्थान, शय्या, निषद्या को भोगने में, तथा विक्रिया करने या परिचारणा (विषयभोग) करने में समर्थ है ? हाँ, शक्र ! वह गमन यावत् परिचारणा करने में समर्थ है । देवेन्द्र देवराज शक्र ने इन उत्क्षिप्त आठ प्रश्नों के उत्तर पूछे, और फिर भगवान को उत्सुकतापूर्वक वन्दन करके उसी दिव्य यान-विमान पर चढ़कर जिस दिशा से आया था, उसी दिशा में लौट गया ।

सूत्र - ६७४

भगवन् ! गौतम ने श्रमण भगवान महावीर को वन्दन-नमस्कार करके पूछा-भगवन् ! अन्य दिनों में देवेन्द्र देवराज शक्र (आता है, तब) आप देवानुप्रिय को वन्दन-नमस्कार करता है, आपका सत्कार-सन्मान करता है, यावत् आपकी पर्युपासना करता है; किन्तु भगवन् ! आज तो देवेन्द्र देवराज शक्र आप देवानुप्रिय से संक्षेप में आठ प्रश्नों के उत्तर पूछकर और उत्सुकतापूर्वक वन्दन-नमस्कार करके शीघ्र ही चला गया, इसका क्या कारण है ? श्रमण भगवान महावीर ने कहा-गौतम ! उस काल उस समय में महाशुक्र कल्प के 'महासामान्य' नामक विमान में महर्द्धिक यावत् महासुखसम्पन्न दो देव, एक ही विमान में देवरूप से उत्पन्न हुए । उनमें से एक मायीमिथ्यादृष्टि उत्पन्न हुआ और दूसरा अमायीसम्यग्दृष्टि उत्पन्न हुआ । एक दिन उस मायीमिथ्यादृष्टि देव ने अमायीसम्यग्दृष्टि देव से कहा-'परिणमते हुए पुद्गल 'परिणत' नहीं कहलाते, 'अपरिणत' कहलाते हैं, क्योंकि वे पुद्गल अभी परिणत हो रहे हैं, इसलिए वे परिणत नहीं, अपरिणत हैं ।'

इस पर अमायीसम्यग्दृष्टि देव ने मायीमिथ्यादृष्टि देव से कहा-'परिणमते हुए पुद्गल 'परिणत' कहलाते हैं, अपरिणत नहीं, क्योंकि वे परिणत हो रहे हैं, इसलिए ऐसे पुद्गल परिणत हैं अपरिणत नहीं ।' इस प्रकार कहकर अमायीसम्यग्दृष्टि देव ने मायीमिथ्यादृष्टि देव को पराजित किया । पश्चात् अमायीसम्यग्दृष्टि देव ने अवधिज्ञान का उपयोग लगाकर अवधिज्ञान से मुझे देखा, फिर उसे ऐसा यावत् विचार उत्पन्न हुआ कि जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में,

उल्लूकतीर नामक नगर के बाहर एकजम्बूक नाम के उद्यान में श्रमण भगवान महावीर यथायोग्य अवग्रह लेकर विचरते हैं । अतः मुझे श्रमण भगवान महावीर को वन्दन-नमस्कार यावत् पर्युपासना करके यह तथारूप प्रश्न पूछना श्रेयस्कर है । ऐसा विचार कर चार हजार सामानिक देवों के परिवार के साथ सूर्याभ देव के समान, यावत् निर्घोष-निनादित ध्वनिपूर्वक, जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में उल्लूकतीर नगर के एकजम्बूक उद्यान में मेरे पास आने के लिए उसने प्रस्थान किया । उस समय उस देव की तथाविध दिव्य देवर्द्धि, दिव्य देवद्युति, दिव्य देवानुभाव और दिव्य तेजःप्रभा को सहन नहीं करता हुआ, देवेन्द्र देवराज शक्र मुझसे संक्षेप में आठ प्रश्न पूछकर शीघ्र ही वन्दना-नमस्कार करके यावत् चला गया ।

सूत्र - ६७५

जब श्रमण भगवान महावीर स्वामी भगवान गौतम स्वामी से यह बात कह रहे थे, इतने में ही वह देव शीघ्र ही वहाँ आ पहुँचा । उस देव ने आते ही श्रमण भगवान महावीर की तीन बार प्रदक्षिणा की, फिर वन्दन-नमस्कार किया और पूछा-भगवन् ! महाशुक्र कल्प में महासामान्य विमान में उत्पन्न हुए एक मायीमिथ्यादृष्टि देव ने मुझे इस प्रकार कहा-परिणमते हुए पुद्गल अभी 'परिणत' नहीं कहे जाकर अपरिणत कहे जाते हैं, क्योंकि वे पुद्गल अभी परिणत रहे हैं । इसलिए वे 'परिणत' नहीं, अपरिणत ही कहे जाते हैं । तब मैंने उस मायीमिथ्यादृष्टि देव से इस प्रकार कहा-'परिणमते हुए पुद्गल 'परिणत' कहलाते हैं, अपरिणत नहीं, क्योंकि वे पुद्गल परिणत हो रहे हैं, इसलिए परिणत कहलाते हैं, अपरिणत नहीं । भगवन् ! इस प्रकार का मेरा कथन कैसा है ? श्रमण भगवान महावीर ने गंगदत्त देव को इस प्रकार कहा-'गंगदत्त ! मैं भी इसी प्रकार कहता हूँ यावत् प्ररूपणा करता हूँ कि परिणमते हुए पुद्गल यावत् अपरिणत नहीं, परिणत हैं । यह अर्थ सत्य है ।'

तदनन्तर श्रमण भगवान महावीर स्वामी से यह उत्तर सूनकर और अवधारण करके वह गंगदत्त देव हर्षित और सन्तुष्ट हुआ । उसने भगवान महावीर को वन्दन-नमस्कार किया । फिर वह न अति दूर और न अति निकट बैठकर यावत् भगवान की पर्युपासना करने लगा । तत्पश्चात् श्रमण भगवान महावीर ने गंगदत्त देव को ओर महती परीषद् को धर्मकथा कही, यावत्-जिसे सूनकर जीव आराधक बनता है । उस समय गंगदत्त देव श्रमण भगवान महावीर से धर्मदेशना सूनकर और अवधारण करके हुष्ट-तुष्ट हुआ और फिर उसने खड़े होकर श्रमण भगवान महावीर को वन्दना-नमस्कार करके इस प्रकार पूछा-'भगवन् ! मैं गंगदत्त देव भवसिद्धिक हूँ या अभवसिद्धिक ? हे गंगदत्त ! सूर्याभदेव के समान (समझना ।) फिर गंगदत्त देव ने भी सूर्याभदेववत् बत्तीस प्रकार की नाट्यविधि प्रदर्शित की और फिर वह जिस दिशा से आया था, उसी दिशा में लौट गया ।

सूत्र - ६७६

भगवान गौतम ने श्रमण भगवान महावीर से यावत् पूछा-'भगवन् ! गंगदत्त देव की वह दिव्य देवर्द्धि, दिव्य देवद्युति यावत् कहाँ गई, कहाँ प्रविष्ट हो गई ?' गौतम ! यावत् उस गंगदत्त देव के शरीर में गई और शरीर में ही अनुप्रविष्ट हो गई । यहाँ कूटाकारशाला का दृष्टान्त, यावत् वह शरीर में अनुप्रविष्ट हुई, (तक समझना चाहिए ।) (गौतम -) अहो ! भगवन् ! गंगदत्त देव महर्द्धिक यावत् महासुखसम्पन्न है !

भगवन् ! गंगदत्त देव को वह दिव्य देवर्द्धि, दिव्य देवद्युति कैसे उपलब्ध हुई ? यावत् जिससे गंगदत्त देव ने वह दिव्य देव-ऋद्धि उपलब्ध, प्राप्त और यावत् अभिसमन्वागत की ? श्रमण भगवान महावीर ने कहा-'गौतम ! बात ऐसी है कि उस काल उस समय में इसी जम्बूद्वीप में, भारतवर्ष में हस्तिनापुर नामका नगर था । वहाँ सहस्रा-म्रवन नामक उद्यान था । उस हस्तिनापुर नगर में गंगदत्त गाथापति रहता था । वह आढ्य यावत् अपराभूत था । उस काल उस समय में धर्म कि आदि करने वाले यावत् सर्वज्ञ सर्वदर्शी आकाशगत चक्रसहित यावत् देवों द्वारा खींचे जाते हुए धर्मध्वजयुक्त, शिष्यगण से संपरिवृत्त होकर अनुक्रम से विचरते हुए और ग्रामानुग्राम जाते हुए, यावत् मुनिसुव्रत अर्हन्त यावत् सहस्राम्रवन उद्यान में पधारे, यावत् यथायोग्य अवग्रह ग्रहण करके विचरने लगे । परीषद् वन्दना करने के लिए आई यावत् पर्युपासना करने लगी ।

जब गंगदत्त गाथापति ने भगवान मुनिसुव्रत स्वामी के पदार्पण की बात सूनी तो वह अतीव हर्षित और सन्तुष्ट हुआ । उसने स्नान और बलिकर्म किया, यावत् शरीर को अलंकृत करके वह अपने घर से नीकला और पैदल चलकर हस्तिनापुर नगर के मध्य में से होता हुआ सहस्राम्रवन उद्यान में अर्हन्त भगवान मुनिसुव्रत स्वामी विराजमान थे, वहाँ पहुँचा । तीर्थंकर मुनिसुव्रत प्रभु को तीन बार दाहिनी ओर से प्रदक्षिणा करके यावत् तीन प्रकार की पर्युपासना विधि से पर्युपासना करने लगा । अर्हन्त मुनिसुव्रत स्वामी ने गंगदत्त गाथापति को और महती परीषद्को धर्मकथा कही । यावत् परीषद् लौट गई । तीर्थंकर श्री मुनिसुव्रत स्वामी से धर्म सूनकर और अवधारण करके गंगदत्त गाथापति हृष्ट-तुष्ट होकर खड़ा हुआ और भगवान को वन्दन-नमस्कार करके इस प्रकार बोला-'भगवन् ! मैं निर्ग्रन्थ-प्रवचन पर श्रद्धा करता हूँ यावत् आपने जो कुछ कहा, उस पर श्रद्धा करता हूँ । देवानुप्रिय ! मैं अपने ज्येष्ठ पुत्र को कुटुम्ब का भार सौंप दूँगा, फिर आप देवानुप्रिय के समीप मुण्डित यावत् प्रव्रजित होना चाहता हूँ ।' हे देवानुप्रिय ! जिस प्रकार तुम्हें सुख हो, वैसा करो; परन्तु धर्मकार्य में विलम्ब मत करो । अर्हत् मुनिसुव्रत स्वामी द्वारा इस प्रकार कहे जाने पर वह गंगदत्त गाथापति हृष्ट-तुष्ट हुआ सहस्राम्रवन उद्यान से नीकला, और हस्तिनापुर नगर में जहाँ अपना घर था, वहाँ आया । घर आकर उसने विपुल अशन-पान यावत् तैयार करवाया । फिर अपने मित्र, ज्ञातिजन, स्वजन आदि को आमंत्रित किया । फिर पूरण सेठ के समान अपने ज्येष्ठ पुत्र को कुटुम्ब (-कार्य) में स्थापित किया ।

तत्पश्चात् अपने मित्र, ज्ञातिजन, स्वजन आदि तथा ज्येष्ठ पुत्र से अनुमति लेकर हजार पुरुषों द्वारा उठाने योग्य शिबिका पर चढ़ा और अपने मित्र, ज्ञाति, स्वजन यावत् परिवार एवं ज्येष्ठ पुत्र द्वारा अनुगमन किया जाता हुआ, सर्वऋद्धि के साथ यावत् वाद्यों के आघोषपूर्वक हस्तिनापुर नगर के मध्य में होकर सहस्राम्रवन उद्यान के निकट आया छत्र आदि तीर्थंकर भगवान के अतिशय देखकर यावत् उदायन राजा के समान यावत् स्वयमेव आभूषण उतारे; फिर स्वयमेव पंचमुष्टिक लोच किया । इसके पश्चात् तीर्थंकर मुनिसुव्रत स्वामी के पास जाकर उदायन राजा के समान प्रव्रज्या ग्रहण की, यावत् उसी के समान (गंगदत्त अनगार ने) ग्यारह अंगों का अध्ययन किया यावत् एक मास की संलेखना से साठ-भक्त अनशन का छेदन किया और फिर आलोचना-प्रतिक्रमण करके समाधि को प्राप्त होकर काल के अवसर में काल करके महाशुक्रकल्प में महासामान्य नामक विमान की उपपात-सभा की देवशय्या में यावत् गंगदत्त देव के रूप में उत्पन्न हुआ । तत्पश्चात् तत्काल उत्पन्न वह गंगदत्त देव पंचविध पर्याप्तियों से पर्याप्त बना । यथा-आहारपर्याप्ति यावत् भाषा-मनःपर्याप्ति । इस प्रकार हे गौतम ! गंगदत्त देव ने वह दिव्य देव-ऋद्धि यावत् पूर्वोक्त प्रकार से उपलब्ध, प्राप्त यावत् अभिमुख की है ।

शतक-१६ – उद्देशक-६

सूत्र - ६७७

भगवन् ! स्वप्न-दर्शन कितने प्रकार का कहा गया है ? गौतम ! पाँच प्रकार का । यथा-यथातथ्य-स्वप्नदर्शन प्रतान-स्वप्नदर्शन, चिन्ता-स्वप्नदर्शन, तद्विपरीत-स्वप्नदर्शन और अव्यक्त-स्वप्नदर्शन । भगवन् ! सोता हुआ प्राणी स्वप्न देखता है, जागता हुआ देखता है, अथवा सुप्तजागृत प्राणी स्वप्न देखता है ? गौतम ! सोता हुआ प्राणी स्वप्न नहीं देखता, और न जागता हुआ प्राणी स्वप्न देखता है, किन्तु सुप्त-जागृत प्राणी स्वप्न देखता है ।

भगवन् ! जीव सुप्त है, जागृत है अथवा सुप्त-जागृत है ? गौतम ! जीव सुप्त भी है, जागृत भी है और सुप्त-जागृत भी है । भगवन् ! नैरयिक सुप्त हैं, इत्यादि पूर्ववत् प्रश्न । गौतम ! नैरयिक सुप्त हैं, जागृत नहीं हैं और न वे सुप्त-जागृत हैं । इसी प्रकार यावत् चतुरिन्द्रिय तक कहना । भगवन् ! पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चयोनिक जीव सुप्त हैं, इत्यादि प्रश्न । गौतम ! वे सुप्त है, जागृत नहीं है, सुप्त-जागृत भी हैं । मनुष्यों के सम्बन्ध में सामान्य जीवों के समान (तीनों) जानना चाहिए । वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिकों का कथन नैरयिक जीवों के समान (सुप्त) जानना चाहिए ।

सूत्र - ६७८

भगवन् ! संवृत्त जीव स्वप्न देखता है, असंवृत्त जीव स्वप्न देखता है अथवा संवृता-संवृत्त जीव स्वप्न देखता है ? गौतम ! तीनों ही । संवृत्त जीव जो स्वप्न देखता है, वह यथातथ्य देखता है । असंवृत जीव जो स्वप्न देखता है, वह सत्य

भी हो सकता है और असत्य भी हो सकता है । संवृता-संवृत जीव जो स्वप्न देखता है, वह भी असंवृत के समान होता है । भगवन् ! जीव संवृत है, असंवृत है अथवा संवृतासंवृत है ? गौतम ! तीनों ही । सुप्त, (जागृत और सुप्त-जागृत) जीवों के दण्डक समान इनका भी कहना ।

भगवन् ! स्वप्न कितने प्रकार के होते हैं ? गौतम ! ४२ प्रकार । भगवन् ! महास्वप्न कितने प्रकार के कहे गए हैं ? गौतम ! तीस प्रकार के । भगवन् ! सभी स्वप्न कितने प्रकार के कहे गए हैं ? गौतम ! बहत्तर प्रकार के कहे गए हैं ।

भगवन् ! तीर्थंकर का जीव जब गर्भ में आता है, तब तीर्थंकर की माताएं कितने महास्वप्न देखकर जागृत होती हैं ? गौतम ! इन तीस महास्वप्नों में से चौद महास्वप्न देखकर जागृत होती है, यथा-गज, वृषभ, सिंह, यावत् अग्नि भगवन् ! जब चक्रवर्ती का जीव गर्भ में आता है, तब चक्रवर्ती की माताएं कितने महास्वप्नों को देखकर जागृत होती हैं ? गौतम इन तीस महास्वप्नों में से तीर्थंकर की माताओं के समान चौदह महास्वप्नों को देखकर जागृत होती हैं, यथा-गज यावत् अग्नि । भगवन् ! वासुदेव का जीव गर्भ में आता है, तब वासुदेव की माताएं कितने महास्वप्न देखकर जागृत होती हैं ? गौतम ! इन चौदह महास्वप्नों में से कोई भी सात महास्वप्न देखकर जागृत होती हैं । भगवन् ! बलदेव का जीव जब गर्भ में आता है, तब बलदेव की माताएं कितने स्वप्न...इत्यादि पृच्छा ? गौतम ! इन चौदह महास्वप्नों में से किन्ही चार महास्वप्नों को देखकर जागृत होती हैं । भगवन् ! माण्डलिक का जीव गर्भ में आने पर माण्डलिक की माताएं...इत्यादि प्रश्न । गौतम ! इन में से किसी एक महास्वप्न को देखकर जागृत होती हैं ।

सूत्र - ६७९

श्रमण भगवान महावीर अपने छद्मस्थ काल की अन्तिम रात्रि में इन दस महास्वप्नों को देखकर जागृत हुए। (१) एक महान घोर और तेजस्वी रूप वाले ताड़वृक्ष के समान लम्बे पिशाच को स्वप्न में पराजित किया । (२) श्वेत पाँखों वाले एक महान् पुंस्कोकिल का स्वप्न । (३) चित्र-विचित्र पंखों वाले पुंस्कोकिल का स्वप्न । (४) स्वप्न में सर्व-रत्नमय एक महान् मालायुगल को देखा । (५) स्वप्न में श्वेतवर्ण के एक महान् गोवर्ग को देखा, प्रतिबद्ध हुए । (६) चारों ओर से पुष्पित एक महान् पद्मसरोवर का स्वप्न । (७) सहस्त्रों तरंगों और कल्लोलों से सुशोभित एक महा-सागर को अपनी भुजाओं से तिरे । (८) अपने तेज से जाज्वल्यमान एक महान् सूर्य का स्वप्न । (९) एक महान् मानुषोत्तर पर्वत को नील वैडूर्य मणि के समान अपने अन्तर भाग में चारों ओर से आवेष्टित-परिवेष्टित देखा। (१०) महान् मन्दर पर्वत की मन्दर-चूलिका पर श्रेष्ठ सिंहासन पर बैठे हुए अपने आपको देखकर जागृत हुए ।

श्रमण भगवान महावीर ने प्रथम स्वप्न में जो एक महान् भयंकर और तेजस्वी रूप वाले ताड़वृक्षसम लम्बे पिशाच को पराजित किया हुआ देखा, उसका फल यह हुआ कि श्रमण भगवान महावीर ने मोहनीय कर्म को समूल नष्ट किया । दूसरे स्वप्न में श्वेत पंख वाले एक महान् पुंस्कोकिल को देखकर जागृत हुए, उसका फल यह है कि भगवान महावीर शुक्लध्यान प्राप्त करके विचरे । तीसरे स्वप्न में चित्र-विचित्र पंखों वाले एक पुंस्कोकिल को देखकर जागृत हुए, उसका फल यह हुआ कि श्रमण भगवान महावीर ने स्वसमय-परसमय के विविध-विचारयुक्त द्वादशांग गणिपिटक का कथन किया, प्रज्ञप्त किया, प्ररूपित किया, दिखलाया, निदर्शित किया और उपदर्शित किया । यथा-आचार सूत्रकृत् यावत् दृष्टिवाद । चौथे स्वप्न में एक सर्वरत्नमय महान् मालायुगल को देखकर जागृत हुए, उसका फल यह है कि श्रमण भगवान महावीर ने दो प्रकार का धर्म बतलाया । यथा-अगार-धर्म और अनगार-धर्म । पाँचवे स्वप्न में एक श्वेत महान् गोवर्ग देखकर जागृत हुए, उसका फल यह है कि श्रमण भगवान महावीर के (चार प्रकार का) संघ हुआ, यथा-श्रमण, श्रमणी, श्रावक और श्राविका ।

छठे स्वप्न में एक कुसुमित पद्मसरोवर को देखकर जागृत हुए, उसका फल यह है कि श्रमण भगवान महावीर ने चार प्रकार के देवों की प्ररूपणा की, यथा-भवनवासी, वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिक । सातवें स्वप्न में हजारों तरंगों और कल्लोलों से व्याप्त एक महासागर को अपनी भुजाओं से तिरा हुआ देखकर जागृत हुए, उसका फल यह है कि श्रमण भगवान महावीर स्वामी अनादि-अनन्त यावत् संसार-कान्तार को पार कर गए । आठवें स्वप्न में तेज से जाज्वल्यमान एक महान् दीवाकर को देखकर जागृत हुए, उसका फल यह कि श्रमण भगवान महावीर स्वामी

को अनन्त, अनुत्तर, निरावरण, निर्व्याघात, समग्र और प्रतिपूर्ण श्रेष्ठ केवलज्ञान-केवलदर्शन उत्पन्न हुआ । नौवे स्वप्न में एक महान मानुषोत्तर पर्वत को नील वैडूर्यमणि के समान अपनी आंतों से चारों ओर आवेष्टित-परिवेष्टित किया हुआ देखा, उसका फल यह कि देवलोक, असुरलोक और मनुष्यलोक में, श्रमण भगवान महावीर स्वामी केवलज्ञान-दर्शन के धारक हैं, इस प्रकार श्रमण भगवान महावीर स्वामी उदार कीर्ति, वर्ण, शब्द और श्लोक को प्राप्त हुए । दसवें स्वप्न में एक महान् मेरुपर्वत की मन्दर-चूलिका पर अपने आपको सिंहासन पर बैठे हुए देखकर जागृत हुए, उसका फल यह कि श्रमण भगवान महावीर स्वामी ने केवलज्ञानी होकर देवों, मनुष्यों और असुरों की परीषद् के मध्य में धर्मोपदेश दिया यावत् (धर्म) उपदर्शित किया ।

सूत्र - ६८०

कोई स्त्री या पुरुष स्वप्न के अन्त में एक महान् अश्वपंक्ति, गजपंक्ति अथवा यावत् वृषभ-पंक्ति का अवलोकन करता हुआ देखे, और उस पर चढ़ने का प्रयत्न करता हुआ चढ़े तथा अपने आपको उस पर चढ़ा हुआ माने ऐसा स्वप्न देखकर तुरन्त जागृत हो तो वह उसी भव में सिद्ध होता है, यावत् सभी दुःखों का अन्त करता है । कोई स्त्री या पुरुष स्वप्न के अन्त में, समुद्र को दोनों ओर से छूती हुई, पूर्व से पश्चिम तक विस्तृत एक बड़ी रस्सी को देखने का प्रयत्न करता हुआ देखे, अपने दोनों हाथों से उसे समेटता हुआ समेटे, फिर अनुभव करे कि मैंने स्वयं रस्सी को समेट लिया है, ऐसा स्वप्न देखकर तत्काल जागृत हो, तो वह उसी भव में सिद्ध होता है, यावत् सभी दुःखों का अन्त करता है । कोई स्त्री या पुरुष, स्वप्न के अन्त में, दोनों ओर लोकान्त को स्पर्श की हुई तथा पूर्व-पश्चिम लम्बी एक बड़ी रस्सी को देखता हुआ देखे, उसे काटने का प्रयत्न करता हुआ काट डाले । (फिर) मैंने उसे काट दिया, ऐसा स्वयं अनुभव करे, ऐसा स्वप्न देखकर तत्काल जाग जाए तो वह उसी भव में सिद्ध होता है, यावत् सर्व दुःखों का अन्त करता है ।

कोई स्त्री या पुरुष स्वप्न के अन्त में, एक बड़े काले सूत को या सफेद सूत को देखता हुआ देखे, और उसके उलझे हुए पिण्ड को सुलझाता हुआ सुलझा देता है और मैंने उसे सुलझाया है, ऐसा स्वयं को माने, ऐसा स्वप्न देखकर शीघ्र ही जागृत हो, तो वह उसी भव में सिद्ध होता है, यावत् सर्व दुःखों का अन्त करता है । कोई स्त्री या पुरुष स्वप्न के अन्त में, एक बड़ी लोहराशि, तांबे की राशि, कथीर की राशि, अथवा शीशे की राशि देखने का प्रयत्न करता हुआ देखे उस पर चढ़ता हुआ चढ़े तथा अपने आपको चढ़ा हुआ माने । ऐसा स्वप्न देखकर तत्काल जागृत हो, तो वह उसी भव में सिद्ध होता है, यावत् सर्व दुःखों का अन्त करता है । कोई स्त्री या पुरुष स्वप्न के अन्त में एक महान् चाँदी का ढेर, सोने का ढेर, रत्नों का ढेर अथवा वज्रों का ढेर देखता हुआ देखे, उस पर चढ़ता हुआ चढ़े, अपने आपको उस पर चढ़ा हुआ माने, ऐसा स्वप्न देखकर तत्क्षण जागृत हो, तो वह उसी भव में सिद्ध होता है, यावत् सब दुःखों का अन्त करता है । कोई स्त्री या पुरुष स्वप्न के अन्त में, एक महान तृणराशि तथा तेजो-निसर्ग नामक पन्द्रहवें शतक के अनुसार यावत् कचरे का ढेर देखता हुआ देखे, उसे बिखेरता हुआ बिखेर दे, और मैंने बिखेर दिया है, ऐसा स्वयं को माने, ऐसा स्वप्न देखकर तत्काल जागृत हो तो वह यावत् सब दुःखों का अन्त करता है ।

कोई स्त्री या पुरुष, स्वप्न के अन्त में, एक महान् सर-स्तम्भ, वीरण-स्तम्भ, वंशीमूल-स्तम्भ अथवा वल्ली-मूल-स्तम्भ को देखता हुआ देखे, उसे उखाड़ता हुआ उखाड़ फेंके तथा ऐसा माने कि मैंने इनको उखाड़ फेंका है, ऐसा स्वप्न देखकर तत्काल जागृत हो तो वह उसी भव में सिद्ध होता है, यावत् सर्व दुःखों का अन्त करता है । कोई स्त्री या पुरुष, स्वप्न के अन्त में, एक महान् क्षीरकुम्भ, दधिकुम्भ, घृतकुम्भ, अथवा मधुकुम्भ देखता हुआ देखे और उसे उठाता हुआ उठाए तथा ऐसा माने कि स्वयं मैंने उसे उठा लिया है, ऐसा स्वप्न देखकर तत्काल जागृत हो तो वह व्यक्ति उसी भव में सिद्ध, यावत् सर्व दुःखों का अन्त करता है ।

कोई स्त्री या पुरुष स्वप्न के अन्त में, एक महान् सुरारूप जल का कुम्भ, सौवीर रूप जल कुम्भ, तेलकुम्भ अथवा वसा का कुम्भ देखता हुआ देखे, फोड़ता हुआ उसे फोड़ डाले तथा मैंने उसे स्वयं फोड़ डाला है, ऐसा माने, ऐसा स्वप्न देखकर शीघ्र जागृत हो तो वह दो भव में मोक्ष जाता है, यावत् सब दुःखों का अन्त कर डालता है । कोई स्त्री या पुरुष, स्वप्न के अन्त में, एक महान् कुसुमित पद्मसरोवर को देखता हुआ देखे, उसमें अवगाहन (प्रवेश) करता

हुआ अवगाहन करे तथा स्वयं मैंने इसमें अवगाहन किया है, ऐसा अनुभव करे तथा इस प्रकार का स्वप्न देखकर तत्काल जागृत हो तो वह उसी भव में सिद्ध होता है, यावत् सब दुःखों का अन्त करता है । कोई स्त्री या पुरुष स्वप्न के अन्त में, तरंगों और कल्लोलों से व्याप्त एक महासागर को देखता हुआ देखे, तथा तरता हुआ पार कर ले, एवं मैंने इसे स्वयं पार किया है, ऐसा माने, इस प्रकार का स्वप्न देखकर शीघ्र जागृत हो तो वह उसी भव में सिद्ध होता है, यावत् सर्व दुःखों का अन्त करता है । कोई स्त्री या पुरुष, स्वप्न के अन्त में, सर्वरत्नमय एक महा-भवन देखता हुआ देखे, उसमें प्रविष्ट होता हुआ प्रवेश करे तथा मैं इसमें प्रविष्ट हो गया हूँ, ऐसा माने, इस प्रकार का स्वप्न देखकर शीघ्र जागृत हो तो, वह उसी भव में सिद्ध-बुद्ध-मुक्त हो जाता है, यावत् सर्व दुःखों का अन्त कर देता है । कोई स्त्री या पुरुष स्वप्न के अन्त में, सर्वरत्नमय एक महान् विमान को देखता हुआ देखता है, उस पर चढ़ता हुआ चढ़ता है, तथा मैं इस पर चढ़ गया हूँ, ऐसा स्वयं अनुभव करता है, ऐसा स्वप्न देखकर तत्क्षण जागृत होता है, तो वह व्यक्ति उसी भव में सिद्ध-बुद्ध-मुक्त हो जाता है, यावत् सब दुःखों का अन्त करता है ।

सूत्र - ६८१

भगवन् ! कोई व्यक्ति यदि कोष्ठपुटों यावत् केतकीपुटों को खोले हुए एक स्थान से दूसरे स्थान पर लेकर जाता है और अनुकूल हवा चलती हो तो क्या उसका गन्ध बहता है अथवा कोष्ठपुट यावत् केतकीपुट वायु में बहता है? गौतम ! कोष्ठपुट यावत् केतकीपुट नहीं बहते, किन्तु घ्राण-सहगामी गन्धगुणोपेत पुद्गल बहते हैं । हे भगवन्! यह इसी प्रकार है, भगवन् यह इसी प्रकार है ।

शतक-१६ – उद्देशक-७

सूत्र - ६८२

भगवन् ! उपयोग कितने प्रकार का है ? दो प्रकार का । प्रज्ञापनासूत्र का उपयोग पद तथा पश्यत्तापद कहना हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१६ – उद्देशक-८

सूत्र - ६८३

भगवन् ! लोक कितना विशाल कहा गया है ? गौतम ! लोक अत्यन्त विशाल कहा गया है । इसकी समस्त वक्तव्यता बारहवें शतक अनुसार कहना ।

भगवन् ! क्या लोक के पूर्वीय चरमान्त में जीव हैं, जीवदेश हैं, जीवप्रदेश हैं, अजीव हैं, अजीव के देश हैं और अजीव के प्रदेश हैं ? गौतम ! वहाँ जीव नहीं हैं, परन्तु जीव के देश हैं, जीव के प्रदेश हैं, अजीव हैं, अजीव के देश हैं और अजीव के प्रदेश भी हैं । वहाँ जो जीव के देश हैं, वे नियमतः एकेन्द्रिय जीवों के देश हैं, अथवा एकेन्द्रिय जीवों के देश और द्वीन्द्रिय जीव का एक देश है । इत्यादि सब भंग दसवें शतक में कथित आग्नेयी दिशा अनुसार जानना । विशेषता यह है कि 'बहुत देशों के विषय में अनिन्द्रियों से सम्बन्धित प्रथम भंग नहीं कहना, तथा वहाँ जो अरूपी अजीव हैं, वे छह प्रकार के कहे गए हैं । वहाँ काल नहीं है । भगवन् ! क्या लोक के दक्षिणी चरमान्त में जीव हैं ? इत्यादि पूर्ववत् प्रश्न । गौतम ! पूर्ववत् । इसी प्रकार पश्चिमी और उत्तरी चरमान्त समझना ।

भगवन् ! लोक के उपरिम चरमान्त में जीव हैं, इत्यादि पूर्ववत् प्रश्न । गौतम ! वहाँ जीव नहीं हैं, किन्तु जीव के देश हैं, यावत् अजीव के प्रदेश भी हैं । जो जीव के देश हैं, वे नियमतः एकेन्द्रियों के देश और अनिन्द्रियों के देश हैं । अथवा एकेन्द्रियों के और अनिन्द्रियों के देश तथा द्वीन्द्रिय का एक देश है, अथवा एकेन्द्रियों के और अनिन्द्रियों के देश तथा द्वीन्द्रियों के देश हैं । इस प्रकार बीच के भंग को छोड़कर द्विकसंयोगी सभी भंग यावत् पंचेन्द्रिय तक कहना चाहिए । यहाँ जो जीव के प्रदेश हैं, वे नियमतः एकेन्द्रियों के प्रदेश हैं और अनिन्द्रियों के प्रदेश हैं । अथवा एकेन्द्रियों के प्रदेश, अनिन्द्रियों के प्रदेश और एक द्वीन्द्रिय के प्रदेश हैं । अथवा एकेन्द्रियों के और अनिन्द्रियों के प्रदेश तथा द्वीन्द्रियों के प्रदेश हैं । इस प्रकार प्रथम भंग के अतिरिक्त शेष सभी भंग यावत् पंचेन्द्रियों तक कहना । दशवें शतक में कथित तमादिशा अनुसार यहाँ पर अजीवों को कहना । भगवन् ! क्या लोक के अधस्तन चरमान्त में जीव हैं ? गौतम

वहाँ जीव नहीं हैं, किन्तु जीव के देश हैं, यावत् अजीव के प्रदेश भी हैं । जो जीव के देश हैं, वे नियमतः एकेन्द्रियों के देश हैं, अथवा एकेन्द्रियों के देश और द्वीन्द्रिय का एक देश है । अथवा एकेन्द्रियों के देश और द्वीन्द्रियों के देश हैं । इस प्रकार बीच के भंग को छोड़कर शेष भंग, यावत्-अनीन्द्रियों तक कहना । सभी प्रदेशों के विषय में आदि के भंग को छोड़कर पूर्वीय-चरमान्त के अनुसार कहना । अजीवों के विषय में उपरितन चरमान्त के समान जानना ।

भगवन् ! क्या इस रत्नप्रभापृथ्वी के पूर्वीय चरमान्त में जीव हैं ? गौतम ! वहाँ जीव नहीं हैं । लोक के चार चरमान्तों के समान रत्नप्रभापृथ्वी के चार चरमान्तों के विषय में यावत् उत्तरीय चरमान्त तक कहना चाहिए । रत्नप्रभा के उपरितन चरमान्त के विषय में, दसवें शतक में विमला दिशा के समान कहना । रत्नप्रभापृथ्वी के अधस्तन चरमान्त की वक्तव्यता लोक के अधस्तन चरमान्त के समान कहना । विशेषता यह है कि जीवदेश के विषय में पंचेन्द्रियों के तीन भंग कहने चाहिए । रत्नप्रभापृथ्वी के चार चरमान्तों के अनुसार शर्कराप्रभापृथ्वी के भी चार चरमान्तों को कहना तथा रत्नप्रभापृथ्वी के अधस्तन चरमान्त के समान, शर्कराप्रभापृथ्वी के उपरितन एवं अधस्तन चरमान्त जानना । इसी प्रकार यावत् अधःसप्तमपृथ्वी के चरमान्तों में कहना ।

इसी प्रकार सौधर्म देवलोक से लेकर अच्युत देवलोक तक कहना चाहिए । ग्रैवेयक विमानों के विषय में भी इसी प्रकार कहना चाहिए । विशेषता यह है कि इनमें उपरितन और अधस्तन चरमान्तों के विषय में, जीवदेशों के सम्बन्ध में पंचेन्द्रियों में भी बीच का भंग नहीं कहना चाहिए । शेष पूर्ववत् । जिस प्रकार ग्रैवेयकों के चरमान्तों के विषय में कहा गया, उसी प्रकार अनुत्तरविमानों तथा ईषत्प्राग्भारापृथ्वी के चरमान्तों के विषय में कहना चाहिए ।

सूत्र - ६८४

भगवन् ! क्या परमाणु-पुद्गल एक समय में लोक के पूर्वीय चरमान्त से पश्चिमीय चरमान्त में, पश्चिमीय चरमान्त से पूर्वीय चरमान्त में, दक्षिणी चरमान्त से उत्तरीय चरमान्त में, उत्तरीय चरमान्त से दक्षिणी चरमान्त में, ऊपर के चरमान्त से नीचे के चरमान्त में और नीचे के चरमान्त से ऊपर के चरमान्त में जाता है ? हाँ, गौतम ! परमाणु पुद्गल एक समय में लोक के पूर्वीय चरमान्त से पश्चिमीय चरमान्त में यावत् नीचे के चरमान्त से ऊपर के चरमान्त में जाता है ।

सूत्र - ६८५

भगवन् ! वर्षा बरस रही है अथवा नहीं बरस रही है ? -यह जानने के लिए कोई पुरुष अपने हाथ, पैर, बाहु या ऊरु को सिकोड़े या फैलाए तो उसे कितनी क्रियाएं लगती हैं ? गौतम ! उसे कायिकी आदि पाँचों क्रियाएं लगती हैं ।

सूत्र - ६८६

भगवन् ! क्या महर्द्धिक यावत् महासुखसम्पन्न देव लोकान्त में रहकर अलोक में अपने हाथ यावत् ऊरु को सिकोड़ने और पसारने में समर्थ है ? गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं । भगवन् ! इसका क्या कारण है ? गौतम ! जीवों के अनुगत आहारोपचित पुद्गल, शरीरोपचित पुद्गल और कलेवरोपचित पुद्गल होते हैं तथा पुद्गलों के आश्रित ही जीवों और अजीवों की गतिपर्याय कही गई है । अलोक में न तो जीव हैं और न ही पुद्गल हैं । इसी कारण । हे भगवन् यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१६ – उद्देशक-९

सूत्र - ६८७

भगवन् ! वैरोचनेन्द्र वैरोचनराज बलि की सुधर्मा सभा कहाँ है ? गौतम ! जम्बूद्वीप में मन्दर पर्वत के उत्तर में तीरछे असंख्येय द्वीपसमुद्रों को उल्लंघ कर इत्यादि, चमरेन्द्र की वक्तव्यता अनुसार कहना; यावत् (अरुणवरद्वीप की बाह्य वेदिका से अरुणवरद्वीप समुद्र में) बयालीस हजार योजन अवगाहन करने के बाद वैरोचनेन्द्र वैरोचनराज बलि का रुचकेन्द्र नामक उत्पात-पर्वत है । वह उत्पात पर्वत १७२१ योजन ऊंचा है । उसका शेष सभी परिमाण तिगिञ्छकूट पर्वत के समान । उसके प्रासादावतंसक का परिमाण तथा बलीन्द्र के परिवार सहित सपरिवार सिंहासन का अर्थ भी उसी प्रकार जानना चाहिए । विशेषता यह है कि यहाँ रुचकेन्द्र की प्रभा वाले कुमुद आदि हैं। यावत् वह

बलिचंचा राजधानी तथा अन्यों का नित्य आधिपत्य करता हुआ विचरता है । उस रुचकेन्द्र उत्पातपर्वत के उत्तर से छह सौ पचपन करोड़ पैंतीस लाख पचास हजार योजन तिरछा जाने पर नीचे रत्नप्रभा पृथ्वी में पूर्ववत् यावत् चालीस हजार योजन जाने के पश्चात् वैरोचनेन्द्र वैरोचनराज बलि की बलिचंचा नामक राजधानी है । उस राजधानी का विष्कम्भ एक लाख योजन है । शेष पूर्ववत् यावत् बलिपीठ तथा उपपात से लेकर यावत् आत्मरक्षक तक सभी बातें पूर्ववत् । विशेषता यह है कि (बलि-वैरोचनेन्द्र की) स्थिति सागरोपम से कुछ अधिक की कही गई है। यावत् 'वैरोचनेन्द्र बलि है' । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१६ – उद्देशक-१०

सूत्र - ६८८

भगवन् ! अवधिज्ञान कितने प्रकार का कहा गया है ? गौतम ! दो प्रकार का । यहाँ अवधिपद सम्पूर्ण कहना चाहिए । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१६ – उद्देशक-११

सूत्र - ६८९

भगवन् ! सभी द्वीपकुमार समान आहार और समान निःश्वास वाले हैं ? गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है । प्रथम शतक के द्वीतिय उद्देशक में द्वीपकुमारों के अनुसार कितने ही समआयुष्य वाले और सम-उच्छ्वास-निःश्वास वाले होते हैं, तक कहना चाहिए । भगवन् ! द्वीपकुमारों में कितनी लेश्याएं हैं ? चार । कृष्ण यावत् तेजो ।

भगवन् ! कृष्णलेश्या से लेकर तेजोलेश्या वाले द्वीपकुमारों में कौन किससे यावत् विशेषाधिक है ? गौतम! सबसे कम द्वीपकुमार तेजोलेश्या वाले हैं । कापोतलेश्या वाले उनसे असंख्यातगुणे हैं । उनसे नीललेश्या वाले और उनसे कृष्णलेश्या वाले विशेषाधिक हैं । कृष्णलेश्या से लेकर यावत् तेजोलेश्या वाले द्वीपकुमारों में कौन किससे अल्पर्द्धिक है अथवा महर्द्धिक है ? कृष्णलेश्या वाले द्वीपकुमारों से नीललेश्या वाले द्वीपकुमार महर्द्धिक हैं; यावत् तेजोलेश्या वाले द्वीपकुमार सभी से महर्द्धिक हैं । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१६ – उद्देशक-१२

सूत्र - ६९०

भगवन् ! सभी उदधिकुमार समान आहार वाले हैं ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! पूर्ववत् कहना चाहिए । हे भगवन् यह इसी प्रकार है, भगवन् ! इसी प्रकार है ।

शतक-१६ – उद्देशक-१३

सूत्र - ६९१

द्वीपकुमारों के अनुसार दिशाकुमारों के विषय में भी कहना चाहिए ।

शतक-१६ – उद्देशक-१४

सूत्र - ६९२

द्वीपकुमारों के अनुसार स्तनितकुमारों के विषय में भी कहना चाहिए । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् यह इसी प्रकार है ।

शतक-१६ का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

शतक–१७

सूत्र - ६९३

भगवती श्रुतदेवता को नमस्कार हो ।

सूत्र - ६९४

(सत्तरहवें शतक में) सत्तरह उद्देशक हैं । कुञ्जर, संयत, शैलेशी, क्रिया, ईशान, पृथ्वी, उदक, वायु, एकेन्द्रिय, नाग, सुवर्ण, विद्युत, वायुकुमार और अग्निकुमार ।

शतक-१७ – उद्देशक-१

सूत्र - ६९५

राजगृह नगर में यावत् पूछा–भगवन् ! उदायी नामक प्रधान हस्तिराज, किस गति से मरकर बिना अन्तर के यहाँ हस्तिराज के रूप में उत्पन्न हुआ ? गौतम ! वह असुरकुमार देवों में से मरकर सीधा यहाँ उदायी हस्तिराज के रूप में उत्पन्न हुआ है । भगवन् ! उदायी हस्तिराज यहाँ से काल के अवसर पर काल करके कहाँ जाएगा ? कहाँ उत्पन्न होगा ? गौतम ! वह रत्नप्रभापृथ्वी के एक सागरोपम की उत्कृष्ट स्थिति वाले नारकावास में नैरयिक रूप से उत्पन्न होगा । भगवन् ! वहाँ से अन्तररहित नीकलकर कहाँ जाएगा ? कहाँ उत्पन्न होगा ? गौतम ! वह महाविदेह क्षेत्र में जन्म लेकर सिद्ध होगा, यावत् सर्व दुःखों का अन्त करेगा । भगवन् ! भूतानन्द नामक हस्तिराज किस गति से मरकर सीधा भूतानन्द हस्तिराज रूप में यहाँ उत्पन्न हुआ ? गौतम ! उदायी हस्तिराज के अनुसार भूतानन्द हस्तिराज की भी वक्तव्यता, सब दुःखों का अन्त करेगा तक जाननी चाहिए ।

सूत्र - ६९६

भगवन् ! कोई पुरुष, ताड़ के वृक्ष पर चढ़े और फिर उस ताड़ से ताड़ के फल को हिलाए अथवा गिराए तो उस पुरुष को कितनी क्रियाएं लगती हैं ? गौतम ! उस पुरुष को कायिकी आदि पाँचों क्रियाएं लगती हैं । जिन जीवों के शरीर से ताड़ का वृक्ष और ताड़ का फल उत्पन्न हुआ है, उन जीवों को भी कायिकी आदि पाँचों क्रियाएं लगती हैं । भगवन् ! यदि वह ताड़फल अपने भार के कारण यावत् नीचे गिरता है और उस ताड़फल के द्वारा जो जीव, यावत् जीवन से रहित हो जाते हैं, तो उससे उस पुरुष को कितनी क्रियाएं लगती हैं ? गौतम ! वह पुरुष कायिकी आदि चार क्रियाओं से स्पृष्ट होता है । जिन जीवों के शरीर से ताड़वृक्ष निष्पन्न हुआ है, और जिन जीवों के शरीर से ताड़-फल निष्पन्न हुआ है, वे जीव कायिकी आदि पाँचों क्रियाओं से स्पृष्ट होते हैं । जो जीव नीचे पड़ते हुए ताड़फल के लिए स्वाभाविक रूप से उपकारक होते हैं, उन जीवों को पाँचों क्रियाएं लगती हैं ।

भगवन् ! कोई पुरुष वृक्ष के मूल को हिलाए या नीचे गिराए तो उसको कितनी क्रियाएं लगती हैं ? गौतम! उस पुरुष को कायिकी से लेकर यावत् प्राणातिपातिकी तक पाँचों क्रियाएं लगती हैं । जिन जीवों के शरीरों से मूल यावत् बीज निष्पन्न हुए हैं, उन जीवों को भी कायिकी आदि पाँचों क्रियाएं लगती हैं । भगवन् ! यदि वह मूल अपने भारीपन के कारण नीचे गिरे यावत् जीवोंका हनन करे तो उस मूल को हिलाने वाले और नीचे गिराने वाले पुरुष को कितनी क्रियाएं लगती हैं ? गौतम ! उस पुरुष को कायिकी आदि चार क्रियाएं लगती हैं । जिन जीवों के शरीर से वह कन्द निष्पन्न हुआ है यावत् बीज निष्पन्न हुआ है, उन जीवों को कायिकी आदि चार क्रियाएं लगती हैं । जिन जीवों के शरीर से मूल निष्पन्न हुआ है, उन जीवों को तथा जो जीव नीचे गिरते हुए मूल के स्वाभाविक रूप से उपकारक होते हैं, उन जीवों को भी कायिकी आदि पाँचों क्रियाएं लगती हैं ।

भगवन् ! जब तक वह पुरुष कन्द को हिलाता है या नीचे गिराता है, तब तक उसे कायिकी आदि पाँचों क्रियाएं लगती हैं । जिन जीवों के शरीर से कन्द निष्पन्न हुआ है, वे जीव भी कायिकी आदि पाँचों क्रियाओं से स्पृष्ट होते हैं । भगवन् ! यदि वह कन्द अपने भारीपन के कारण नीचे गिरे, यावत् जीवों का हनन करे तो उस पुरुष को कितनी क्रियाएं लगती हैं ? गौतम ! उस पुरुष को कायिकी आदि चार क्रियाएं लगती हैं । जिन जीवों के शरीर से मूल, स्कन्ध आदि निष्पन्न हुए हैं, तथा जिन जीवों के शरीर से कन्द निष्पन्न हुए हैं, एवं जो जीव नीचे गिरते हुए उस कन्द के

स्वाभाविक रूप से उपकारक होते हैं, उन सभी जीवों को पाँच क्रियाएं लगती हैं । कन्द के अनुसार यावत् बीज के विषय में भी कहना ।

सूत्र - ६९७

भगवन् ! शरीर कितने कहे गए हैं ? गौतम ! पाँच, यथा-औदारिक यावत् कार्मण शरीर । भगवन् ! इन्द्रियाँ कितनी कही गई हैं ? गौतम ! पाँच, यथा-श्रोत्रेन्द्रिय यावत् स्पर्शेन्द्रिय । भगवन् ! योग कितने प्रकार का कहा गया है ? गौतम ! तीन प्रकार का यथा-मनोयोग, वचनयोग और काययोग ।

भगवन् ! औदारिकशरीर को निष्पन्न करता हुआ जीव कितनी क्रिया वाला होता है ? गौतम ! कदाचित् तीन क्रिया वाला, कदाचित् चार और कदाचित् पाँच क्रिया वाला । इसी प्रकार पृथ्वीकायिक जीव से लेकर मनुष्य तक समझना चाहिए ।

भगवन् ! औदारिक शरीर को निष्पन्न करते हुए अनेक जीव कितनी क्रियाओं वाले होते हैं ? गौतम ! वे कदाचित् तीन, कदाचित् चार और पाँच क्रियाओं वाले भी होते हैं । इसी प्रकार अनेक पृथ्वीकायिकों से लेकर अनेक मनुष्यों तक पूर्ववत् कथन करना चाहिए । इसी प्रकार वैक्रियशरीर के विषय में भी एकवचन और बहुवचन की अपेक्षा से दो दण्डक कहने चाहिए । किन्तु उन्हीं के विषय में कहना चाहिए, जिन जीवों के वैक्रियशरीर होता है। इसी प्रकार यावत् कार्मणशरीर तक कहना चाहिए ।

इसी प्रकार श्रोत्रेन्द्रिय से यावत् स्पर्शेन्द्रिय तक कहना चाहिए । इसी प्रकार मनोयोग, वचनयोग और काययोग के विषय में जिसके जो हो, उसके लिए उस विषय में कहना । ये सभी मिलकर एकवचन-बहुवचन-सम्बन्धी छब्बीस दण्डक होते हैं ।

सूत्र - ६९८

भगवन् ! भाव कितने प्रकार के कहे गए हैं ? गौतम ! छह प्रकार के यथा-औदयिक यावत् सान्निपातिक । भगवन् ! औदयिक भाव कितने प्रकार का है ? गौतम ! दो प्रकार का । यथा-उदय और उदयनिष्पन्न । इस प्रकार अनुयोगद्वार-सूत्रानुसार छह नामों की समग्र वक्तव्यता कहना । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१७ – उद्देशक-२

सूत्र - ६९९

भगवन् ! क्या संयत, प्राणातिपातादि से विरत, जिसने पापकर्म का प्रतिघात और प्रत्याख्यान किया है, ऐसा जीव धर्म में स्थित है? तथा असंयत, अविरत और पापकर्म का प्रतिघात एवं प्रत्याख्यान नहीं करनेवाला जीव अधर्ममें स्थित है ? एवं संयतासंयत जीव धर्माधर्ममें स्थित होता है ? हाँ, गौतम ! संयत-विरत यावत् धर्माधर्म में स्थित होता है ।

भगवन् ! क्या इस धर्म में, अधर्म में अथवा धर्माधर्म में कोई जीव बैठने या लेटने में समर्थ है ? गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है । भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहते हैं ? गौतम ! संयत, विरत और पापकर्म का प्रतिघात और प्रत्याख्यान करने वाला जीव धर्म में स्थित होता है और धर्म को ही स्वीकार करके विचरता है । असंयत, यावत् पापकर्म का प्रतिघात और प्रत्याख्यान नहीं करने वाला जीव अधर्म में ही स्थित होता है और अधर्म को ही स्वीकार करके विचरता है, किन्तु संयतासंयत जीव, धर्माधर्म में स्थित होता है और धर्माधर्म को स्वीकार करके विचरता है । इसलिए हे गौतम ! ऐसा कहा गया है ।

भगवन् ! क्या जीव धर्म में स्थित होते हैं, अधर्म में स्थित होते हैं अथवा धर्माधर्म में स्थित होते हैं ? गौतम! जीव, धर्म में भी स्थित होते हैं, अधर्म में भी स्थित होते हैं और धर्माधर्म में भी स्थित होते हैं । भगवन् ! नैरयिक जीव, क्या धर्म में स्थित होते हैं ? इत्यादि प्रश्न । नैरयिक न तो धर्म में स्थित हैं और न धर्माधर्म में स्थित होते हैं, किन्तु वे अधर्म में स्थित हैं । इसी प्रकार चतुरिन्द्रिय जीवों तक जानना चाहिए ।

भगवन् ! पंचेन्द्रिय तिर्यग्योनिक जीव क्या धर्म में स्थित हैं ?...इत्यादि प्रश्न । गौतम ! पंचेन्द्रिय तिर्यग्यो-निक जीव धर्म में स्थित नहीं हैं, वे अधर्म में स्थित हैं, और धर्माधर्म में भी स्थित हैं । मनुष्यों के विषय में जीवों के समान

जानना चाहिए । वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिकों के विषय में नैरयिकों के समान जानना चाहिए ।

सूत्र - ७००

भगवन् ! अन्यतीर्थिक इस प्रकार कहते हैं यावत् प्ररूपणा करते हैं कि (हमारे मत में) ऐसा है कि श्रमण पण्डित हैं, श्रमणोपासक बाल-पण्डित हैं और जिस मनुष्य ने एक भी प्राणी का दण्ड छोड़ा हुआ नहीं है, उसे 'एकान्त बाल' कहना चाहिए; तो हे भगवन् ! अन्यतीर्थिकों का यह कथन कैसे यथार्थ हो सकता है ? गौतम ! अन्यतीर्थिकों ने जो यह कहा है कि 'श्रमण पण्डित हैं...यावत् 'एकान्त बाल कहा जा सकता है', उनका यह कथन मिथ्या है । मैं इस प्रकार कहता हूँ, यावत् प्ररूपणा करता हूँ कि श्रमण पण्डित हैं, श्रमणोपासक बाल-पण्डित हैं, परन्तु जिस जीव ने एक भी प्राणी के वध को त्यागा है, उसे 'एकान्त बाल' नहीं कहा जा सकता ।

भगवन् ! क्या जीव बाल हैं, पण्डित हैं अथवा बाल पण्डित हैं ? गौतम ! जीव बाल भी हैं, पण्डित भी हैं और बाल-पण्डित भी हैं । भगवन् ! क्या नैरयिक बाल हैं, पण्डित हैं अथवा बालपण्डित हैं ? गौतम ! नैरयिक बाल हैं, वे पण्डित नहीं हैं और न बालपण्डित हैं । इसी प्रकार चतुरिन्द्रिय जीवों तक (कहना चाहिए) । भगवन् ! क्या पंचेन्द्रिय तिर्यग्योनिक जीव बाल हैं ? प्रश्न । गौतम ! पंचेन्द्रिय तिर्यग्योनिक बाल हैं और बाल-पण्डित भी हैं; किन्तु पण्डित नहीं हैं । मनुष्य, जीवों के समान हैं । वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिक नैरयिकों के समान (कहना चाहिए) ।

सूत्र - ७०१

भगवन् ! अन्यतीर्थिक इस प्रकार कहते हैं, यावत् प्ररूपणा करते हैं कि प्राणातिपात, मृषावाद यावत् मिथ्यादर्शन-शल्य में प्रवृत्त हुए प्राणी का जीव अन्य है और उस जीव से जीवात्मा अन्य है । प्राणातिपात-विरमण यावत् परिग्रह-विरमण में, क्रोधाविवेक यावत् मिथ्यादर्शन-शल्य-त्याग में प्रवर्तमान प्राणी का जीव अन्य है और जीवात्मा उससे भिन्न है । औत्पत्तिकी बुद्धि यावत् पारिणामिकी बुद्धि में वर्तमान प्राणी का जीव अन्य है और जीवात्मा उस जीव से भिन्न है । अवग्रह, ईहा, अवाय और धारणा में वर्तमान प्राणी का जीव अन्य है और जीवात्मा उससे भिन्न है । उत्थान यावत् पराक्रम में वर्तमान प्राणी का जीव अन्य है, जीवात्मा उससे भिन्न है । नारक-तिर्यञ्च - मनुष्य-देव में वर्तमान प्राणी का जीव अन्य है, जीवात्मा अन्य है । ज्ञानावरणीय से लेकर अन्तराय कर्म में वर्तमान प्राणी का जीव अन्य है, जीवात्मा भिन्न है । इसी प्रकार कृष्णलेश्या यावत् शुक्ललेश्या तक में, सम्यग्दृष्टि-मिथ्या-दृष्टि-सम्यग्मिथ्यादृष्टि में, इसी प्रकार चक्षुदर्शन आदि चार दर्शनों में, आभिनिबोधिक आदि पाँच ज्ञानों में, मति-अज्ञान आदि तीन अज्ञानों में, आहारसंज्ञादि चार संज्ञाओं में एवं औदारिकशरीरादि पाँच शरीरों में तथा मनोयोग आदि तीन योगों में और साकारोपयोग में एवं निराकारोपयोग में वर्तमान प्राणी का जीव अन्य है और जीवात्मा अन्य है । भगवन् क्या यह सत्य है ?

गौतम ! अन्यतीर्थिक जो इस प्रकार कहते हैं, यावत् वे मिथ्या कहते हैं । हे गौतम ! मैं इस प्रकार कहता हूँ, यावत् प्ररूपणा करता हूँ–प्राणातिपात यावत् मिथ्यादर्शनशल्य में वर्तमान प्राणी जीव हैं और वही जीवात्मा हैं, यावत् अनाकारोपयोग में वर्तमान प्राणी जीव हैं और वहीं जीवात्मा हैं ।

सूत्र - ७०२

भगवन् ! क्या महर्द्धिक यावत् महासुख-सम्पन्न देव, पहले रूपी होकर बाद में अरूपी की विक्रिया करने में समर्थ है ? गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है । भगवन् ! ऐसा क्यों कहते हैं ? गौतम ! मैं यह जानता हूँ, मैं यह देखता हूँ, मैं यह निश्चित जानता हूँ, मैं यह सर्वथा जानता हूँ; मैंने यह जाना है, मैंने यह देखा है, मैंने यह निश्चित समझ लिया है और मैंने यह पूरी तरह से जाना है कि तथा प्रकार के सरूपी, सकर्म सराग, सवेद, समोह सलेश्य, सशरीर और उस शरीर से अविमुक्त जीव के विषय में ऐसा सम्प्रज्ञात होता है, यथा–उस शरीरयुक्त जीव में कालापन यावत् श्वेतपन, सुगन्धित्व या दुर्गन्धित्व, कटुत्व यावत् मधुरत्व, कर्कशत्व यावत् रूक्षत्व होता है । इस कारण, हे गौतम ! वह देव पूर्वोक्त प्रकार से यावत् विक्रिया करके रहने में समर्थ नहीं है ।

भगवन् ! क्या वही जीव पहले अरूपी होकर, फिर रूपी आकार की विकुर्वणा करके रहने में समर्थ है ?

गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है । भन्ते ! क्या कारण है कि वह...यावत् समर्थ नहीं है ? गौतम ! मैं यह जानता हूँ, यावत् कि तथा-प्रकार के अरूपी, अकर्मी, अरागी, अवेदी, अमोही, अलेश्यी, अशरीरी और उस शरीर से विप्रमुक्त जीव के विषय में ऐसा ज्ञात नहीं होता कि जीव में कालापन यावत् रूक्षपन है । इस कारण, हे वह देव पूर्वोक्त प्रकार से विकुर्वणा करने में समर्थ नहीं है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१७ – उद्देशक-३

सूत्र - ७०३

भगवन् ! शैलेशी-अवस्था-प्राप्त अनगार क्या सदा निरन्तर काँपता है, विशेषरूप से काँपता है, यावत् उन-उन भावों (परिणमनों) में परिणमता है ? गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है । सिवाय एक परप्रयोग के ।

भगवन् ! एजना कितने प्रकार की कही गई है ? गौतम ! पाँच प्रकार की यथा-द्रव्य एजना, क्षेत्र एजना, काल एजना, भव एजना और भाव एजना ।

भगवन् ! द्रव्य-एजना कितने प्रकार की कही गई है ? गौतम ! चार प्रकार की । यथा-नैरयिकद्रव्यैजना, तिर्यग्योनिकद्रव्यैजना, मनुष्यद्रव्यैजना और देवद्रव्यैजना । भगवन् ! नैरयिकद्रव्यैजना को नैरयिकद्रव्यएजना क्यों कहा जाता है ? गौतम ! क्योंकि नैरयिक जीव, नैरयिकद्रव्य में वर्तित थे, वर्तते हैं और वर्तेंगे; इस कारण वहाँ नैरयिक जीवों ने, नैरयिकद्रव्य में वर्तते हुए, नैरयिकद्रव्य की एजना की थी, करते हैं और करेंगे, इसी कारण से वह नैरयिकद्रव्यएजना कहलाती है । भगवन् ! तिर्यग्योनिकद्रव्य-एजना, तिर्यग्योनिकद्रव्य-एजना क्यों कहलाती है ? गौतम ! पूर्ववत् । विशेष यह है कि 'नैरयिकद्रव्य' के स्थान पर 'तिर्यग्योनिकद्रव्य' कहना । इसी प्रकार यावत् देवद्रव्य-एजना भी जानना ।

भगवन् ! क्षेत्र-एजना कितने प्रकार की कही गई है ? गौतम ! वह चार प्रकार की कही गई है । यथा-नैरयिकक्षेत्र-एजना यावत् देवक्षेत्र-एजना । भगवन् ! इसे नैरयिकक्षेत्र-एजना क्यों कहा जाता है ? गौतम ! नैरयिक द्रव्य-एजना के समान सारा कथन करना । विशेष यह है कि नैरयिकद्रव्य-एजना के स्थान पर यहाँ नैरयिकक्षेत्र-एजना कहना चाहिए । इसी प्रकार देवक्षेत्र-एजना तक कहना चाहिए । इसी प्रकार काल-एजना, भव-एजना और भाव-एजना के विषय में समझ लेना चाहिए और इसी प्रकार नैरयिककालादि-एजना से लेकर देवभाव-एजना तक जानना चाहिए ।

सूत्र - ७०४

भगवन् ! चलना कितने प्रकार की है ? गौतम ! चलना तीन प्रकार की है, यथा-शरीरचलना, इन्द्रियचलना और योगचलना । भगवन् ! शरीरचलना कितने प्रकार की है ? गौतम ! पाँच प्रकार की यथा-औदारिकशरीर-चलना, यावत् कार्मणशरीरचलना । भगवन् ! इन्द्रियचलना कितने प्रकार की कही गई है ? गौतम ! पाँच प्रकार की यथा-श्रोत्रेन्द्रियचलना यावत् स्पर्शेन्द्रियचलना । भगवन् ! योगचलना कितने प्रकार की कही गई है ? गौतम ! तीन प्रकार की यथा-मनोयोगचलना, वचनयोगचलना और काययोगचलना ।

भगवन् ! औदारिकशरीर-चलना को औदारिकशरीर-चलना क्यों कहा जाता है ? गौतम ! जीवों ने औदारिकशरीर में वर्तते हुए, औदारिकशरीर के योग्य द्रव्यों को, औदारिकशरीर रूप में परिणमाते हुए भूतकाल में औदारिकशरीर की चलना की थी, वर्तमान में चलना करते हैं, और भविष्य में चलना करेंगे, इस कारण से कहा जाता है । भगवन् ! वैक्रियशरीर-चलना को वैक्रियशरीर-चलना किस कारण कहा जाता है ? पूर्ववत् समग्र कथन करना चाहिए । विशेष यह है-औदारिकशरीर के स्थान पर 'वैक्रियशरीर में वर्तते हुए', कहना चाहिए । इसी प्रकार कार्मणशरीर-चलना तक कहना चाहिए ।

भगवन् ! श्रोत्रेन्द्रिय-चलना को श्रोत्रेन्द्रिय-चलना क्यों कहा जाता है ? गौतम ! चूँकि श्रोत्रेन्द्रिय को धारण करते हुए जीवों ने श्रोत्रेन्द्रिय-योग्य द्रव्यों को श्रोत्रेन्द्रिय-रूप में परिणमाते हुए श्रोत्रेन्द्रिय-चलना की थी, करते हैं और करेंगे, इसी कारण से श्रोत्रेन्द्रिय-चलना को श्रोत्रेन्द्रिय-चलना कहा जाता है । इसी प्रकार यावत् स्पर्शेन्द्रिय-चलना तक

जानना चाहिए । भगवन् ! मनोयोग-चलना को मनोयोग-चलना क्यों कहा जाता है ? गौतम ! चूँकि मनोयोग को धारण करते हुए जीवों ने मनोयोग के योग्य द्रव्यों को मनोयोग रूप में परिणमाते हुए मनोयोग की चलना की थी, करते हैं और करेंगे; इसलिए हे गौतम ! मनोयोग से सम्बन्धित चलना को मनोयोग-चलना कहा जाता है । इसी प्रकार वचनयोग-चलना एवं काययोग-चलना जानना ।

सूत्र - ७०५

भगवन् ! संवेग, निर्वेद, गुरु-साधर्मिक-शुश्रूषा, आलोचना, निन्दना, गर्हणा, क्षमापना, श्रुत-सहायता, व्युपशमना, भाव में अप्रतिबद्धता, विनिवर्त्तना, विविक्तशयनासनसेवनता, श्रोत्रेन्द्रिय-संवर यावत् स्पर्शेन्द्रिय-संवर, योग-प्रत्याख्यान, शरीर-प्रत्याख्यान, कषायप्रत्याख्यान, सम्भोग-प्रत्याख्यान, उपधि-प्रत्याख्यान, भक्त-प्रत्याख्यान, क्षमा, विरागता, भावसत्य, योगसत्य, करणसत्य, मनःसमन्वाहरण, वचन-समन्वाहरण, काय-समन्वाहरण, क्रोध-विवेक, यावत् मिथ्यादर्शनशल्य-विवेक, ज्ञान-सम्पन्नता, दर्शन-सम्पन्नता, चारित्र-सम्पन्नता, वेदना-अध्यासनता और मारणान्तिक-अध्यासनता, इन पदों का अन्तिम फल क्या कहा गया है ? हे आयुष्मन् श्रमण गौतम ! संवेद, निर्वेद आदि यावत्-मारणान्तिक अध्यासनता, इन सभी पदों का अन्तिम फल सिद्धि है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१७ – उद्देशक-४

सूत्र - ७०६

उस काल उस समय में राजगृह नगर में यावत् पूछा–भगवन् ! क्या जीव प्राणातिपातिक्रिया करते हैं ? हाँ, गौतम ! करते हैं । भगवन् ! वह स्पृष्ट की जाती है या अस्पृष्ट की जाती है ? गौतम ! वह स्पृष्ट की जाती है, अस्पृष्ट नहीं की जाती; इत्यादि प्रथम शतक के छठे उद्देशक के अनुसार, 'वह क्रिया अनुक्रम से की जाती है, बिना अनुक्रम के नहीं,' (तक) कहना । इसी प्रकार वैमानिकों तक कहना । विशेषता यह है कि जीव और एकेन्द्रिय निर्व्याघात की अपेक्षा से, छह दिशा से आए हुए और व्याघात की अपेक्षा से कदाचित् तीन दिशाओं से, कदाचित् चार दिशाओं से और कदाचित् पाँच दिशाओं से आए हुए कर्म करते हैं । शेष सभी जीव छह दिशा से आए हुए कर्म करते हैं ।

भगवन् ! क्या जीव मृषावाद-क्रिया करते हैं ? हाँ, गौतम ! करते हैं । भगवन् ! वह क्रिया स्पृष्ट की जाती है या अस्पृष्ट की जाती है ? गौतम ! प्राणातिपात के दण्डक के समान मृषावाद-क्रिया का भी दण्डक कहना चाहिए । इसी प्रकार अदत्तादान, मैथुन और परिग्रह के विषय में भी जान लेना चाहिए । इस प्रकार पाँच दण्डक हुए ।

भगवन् ! जिस समय जीव प्राणातिपातिकी क्रिया करते हैं, उस समय वे स्पृष्ट क्रिया करते हैं या अस्पृष्ट क्रिया करते हैं ? गौतम ! पूर्वोक्त प्रकार से–'अनानुपूर्वीकृत नहीं की जाती है', (यहाँ तक) कहना चाहिए । इसी प्रकार वैमानिकों तक जानना चाहिए । इसी प्रकार पारिग्रहिकी क्रिया तक कहना चाहिए । ये पूर्ववत् पाँच दण्डक होते हैं । भगवन् ! जिस देश में जीव प्राणातिपातिकी क्रिया करते हैं, उस देश में वे स्पृष्ट क्रिया करते हैं या अस्पृष्ट क्रिया करते हैं ? गौतम ! पूर्ववत् पारिग्रहिकी क्रिया तक जानना चाहिए । इसी प्रकार ये पाँच दण्डक होते हैं । भगवन् ! जिस प्रदेश में जीव प्राणातिपातिकी क्रिया करते हैं, उस प्रदेश में स्पृष्ट क्रिया करते हैं या अस्पृष्ट क्रिया करते हैं ? गौतम ! पूर्ववत् दण्डक कहना चाहिए । इस प्रकार पारिग्रहिकी क्रिया तक जानना चाहिए । यों ये सब मिलाकर बीस दण्डक हुए ।

सूत्र - ७०७

भगवन् ! जीवों का दुःख आत्मकृत है, परकृत है, अथवा उभयकृत है ? गौतम ! (जीवों का) दुःख आत्म-कृत है, परकृत नहीं और न उभयकृत है । इसी प्रकार वैमानिकों तक जानना चाहिए । भगवन् ! जीव क्या आत्म-कृत दुःख वेदते हैं, परकृत दुःख वेदते हैं, या उभयकृत दुःख वेदते हैं ? गौतम ! जीव आत्मकृत दुःख वेदते हैं, परकृत दुःख नहीं वेदते और न उभयकृत दुःख वेदते हैं । इसी प्रकार वैमानिक तक समझना चाहिए ।

भगवन् ! जीवों को जो वेदना होती है, वह आत्मकृत है, परकृत है अथवा उभयकृत है ? गौतम ! जीवों की वेदना आत्मकृत है, परकृत नहीं, और न उभयकृत है । इसी प्रकार वैमानिकों तक जानना चाहिए । भगवन् ! जीव क्या आत्मकृत वेदना वेदते हैं, परकृत वेदना वेदते हैं, अथवा उभयकृत वेदना वेदते हैं ? गौतम ! जीव आत्म-कृत

वेदना वेदते हैं, परकृत वेदना नहीं वेदते और न उभयकृत वेदना वेदते हैं । इसी प्रकार वैमानिक तक कहना चाहिए । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१७ – उद्देशक-५

सूत्र - ७०८

भगवन् ! देवेन्द्र देवराज ईशान की सुधर्मा सभा कहाँ कही है ? गौतम ! जम्बूद्वीप नामक द्वीप के मन्दर पर्वत के उत्तर में इस रत्नप्रभा पृथ्वी के अत्यन्त सम रमणीय भूभाग से ऊपर चन्द्र और सूर्य का अतिक्रमण करके आगे जाने पर इत्यादि वर्णन...यावत् प्रज्ञापना सूत्र के 'स्थान' पद के अनुसार, यावत्-मध्य भाग में ईशानावतंसक विमान है । वह ईशानावतंसक महाविमान साढ़े बारह लाख योजन लम्बा और चौड़ा है, इत्यादि यावत् दशवें शतक में कथित शक्रेन्द्र के विमान अनुसार ईशानेन्द्र से सम्बन्धित समग्र वक्तव्यता आत्मरक्षक देवों तक कहना चाहिए । ईशानेन्द्र की स्थिति दो सागरोपम से कुछ अधिक है । 'यह देवेन्द्र देवराज ईशान है, तक जानना ।' हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१७ – उद्देशक-६

सूत्र - ७०९

भगवन् ! जो पृथ्वीकायिक जीव, इस रत्नप्रभापृथ्वी में मरण-समुद्घात करके सौधर्मकल्प में पृथ्वीकायिक रूप से उत्पन्न होने के योग्य हैं, वे पहले उत्पन्न होते हैं और पीछे आहार ग्रहण करते हैं, अथवा पहले आहार ग्रहण करते हैं और पीछे उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! वे पहले उत्पन्न होते हैं और पीछे पुद्गल ग्रहण करते हैं; अथवा पहले वे पुद्गल ग्रहण करते हैं और पीछे उत्पन्न होते हैं । भगवन् ! ऐसा किस कारण से कहा गया ? गौतम ! पृथ्वीकायिक जीवों में तीन समुद्घात हैं, यथा-वेदनासमुद्घात, कषायसमुद्घात और मारणान्तिकसमुद्घात । जब पृथ्वीकायिक जीव, मारणान्तिकसमुद्घात करता है, तब वह 'देश' से भी समुद्घात करता है और 'सर्व' से भी समुद्घात करता है । जब देश से समुद्घात करता है, तब पहले पुद्गल ग्रहण करता है और पीछे उत्पन्न होता है । जब सर्व से समुद्घात करता है, तब पहले उत्पन्न होता है और पीछे पुद्गल ग्रहण करता है ।

भगवन् ! जो पृथ्वीकायिक जीव, इस रत्नप्रभापृथ्वी में मरण-समुद्घात करके ईशानकल्प में पृथ्वीकायिक रूप में उत्पन्न होने के योग्य हैं, वे पहले...? इत्यादि पूर्ववत् प्रश्न । गौतम ! पूर्ववत् ईशानकल्प में पृथ्वीकायिक रूप में उत्पन्न होने योग्य जीवों के विषय में जानना चाहिए । इसी प्रकार यावत् अच्युतकल्प के पृथ्वीकायिक के विषय में समझना चाहिए । ग्रैवेयकविमान, अनुत्तरविमान और ईषत्प्राग्भारा पृथ्वी के विषय में भी इसी प्रकार जानना ।

भगवन् ! जो पृथ्वीकायिक जीव, शर्कराप्रभापृथ्वी मे मरण-समुद्घात करके सौधर्मकल्प में पृथ्वीकायिक रूप में उत्पन्न होने योग्य हैं; इत्यादि प्रश्न । रत्नप्रभापृथ्वी के पृथ्वीकायिक जीवों के उत्पाद अनुसार शर्कराप्रभा के पृथ्वीकायिक जीवों का उत्पाद ईषत्प्राग्भारा पृथ्वी तक जानना । रत्नप्रभा के पृथ्वीकायिक जीवों के समान यावत् अधःसप्तमपृथ्वी में मरण-समुद्घात से समवहत जीव का ईषत्प्राग्भारापृथ्वी तक उत्पाद है । भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१७ – उद्देशक-७

सूत्र - ७१०

भगवन् ! जो पृथ्वीकायिक जीव, सौधर्मकल्प में मरण-समुद्घात करके इस रत्नप्रभापृथ्वी में पृथ्वीकायिक रूप से उत्पन्न होने योग्य है, वे पहले उत्पन्न होते हैं और पीछे आहार (पुद्गल) ग्रहण करते हैं अथवा पहले आहार (पुद्गल) ग्रहण करते हैं और पीछे उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! रत्नप्रभापृथ्वी के पृथ्वीकायिक जीवों यावत् ईषत्प्रा-ग्भारा पृथ्वी में उत्पाद कहा गया, उसी प्रकार सौधर्मकल्प के पृथ्वीकायिक जीवों का सातों नरक-पृथ्वीयों में यावत् अधःसप्तमपृथ्वी तक उत्पाद जानना चाहिए । इसी प्रकार सौधर्मकल्प के पृथ्वीकायिक जीवों के समान सभी कल्पों में, यावत् ईषत्प्राग्भारा पृथ्वी के पृथ्वीकायिक जीवों का सभी पृथ्वीयों में अधःसप्तमपृथ्वी तक उत्पाद जानना चाहिए। हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१७ – उद्देशक-८

सूत्र - ७११

भगवन् ! जो अप्कायिक जीव, इस रत्नप्रभा पृथ्वी में मरण-समुद्घात करके सौधर्मकल्प में अप्कायिक-रूप में उत्पन्न होने के योग्य हैं...इत्यादि प्रश्न । गौतम ! पृथ्वीकायिक जीवों के अनुसार अप्कायिक जीवों के विषय में सभी कल्पों में यावत् ईषत्प्राग्भारा पृथ्वी तक उत्पाद कहना चाहिए । रत्नप्रभापृथ्वी के अप्कायिक जीवों के उत्पाद के समान यावत् अधःसप्तमपृथ्वी के अप्कायिक जीवों तक का यावत् ईषत्प्राग्भारापृथ्वी तक उत्पाद जानना चाहिए । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१७ – उद्देशक-९

सूत्र - ७१२

भगवन् ! जो अप्कायिक जीव, सौधर्मकल्प में मरण-समुद्घात करके इस रत्नप्रभा पृथ्वी के घनोदधि-वलयों में अप्कायिक रूप से उत्पन्न होने के योग्य हैं...इत्यादि प्रश्न । गौतम ! शेष सभी पूर्ववत् । जिस प्रकार सौधर्मकल्प के अप्कायिक जीवों का नरक-पृथ्वीयों में उत्पाद कहा, उसी प्रकार ईषत्प्राग्भारा पृथ्वी तक के अप्कायिक जीवों का उत्पाद अधःसप्तम पृथ्वी तक जानना चाहिए । भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१७ – उद्देशक-१०

सूत्र - ७१३

भगवन् ! जो वायुकायिक जीव, इस रत्नप्रभापृथ्वी में मरण-समुद्घात करके सौधर्मकल्प में वायुकायिक रूप में उत्पन्न होने के योग्य हैं, इत्यादि प्रश्न । गौतम ! पृथ्वीकायिक जीवों के समान वायुकायिक जीवों का भी कथन करना चाहिए । विशेषता यह है कि वायुकायिक जीवों में चार समुद्घात कहे गए हैं, यथा-वेदनासमुद्घात यावत् वैक्रियसमुद्घात । वे वायुकायिक जीव मारणान्तिकसमुद्घात से समवहत हो कर देश से समुद्घात करते हैं, इत्यादि सब पूर्ववत् यावत् अधःसप्तमपृथ्वी में समुद्घात कर...। वायुकायिक जीवों का उत्पाद ईषत्प्राग्भारा पृथ्वी तक जानना चाहिए । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१७ – उद्देशक-११

सूत्र - ७१४

भगवन् ! जो वायुकायिक जीव, सौधर्मकल्प में समुद्घात करके इस रत्नप्रभापृथ्वी के घनवात, तनुवात, घनवातवलयों और तनुवातवलयों में वायुकायिक रूप में उत्पन्न होने योग्य हैं...इत्यादि पूर्ववत् प्रश्न । गौतम ! शेष सब पूर्ववत् कहना चाहिए । जिस प्रकार सौधर्मकल्प के वायुकायिक जीवों-का उत्पाद सातों नरकपृथ्वीयों में कहा, उसी प्रकार ईषत्प्राग्भारा पृथ्वी तक के वायुकायिक जीवों का उत्पाद अधःसप्तमपृथ्वी तक जानना । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१७ – उद्देशक-१२

सूत्र - ७१५

भगवन् ! क्या सभी एकेन्द्रिय जीव समान आहार वाले हैं ? सभी समान शरीर वाले हैं इत्यादि पूर्ववत् प्रश्न। गौतम ! प्रथम शतक के द्वीतिय उद्देशकमें पृथ्वीकायिक जीवों के अनुसार यहाँ एकेन्द्रिय जीवों के विषयमें कहना ।

भगवन् ! एकेन्द्रिय जीवों में कितनी लेश्याएं कही गई है ? गौतम ! चार लेश्याएं कही गई है । यथा-कृष्ण-लेश्या यावत् तेजोलेश्या ।

भगवन् ! कृष्णलेश्या यावत् तेजोलेश्या वाले एकेन्द्रिय में कौन किससे अल्प यावत् विशेषाधिक हैं ? गौतम! सबसे थोड़े एकेन्द्रिय जीव तेजोलेश्या वाले हैं, उनसे कापोतलेश्या वाले अनन्तगुणे हैं, उनसे नीललेश्या वाले विशेषाधिक हैं और उनसे कृष्णलेश्या वाले एकेन्द्रिय विशेषाधिक हैं । भगवन् ! इन कृष्णलेश्या वालों से लेकर यावत् तेजोलेश्या वाले एकेन्द्रियों में कौन अल्प ऋद्धि वाला है और कौन महाऋद्धि वाला है ? गौतम ! द्वीपकुमारों की ऋद्धि

अनुसार एकेन्द्रियों में भी कहना चाहिए । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१७ – उद्देशक-१३

सूत्र - ७१६

भगवन् ! क्या सभी नागकुमार समान आहार वाले हैं ? इत्यादि पूर्ववत् प्रश्न । गौतम ! जैसे सोलहवें शतक के द्वीपकुमार उद्देशक में कहा है, उसी प्रकार सब कथन, ऋद्धि तक कहना चाहिए । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१७ – उद्देशक-१४

सूत्र - ७१७

भगवन् ! क्या सभी सुवर्णकुमार समान आहार वाले हैं ? इत्यादि पूर्ववत् प्रश्न । गौतम ! पूर्ववत् । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१७ – उद्देशक-१५

सूत्र - ७१८

भगवन् ! क्या सभी विद्युत्कुमार देव समान आहार वाले हैं ? इत्यादि पूर्ववत् प्रश्न । गौतम ! पूर्ववत् । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१७ – उद्देशक-१६

सूत्र - ७१९

भगवन् ! क्या सभी वायुकुमार समान आहार वाले हैं ? इत्यादि पूर्ववत् प्रश्न । (गौतम !) पूर्ववत् । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१७ – उद्देशक-१७

सूत्र - ७२०

भगवन् ! क्या सभी अग्निकुमार समान आहार वाले हैं ? इत्यादि पूर्ववत् प्रश्न । (गौतम !) पूर्ववत् । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१७ का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

शतक–१८

सूत्र - ७२१

अठारहवें शतक में दस उद्देशक हैं । यथा–प्रथम, विशाखा, माकन्दिक, प्राणातिपात, असुर, गुड़, केवली, अनगार, भाविक तथा सोमिल ।

शतक-१८ – उद्देशक-१

सूत्र - ७२२

उस काल उस समयमें राजगृह नगरमें यावत् पूछा–भगवन् ! जीव, जीवभाव से प्रथम है, अथवा अप्रथम है ? गौतम ! प्रथम नहीं, अप्रथम है । इस प्रकार नैरयिक से लेकर वैमानिक तक जानना । भगवन् ! सिद्ध-जीव, सिद्धभाव की अपेक्षा से प्रथम है या अप्रथम है ? गौतम ! प्रथम है, अप्रथम नहीं है । भगवन् ! अनेक जीव, जीवत्व की अपेक्षा से प्रथम हैं अथवा अप्रथम हैं ? गौतम ! प्रथम नहीं, अप्रथम हैं । इस प्रकार अनेक वैमानिकों तक (जानना) । भगवन् ! सभी सिद्ध जीव, सिद्धत्व की अपेक्षा से प्रथम हैं या अप्रथम हैं ? गौतम ! वे प्रथम हैं, अप्रथम नहीं हैं ।

भगवन् ! आहारकजीव, आहारकभाव से प्रथम है या अथवा अप्रथम है ? गौतम ! प्रथम नहीं, अप्रथम हैं। इसी प्रकार नैरयिक से लेकर वैमानिक तक जानना चाहिए । बहुवचन में भी इसी प्रकार समझना चाहिए । भगवन्! अनाहारक जीव, अनाहारकभाव की अपेक्षा से प्रथम है या अप्रथम है ? गौतम ! कदाचित् प्रथम होता है, कदाचित् अप्रथम होता है । भगवन् ! नैरयिक जीव, अनाहारकभाव से प्रथम है या अप्रथम है ? गौतम ! वह प्रथम नहीं, अप्रथम है । इसी प्रकार नैरयिक से लेकर वैमानिक तक प्रथम नहीं, अप्रथम जानना चाहिए । सिद्धजीव, अनाहा-रकभाव की अपेक्षा से प्रथम है, अप्रथम नहीं है । भगवन् ! अनेक अनाहारकजीव, अनाहारकभाव की अपेक्षा से प्रथम हैं या अप्रथम हैं ? गौतम ! वे प्रथम मी हैं और अप्रथम भी हैं । इसी प्रकार अनेक नैरयिक जीवों से लेकर अनेक वैमानिकों तक प्रथम नहीं, अप्रथम हैं । सभी सिद्ध प्रथम हैं, अप्रथम नहीं हैं । इसी प्रकार प्रत्येक दण्डक के विषय में इसी प्रकार पृच्छा कहना चाहिए ।

भवसिद्धिक जीव एकत्व-अनेकत्व दोनों प्रकार से आहारक जीव के समान प्रथम नहीं, अप्रथम हैं, इत्यादि कथन करना चाहिए । इसी प्रकार अभवसिद्धिक एक या अनेक जीव के विषय में भी जान लेना चाहिए । भगवन्! नो-भवसिद्धिक-नो-अभवसिद्धिक जीव नोभवसिद्धिक-नो-अभवसिद्धिकभाव की अपेक्षा से प्रथम है या अप्रथम है? गौतम ! वह प्रथम है, अप्रथम नहीं है । भगवन् ! नोभवसिद्धिक-नोअभवसिद्धिक सिद्धजीव नोभवसिद्धिक-नोअभवसिद्धिकभाव की अपेक्षा से प्रथम है या अप्रथम है ? पूर्ववत् समझना चाहिए । इसी प्रकार (जीव और सिद्ध) दोनों के बहुवचन सम्बन्धी प्रश्नोत्तर भी समझ लेने चाहिए ।

भगवन् ! संज्ञीजीव, संज्ञीभाव की अपेक्षा से प्रथम है या अप्रथम ? गौतम ! प्रथम नहीं, अप्रथम है । इसी प्रकार विकलेन्द्रिय को छोड़कर वैमानिक तक जानना । बहुवचन-सम्बन्धी भी इसी प्रकार जानना । असंज्ञीजीवों की एकवचन-बहुवचन-सम्बन्धी (वक्तव्यता भी इसी प्रकार समझनी चाहिए) । विशेष इतना है कि यह कथन वाण-व्यन्तरों तक ही (जानना) । एक या अनेक नोसंज्ञी-नोअसंज्ञी जीव, मनुष्य और सिद्ध, नोसंज्ञी-नोअसंज्ञीभाव की अपेक्षा प्रथम है, अप्रथम नहीं है ।

भगवन् ! सलेश्यी जीव, सलेश्यभाव से प्रथम है, अथवा अप्रथम है ? गौतम ! आहारकजीव के समान (वह अप्रथम है) । बहुवचन की वक्तव्यता भी इसी प्रकार समझनी चाहिए । कृष्णलेश्यी से लेकर शुक्ललेश्यी तक के विषय में भी इसी प्रकार जानना । विशेषता यह है कि जिस जीव के जो लेश्या हो, वही कहनी चाहिए । अलेश्यी जीव, मनुष्य और सिद्ध के सम्बन्ध में नोसंज्ञी-नोअसंज्ञी के समान (प्रथम) कहना चाहिए ।

भगवन् ! सम्यग्दृष्टि जीव, सम्यग्दृष्टिभाव की अपेक्षा से प्रथम है या अप्रथम है ? गौतम ! वह कदाचित् प्रथम होता है और कदाचित् अप्रथम होता है । इसी प्रकार एकेन्द्रियजीवों के सिवाय वैमानिक तक समझना चाहिए । सिद्धजीव प्रथम है, अप्रथम नहीं । बहुवचन से सम्यग्दृष्टिजीव प्रथम भी है, अप्रथम भी है । इसी प्रकार वैमानिकों तक

कहना । बहुवचन से (सभी) सिद्ध प्रथम हैं, अप्रथम नहीं हैं । मिथ्यादृष्टिजीव मिथ्यादृष्टिभाव की अपेक्षा से आहारक जीवों के समान कहना । सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव के विषय में सम्यग्मिथ्यादृष्टिभाव की अपेक्षा से सम्यग्दृष्टि के समान (कहना) । विशेष यह है कि जिस जीव के सम्यग्मिथ्यादृष्टि हो, (उसी के विषय में कहना) ।

संयत जीव और मनुष्य के विषय में, एकत्व और बहुत्व की अपेक्षा, सम्यग्दृष्टि जीव के समान, असंयत-जीव के विषय में आहारक जीव के समान, संयतासंयत जीव, पंचेन्द्रिय तिर्यग्योनिक और मनुष्य में सम्यग्दृष्टि के समान समझना चाहिए । नोसंयत-नोअसंयत और नोसंयतासंयत जीव, तथा सिद्ध, प्रथम हैं, अप्रथम नहीं है ।

सकषायी, क्रोधकषायी यावत् लोभकषायी, ये सब एकवचन और बहुवचन से आहारक के समान जानना चाहिए । (एक) अकषायी जीव कदाचित् प्रथम और कदाचित् अप्रथम होता है । इसी प्रकार (एक अकषायी) मनुष्य भी (समझना चाहिए) । (अकषायी एक) सिद्ध प्रथम है, अप्रथम नहीं । बहुवचन से अकषायी जीव प्रथम भी है, अप्रथम भी है । बहुवचन से अकषायी सिद्धजीव प्रथम है, अप्रथम नहीं है ।

ज्ञानी जीव, सम्यग्दृष्टि के समान कदाचित् प्रथम और कदाचित् अप्रथम होते हैं । आभिनिबोधिकज्ञानी यावत् मनःपर्यायज्ञानी, इसी प्रकार हैं । विशेष यह है जिस जीव के जो ज्ञान हो, वह कहना । केवलज्ञानी जीव, मनुष्य और सिद्ध, प्रथम हैं, अप्रथम नहीं हैं । अज्ञानी जीव, मति-अज्ञानी, श्रुत-अज्ञानी और विभंगज्ञानी, ये सब, एकवचन और बहुवचन से आहारक जीव के समान (जानने चाहिए) ।

सयोगी, मनोयोगी, वचनयोगी और काययोगी जीव, एकवचन और बहुवचन से आहारक जीवों के समान अप्रथम होते हैं । विशेष यह है कि जिस जीव के जो योग हो, वह कहना चाहिए । अयोगी जीव, मनुष्य और सिद्ध, प्रथम होते हैं, अप्रथम नहीं होते हैं । साकारोपयुक्त और अनाकारोपयुक्त जीव, अनाहारक जीवों के समान हैं ।

सवेदक यावत् नपुंसकवेद जीव, एकवचन और बहुवचन से, आहारक जीव के समान हैं । विशेष यह है कि, जिस जीव के जो वेद हो, (वह कहना चाहिए) । एकवचन और बहुवचन से, अवेदक जीव, जीव, मनुष्य और सिद्ध में अकषायी जीव के समान हैं ।

सशरीरी जीव, आहारक जीव के समान हैं । इसी प्रकार यावत् कार्मणशरीरी जीव के विषय में भी जान लेना चाहिए । किन्तु आहारक-शरीरी के विषय में एकवचन और बहुवचन से, सम्यग्दृष्टि जीव के समान कहना चाहिए । अशरीरी जीव और सिद्ध, एकवचन और बहुवचन से प्रथम हैं, अप्रथम नहीं । पाँच पर्याप्तियों से पर्याप्त और पाँच अपर्याप्तियों से अपर्याप्त जीव, एकवचन और बहुवचन से, आहारक जीव के समान हैं । विशेष यह है कि जिसके जो पर्याप्ति हो, वह कहनी चाहिए । इस प्रकार नैरयिकों से लेकर वैमानिकों तक जानना चाहिए । अर्थात्-ये सब प्रथम नहीं, अप्रथम हैं । -यह लक्षण गाथा है ।

सूत्र - ७२३

जिस जीव को जो भाव पूर्व से प्राप्त है, उस भाव की अपेक्षा से वह जीव 'अप्रथम' है, किन्तु जिन्हें जो भाव पहले कभी प्राप्त नहीं हुआ है, उस भाव की अपेक्षा से वह जीव प्रथम कहलाता है ।

सूत्र - ७२४

भगवन् ! जीव, जीवभाव की अपेक्षा से चरम है या अचरम है ? गौतम ! चरम नहीं, अचरम है । भगवन् ! नैरयिक जीव, नैरयिकभाव की अपेक्षा से चरम है या अचरम है ? गौतम ! वह कदाचित् चरम है, और कदाचित् अचरम है । इसी प्रकार वैमानिक तक जानना चाहिए । सिद्ध का कथन जीव के समान जानना चाहिए । अनेक जीवों के विषय में चरम-अचरम-सम्बन्धी प्रश्न । गौतम ! वे चरम नहीं, अचरम हैं । नैरयिकजीव, नैरयिकभाव से चरम भी हैं, अचरम भी हैं । इसी प्रकार वैमानिक तक समझना चाहिए । सिद्धों का कथन जीवों के समान है ।

आहारकजीव सर्वत्र एकवचन से कदाचित् चरम और कदाचित् अचरम होता है । बहुवचन से आहारक चरम भी होते हैं और अचरम भी होते हैं । अनाहारक जीव और सिद्ध भी चरम नहीं हैं, अचरम हैं । शेष स्थानों में (अनाहारक) आहारक जीव के समान जानना । भवसिद्धिकजीव, जीवपद में, चरम हैं, अचरम नहीं हैं । शेष स्थानों में

आहारक के समान हैं । अभवसिद्धिक सर्वत्र चरम नहीं, अचरम हैं । नोभवसिद्धिक-नोअभवसिद्धिक जीव और सिद्ध, अभवसिद्धिक के समान हैं । संज्ञी जीव आहारक जीव के समान है । इसी प्रकार असंज्ञी भी (आहारक के समान हैं) । नोसंज्ञी-नोअसंज्ञी जीवपद और सिद्धपद में अचरम हैं, मनुष्यपद में चरम हैं । सलेश्यी, यावत् शुक्ललेश्यी की वक्तव्यता आहारकजीव के समान है । विशेष यह है कि जिसके जो लेश्या हो, वही कहनी चाहिए । अलेश्यी, नोसंज्ञी-नोअसंज्ञी के समान हैं ।

सम्यग्दृष्टि, अनाहारक समान हैं । मिथ्यादृष्टि, आहारक समान हैं । सम्यग्मिथ्यादृष्टि, एकेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय को छोड़कर (एकवचन से) कदाचित् चरम और कदाचित् अचरम हैं । बहुवचन से वे चरम भी हैं और अचरम भी हैं । संयत जीव और मनुष्य, आहारक के समान हैं । असंयत भी उसी प्रकार है । संयतासंयत भी उसी प्रकार है । विशेष यह है कि जिसका जो भाव हो, वह कहना चाहिए । नोसंयत-नोअसंयत-नोसंयतासंयत नोभव-सिद्धिक-नोअभवसिद्धिक के समान जानना चाहिए । सकषायी यावत् लोभकषायी, इन सभी स्थानों में, आहारक के समान हैं अकषायी, जीवपद और सिद्धपदमें, चरम नहीं अचरम हैं । मनुष्यपदमें कदाचित् चरम और कदाचित् अचरम होता है

ज्ञानी सर्वत्र सम्यग्दृष्टि के समान है । आभिनिबोधिक ज्ञानी यावत् मनःपर्यवज्ञानी आहारक के समान है । विशेष यह है कि जिसके जो ज्ञान हो, वह कहना चाहिए । केवलज्ञानी नोसंज्ञी-नोअसंज्ञी के समान हैं । अज्ञानी, यावत् विभंगज्ञानी आहारक के समान हैं । सयोगी, यावत् काययोगी, आहारक के समान हैं । विशेष-जिसके जो योग हो, वह कहना चाहिए । अयोगी, नोसंज्ञी-नोअसंज्ञी के समान है । साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी अनाहारक के समान हैं । सवेदक, यावत् नपुंसकवेदक आहारक के समान है । अवेदक अकषायी के समान हैं ।

सशरीरी यावत् कार्मणशरीरी, आहारक के समान हैं । विशेष यह है कि जिसके जो शरीर हो, वह कहना चाहिए । अशरीरी के विषय में नोभवसिद्धिक-नोअभवसिद्धिक के समान (कहना चाहिए) । पाँच पर्याप्तियों से पर्याप्तक और पाँच अपर्याप्तियों से अपर्याप्तक के विषय में आहारक के समान कहना चाहिए । सर्वत्र दण्डक, एकवचन और बहुवचन से कहने ।

सूत्र - ७२५, ७२६

जो जीव, जिस भाव को पुनः प्राप्त करेगा, वह जीव उस भाव की अपेक्षा से 'अचरम' होता है; और जिस जीव का जिस भाव के साथ सर्वथा वियोग हो जाता है; वह जीव उस भाव की अपेक्षा 'चरम' होता है ।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-१८ – उद्देशक-२

सूत्र - ७२७

उस काल एवं उस समय में विशाखा नामकी नगरी थी । वहाँ बहुपुत्रिक नामक चैत्य था । (वर्णन) एक बार वहाँ श्रमण भगवान महावीर स्वामी का पदार्पण हुआ, यावत् परीषद् पर्युपासना करने लगी । उस काल और उस समय में देवेन्द्र देवराज शक्र, वज्रपाणि, पुरन्दर इत्यादि सोलहवें शतक के द्वीतिय उद्देशक में शक्रेन्द्र का जैसा वर्णन है, उस प्रकार से यावत् वह दिव्य यानविमान में बैठकर वहाँ आया । विशेष बात यह भी, यहाँ आभियोगिक देव भी साथ थे; यावत् शक्रेन्द्र ने बत्तीस प्रकार की नाट्य-विधि प्रदर्शित की । तत्पश्चात् वह जिस दिशा से आया था, उसी दिशा में लौट गया ।

भगवान् गौतम ने, श्रमण भगवान महावीर से पूछा-जिस प्रकार तृतीय शतक में ईशानेन्द्र के वर्णन में कूटागारशाला के दृष्टान्त के विषय में तथा पूर्वभव के सम्बन्ध में प्रश्न किया है, उसी प्रकार यहाँ भी; यावत् 'यह ऋद्धि कैसे सम्प्राप्त हुई', -तक (प्रश्न करना चाहिए) । श्रमण भगवान महावीर ने कहा-हे गौतम ! ऐसा है कि उस काल और उस समय इसी जम्बूद्वीप के भारतवर्ष में हस्तिनापुर नामक नगर था । वहाँ सहस्राम्रवन नामक उद्यान था । (वर्णन) उस हस्तिनापुर नगर में कार्तिक नामका एक श्रेष्ठी रहता था । जो धनाढ्य यावत् किसी से पराभव न पाने वाला था । उसे वणिकों में अग्रस्थान प्राप्त था । वह उन एक हजार आठ व्यापारियों के बहुत से कार्यों में, कारणों में और

कौटुम्बिक व्यवहारों में पूछने योग्य था, जिस प्रकार राजप्रश्नीय सूत्र में चित्त सारथि का वर्णन है, उसी प्रकार यहाँ भी, यावत् चक्षुभूत था, यहाँ तक जानना चाहिए । वह कार्तिक श्रेष्ठी, एक हजार आठ व्यापारियों का आधिपत्य करता हुआ, यावत् पालन करता हुआ रहता था । वह जीव-अजीव आदि तत्त्वों का ज्ञाता-यावत् श्रमणोपासक था ।

उस काल उस समय धर्म की आदि करने वाले अर्हत् श्री मुनिसुव्रत तीर्थंकर वहाँ पधारे; यावत् समवसरण लगा । यावत् परीषद् पर्युपासना करने लगी । उसके पश्चात् वह कार्तिक श्रेष्ठी भगवान के पदार्पण का वृत्तान्त सूनकर हर्षित और सन्तुष्ट हुआ; इत्यादि । जिस प्रकार ग्यारहवें शतक में सुदर्शन-श्रेष्ठी का वन्दनार्थ निर्गमन का वर्णन है, उसी प्रकार वह भी वन्दन के लिए नीकला, यावत् पर्युपासना करने लगा । तदनन्तर तीर्थंकर मुनिसुव्रत अर्हन्त ने कार्तिक सेठ को धर्मकथा कही; यावत् परीषद् लौट गई । कार्तिक सेठ, भगवान मुनिसुव्रत स्वामी से धर्म सूनकर यावत् अवधारण करके अत्यन्त हृष्ट-तुष्ट हुआ, फिर उसने खड़े होकर यावत् सविनय इस प्रकार कहा–'भगवन् ! जैसा आपने कहा वैसा ही यावत् है । हे देवानुप्रिय प्रभो ! विशेष यह कहना है, मैं एक हजार आठ व्यापारी मित्रों से पूछूँगा और अपने ज्येष्ठ पुत्र को कुटुम्ब का भार सौपूँगा और तब में आप देवानुप्रिय के पास प्रव्रजित होऊंगा । (भगवान–) देवानुप्रिय ! जिस प्रकार तुम्हें सुख हो, वैसा करो, किन्तु विलम्ब मत करो ।

तदनन्तर वह कार्तिक श्रेष्ठी यावत् नीकला और वहाँ से हस्तिनापुर नगर में जहाँ अपना घर था वहाँ आया। फिर उसने उन एक हजार आठ व्यापारी मित्रों को बुलाकर इस प्रकार कहा–'हे देवानुप्रियो ! बात ऐसी है कि मैंने अर्हन्त भगवान मुनिसुव्रत स्वामी से धर्म सूना है । वह धर्म मुझे इष्ट, अभीष्ट और रुचिकर लगा । हे देवानुप्रियो ! उस धर्म को सूनने के पश्चात् मैं संसार के भय से उद्विग्न हो गया हूँ और यावत् मैं तीर्थंकर के पास प्रव्रज्या ग्रहण करना चाहता हूँ । तो हे देवानुप्रियो ! तुम सब क्या करोगे ? क्या प्रवृत्ति करने का विचार है ? तुम्हारे हृदय में क्या इष्ट है ? और तुम्हारी क्या करने की क्षमता (शक्ति) है ?' यह सूनकर उन एक हजार आठ व्यापारी मित्रों ने कार्तिक सेठ से इस प्रकार कहा–यदि आप संसारभय से उद्विग्न होकर गृहत्याग कर यावत् प्रव्रजित होंगे, तो फिर, देवानुप्रिय ! हमारे लिए दूसरा कौन-सा आलम्बन है ? या कौन-सा आधार है ? अथवा कौन-सी प्रतिबद्धता रह जाती है ? अतएव हे देवानुप्रिय ! हम भी संसार के भय से उद्विग्न हैं, तथा जन्ममरण के चक्र से भयभीत हो चूके हैं । हम भी आप देवानुप्रिय के साथ अगारवास का त्याग कर अर्हन्त मुनिसुव्रत स्वामी के पास मुण्डित होकर अनगार-दीक्षा ग्रहण करेंगे । व्यापारी-मित्रों का अभिमत जानकर कार्तिक श्रेष्ठी ने उन १००८ व्यापारी-मित्रों को इस प्रकार कहा–यावत् अपने-अपने घर जाओ, ज्येष्ठ पुत्र को कुटुम्ब का भार सौंप दो । तब एक हजार पुरुषों द्वारा उठाने योग्य शिबिका में बैठकर कालक्षेप किये बिना मेरे पास आओ ।' कार्तिक सेठ का यह कथन उन्होंने विनय-पूर्वक स्वीकार किया और अपने-अपने घर आए । फिर उन्होंने विपुल अशनादि तैयार करवाया और अपने मित्र-ज्ञातिजन आदि को आमन्त्रित किया । यावत् उन मित्र-ज्ञातिजनादि के समक्ष अपने ज्येष्ठपुत्र को कुटुम्ब का भार सौंपा । फिर उन मित्र-ज्ञाति-स्वजन यावत् ज्येष्ठपुत्र से अनुमति प्राप्त की । फिर हजार पुरुषों द्वारा उठाने योग्य शिबिका में बैठे । मार्ग में मित्र, ज्ञाति, यावत् ज्येष्ठपुत्र के द्वारा अनुगमन किये जाते हुए यावत् वाद्यों के निनादपूर्वक अविलम्ब कार्तिक सेठ के समीप उपस्थित हुए ।

तदनन्तर कार्तिक श्रेष्ठी ने गंगदत्त के समान विपुल अशनादि आहार तैयार करवाया, यावत् मित्र ज्ञाति यावत् परिवार, ज्येष्ठपुत्र एवं एक हजार आठ व्यापारीगण के साथ उनके आगे-आगे समग्र ऋद्धिसहित यावत् वाद्य-निनाद-पूर्वक हस्तिनापुर नगर के मध्य में से होता हुआ, गंगदत्त के समान गृहत्याग करके वह भगवान मुनि-सुव्रत स्वामी के पास पहुँचा यावत् इस प्रकार बोला–भगवन् ! यह लोक चारों ओर से जल रहा हे, भन्ते ! यह संसार अतीव प्रज्वलित हो रहा है; यावत् परलोक में अनुगामी होगा । अतः मैं एक हजार आठ वणिकों सहित आप स्वयं के द्वारा प्रव्रजित होना और यावत् आप से धर्म का उपदेश-निर्देश प्राप्त करना चाहता हूँ । इस पर श्री मुनि-सुव्रत तीर्थंकर ने एक हजार आठ वणिक्-मित्रों सहित कार्तिक श्रेष्ठी को स्वयं प्रव्रज्या प्रदान की और यावत् धर्म का उपदेश-निर्देश किया कि– देवानुप्रियो ! अब तुम्हें इस प्रकार चलना चाहिए, इस प्रकार खड़े रहना चाहिए आदि, यावत् इस प्रकार संयम का पालन करना चाहिए । एक हजार आठ व्यापारी मित्रों सहित कार्तिक सेठ ने भगवान मुनिसुव्रत अर्हन्त के इस

धार्मिक उपदेश को सम्यक् रूप से स्वीकार किया तथा उनकी आज्ञा के अनुसार सम्यक् रूप से चलने लगा, यावत् संयम का पालन करने लगा । इस प्रकार एक हजार आठ वणिकों के साथ वह कार्तिक सेठ अनगार बना, तथा ईयासमिति आदि समितियों से युक्त यावत् गुप्त ब्रह्मचारी बना ।

इसके पश्चात् उस कार्तिक अनगार ने तथारूप स्थविरों के पास सामायिक से लेकर चौदह पूर्वों तक का अध्ययन किया । साथ ही बहुत से चतुर्थ, छट्ठ, अट्ठम आदि तपश्चरण से आत्मा को भावित करते हुए पूरे बारह वर्ष तक श्रामण्य-पर्याय का पालन किया । अन्त में, उसने एक मास की संलेखना द्वारा अपने शरीर को झूषित किया, अनशन से साठ भक्त का छेदन किया और आलोचना प्रतिक्रमण आदि करके आत्मशुद्धि की, यावत् काल के समय कालधर्म को प्राप्त कर वह सौधर्मकल्प देवलोक में, सौधर्मावतंसक विमान में रही हुई उपपात सभा में देव-शय्या में यावत् शक्र देवेन्द्र के रूप में उत्पन्न हुआ । इसी से कहा गया था–'शक्र देवेन्द्र देवराज अभी-अभी उत्पन्न हुआ है ।' शेष वर्णन गंगदत्त के समान यावत्–'वह सभी दुःखों का अन्त करेगा,' (तक) विशेष यह है कि उसकी स्थिति दो सागरोपम की है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१८ – उद्देशक-३

सूत्र - ७२८

उस काल उस समयमें राजगृह नगर था । वहाँ गुणशील नामक चैत्य था । यावत् परीषद् वन्दना करके वापिस लौट गई । उस काल एवं उस समय में श्रमण भगवान महावीर के अन्तेवासी यावत् प्रकृतिभद्र माकन्दिपुत्र नामक अनगार ने, मण्डितपुत्र अनगार के समान यावत् पर्युपासना करते हुए पूछा–भगवन् ! क्या कापोतलेश्यी पृथ्वीकायिक जीव, कापोतलेश्यी पृथ्वीकायिक जीवों में से मरकर अन्तररहित मनुष्य शरीर प्राप्त करता है ? फिर केवलज्ञान उपार्जित करता है ? तत्पश्चात् सिद्ध-बुद्ध-मुक्त होता है यावत् सर्व दुःखों का अन्त करता है? हाँ, माकन्दिपुत्र ! वह यावत् सब दुःखों का अन्त करता है । भगवन् ! क्या कापोतलेश्यी अप्कायिक जीव कापोतलेश्यी अप्कायिक जीवों में से मरकर अन्तररहित मनुष्यशरीर प्राप्त करता है ? फिर केवलज्ञान प्राप्त करके यावत् सब दुःखों का अन्त करता है ? हाँ, माकन्दिपुत्र ! वह यावत् सब दुःखों का अन्त करता है । भगवन् ! कापोतलेश्यी वनस्पतिकायिक जीव के सम्बन्ध में भी वही प्रश्न है । हाँ, माकन्दिपुत्र ! वह भी यावत् सब दुःखों का अन्त करता है ।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है' यों कहकर माकन्दिपुत्र अनगार श्रमण भगवान महावीर को यावत् वन्दना-नमस्कार करके जहाँ श्रमण निर्ग्रन्थ थे, वहाँ उनके पास आए, उनसे इस प्रकार कहने लगे–आर्यो ! कापोतलेश्यी पृथ्वीकायिक जीव पूर्वोक्त प्रकार से यावत् सब दुःखों का अन्त करता है, इसी प्रकार हे आर्यो ! कापोतलेश्यी अप्कायिक जीव भी यावत् सब दुःखों का अन्त करता है, इसी प्रकार कापोतलेश्यी वनस्पतिकायिक जीव भी यावत् सभी दुःखों का अन्त करता है । तदनन्तर उन श्रमण निर्ग्रन्थोंने माकन्दिपुत्र अनगार की इस प्रकार की प्ररूपणा, व्याख्या यावत् मान्यता पर श्रद्धा नहीं की, न ही उसे मान्य किया। वे इस मान्यता के प्रति अश्रद्धालु बनकर भगवान महावीर स्वामी के पास आए । फिर उन्होंने श्रमण भगवान महावीर को वन्दना-नमस्कार करके इस प्रकार पूछा–'भगवन् ! माकन्दिपुत्र अनगार ने हमसे कहा यावत् प्ररूपणा की कि कापोतलेश्यी पृथ्वीकायिक, अप्कायिक और वनस्पतिकायिक जीव, यावत् सभी दुःखों का अन्त करता है। हे भगवन् ! ऐसा कैसे हो सकता है ?' भगवान महावीरने उन श्रमण निर्ग्रन्थों से कहा–'आर्यो ! माकन्दिपुत्र अनगारने जो तुमसे कहा है, यावत् प्ररूपणा की है, वह कथन सत्य है । आर्यो! मैं भी इसी प्रकार कहता हूँ, यावत् प्ररूपणा करता हूँ । इसी प्रकार कृष्णलेश्यी पृथ्वीकायिक जीव, कृष्णलेश्यी पृथ्वीकायिकों में से मरकर, यावत् सभी दुःखों का अन्त करता है । नीललेश्यी एवं कापोतलेश्यी पृथ्वीकायिक भी यावत् सर्व दुःखों का अन्त करता है । पृथ्वीकायिक के समान अप्कायिक और वनस्पतिकायिक भी, यावत् सर्व दुःखों का अन्त करता है। यह कथन सत्य है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, यों कहकर उन श्रमण-निर्ग्रन्थों ने श्रमण भगवान महावीर स्वामी को वन्दन-नमस्कार किया, और वे जहाँ माकन्दिपुत्र अनगार थे, वहाँ आए । उन्हें वन्दन-नमस्कार किया । फिर उन्होंने उनसे सम्यक् प्रकार से विनयपूर्वक बार-बार क्षमायाचना की ।

सूत्र - ७२९

तत्पश्चात् माकन्दिपुत्र अनगार अपने स्थान से उठे और श्रमण भगवान महावीर के पास आए । उन्होंने श्रमण भगवान महावीर को वन्दन-नमस्कार किया और इस प्रकार पूछा-'भगवन् ! सभी कर्मों को वेदते हुए, सर्व कर्मों की निर्जरा करते हुए, समस्त मरणों से मरते हुए, सर्वशरीर को छोड़ते हुए तथा चरम कर्म को वेदते हुए, चरम कर्म की निर्जरा करते हुए, चरम मरण से मरते हुए, चरमशरीर को छोड़ते हुए एवं मारणान्तिक कर्म को वेदते हुए, निर्जरा करते हुए, मारणान्तिक मरण से मरते हुए, मारणान्तिक शरीर को छोड़ते हुए भावितात्मा अनगार के जो चरमनिर्जरा के पुद्गल हैं, क्या वे पुद्गल सूक्ष्म कहे गए हैं ? हे आयुष्मन् श्रमणप्रवर ! क्या वे पुद्गल समग्र लोक का अवगाहन करके रहे हुए हैं ? हाँ, माकन्दिपुत्र ! तथाकथित भावितात्मा अनगार के यावत् वे चरम निर्जरा के पुद्गल समग्र लोक का अवगाहन करके रहे हुए हैं ।

भगवन् ! क्या छद्मस्थ मनुष्य उन निर्जरा-पुद्गलों के अन्यत्व और नानात्व को जानता-देखता है ? हे माकन्दिपुत्र ! प्रज्ञापनासूत्र के प्रथम इन्द्रियोद्देशक के अनुसार वैमानिक तक जानना चाहिए । यावत्-इनमें जो उपयोगयुक्त हैं, वे जानते, देखते और आहाररूप में ग्रहण करते हैं, इस कारण से हे माकन्दिपुत्र ! यह कहा जाता है कि...यावत् जो उपयोगरहित हैं, वे उन पुद्गलों को जानते-देखते नहीं, किन्तु उन्हें आहरण-ग्रहण करते हैं, इस प्रकार निक्षेप कहना चाहिए । भगवन् ! क्या नैरयिक उन निर्जरा पुद्गलों को नहीं जानते, नहीं देखते, किन्तु ग्रहण करते हैं ? हाँ, करते हैं, इसी प्रकार पंचेन्द्रिय तिर्यग्योनिकों तक जानना ।

भगवन् ! क्या मनुष्य उन निर्जरा पुद्गलों को जानते-देखते हैं और ग्रहण करते हैं, अथवा वे नहीं जानते-देखते, और नहीं आहरण करते हैं ? गौतम ! कईं मनुष्य उन पुद्गलों को जानते-देखते हैं और ग्रहण करते हैं, कईं मनुष्य नहीं जानते-देखते, किन्तु उन्हें ग्रहण करते हैं । भगवन् ! आप यह किस कारण से कहते हैं ? गौतम ! मनुष्य दो प्रकार के कहे गए हैं, यथा-संज्ञीभूत और असंज्ञीभूत । उनमें जो असंज्ञीभूत हैं, वे नहीं जानते-देखते, किन्तु ग्रहण करते हैं । जो संज्ञीभूत मनुष्य हैं, वे दो प्रकार के हैं, यथा-उपयोगयुक्त और उपयोगरहित । उनमें जो उपयोगरहित हैं वे उन पुद्गलों को नहीं जानते-देखते, किन्तु ग्रहण करते हैं । मगर जो उपयोगयुक्त हैं, वे जानते-देखते हैं, और ग्रहण करते हैं । इस कारण से, हे गौतम ! ऐसा कहा गया है कि कोई मनुष्य नहीं जानते-देखते, किन्तु आहाररूप से ग्रहण करते हैं, तथा कईं जानते-देखते हैं और ग्रहण करते हैं ।' वाणव्यन्तर और ज्योतिष्क देवों का कथन नैरयिकों के समान जानना चाहिए ।

भगवन् ! वैमानिक देव उन निर्जरा पुद्गलों को जानते-देखते और उनका आहरण करते हैं या नहीं करते हैं? गौतम ! मनुष्यों के समान समझना । वैमानिक देव दो प्रकार के हैं । यथा-मायी-मिथ्यादृष्टि-उपपन्नक और अमायी-सम्यग्दृष्टि-उपपन्नक । जो मायी-मिथ्यादृष्टि-उपपन्नक हैं, वे नहीं जानते-देखते, किन्तु ग्रहण करते हैं, तथा जो अमायी-सम्यग्दृष्टि-उपपन्नक हैं, वे भी दो प्रकार के हैं, यथा-अनन्तरोपपन्नक और परम्परोपपन्नक । जो अनन्त-रोपपन्नक होते हैं, वे नहीं जानते-देखते, किन्तु ग्रहण करते हैं तथा जो परम्परोपपन्नक हैं, वे दो प्रकार के हैं, यथा-पर्याप्तक और अपर्याप्तक । उनमें जो अपर्याप्यतक हैं, वे उन पुद्गलों को नहीं जानते-देखते, किन्तु ग्रहण करते हैं। उनमें जो पर्याप्तक हैं, वे दो प्रकार के हैं; यथा-उपयोगयुक्त और उपयोगरहित । उनमें से जो उपयोगरहित हैं, वे नहीं जानते-देखते, किन्तु ग्रहण करते हैं । [जो उपयोगयुक्त हैं, वे जानते-देखते हैं और ग्रहण करते हैं ।]

सूत्र - ७३०

भगवन् ! बन्ध कितने प्रकार का कहा गया है ? माकन्दिपुत्र ! दो प्रकार का-द्रव्यबन्ध और भावबन्ध । भगवन् द्रव्यबन्ध कितने प्रकार का है ? माकन्दिपुत्र ! दो प्रकार का यथा प्रयोगबन्ध और विस्रसाबन्ध । भगवन् ! विस्रसाबन्ध कितने प्रकार का है ? माकन्दिपुत्र ! दो प्रकार का यथा-सादि विस्रसाबन्ध और अनादि विस्रसाबन्ध । भगवन् ! प्रयोगबन्ध कितने प्रकार का कहा गया है ? माकन्दिपुत्र ! दो प्रकार का यथा-शिथिलबन्धनबन्ध और गाढ़ बन्धनबन्ध भगवन् ! भावबन्ध कितने प्रकार का है ? माकन्दिपुत्र ! दो प्रकार का, यथा-मूलप्रकृतिबन्ध और उत्तरप्रकृतिबन्ध ।

भगवन् ! नैरयिक जीवों का कितने प्रकार का भावबन्ध कहा गया है ? माकन्दिपुत्र ! दो प्रकार का, यथा-मूलप्रकृतिबन्ध और उत्तरप्रकृतिबन्ध । इसी प्रकार वैमानिकों तक (कहना चाहिए) । भगवन् ! ज्ञानावरणीय कर्म का भावबन्ध कितने प्रकार का कहा गया है ? माकन्दिपुत्र ! दो प्रकार का, यथा-मूलप्रकृतिबन्ध और उत्तरप्रकृति-बन्ध । भगवन् ! नैरयिक जीवों के ज्ञानावरणीय कर्म का भावबन्ध कितने प्रकार का कहा गया है ? माकन्दिपुत्र ! दो प्रकार का, यथा-मूलप्रकृतिबन्ध और उत्तरप्रकृतिबन्ध । इसी प्रकार वैमानिकों तक कहना चाहिए । ज्ञानावर-णीय कर्म दण्डक अनुसार अन्तराय कर्म तक (दण्डक) कहना चाहिए ।

सूत्र - ७३१

भगवन् ! जीव ने जो पापकर्म किया है, यावत् करेगा क्या उनमें परस्पर कुछ भेद है ? हाँ, माकन्दिपुत्र ! है। भगवन् ! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं ? माकन्दिपुत्र ! जैसे कोई पुरुष धनुष को ग्रहण करे, फिर वह बाण को ग्रहण करे और अमुक प्रकार की स्थिति में खड़ा रहे, तत्पश्चात् बाण को कान तक खींचे और अन्त में, उस बाण को आकाश में ऊंचा फेंके, तो हे माकन्दिपुत्र ! आकाश में ऊंचे फेंके हुए उस बाण के कम्पन में भेद है, यावत् -वह उस-उस रूप में परिणमन करता है । उसमें भेद है न ? हाँ, भगवन् ! है । हे माकन्दिपुत्र ! इसी कारण ऐसा कहा जाता है कि उस कर्म के उस-उस रूपादि-परिणाम में भी भेद है । भगवन् ! नैरयिकों ने जो पापकर्म किया है, यावत् करेंगे, क्या उनमें परस्पर कुछ भेद है ? पूर्ववत् । इसी प्रकार वैमानिकों तक जानना ।

सूत्र - ७३२

भगवन् ! नैरयिक, जिन पुद्गलों को आहार रूप से ग्रहण करते हैं, भगवन् ! उन पुद्गलों का कितना भाग भविष्यकालमें आहाररूप से गृहीत होता है और कितना भाग निर्जरता है ? माकन्दिपुत्र ! असंख्यातवे भाग का आहाररूपसे ग्रहण होता है और अनन्तवे भाग निर्जरण होता है। भगवन्! क्या कोई जीव उन निर्जरा पुद्गलों पर बैठने, यावत् सोनेमें समर्थ है ? माकन्दिपुत्र! यह अर्थ समर्थ नहीं है। आयुष्मन् श्रमण! ये निर्जरा पुद्गल अनाधार रूप कहे गए हैं । इसी प्रकार वैमानिकों तक कहना चाहिए । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-१८ – उद्देशक-४

सूत्र - ७३३

उस काल और उस समय में राजगृह नगर में यावत् गौतम स्वामी ने भगवान महावीर से इस प्रकार पूछा-भगवन् ! प्राणातिपात, मृषावाद यावत् मिथ्यादर्शनशल्य और प्राणातिपातविरमण, मृषावादविरमण, यावत् मिथ्या-दर्शनशल्यविवेक तथा पृथ्वीकायिक यावत् वनस्पतिकायिक, एवं धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, शरीररहित जीव, परमाणु पुद्गल, शैलेशी अवस्था-प्रतिपन्न अनगार और सभी स्थूलकाय धारक कलेवर, ये सब (मिलकर) दो प्रकार के हैं-जीवद्रव्य रूप और अजीवद्रव्य रूप । प्रश्न यह है कि क्या ये सभी जीवों के परिभोग में आते हैं ? गौतम ! प्राणातिपात से लेकर सर्वस्थूलकायधर कलेवर तक जो जीवद्रव्यरूप और अजीवद्रव्यरूप हैं, इनमें से कईं तो जीवों के परिभोग में आते हैं और कईं जीवों के परिभोग में नहीं आते ।

भगवन् ! ऐसा किस कारण से कहते हैं ? गौतम ! प्राणातिपात यावत् मिथ्यादर्शनशल्य, पृथ्वीकायिक यावत् वनस्पतिकायिक और सभी स्थूलाकार कलेवरधारी; ये सब मिलकर जीवद्रव्यरूप और अजीवद्रव्यरूप-दो प्रकार के हैं; ये सब, जीवों के परिभोग में आते हैं तथा प्राणातिपातविरमण, यावत् मिथ्यादर्शनशल्यविवेक, धर्मा-स्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, यावत् परमाणु-पुद्गल एवं शैलेशीअवस्था प्राप्त अनगार, ये सब मिलकर जीवद्रव्यरूप और अजीवद्रव्यरूप-दो प्रकार के हैं । ये सब जीवों के परिभोग में नहीं आते । इसी कारण ऐसा कहा जाता है कि यावत् परिभोग में नहीं आते हैं ।

सूत्र - ७३४

भगवन् ! कषाय कितने प्रकार का कहा गया है ? गौतम ! चार प्रकार का, इत्यादि प्रज्ञापनासूत्र का कषाय पद, लोभ के वेदन द्वारा अष्टविध कर्मप्रकृतियों की निर्जरा करेंगे, तक कहना चाहिए ।

भगवन् ! युग्म (राशियाँ) कितने कहे गए हैं ? गौतम ! चार हैं, यथा–कृतयुग्म, त्र्योज, द्वापरयुग्म और कल्योज। भगवन् ! आप किस कारण से कहते हैं? गौतम ! जिस राशि से चार-चार नीकालने पर, अन्तमें चार शेष रहें, वह राशि है–'कृतयुग्म' । जिस राशिमें से चार-चार नीकालते हुए अन्तमें तीन शेष रहें, वह राशि 'त्र्योज' कहलाती है । जिस राशिमें से चार-चार नीकालने पर अन्तमें दो शेष रहें, वह राशि 'द्वापरयुग्य' कहलाती है, जिस राशिमें से चार-चार नीकालते हुए अन्तमें एक शेष रहे, वह राशि कल्योज कहलाती है । इस कारण से ये राशियाँ यावत् कल्योज कहते हैं

भगवन् ! नैरयिक क्या कृतयुग्म हैं, यावत् कल्योज हैं ? गौतम ! वे जघन्यपद में कृतयुग्म हैं, उत्कृष्टपद में त्र्योज हैं तथा अजघन्योत्कृष्ट पद में कदाचित् कृतयुग्म यावत् कल्योज हैं । इसी प्रकार स्तनितकुमारों तक (कहना चाहिए) । भगवन् ! वनस्पतिकायिक कृतयुग्म हैं, यावत् कल्योज रूप हैं ? वे जघन्यपद और उत्कृष्टपद की अपेक्षा भी अपद हैं । अजघन्योत्कृष्टपद की अपेक्षा कदाचित् कृतयुग्म यावत् कदाचित् कल्योज रूप हैं ।

भगवन् ! द्वीन्द्रिय जीवों के विषय में भी इसी प्रकार का प्रश्न है । गौतम ! (द्वीन्द्रिय जीव) जघन्यपद में कृतयुग्म हैं और उत्कृष्ट पद में द्वापरयुग्म हैं, किन्तु अजघन्योत्कृष्ट पद में कदाचित् कृतयुग्म, यावत् कदाचित् कल्योज हैं । इसी प्रकार यावत् चतुरिन्द्रिय पर्यन्त कहना चाहिए । शेष एकेन्द्रियों की वक्तव्यता, द्वीन्द्रिय की वक्तव्यता के समान समझना चाहिए । पंचेन्द्रिय-तिर्यञ्चयोनिकों से लेकर वैमानिकों तक का कथन नैरयिकों के समान (जानना चाहिए) । सिद्धों का कथन वनस्पतिकायिकों के समान जानना चाहिए ।

भगवन् ! क्या स्त्रियाँ कृतयुग्म हैं ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! वे जघन्यपद में कृतयुग्म और उत्कृष्टपद में भी कृतयुग्म हैं, किन्तु अजघन्योत्कृष्ट पद में कदाचित कृतयुग्म हैं और यावत् कदाचित् कल्योज हैं । असुरकुमारों की स्त्रियों से लेकर स्तनितकुमार-स्त्रियों तक इसी प्रकार (समझना चाहिए) । तिर्यञ्चयोनिक स्त्रियों, मनुष्य स्त्रियों एवं वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिक देवों की देवियों के विषय में भी इसी प्रकार (कहना चाहिए) ।

सूत्र - ७३५

भगवन् ! जितने अल्प आयुवाले अन्धकवह्नि जीव हैं, उतने ही उत्कृष्ट आयुवाले अन्धकवह्नि जीव हैं ? हाँ, गौतम! जितने अल्पायुष्क अन्धकवह्नि जीव हैं, उतने ही उत्कृष्टायुष्क अन्धकवह्नि जीव हैं। भगवन् ! इसी प्रकार है ।'

शतक-१८ – उद्देशक-५

सूत्र - ७३६

भगवन् ! दो असुरकुमार देव, एक ही असुरकुमारावास में असुरकुमारदेवरूप में उत्पन्न हुए । उनमें से एक असुरकुमारदेव प्रासादीय, दर्शनीय, सुन्दर और मनोरम होता है, जबकि दूसरा असुरकुमारदेव न तो प्रसन्नता उत्पन्न करने वाला होता है, न दर्शनीय, सुन्दर और मनोरम होता है, भगवन् ! ऐसा क्यों होता है ? गौतम ! असुरकुमारदेव दो प्रकार के कहे गए हैं, यथा–वैक्रियशरीर वाले और अवैक्रियशरीर वाले । उनमें से जो वैक्रियशरीर वाले असुर-कुमारदेव होते हैं, वे प्रासादीय, दर्शनीय, सुन्दर और मनोरम होते हैं, किन्तु जो अवैक्रियशरीर वाले हैं, वे प्रसन्नता उत्पन्न करने वाले यावत् मनोरम नहीं होते ।

भगवन् ! ऐसा क्यों कहते हैं कि वैक्रियशरीर वाले देव प्रसन्नता-उत्पादक यावत् मनोरम होते हैं, अवैक्रिय-शरीर वाले नहीं होते हैं ? गौतम ! जैसे, इस मनुष्यलोक में दो पुरुष हों, उनमें से एक पुरुष आभूषणों से अलंकृत और विभूषित हो और एक पुरुष अलंकृत और विभूषित न हो, तो हे गौतम ! उन दोनों पुरुषों में कौन-सा पुरुष प्रसन्नता उत्पन्न करने वाला, यावत् मनोरम्य लगता है और कौन-सा प्रसन्नता उत्पादक यावत् मनोरम्य नहीं लगता ? जो पुरुष अलंकृत और विभूषित है, वह अथवा जो पुरुष अलंकृत और विभूषित नहीं है वह ? (गौतम–) भगवन् ! उन दोनों में से जो पुरुष अलंकृत और विभूषित है, वही प्रसन्नता उत्पन्न करने वाला यावत् मनोरम्य है, और जो पुरुष अलंकृत और विभूषित नहीं है, वह प्रसन्नता उत्पन्न करने वाला, यावत् मनोरम्य नहीं है । भगवन् ! दो नाग-कुमारदेव एक नागकुमारावास में उत्पन्न हुए इत्यादि प्रश्न । गौतम ! पूर्ववत् । इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमारों तक तथा वाणव्यन्तर ज्योतिष्क और वैमानिक देवों के विषय में भी जानना ।

सूत्र - ७३७

भगवन् ! दो नैरयिक एक ही नरकावास में नैरयिकरूप से उत्पन्न हुए । उनमें से एक नैरयिक महाकर्म वाला यावत् महावेदना वाला और एक नैरयिक अल्पकर्म वाला यावत् अल्पवेदना वाला होता है, तो भगवन् ! ऐसा क्यों होता है ? गौतम ! नैरयिक दो प्रकार के कहे गए हैं, यथा-मायीमिथ्यादृष्टि-उपपन्नक और अमायीसम्यग्दृष्टि-उपपन्नक इनमें से जो मायीमिथ्यादृष्टि-उपपन्नक नैरयिक हैं वह महाकर्म वाला यावत् महावेदना वाला है, और उनमें जो अमायीसम्यग्दृष्टि-उपपन्नक नैरयिक है, वह अल्पकर्म वाला यावत् अल्पवेदना वाला होता है । भगवन् ! दो असुरकुमारों के महाकर्म-अल्पकर्मादि विषयक प्रश्न । हे गौतम ! वहाँ भी पूर्ववत् । इसी प्रकार एकेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय को छोड़कर वैमानिकों तक समझना ।

सूत्र - ७३८

भगवन् ! जो नैरयिक मरकर अन्तर-रहित पंचेन्द्रियतिर्यञ्चोनिकों में उत्पन्न होने के योग्य हैं, भगवन् ! वह किस आयुष्य का प्रतिसंवेदन करता है ? गौतम ! वह नारक नैरयिक-आयुष्य का प्रतिसंवेदन करता है, और पंचे-न्द्रियतिर्यञ्चयोनिक के आयुष्य के उदयाभिमुख-करके रहता है । इसी प्रकार मनुष्यों में उत्पन्न होने योग्य जीव के विषय में समझना । विशेष यह है कि वह मनुष्य के आयुष्य को उदयाभिमुख करके रहता है ।

भगवन् ! जो असुरकुमार मरकर अन्तररहित पृथ्वीकायिक जीवों में उत्पन्न होने योग्य है, उसके विषय में पूर्ववत् प्रश्न है । गौतम ! वह असुरकुमार के आयुष्य का प्रतिसंवेदन करता है और पृथ्वीकायिक के आयुष्य को उदयाभिमुख करके रहता है । इस प्रकार जो जीव जहाँ उत्पन्न होने के योग्य है, वह उसके आयुष्य को उदयाभि-मुख करता है, और जहाँ रहा हुआ है, वहाँ के आयुष्य का वेदन करता है । इस प्रकार वैमानिक तक जानना चाहिए। विशेष यह है कि जो पृथ्वीकायिक जीव पृथ्वीकायिकों में ही उत्पन्न होने योग्य है, वह अपने उसी पृथ्वी-कायिक के आयुष्य का वेदन करता है और अन्य पृथ्वीकायिक के आयुष्य को उदयाभिमुख करके रहता है । इसी प्रकार मनुष्य तक स्वस्थान में उत्पाद के विषय में कहना चाहिए । परस्थान में उत्पाद के विषय में पूर्वोक्तवत् समझना चाहिए ।

सूत्र - ७३९

भगवन् ! दो असुरकुमार, एक ही असुरकुमारावास में असुरकुमार रूप से उत्पन्न हुए, उनमें से एक असुर-कुमार देव यदि वह चाहे कि मैं ऋजु से विकुर्वणा करूँगा; तो वह ऋजु-विकुर्वणा कर सकता है और यदि वह चाहे कि मैं वक्र रूप में विकुर्वणा करूँगा, तो वह वक्र-विकुर्वणा कर सकता है । जब कि एक असुरकुमारदेव चाहता है कि मैं ऋजु-विकुर्वणा करूँ, परन्तु वक्ररूप की विकुर्वणा हो जाती है और वक्ररूप की विकुर्वणा करना चाहता है, तो ऋजुरूप की विकुर्वणा हो जाती है । भगवन् ! ऐसा क्यों होता है ? गौतम ! असुरकुमार देव दो प्रकार के हैं, यथा-मायीमिथ्यादृष्टि-उपपन्नक और अमायीसम्यग्दृष्टि-उपपन्नक । जो मायीमिथ्यादृष्टि-उपपन्नक असुरकुमार देव हैं, वह ऋजुरूप की विकुर्वणा करना चाहे तो वक्ररूप की विकुर्वणा हो जाती है, यावत् वह विकुर्वणा नहीं कर पाता किन्तु जो अमायीसम्यग्दृष्टि-उपपन्नक असुरकुमार देव है, वह ऋजुरूप की विकुर्वणा करना चाहे तो ऋजुरूप कर सकता है, यावत् जो विकुर्वणा करना चाहता है, वह कर सकता है ।

भगवन् ! दो नागकुमारों के विषय में पूर्ववत् प्रश्न है । गौतम ! पूर्ववत् । इसी प्रकार स्तनितकुमारों तक के विषय में (जानना चाहिए) । वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिकों के विषय में भी इसी प्रकार है । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-१८ – उद्देशक-६

सूत्र - ७४०

भगवन् ! फाणित गुड़ कितने वर्ण, कितने गन्ध, कितने रस और कितने स्पर्श वाला कहा गया है ? गौतम! इस विषय में दो नयों हैं, यथा-नैश्चयिक नय और व्यावहारिक नय । व्यावहारिक नय की अपेक्षा से फाणित-गुड़ मधुर रस वाला कहा गया है और नैश्चयिक नय की दृष्टि से गुड़ पाँच वर्ण, दो गन्ध, पाँच रस और आठ स्पर्श वाला कहा गया है ।

भगवन् ! भ्रमर कितने वर्ण-गन्धादि वाला है ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! व्यावहारिक नय से भ्रमर काला है और नैश्चयिक नय से भ्रमर पाँच वर्ण, दो गन्ध, पाँच रस और आठ स्पर्श वाला है । भगवन् ! तोते की पाँखें कितने वर्ण वाली हैं ? गौतम ! व्यावहारिक नय से तोते की पाँखें हरे रंग की हैं और नैश्चयिक नय से पाँच वर्ण वाली इत्यादि पूर्ववत् ।

इसी प्रकार इसी अभिलाप द्वारा, मजीठ लाल है; हल्दी पीले है; शंख शुक्ल है, कुष्ठ-पटवास सुरभिगन्धवाला है, मृतकशरीर दुर्गन्धित है, नीम कड़वा है, सूँठ तीखी है, कपित्थ कसैला है, इमली खट्टी है; खांड मधुर है; वज्र कर्कश है, नवनीत मृदु है, लोहे भारी है; उलुकपत्र हल्का है, हिम ठंडा है, अग्निकाय उष्ण है, तेल स्निग्ध है । किन्तु नैश्चयिक नय से इन सबमें पाँच वर्ण, दो गन्ध, पाँच रस, आठ स्पर्श हैं । भगवन् ! राख कितने वर्णवाली है ?, इत्यादि प्रश्न । गौतम! व्यावहारिकनय से राख रूक्ष स्पर्शवाली, नैश्चयिकनय से राख पाँच वर्ण, दो गन्ध, पाँच रस, आठ स्पर्शवाली है

सूत्र - ७४१

भगवन् ! परमाणुपुद्गल कितने वर्ण वाला यावत् कितने स्पर्श वाला कहा गया है ? गौतम ! वह एक वर्ण, एक गन्ध, एक रस और दो स्पर्श वाला कहा है । भगवन् ! द्विप्रदेशिक स्कन्ध कितने वर्ण आदि वाला है ? इत्यादि प्रश्न गौतम ! वह कदाचित् एक वर्ण, कदाचित् दो वर्ण, कदाचित् एक गन्ध या दो गन्ध, कदाचित् एक रस, दो रस, कदाचित् दो स्पर्श, तीन स्पर्श और कदाचित् चार स्पर्श वाला कहा गया है । इसी प्रकार त्रिप्रदेशी स्कन्ध के विषय में भी जानना चाहिए । विशेष बात यह है कि वह कदाचित् एक वर्ण, कदाचित् दो वर्ण और कदाचित् तीन वर्ण वाला होता है । इसी प्रकार रस के विषय में भी; यावत् तीन रस वाला होता है । इसी प्रकार चतुष्प्रदेशी स्कन्ध के विषय में भी जानना चाहिए । विशेष यह है कि वह कदाचित् एक वर्ण, यावत् कदाचित् चार वर्ण वाला होता है । इसी प्रकार रस के विषय में है । शेष पूर्ववत् । इसी प्रकार पंचप्रदेशी स्कन्ध के विषय में भी जानना चाहिए । विशेष यह है कि वह कदाचित् एक वर्ण, यावत् कदाचित् पाँच वर्ण वाला होता है । इसी प्रकार रस के विषय में है, गन्ध और स्पर्श के विषय में भी पूर्ववत् । पंचप्रदेशी स्कन्ध के समान यावत् असंख्यातप्रदेशी स्कन्ध तक कहना ।

भगवन् ! सूक्ष्मपरिमाण वाला अनन्तप्रदेशी स्कन्ध कितने वर्ण वाला होता है ? इत्यादि पूर्ववत् प्रश्न । पंच-प्रदेशी स्कन्ध के अनुसार समग्र कथन करना चाहिए । भगवन् ! बादर परिणाम वाला अनन्तप्रदेशी स्कन्ध कितने वर्ण, गन्ध आदि वाला है ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! वह कदाचित् एक वर्ण, यावत् कदाचित् पाँच वर्ण वाला, कदाचित् एक गन्ध या दो गन्ध वाला; कदाचित् एक रस यावत् पाँच रस वाला, तथा चार स्पर्श यावत् कदाचित् आठ स्पर्श वाला होता है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१८ – उद्देशक-७

सूत्र - ७४२

राजगृह नगर में यावत् पूछा-भगवन् ! अन्यतीर्थिक इस प्रकार कहते हैं यावत् प्ररूपणा करते हैं कि केवली यक्षावेश से आविष्ट होते हैं और जब केवली यक्षावेश से आविष्ट होते हैं तो वे कदाचित् दो प्रकार की भाषाएं बोलते हैं-मृषाभाषा और सत्यामृषा भाषा । तो हे भगवन् ! ऐसा कैसे हो सकता है ? गौतम ! अन्यतीर्थिकों ने यावत् जो इस प्रकार कहा है, वह उन्होंने मिथ्या कहा है । हे गौतम ! मैं इस प्रकार कहता हूँ, यावत् प्ररूपणा करता हूँ । केवली न तो कदापि यक्षाविष्ट होते हैं, और न ही कभी मृषा और सत्यामृषा इन दो भाषाओं को बोलते हैं । केवली जब भी बोलते हैं, तो असावद्य और दूसरों का उपघात न करने वाली, ऐसी दो भाषाएं बोलते हैं । -सत्याभाषा या व्यवहार भाषा ।

सूत्र - ७४३

भगवन् ! उपधि कितने प्रकार की कही है ? गौतम ! तीन प्रकार की । यथा-कर्मोपधि, शरीरोपधि और बाह्यभाण्डमात्रोपकरणउपधि । भगवन् ! नैरयिकों के कितने प्रकार की उपधि होती है ? गौतम ! दो प्रकार की, कर्मोपधि और शरीरोपधि । एकेन्द्रिय जीवों को छोड़कर वैमानिक तक शेष सभी जीवों के तीन प्रकार की उपधि होती है । एकेन्द्रिय जीवों के दो प्रकार की उपधि होती है यथा-कर्मोपधि और शरीरोपधि । भगवन् ! (प्रकारान्तर से) उपधि कितने प्रकार की कही है ? गौतम ! तीन प्रकार की यथा-सचित्त, अचित्त और मिश्र । इसी प्रकार नैरयिकों के भी तीन

प्रकार की उपधि होती है । इसी प्रकार अवशिष्ट सभी जीवों के, यावत् वैमानिकों तक तीन प्रकार की उपधि होती है ।

भगवन् ! परिग्रह कितने प्रकार का कहा गया है ? तीन प्रकार का, यथा–कर्म-परिग्रह, शरीर-परिग्रह और बाह्यभाण्डमात्रोपकरण-परिग्रह । भगवन् ! नैरयिकों में कितने प्रकार का परिग्रह कहा गया है ? गौतम ! उपधि अनुसार परिग्रह के विषय में जानना ।

भगवन् ! प्रणिधान कितने प्रकार का है ? गौतम ! तीन प्रकार का मनःप्रणिधान, वचनप्रणिधान और काय-प्रणिधान । भगवन् ! नैरयिकों के कितने प्रणिधान हैं ? गौतम ! तीनों । इसी प्रकार स्तनितकुमारों तक जानना चाहिए भन्ते! पृथ्वीकायिक जीवों के प्रणिधान के विषयमें प्रश्न। गौतम! इनमें एकमात्र कायप्रणिधान ही होता है । इसी प्रकार वनस्पतिकायिकों तक जानना । भगवन् ! द्वीन्द्रियजीवों के विषयमें प्रश्न । गौतम! दो प्रकार का–वचन-प्रणिधान, कायप्रणिधान । इसी प्रकार चतुरिन्द्रिय जीवों तक कहना । शेष सभी जीवों के तीनों प्रकार के प्रणिधान होते हैं ।

भगवन् ! दुष्प्रणिधान कितने प्रकार का है ? गौतम ! तीन प्रकार का–मनो-दुष्प्रणिधान, वचन-दुष्प्रणिधान और काय-दुष्प्रणिधान । प्रणिधान के अनुसार दुष्प्रणिधान के विषय में भी कहना । भगवन् ! सुप्रणिधान कितने प्रकार का है ? गौतम ! तीन प्रकार का–मनःसुप्रणिधान, वचनसुप्रणिधान और कायसुप्रणिधान । भगवन् ! मनुष्यों के कितने प्रकार का सुप्रणिधान है ? गौतम ! तीनों प्रकार के । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार का है । तत्पश्चात् भगवान महावीर ने यावत् बाह्य जनपदों में विहार किया ।

सूत्र - ७४४

उस काल उस समय राजगृह नामक नगर था । (वर्णन) । वहाँ गुणशील नामक उद्यान था । (वर्णन) । यावत् वहाँ एक पृथ्वीशिलापट्टक था । उस गुणशील उद्यान के समीप बहुत-से अन्यतीर्थिक रहते थे, यथा–कालोदायी, शैलोदायी इत्यादि समग्र वर्णन सातवें शतक के अन्यतीर्थिक उद्देशक के अनुसार, यावत्–'यह कैसे माना जा सकता है?' यहाँ तक समझना चाहिए । उस राजगृह नगर में धनाढ्य यावत् किसी से पराभूत न होने वाला, तथा जीवाजीवादि तत्त्वों का ज्ञाता, यावत् मद्रुक नामक श्रमणोपासक रहता था । तभी अन्यदा किसी दिन पूर्वानुपूर्वीक्रम से विचरण करते हुए श्रमण भगवान महावीर वहाँ पधारे । वे समवसरण में विराजमान हुए । परीषद् यावत् पर्युपासना करने लगी । मद्रुक श्रमणोपासक ने जब श्रमण भगवान महावीर के आगमन का यह वृत्तान्त जाना तो वह हृदय में अतीव हर्षित एवं यावत् सन्तुष्ट हुआ । उसने स्नान किया, यावत् समस्त अलंकारों से विभूषित होकर अपने घर से नीकला । चलते-चलते वह उन अन्यतीर्थिकों के निकट से होकर जाने लगा ।

तभी उन अन्यतीर्थिकों ने मद्रुक श्रमणोपासक को अपने निकट से जाते हुए देखा । उसे देखते ही उन्होंने एक दूसरे को बुलाकर इस प्रकार कहा–देवानुप्रियो ! यह मद्रुक श्रमणोपासक हमारे निकट से होकर जा रहा है । हमें यह बात अविदित है; अतः देवानुप्रियो ! इस बात को मद्रुक श्रमणोपासक से पूछना हमारे लिए श्रेयस्कर है । फिर उन्होंने मद्रुक श्रमणोपासक से पूछा–हे मद्रुक ! बात ऐसी है कि तुम्हारे धर्माचार्य धर्मोपदेशक श्रमण ज्ञातपुत्र पाँच अस्तिकायों की प्ररूपणा करते हैं, इत्यादि सारा कथन सातवें शतक के अन्यतीर्थिक उद्देशक के समान समझना, यावत्–'हे मद्रुक ! यह बात कैसे मानी जाए ?' यह सूनकर मद्रुकर श्रमणोपासक ने कहा–यदि वे धर्मा-स्तिकायादि कार्य करते हैं तभी उस पर से हम उन्हें जानते-देखते हैं; यदि वे कार्य न करते तो कारणरूप में हम उन्हें नहीं जानते-देखते । इस पर उन अन्यतीर्थिकों ने मद्रुक श्रमणोपासक से कहा कि–हे मद्रुक ! तू कैसा श्रमणो-पासक है कि तू इस तत्त्व को न जानता है और न प्रत्यक्ष देखता है ।

तभी मद्रुक श्रमणोपासक ने उन अन्यतीर्थिकों से इस प्रकार कहा–आयुष्मन् ! यह ठीक है न कि हवा बहती है ? हाँ, यह ठीक है । हे आयुष्मन् ! क्या तुम बहती हुई हवा का रूप देखते हो ? यह अर्थ शक्य नहीं है । आयुष्मन् ! नासिका के सहगत गन्ध के पुद्गल हैं न ? हाँ, हैं । आयुष्मन् ! क्या तुमने उन घ्राण सहगत गन्ध के पुद्गलों का रूप देखा है ? यह बात भी शक्य नहीं है । आयुष्मन् ! क्या अरणि की लकड़ी के साथ में रहा हुआ अग्निकाय है ? हाँ, है । आयुष्मन् ! क्या तुम अरणि की लकड़ी में रही हुई उस अग्नि का रूप देखते हो ? यह बात तो

शक्य नहीं है । आयुष्मन् ! समुद्र के उस पार रूपी पदार्थ हैं न ? हाँ, हैं । आयुष्मन् ! क्या तुम समुद्र के उस पार रहे हुए पदार्थों के रूप को देखते हो ? यह देखना शक्य नहीं है । आयुष्मन् ! क्या देवलोकों में रूपी पदार्थ हैं ? हाँ, हैं । आयुष्मन् ! क्या तुम देवलोकगत पदार्थों के रूपों को देखते हो ? यह बात शक्य नहीं है । इसी तरह, हे आयुष्मन् ! यदि मैं, तुम, या अन्य कोई भी छद्मस्थ मनुष्य, जिन पदार्थों को नहीं जानता या नहीं देखता, उन सब का अस्तित्व नहीं होता, ऐसा माना जाए तो तुम्हारी मान्यतानुसार लोक में बहुत-से पदार्थों का अस्तित्व ही नहीं रहेगा, यों कहकर मद्रुक श्रमणोपासक ने उन अन्यतीर्थिकों को प्रतिहत कर दिया । उन्हें निरुत्तर करके वह गुणशील उद्यान में श्रमण भगवान महावीर स्वामी के निकट आया और पाँच प्रकार के अभिगम से श्रमण भगवान महावीर की सेवा में पहुँचकर यावत् पर्युपासना करने लगा ।

श्रमण भगवान महावीर ने कहा–हे मद्रुक ! तुमने उन अन्यतीर्थिकों को जो उत्तर दिया, वह समीचीन है, मद्रुक तुमने उन अन्यतीर्थिकों को यथार्थ उत्तर दिया है । हे मद्रुक ! जो व्यक्ति बिना जाने, बिना देखे तथा बिना सूने किसी अज्ञात, अदृष्ट, अश्रुत, असम्मत एवं अविज्ञात अर्थ, हेतु, प्रश्न या विवेचन का उत्तर बहुत-से मनुष्यों के बीच में कहता है, बतलाता है यावत् उपदेश देता है, वह अरहन्त भगवंतों की आशातना में प्रवृत्त होता है, वह अर्हत्प्रज्ञप्त धर्म की, केवलियों की तथा केवलि-प्ररूपित धर्म की भी आशातना करता है । हे मद्रुक ! तुमने उन अन्यतीर्थिकों को इस प्रकार का उत्तर देकर बहुत अच्छा कार्य किया है । मद्रुक ! तुमने बहुत उत्तम कार्य किया, यावत् इस प्रकार का उत्तर दिया ।

श्रमण भगवान महावीर के इस कथन को सूनकर हृष्ट-तुष्ट यावत् मद्रुक श्रमणोपासक ने श्रमण भगवान महावीर को वन्दना-नमस्कार किया और न अति निकट और न अति दूर बैठकर यावत् पर्युपासना करने लगा । तदनन्तर श्रमण भगवान महावीर ने मद्रुक श्रमणोपासक तथा उस परीषद् को धर्मकथा कही । यावत् परीषद् लौट गई तत्पश्चात् मद्रुक श्रमणोपासक ने श्रमण भगवान महावीर से यावत् धर्मोपदेश सूना, और उसे अवधारण करके अतीव हर्षित एवं सन्तुष्ट हुआ । फिर उसने भगवान से प्रश्न पूछे, अर्थ जाने, और खड़े होकर श्रमण भगवान महावीर को वन्दन-नमस्कार किया यावत् अपने घर लौट गया ।

गौतम स्वामी ने वन्दन-नमस्कार किया और पूछा–'भगवन् ! क्या मद्रुक-श्रमणोपासक आप देवानुप्रिय के पास मुण्डित होकर यावत् प्रव्रज्या ग्रहण करने में समर्थ है ? हे गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है । इत्यादि सब वर्णन शंख श्रमणोपासक के समान । यावत्–अरूणाभ विमान में देवरूप में उत्पन्न होकर, यावत् सर्व दुःखों का अन्त करेगा

सूत्र - ७४५

भगवन् ! महर्द्धिक यावत् महासुख वाला देव, हजार रूपों की विकुर्वणा करके परस्पर एक दूसरे के साथ संग्राम करने में समर्थ है ? हाँ, गौतम ! समर्थ है । भगवन् ! वैक्रियकृत वे शरीर, एक ही जीव के साथ सम्बद्ध होते हैं, या अनेक जीवों के साथ सम्बद्ध ? गौतम ! एक ही जीव से सम्बद्ध होते हैं, अनेक जीवों के साथ नहीं । भगवन् उन शरीरों के बीच का अन्तराल-भाग क्या एक जीव से सम्बद्ध होता है, या अनेक जीवों से ? गौतम ! वह एक ही जीव से सम्बद्ध होता है, अनेक जीवों से सम्बद्ध नहीं । भगवन् ! कोई पुरुष उन वैक्रियकृत शरीरों के अन्तरालों को अपने हाथ या पैर से स्पर्श करता हुआ, यावत् तीक्ष्ण शस्त्र से छेदन करता हुआ कुछ भी पीड़ा उत्पन्न कर सकता है ? गौतम ! आठवें शतक के तृतीय उद्देशक के अनुसार समझना; यावत्–उन पर शस्त्र नहीं लग (चल) सकता ।

सूत्र - ७४६

भगवन् ! क्या देवों और असुरों में देवासुर-संग्राम होता है ? हाँ, गौतम ! होता है । भगवन् ! देवों और असुरों में संग्राम छिड़ जाने पर कौन-सी वस्तु, उन देवों के श्रेष्ठ प्रहरण के रूप में परिमत होती है ? गौतम ! वे देव, जिस तृण, काष्ठ, पत्ता या कंकर आदि को स्पर्श करते हैं, वही वस्तु उन देवों के शस्त्ररत्न के रूप में परिणत हो जाती है । भगवन् जिस प्रकार देवों के लिए कोई भी वस्तु स्पर्शमात्र से शस्त्ररत्न के रूप में परिणत हो जाती है, क्या उसी प्रकार असुरकुमारदेवों के भी होती है ? गौतम ! उनके लिए यह बात शक्य नहीं है । क्योंकि असुरकुमार-देवों के तो सदा वैक्रियकृत शस्त्ररत्न होते हैं ।

सूत्र - ७४७

भगवन् ! महर्द्धिक यावत् महासुखसम्पन्न देव लवणसमुद्र के चारों ओर चक्कर लगाकर शीघ्र आने में समर्थ हैं ? हाँ, गौतम ! समर्थ हैं । भगवन् ! महर्द्धिक यावत् महासुखी देव धातकीखण्ड द्वीप के चारों ओर चक्कर लगाकर शीघ्र आने में समर्थ हैं ? हाँ, गौतम ! वे समर्थ हैं । भगवन् ! क्या इसी प्रकार वे देव रुचकवर द्वीप तक चारों ओर चक्कर लगाकर आने में समर्थ हैं ? हाँ, गौतम ! समर्थ हैं । इससे आगे के द्वीप-समुद्रों तक देव जाता है, किन्तु उसके चारों ओर चक्कर नहीं लगाता ।

सूत्र - ७४८

भगवन् ! क्या इस प्रकार के भी देव हैं, जो अनन्त कर्मांशों को जघन्य एक सौ, दो सौ या तीन सौ और उत्कृष्ट पाँच सौ वर्षों में क्षय कर देते हैं ? हाँ, गौतम ! हैं । भगवन् ! क्या ऐसे देव भी हैं, जो अनन्त कर्मांशों को जघन्य एक हजार, दो हजार या तीन हजार और उत्कृष्ट पाँच हजार वर्षों में क्षय कर देते हैं ? हाँ, गौतम ! हैं । भगवन् ! क्या ऐसे देव भी हैं, जो अनन्त कर्मांशों को जघन्य एक लाख, दो लाख या तीन लाख वर्षों में और उत्कृष्ट पाँच लाख वर्षों में क्षय कर देते हैं ?

हे भगवन् ! ऐसे कौन-से देव हैं, जो अनन्त कर्मांशों को जघन्य एक सौ वर्ष, यावत्-पाँच सौ वर्ष में क्षय करते हैं ? भगवन् ! ऐसे कौन-से देव हैं, जो यावत् पाँच हजार वर्षों में अनन्त कर्मांशों का क्षय कर देते हैं ? और हे भगवन् ! ऐसे कौन-से देव हैं, जो अनन्त कर्मांशों को यावत् पाँच लाख वर्षों में क्षय कर देते हैं ? गौतम ! वे वाण-व्यन्तर देव हैं, जो अनन्त कर्मांशों को एक-सौ वर्षों में क्षय कर देते हैं । असुरेन्द्र को छोड़कर शेष सब भवनपति देव अनन्त कर्मांशों को दो सौ वर्षों में, तथा असुरकुमार देव अनन्त कर्मांशों को तीन सौ वर्षों में, ग्रह, नक्षत्र और तारारूप ज्योतिष्क देव चार सौ वर्षों में और ज्योतिषेन्द्र, ज्योतिष्कराज चन्द्र और सूर्य अनन्त कर्मांशों को पाँच सौ वर्षों में क्षय कर देते हैं । सौधर्म और ईशानकल्प के देव अनन्त कर्मांशों को यावत् एक हजार वर्षों में खपा देते हैं । सनत्कुमार और माहेन्द्रकल्प के देव अनन्त कर्मांशों को दो हजार वर्षों में खपा देते हैं । इस प्रकार आगे इसी अभिलाप के अनुसार-ब्रह्मलोक और लान्तककल्प के देव अनन्त कर्मांशों को तीन हजार वर्षों में खपा देते हैं । महाशुक्र और सहस्रार देव अनन्त कर्मांशों को चार हजार वर्षों में, आनतप्राणत, आरण और अच्युतकल्प के देव अनन्त कर्मांशों को पाँच हजार वर्षों में क्षय कर देते हैं । अधस्तन ग्रैवेयकत्रय के देव अनन्त कर्मांशों को एक लाख वर्ष में, मध्यम ग्रैवेयकत्रय के देव अनन्त कर्मांशों को दो लाख वर्षों में, और उपरिम ग्रैवेयकत्रय के देव अनन्त कर्मांशों को तीन लाख वर्षों में क्षय करते हैं । विजय, वैजयंत, जयन्त और अपराजित देव अनन्त कर्मांशों को चार लाख वर्षों में क्षय कर देते हैं और सर्वार्थसिद्ध देव, अपने अनन्त कर्मांशों को पाँच लाख वर्षों में क्षय कर देते हैं । इसीलिए हे गौतम ! ऐसे देव हैं, जो अनन्त कर्मांशों को जघन्य एक सौ, दो सौ या तीन सौ वर्षों में, यावत् पाँच लाख वर्षों में क्षय करते हैं । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-१८ – उद्देशक-८

सूत्र - ७४९

राजगृह नगर में यावत् पूछा-भगवन् ! सम्मुख और दोनों ओर युगमात्र भूमि को देखदेख कर ईर्यापूर्वक गमन करते हुए भावितात्मा अनगार के पैर के नीचे मुर्गी का बच्चा, बतख का बच्चा अथवा कुलिंगच्छाय आकर मर जाएं तो, उक्त अनगार को ऐर्यापथिकी क्रिया लगती है या साम्परायिकी क्रिया लगती है ? गौतम ! यावत् उस भावितात्मा अनगार को, यावत् ऐर्यापथिकी क्रिया लगती है, साम्परायिकी नहीं लगती ।

भगवन् ! ऐसा क्यों कहते हैं कि पूर्वोक्त भावितात्मा अनगार को यावत् साम्परायिकी क्रिया नहीं लगती ? गौतम ! सातवें शतक के सप्तम उद्देशक के अनुसार जानना चाहिए । यावत् अर्थ का निक्षेप करना चाहिए । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । तदनन्तर श्रमण भगवान महावीर स्वामी बाहर के जनपद में यावत् विहार कर गए ।

सूत्र - ७५०

उस काल और उस समय में राजगृह नामक नगर में यावत् पृथ्वीशिलापट्ट था । उस गुणशीलक उद्यान के समीप बहुत-से अन्यतीर्थिक निवास करते थे । उन दिनों में श्रमण भगवान महावीर स्वामी वहाँ पधारे, यावत् परीषद् वापिस लौट गई । उस काल और उस समय में, श्रमण भगवान महावीर के ज्येष्ठ अन्तेवासी श्री इन्द्रभूति नामक अनगार यावत्, ऊर्ध्वजानु यावत् तप-संयम से आत्मा को भावित करते हुए विचरते थे ।

एक दिन वे अन्यतीर्थिक, श्री गौतम स्वामी के पास आकर कहने लगे-आर्य ! तुम त्रिविध-त्रिविध से असंयत, अविरत यावत् एकान्त बाल हो । इस पर गौतम स्वामी ने उन अन्यतीर्थिकों से कहा-'हे आर्यो ! किस कारण से हम तीन करण, तीन योग से असंयत, अविरत, यावत् एकान्त बाल हैं ?' तब वे अन्यतीर्थिक, भगवान् गौतम से कहने लगे-हे आर्य ! तुम गमन करते हुए जीवों को आक्रान्त करते हो, मार देते हो, यावत्-उपद्रवित कर देते हो । इसलिए प्राणियों को आक्रान्त यावत् उपद्रुत करते हुए तुम त्रिविध-त्रिविध असंयत, अविरत, यावत् एकान्त बाल हो । यह सूनकर गौतम स्वामी ने उन अन्यतीर्थिकों से कहा-आर्यो ! हम गमन करते हुए न तो प्राणियों को कुचलते हैं, न मारते हैं और न भयाक्रान्त करते हैं, क्योंकि आर्यो ! हम गमन करते हुए समय काया, योग को और धीमी-धीमी गति को ध्यान में रखकर देख-भाल कर विशेष रूप से निरीक्षण करके चलते हैं । अतः हम देख-देख कर एवं विशेष रूप से निरीक्षण करते हुए चलते हैं, इसलिए हम प्राणियों को न तो दबाते-कुचलते हैं, यावत् न उपद्रवित करते हैं । इस प्रकार प्राणियों को आक्रान्त न करते हुए, यावत् पीड़ित न करते हुए हम यावत् एकान्त पण्डित हैं । हे आर्यो ! तुम स्वयं ही त्रिविध-त्रिविध से असंयत, अविरत यावत् एकान्त बाल हो ।

इस पर वे अन्यतीर्थिक भगवान गौतम से इस प्रकार बोले-आर्य ! किस कारण से हम त्रिविध-त्रिविध से यावत् एकान्त बाल हैं ? तब भगवान गौतम स्वामी ने उन अन्यतीर्थिकों से इस प्रकार कहा-हे आर्यो ! तुम चलते हुए प्राणियों को आक्रान्त करते हो, यावत् पीड़ित करते हो । जीवों को आक्रान्त करते हुए यावत् पीड़ित करते हुए तुम त्रिविध-त्रिविध से असंयत, अविरत यावत् एकान्त बाल हो । इस प्रकार गौतम स्वामी ने उन अन्यतीर्थिकों को निरुत्तर कर दिया । तत्पश्चात् गौतम स्वामी श्रमण भगवान महावीर के समीप पहुँचे और उन्हें वन्दन-नमस्कार करके न तो अत्यन्त दूर और न अतीव निकट यावत् पर्युपासना करने लगे । श्रमण भगवान महावीर ने कहा-हे गौतम ! तुमने उन अन्यतीर्थिकों को अच्छा कहा, तुमने उन अन्यतीर्थिकों को यथार्थ कहा । गौतम ! मेरे बहुत-से शिष्य श्रमण निर्ग्रन्थ छद्मस्थ हैं, जो तुम्हारे उत्तर देने में समर्थ नहीं हैं । जैसा कि तुमने उन अन्यतीर्थिकों को ठीक कहा; उन अन्यतीर्थिकों को बहुत ठीक कहा ।

तत्पश्चात् श्रमण भगवान महावीर के द्वारा इस प्रकार कहे जाने पर हृष्ट-तुष्ट होकर गौतम स्वामी ने श्रमण भगवान महावीर स्वामी को वन्दन-नमस्कार कर पूछा-

सूत्र - ७५१

भगवन् ! क्या छद्मस्थ मनुष्य परमाणु-पुद्गल को जानता-देखता है अथवा नहीं जानता-नहीं देखता है ? गौतम ! कोई जानता है, किन्तु देखता नहीं, और कोई जानता भी नहीं और देखता भी नहीं । भगवन् ! क्या छद्मस्थ मनुष्य द्विप्रदेशी स्कन्ध को जानता-देखता है, अथवा नहीं जानता, नहीं देखता है ? गौतम ! पूर्ववत् । इसी प्रकार यावत् असंख्यातप्रदेशी स्कन्ध तक कहना । भगवन् ! क्या छद्मस्थ मनुष्य अनन्तप्रदेशी स्कन्ध को जानता देखता है ? कोई जानता है और देखता है, कोई जानता है, किन्तु देखता नहीं; कोई जानता नहीं, किन्तु देखता है और कोई जानता भी नहीं और देखता भी नहीं ।

भगवन् ! क्या आधोऽवधिक मनुष्य, परमाणुपुद्गल को जानता देखता है ? इत्यादि प्रश्न । छद्मस्थ मनुष्य अनुसार आधोऽवधिक मनुष्य के विषय में समझना चाहिए । इसी प्रकार यावत् अनन्तप्रदेशी स्कन्ध तक कहना चाहिए । भगवन् ! क्या परमावधिज्ञानी मनुष्य परमाणु-पुद्गल को जिस समय जानता है, उसी समय देखता है ? और जिस समय देखता है, उसी समय जानता है । गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है । भगवन् ! ऐसा किस कारण से कहते

हैं? गौतम ! परमावधिज्ञानी का ज्ञान साकार होता है और दर्शन अनाकार होता है । इसलिए ऐसा कहा गया है कि यावत् जिस समय देखता है उस समय जानता नहीं । इसी प्रकार यावत् अनन्तप्रदेशी स्कन्ध तक कहना ।

भगवन् ! क्या केवलीज्ञानी जिस समय परमाणुपुद्गल को जानता है, उस समय देखता है ? इत्यादि प्रश्न। गौतम ! परमावधिज्ञानी के समान केवलज्ञानी के लिए भी कहना । इसी प्रकार यावत् अनन्तप्रदेशी स्कन्ध । भगवन् यह इसी प्रकार है ।

शतक-१८ – उद्देशक-९

सूत्र - ७५२

राजगृह नगर में यावत् पूछा–भगवन् ! क्या भव्य-द्रव्य-नैरयिक–'भव्य-द्रव्य-नैरयिक' हैं ? हाँ, गौतम ! हैं। भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहते हैं कि भव्य-द्रव्य-नैरयिक–'भव्य-द्रव्य-नैरयिक' हैं ? गौतम ! जो कोई पंचेन्द्रिय-तिर्यञ्चयोनिक या मनुष्य नैरयिकों में उत्पन्न होने के योग्य है, वह भव्य-द्रव्य-नैरयिक कहलाता है । इस कारण से ऐसा यावत् कहा गया है । इसी प्रकार स्तनितकुमारों पर्यन्त जानना चाहिए ।

भगवन् ! भव्य-द्रव्य-पृथ्वीकायिक–भव्य-द्रव्य-पृथ्वीकायिक हैं ? हाँ, गौतम ! हैं। भगवन् ! ऐसा क्यों कहते हैं? गौतम ! जो तिर्यञ्चयोनिक, मनुष्य अथवा देव पृथ्वीकायिकों में उत्पन्न होने के योग्य है, वह भव्य-द्रव्य-पृथ्वीकायिक कहलाता है । इसी प्रकार अप्कायिक और वनस्पतिकायिक के विषय में समझना । अग्निकाय, वायुकाय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय और चतुरिन्द्रिय पर्याय में जो कोई तिर्यञ्च या मनुष्य उत्पन्न होने के योग्य हो, वह भव्य-द्रव्य-अग्निकायिकादि कहलाता है । जो कोई नैरयिक, तिर्यञ्चयोनिक, मनुष्य या देव, अथवा पंचेन्द्रिय-तिर्यञ्चयोनिक जीव, पंचेन्द्रिय-तिर्यञ्चयोनिकों में उत्पन्न होने योग्य होता है, वह भव्य-द्रव्य-पंचेन्द्रिय-तिर्यञ्च-योनिक कहलाता है । इसी प्रकार मनुष्यों के विषय में (समझ लेना) । वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिकों के विषय में नैरयिकों के समान जानना ।

भगवन् ! भव्य-द्रव्य-नैरयिक की स्थिति कितने काल की कही है ? गौतम ! जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट पूर्वकोटि वर्ष की कही गई है । भगवन् ! भव्य-द्रव्य-असुरकुमार की स्थिति कितने काल की कही गई है ? गौतम ! जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट तीन पल्योपम की कही गई है । इसी प्रकार स्तनितकुमारों तक जानना चाहिए ।

भगवन् ! भव्य-द्रव्य-पृथ्वीकायिक की स्थिति कितने काल की कही है ? गौतम ! जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट कुछ अधिक दो सागरोपम की कही गई है । इसी प्रकार अप्कायिक की स्थिति जानना । भव्य-द्रव्य-अग्निकायिक एवं भव्य-द्रव्य-वायुकायिक की स्थिति नैरयिक के समान है । वनस्पतिकायिक की स्थिति पृथ्वी-कायिक के समान है । (भव्य-द्रव्य) द्वीन्द्रिय-त्रीन्द्रिय-चतुरिन्द्रिय की स्थिति भी नैरयिक के समान जानना । (भव्य-द्रव्य) पंचेन्द्रिय-तिर्यञ्चयोनिक की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त की है और उत्कृष्ट तैंतीस सागरोपम काल की है । (भव्य-द्रव्य) मनुष्य की स्थिति भी इसी प्रकार है । (भव्य-द्रव्य) वाणव्यन्तर ज्योतिष्क और वैमानिक देव की स्थिति असुरकुमार के समान है । भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१८ – उद्देशक-१०

सूत्र - ७५३

राजगृह नगर में यावत् पूछा–भगवन् ! क्या भावितात्मा अनगार तलवार की धार पर अथवा उस्तरे की धार पर रह सकता है ? हाँ, गौतम ! रह सकता है । (भगवन् !) क्या वह वहाँ छिन्न या भिन्न होता है ? (गौतम !) यह अर्थ समर्थ नहीं । क्योंकि उस पर शस्त्र संक्रमण नहीं करता । इत्यादि सब पंचम शतक में कही हुई परमाणु-पुद्गल की वक्तव्यता, यावत्–हे भगवन् ! क्या भावितात्मा अनगार उदकावर्त्त में यावत् प्रवेश करता है ? इत्यादि वहाँ शस्त्र संक्रमण नहीं करता, (तक कहना) ।

सूत्र - ७५४

भगवन् ! परमाणु-पुद्गल, वायुकाय से स्पृष्ट है, अथवा वायुकाय परमाणु-पुद्गल से स्पृष्ट है ? गौतम ! परमाणु-पुद्गल वायुकाय से स्पृष्ट है, किन्तु वायुकाय परमाणु-पुद्गल से स्पृष्ट नहीं है । भगवन् ! द्विप्रदेशिक-स्कन्ध

वायुकाय से स्पृष्ट है या वायुकाय द्विप्रदेशिक-स्कन्ध से स्पृष्ट है ? गौतम ! पूर्ववत् । इसी प्रकार यावत् असंख्यातप्रदेशी स्कन्ध तक जानना । भगवन् ! अनन्तप्रदेशिक स्कन्ध के विषय में प्रश्न - गौतम ! अनन्तप्रदेशी स्कन्ध वायुकाय से स्पृष्ट है तथा वायुकाय अनन्तप्रदेशी स्कन्ध से कदाचित् स्पृष्ट होता है और कदाचित् स्पृष्ट नहीं होता ।

भगवन् ! वस्ति (मशक) वायुकाय से स्पृष्ट है, अथवा वायुकाय वस्ति से स्पृष्ट है ? गौतम ! वस्ति वायुकाय से स्पृष्ट है, किन्तु वायुकाय, वस्ति से स्पृष्ट नहीं है ।

सूत्र - ७५५

भगवन् ! इस रत्नप्रभापृथ्वी के नीचे वर्ण से-काला, नीला, पीला, लाल और श्वेत, गन्ध से-सुगन्धित और दुर्गन्धित; रस से-तिक्त, कटुक कसैला, अम्ल और मधुर; तथा स्पर्श से-कर्कश, मृदु, गुरु, लघु, शीत, उष्ण, स्निग्ध और रूक्ष-इन बीस बोलों से युक्त द्रव्य क्या अन्योन्य बद्ध, अन्योन्य स्पृष्ट, यावत् अन्योन्य सम्बद्ध हैं ? हाँ, गौतम ! हैं । इसी प्रकार यावत् अधःसप्तमपृथ्वी तक जानना चाहिए । भगवन् ! सौधर्मकल्प के नीचे वर्ण से-इत्यादि प्रश्न । गौतम ! पूर्ववत् है । इसी प्रकार यावत् ईषत्प्राग्भारापृथ्वी तक जानना चाहिए । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

सूत्र - ७५६

उस काल उस समय में वाणिज्यग्राम नामक नगर था । वहाँ द्युतिपलाश नाम का (चैत्य) था । उस वाणिज्य ग्राम नगर में सोमिल ब्राह्मण रहता था । जो आढ्य यावत् अपराभूत था तथा ऋग्वेद यावत् अथर्ववेद, तथा शिक्षा, कल्प आदि वेदांगों में निष्णात था । वह पाँच-सौ शिष्यों और अपने कुटुम्ब पर आधिपत्य करता हुआ यावत् सुख-पूर्वक जीवनयापन करता था । उन्हीं दिनों में श्रमण भगवान महावीर स्वामी यावत् पधारे । यावत् परीषद् भगवान की पर्युपासना करनेल लगी ।

जब सोमिल ब्राह्मण को भगवान महावीर स्वामी के आगमन की बात मालूम हुई तो उसके मन मे इस प्रकार का यावत् विचार उत्पन्न हुआ-'पूर्वानुपूर्वी से विचरण करते हुए तथा ग्रामानुग्राम सुखपूर्वक पदार्पण करते हुए ज्ञातपुत्र श्रमण (महावीर) यावत् यहाँ आए हैं, अतः मैं श्रमण ज्ञातपुत्र के पास जाऊं और वहाँ जाकर इन और ऐसे अर्थ यावत् व्याकरण उनसे पूछूँ । यदि वे मेरे इन और ऐसे अर्थों यावत् प्रश्नों का यथार्थ उत्तर देंगे तो मैं उन्हें वन्दन-नमस्कार करूँगा, यावत् उनकी पर्युपासना करूँगा । यदि वे मेरे इन और ऐसे अर्थों और प्रश्नों के उत्तर नहीं दे सकेंगे तो मैं उन्हें इन्हीं अर्थों और उत्तरों से निरुत्तर कर दूँगा ।' ऐसा विचार किया । तत्पश्चात् उसने स्नान किया, यावत् शरीर को वस्त्र और सभी अलंकारों से विभूषित किया । फिर वह अपने घर से नीकला और अपने एक सौ शिष्यों के साथ पैदल चलकर जहाँ श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे, वहाँ उनके पास आया और न अति दूर, न अति निकट खड़े होकर उसने उनसे इस प्रकार पूछा-भन्ते ! आपके (धर्म में) यात्रा, यापनीय, अव्याबाध और प्रासुकविहार हैं ? सोमिल मेरे (धर्म में) यात्रा भी है, यापनीय भी है, अव्याबाध भी है और प्रासुकविहार भी है । भन्ते ! आपके यहाँ यात्रा कैसी है ? सोमिल ! तप, नियम, संयम, स्वाध्याय, ध्यान और आवश्यक आदि योगों में जो मेरी यतना है, वही मेरी यात्रा है ।

भगवन् ! आपके यापनीय क्या है ? सोमिल ! दो प्रकार का हे । इन्द्रिय-यापनीय और नो-इन्द्रिय-यापनीय। भगवन् ! वह इन्द्रिय-यापनीय क्या है ? सोमिल ! श्रोत्रेन्द्रिय, चक्षुरिन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, जिह्वेन्द्रिय और स्पर्शेन्द्रिय, ये पाँचों इन्द्रियाँ निरुपहत और वश में हैं, यह मेरा इन्द्रिय-यापनीय है । भन्ते ! वह नोइन्द्रिय-यापनीय क्या है ? सोमिल ! जो मेरे क्रोध, मान, माया और लोभ ये चारों कषाय व्युच्छिन्न हो गए हैं; और उदयप्राप्त नहीं हैं, यह मेरा नोइन्द्रिय-यापनीय है । इस प्रकार मेरे ये यापनीय हैं ।

भगवन् ! आपके अव्याबाध क्या है ? सोमिल ! मेरे वातज, पित्तज, कफज और सन्निपातजन्य तथा अनेक प्रकार के शरीर सम्बन्धी रोग, आतंक एवं शरीरगत दोष उपशान्त हो गए हैं, वे उदय में नहीं आते । यही मेरा अव्याबाध है । भगवन् ! आपके प्रासुकविहार कौन-सा है ? सोमिल ! आराम, उद्यान, देवकुल, सभा और प्रपा आदि स्थानों में स्त्री-पशु-नपुंसकवर्जित वसतियों में प्रासुक, एषणीय पीठ, फलक, शय्या, संस्तारक आदि स्वीकार करके मैं विचरता हूँ, यही मेरा प्रासुकविहार है ।

भगवन् ! आपके लिए 'सरिसव' भक्ष्य हैं या अभक्ष्य ? सोमिल ! भक्ष्य भी हैं और अभक्ष्य भी हैं । भगवन् यह आप कैसे कहते हैं ? सोमिल ! तुम्हारे ब्राह्मण नयों में दो प्रकार के 'सरिसव' कहे गए हैं, यथा-मित्र-सरिसव और धान्य-सरिसव । जो मित्र-सरिसव हैं, वह तीन प्रकार के हैं, यथा-सहजात, सहवर्धित और सहपांशुक्रीडित । ये तीनों श्रमण निर्ग्रन्थों के लिए अभक्ष्य हैं । जो धान्यसरिसव हैं, वह भी दो प्रकार के हैं, यथा-शस्त्रपरिणत और अशस्त्रपरिणत । जो अशस्त्रपरिणत हैं, वे श्रमण निर्ग्रन्थों के लिए अभक्ष्य हैं । जो शस्त्रपरिणत हैं, वह भी दो प्रकार के हैं, यथा-एषणीय और अनेषणीय । अनेषणीय सरिसव तो श्रमण निर्ग्रन्थों के लिए अभक्ष्य हैं । एषणीय सरिसव दो प्रकार के हैं, यथा-याचित और अयाचित । अयाचित श्रमण निर्ग्रन्थों के लिए अभक्ष्य हैं । याचित भी दो प्रकार के हैं, यथा-लब्ध और अलब्ध । अलब्ध श्रमण निर्ग्रन्थों के लिए अभक्ष्य हैं और जो लब्ध हैं, वह श्रमण-निर्ग्रन्थों के लिए भक्ष्य हैं । इस कारण से, ऐसा कहा गया है कि-'सरिसव' मेरे लिक्ष भक्ष्य भी हैं, और अभक्ष्य भी हैं ।

भगवन् ! आपके मत में 'मास् भक्ष्य हैं या अभक्ष्य हैं ? सोमिल ! 'मास' भक्ष्य भी हैं और अभक्ष्य भी हैं । भगवन् ! ऐसा क्यों कहते हैं ? सोमिल ! तुम्हारे ब्राह्मण-नयों में 'मास' दो प्रकार के कहे गए हैं । यथा-द्रव्यमास और कालमास । उनमें से जो कालमास हैं, वे श्रावण से लेकर आषाढ़-मास-पर्यन्त बारह हैं, यथा-श्रवण, भाद्रपद, आश्विन, कार्तिक, मार्गशीर्ष, पौष, माघ, फाल्गुन, चैत्र, वैशाख, ज्येष्ठ और आषाढ़ । ये श्रमण-निर्ग्रन्थों के लिए अभक्ष्य हैं । द्रव्य-मास दो प्रकार का है । यथा-अर्थमाष और धान्यमाष । उनमें से अर्थमाष दो प्रकार का है यथा-स्वर्णमाष और रौप्यमाष । ये दोनों माष श्रमण निर्ग्रन्थों के लिए अभक्ष्य हैं । धान्यमाष दो प्रकार का है-यथा-शस्त्रपरिणत और अशस्त्रपरिणत । इत्यादि सभी आलापक धन्य-सरिसव के समान कहने चाहिए, यावत् इसी कारण से हे सोमिल ! कहा गया है कि 'मास' भक्ष्य भी हैं और अभक्ष्य भी हैं ।

भगवन् ! आपके लिए 'कुलत्थ' भक्ष्य हैं अथवा अभक्ष्य हैं ? सोमिल ! 'कुलत्थ' मेरे लिए भक्ष्य भी हैं और अभक्ष्य भी हैं । भगवन् ! ऐसा क्यों कहते हैं कि कुलत्थ...यावत् अभक्ष्य भी हैं ? सोमिल ! तुम्हारे ब्राह्मणनयों में कुलत्था दो प्रकार की कही गई है, यथा-स्त्रीकुलत्था और धान्यकुलत्था । स्त्रीकुलत्था तीन प्रकार की कही गई है, यथा-कुलवधू या कुलमाता, अथवा कुलकन्या । ये तीनों श्रमण-निर्ग्रन्थों के लिए अभक्ष्य हैं । उनमें से जो धान्यकुलत्था है, उसके सभी आलापक धान्य-सरिसव के समान हैं, यावत्-'हे सोमिल ! इसीलिए कहा गया है कि 'धान्यकुलत्था भक्ष्य भी हैं और अभक्ष्य भी हैं' ।

सूत्र - ७५७

भगवन् ! आप एक हैं, या दो हैं, अथवा अक्षय हैं, अव्यय हैं, अवस्थित हैं अथवा अनेक-भूत-भाव-भाविक हैं? सोमिल ! मैं एक भी हूँ, यावत् अनेक-भूत-भाव-भाविक भी हूँ । भगवन् ! ऐसा किस कारण से कहते हैं ? सोमिल ! मैं द्रव्यरूप से एक हूँ, ज्ञान और दर्शन की दृष्टि से दो हूँ । आत्म-प्रदेशों की अपेक्षा से मैं अक्षय हूँ, अव्यय हूँ और अवस्थित हूँ; तथा उपयोग की दृष्टि से मैं अनेकभूत-भाव-भविक भी हूँ । हे सोमिल ! इसी दृष्टि से यावत् अनेकभूत-भाव-भविक भी हूँ । भगवान की अमृतवाणी सूनकर वह सोमिल ब्राह्मण सम्बुद्ध हुआ । उसने श्रमण भगवान महावीर को वन्दन-नमस्कार किया, यावत्-उसने कहा-भगवन् ! जैसा आपने कहा, वह वैसा ही है । जिस प्रकार आप देवानुप्रिय के सान्निध्य में बहुत-से राजा-महाराजा आदि, हिरण्यादि का त्याग करके मुण्डित होकर अगारधर्म से अनगारधर्म में प्रव्रजित होते हैं, उस प्रकार करने में मैं अभी समर्थ नहीं हूँ; यावत्-उसने बारह प्रकार के श्रावकधर्म को स्वीकार किया । श्रमण भगवान महावीर स्वामी को वन्दन-नमस्कार करके यावत् अपने घर लौट गया । सोमिल ब्राह्मण श्रमणोपासक हो गया । अब वह जीव-अजीव आदि तत्त्वों का ज्ञाता होकर यावत् विचरने लगा ।

गौतम स्वामी ने श्रमण भगवान महावीर को वन्दन-नमस्कार करके पूछा-क्या सोमिल ब्राह्मण आप देवानुप्रिय के पास मुण्डित होकर अगारधर्म से अनगारधर्म में प्रव्रजित होने में समर्थ है ? इत्यादि । शंख श्रमणोपासक के समान समग्र वर्णन, सर्व दुःखों का अन्त करेगा, (यहाँ तक कहना चाहिए) । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है

शतक-१८ का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

शतक–१९

सूत्र - ७५८

उन्नीसवें शतक में यह दस उद्देशक हैं–लेश्या, गर्भ, पृथ्वी, महाश्रव, चरम, द्वीप, भवन, निर्वृत्ति, करण और वनचर-सुर ।

शतक-१९ – उद्देशक-१

सूत्र - ७५९

राजगृह नगर में यावत् पूछा–भगवन् ! लेश्याएं कितनी हैं ? गौतम ! छह, प्रज्ञापनासूत्र का लेश्योद्देशक सम्पूर्ण कहना, भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१९ – उद्देशक-२

सूत्र - ७६०

भगवन् ! लेश्याएं कितनी कही गई हैं ? प्रज्ञापनासूत्र के सत्तरहवें पद का छठा समग्र गर्भोद्देशक कहना चाहिए । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१९ – उद्देशक-३

सूत्र - ७६१

राजगृह नगर में यावत् पूछा–भगवन् ! क्या कदाचित् दो यावत् चार-पाँच पृथ्वीकायिक मिलकर साधारण शरीर बाँधते हैं, बाँधकर पीछे आहार करते हैं, फिर उस आहार का परिणमन करते हैं और फिर इसके बाद शरीर का बन्ध करते हैं ? गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है । क्योंकि पृथ्वीकायिक जीव प्रत्येक–पृथक्-पृथक् आहार करने वाले हैं और उस आहार को पृथक्-पृथक् करते हैं; इसलिए वे पृथक्-पृथक् शरीर बाँधते हैं । इसके पश्चात् वे आहार करते हैं, उसे परिणमाते हैं और फिर शरीर बाँधते हैं ।

भगवन् ! उन (पृथ्वीकायिक) जीवों के कितनी लेश्याएं हैं ? गौतम ! चार, यथा–कृष्णलेश्या, नीललेश्या, कापोतलेश्या और तेजोलेश्या । भगवन् ! वे जीव सम्यग्दृष्टि हैं, मिथ्यादृष्टि हैं, या सम्यग्मिथ्यादृष्टि हैं ? गौतम ! वे जीव सम्यग्दृष्टि नहीं हैं, मिथ्यादृष्टि हैं, वे सम्यग्मिथ्यादृष्टि भी नहीं हैं । भगवन् ! वे जीव ज्ञानी हैं अथवा अज्ञानी हैं? गौतम ! वे ज्ञानी नहीं हैं, अज्ञानी हैं । उनमें दो अज्ञान निश्चित रूप से पाए जाते हैं–मति-अज्ञान और श्रुत-अज्ञान । भगवन् ! क्या वे जीव मनोयोगी हैं, वचनयोगी हैं, अथवा काययोगी हैं ? गौतम ! वे काययोगी हैं । भगवन् वे जीव साकारोपयोगी हैं या अनाकारोपयोगी हैं ? गौतम ! वे साकारोपयोगी भी हैं और अनाकारोपयोगी भी हैं ।

भगवन् ! वे (पृथ्वीकायिक) जीव क्या आहार करते हैं? गौतम! वे द्रव्य से–अनन्तप्रदेशी द्रव्यों का आहार करते हैं, इत्यादि वर्णन प्रज्ञापनासूत्र के आहारोद्देशक के अनुसार–सर्व आत्मप्रदेशों से आहार करते हैं, तक (जानना) । भगवन्! वे जीव जो आहार करते हैं, क्या उसका चय होता है, और जिसका आहार नहीं करते, उसका चय नहीं होता? जिस आहार का चय हुआ है, वह आहार बाहर नीकलता है ? और (साररूप भाग) शरीर-इन्द्रियादि रूपमें परिणत होता है? गौतम ! ऐसा ही है । भगवन् ! उन जीवों को–'हम आहार करते हैं', ऐसी संज्ञा, प्रज्ञा, मन , वचन होते हैं ? हे गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं । फिर भी वे आहार तो करते हैं। भगवन् ! क्या उन जीवों को यह संज्ञा यावत् वचन होता है कि हम इष्ट या अनिष्ट स्पर्श का अनुभव करते हैं ? गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है, फिर भी वे वेदन तो करते ही हैं ।

भगवन् ! क्या वे (पृथ्वीकायिक) जीव प्राणातिपात मृषावाद, अदत्तादान, यावत् मिथ्यादर्शनशल्य में रहे हुए हैं? हाँ, गौतम ! वे जीव रहे हुए हैं तथा वे जीव, दूसरे जिन पृथ्वीकायादि जीवों की हिंसादि करते हैं, उन्हें भी, ये जीव हमारी हिंसादि करने वाले हैं, ऐसा भेद ज्ञात नहीं होता । भगवन् ! ये पृथ्वीकायिक जीव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं? क्या वे नैरयिकों से आकर उत्पन्न होते हैं, इत्यादि प्रश्न । गौतम ! प्रज्ञापनासूत्र के छठे व्युत्क्रान्ति-पद में पृथ्वीकायिक जीवों के उत्पाद समान यहाँ भी कहना ।

भगवन् ! उन पृथ्वीकायिक जीवों की स्थिति कितने काल की कही है ? गौतम ! जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त की,

उत्कृष्ट बाईस हजार वर्ष की है । भगवन् ! उन जीवों के कितने समुद्घात कहे गए हैं ? गौतम ! तीन समुद्घात हैं, वेदनासमुद्घात, कषायसमुद्घात और मारणान्तिकसमुद्घात । भगवन् ! क्या वे जीव मारणान्तिकसमुद्घात करके मरते हैं या मारणान्तिक समुद्घात किये बिना ही मरते हैं ? गौतम ! वे मारणान्तिक समुद्घात करके भी मरते हैं और समुद्घात किये बिना भी मरते हैं । भगवन् ! वे जीव मरकर अन्तररहित कहाँ जाते हैं, कहाँ उत्पन्न होते हैं ? (गौतम !) यहाँ व्युत्क्रान्तिपद के अनुसार उनकी उद्वर्त्तना कहनी चाहिए ।

भगवन् ! क्या कदाचित् दो, तीन, चार या पाँच अप्कायिक जीव मिलकर एक साधारण शरीर बाँधते हैं और इसके पश्चात् आहार करते हैं ? गौतम ! पृथ्वीकायिकों के अनुसार उद्वर्त्तनाद्वार तक जानना । विशेष इतना ही है कि अप्कायिक जीवों की स्थिति उत्कृष्ट सात हजार वर्ष की है । भगवन् ! कदाचित् दो, तीन, चार या पाँच तेजस्कायिक जीव मिलकर एक साधारण शरीर बाँधते हैं ? गौतम ! पूर्ववत् । विशेष यह है कि उनका उत्पाद, स्थिति और उद्वर्त्तना प्रज्ञापनासूत्र के अनुसार जानना । वायुकायिक जीवों भी इसी प्रकार हैं । विशेष यह है कि वायुकायिक जीवों में चार समुद्घात होते हैं । भगवन् ! क्या कदाचित् दो, तीन, चार या पाँच आदि वनस्पति-कायिक जीव एकत्र मिलकर साधारण शरीर बाँधते हैं ? गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है । अनन्त वनस्पतिकायिक जीव मिलकर एक साधारण शरीर बाँधते हैं, फिर आहार करते हैं और परिणमाते हैं, इत्यादि सब अग्निकायिकों के समान उद्वर्त्तन करते हैं, विशेष यह है कि उनका आहार नियमतः छह दिशा का होता है । उनकी स्थिति भी अन्त-र्मुहूर्त्त की है ।

सूत्र - ७६२

भगवन् ! इन सूक्ष्म-बादर, पर्याप्तक-अपर्याप्तक, पृथ्वीकायिक, अप्कायिक, तेजस्कायिक, वायुकायिक और वनस्पतिकायिक जीवों की जघन्य और उत्कृष्ट अवगाहनाओं में से किसकी अवगाहना किसकी अवगाहना से अल्प, बहुत, तुल्य अथवा विशेषाधिक होती है ? गौतम ! सबसे अल्प, अपर्याप्तक सूक्ष्मनिगोद की जघन्य अव-गाहना है । उससे असंख्यगुणी है-अपर्याप्त सूक्ष्म वायुकायिक की जघन्य अवगाहना । उससे अपर्याप्त सूक्ष्म अग्नि कायिक की जघन्य अवगाहना असंख्यगुणी है । उससे अपर्याप्त सूक्ष्म अप्कायिक की जघन्य अवगाहना असंख्य गुणी है । उससे अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक की जघन्य अवगाहना असंख्यगुणी है । उससे अपर्याप्त बादर वायु-कायिक की जघन्य अवगाहना असंख्यगुणी है । उससे अपर्याप्त बादर अग्निकायिक की जघन्य अवगाहना असंख्यगुणी है । उससे अपर्याप्तक बादर अप्कायिक की जघन्य अवगाहना असंख्यातगुणी है । उससे अपर्याप्त बादर पृथ्वीकायिक की जघन्य अवगाहना असंख्यातगुणी है । उससे अपर्याप्त प्रत्येकशरीरी बादर वनस्पतिकायिक की और बादर निगोद की जघन्य अवगाहना दोनों की परस्पर तुल्य और असंख्यातगुणी है । उससे पर्याप्त सूक्ष्म निगोद की जघन्य अवगाहना असंख्यातगुणी है । उससे अपर्याप्त सूक्ष्मनिगोद की उत्कृष्ट अवगाहना विशेषाधिक है । उससे पर्याप्तक सूक्ष्म निगोद की उत्कृष्ट अवगाहना विशेषाधिक है। उससे पर्याप्तक सूक्ष्मवायुकायिक की जघन्य अवगाहना असंख्यातगुणी है । उससे अपर्याप्तक सूक्ष्म वायुकायिक की उत्कृष्ट अवगाहना विशेषाधिक है । उससे पर्याप्तक सूक्ष्म वायुकायिक की उत्कृष्ट अवगाहना विशेषाधिक है । उससे पर्याप्त सूक्ष्म अग्निकायिक की जघन्य, अपर्याप्त सूक्ष्म अग्निकायिक की उत्कृष्ट तथा पर्याप्त सूक्ष्म अग्निकायिक की उत्कृष्ट अवगाहना असंख्यातगुणी एवं विशेषाधिक है ।

उससे पर्याप्त सूक्ष्म अप्कायिक की जघन्य, अपर्याप्त सूक्ष्म अप्कायिक की उत्कृष्ट तथा पर्याप्त सूक्ष्म अप्कायिक की उत्कृष्ट अवगाहना असंख्यातगुणी एवं विशेषाधिक है । इसी प्रकार से उससे पर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वी-कायिक की जघन्य, उससे अपर्याप्तसूक्ष्म पृथ्वीकायिक की उत्कृष्ट तथा उससे पर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक की जघन्य, उससे अपर्याप्तसूक्ष्म पृथ्वीकायिक की उत्कृष्ट तथा उससे पर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक की उत्कृष्ट अवगाहना असंख्यगुणी तथा विशेषाधिक होती है । उससे पर्याप्त बादर वायुकायिक की जघन्य, अपर्याप्त बादर वायुकायिक की उत्कृष्ट एवं पर्याप्त बादर वायुकायिक की उत्कृष्ट अवगाहना असंख्यातगुणी तथा विशेषाधिक है । उससे पर्याप्त बादर अग्निकायिक की जघन्य, अपर्याप्त बादर अग्निकायिक की उत्कृष्ट एवं पर्याप्त बादर अग्नि-कायिक की उत्कृष्ट अवगाहना असंख्यातगुणी एवं विशेषाधिक है । इसी प्रकार उससे पर्याप्त बादर अप्कायिक की जघन्य, अपर्याप्त

बादर अप्कायिक की उत्कृष्ट एवं पर्याप्त बादर अप्कायिक की उत्कृष्ट अवगाहना असंख्यातगुणी एवं विशेषाधिक है । उससे पर्याप्त बादर पृथ्वीकायिक की जघन्य, अपर्याप्त बादरपृथ्वीकायिक की उत्कृष्ट तथा पर्याप्त बादर पृथ्वीकायिक की उत्कृष्ट अवगाहना असंख्यातगुणी तथा विशेषाधिक है । उससे पर्याप्त बादर निगोद की जघन्य अवगाहना असंख्यातगुणी है । अपर्याप्त बादर निगोद की उत्कृष्ट अवगाहना विशेषाधिक है, और पर्याप्त बादर निगोद की उत्कृष्ट अवगाहना विशेषाधिक है । उससे पर्याप्त प्रत्येकशरीरी बादर वनस्पतिकायिक की जघन्य अवगाहना असंख्यातगुणी है । उससे अपर्याप्त प्रत्येकशरीरी बादर वनस्पतिकायिक की उत्कृष्ट अवगाहना असंख्यातगुणी है और उससे पर्याप्त प्रत्येकशरीरी बादर वनस्पतिकायिक की उत्कृष्ट अवगाहना असंख्यातगुणी है।

सूत्र - ७६३

भगवन् ! पृथ्वीकायिक यावत् वनस्पतिकायिक, इन पाँचों में से कौन-सी काय सब से सूक्ष्म है और कौन-सी सूक्ष्मतर है ? गौतम ! वनस्पतिकाय सबसे सूक्ष्म है, सबसे सूक्ष्मतर है । भगवन् ! पृथ्वीकायिक यावत् वायु-कायिक, इन चारों में से कौन-सी काय सबसे सूक्ष्म है और कौन-सी सूक्ष्मतर है ? गौतम ! वायुकाय सब-से सूक्ष्म है, वायुकाय ही सबसे सूक्ष्मतर है । भगवन् ! पृथ्वीकायिक यावत् अग्निकायिक, कौन सी काय सबसे सूक्ष्म है, कौन-सी सूक्ष्मतर है ? गौतम ! अग्निकाय सबसे सूक्ष्म है, अग्निकाय ही सर्वसूक्ष्मतर है । भगवन् ! पृथ्वीकायिक और अप्कायिक इन दोनों में से कौन-सी काय सबसे सूक्ष्म है, कौन-सी सर्वसूक्ष्मतर है ? गौतम ! अप्काय सबसे सूक्ष्म और सर्वसूक्ष्मतर है ।

भगवन् ! इन पृथ्वीकायिक यावत् वनस्पतिकायिक में से कौन सी काय सबसे बादर है, कौन-सी काय सर्वबादरतर है ? गौतम ! वनस्पतिकाय सर्वबादर है, वनस्पतिकाय ही सबसे अधिक बादर है । भगवन् ! पृथ्वी-कायिक यावत् वायुकायिक, इन चारों में से कौन-सी काय सबसे बादर है, कौन-सी बादरतर है ? गौतम ! पृथ्वी-काय सबसे बादर है, पृथ्वीकाय ही बादरतर है । भगवन् ! अप्काय, तेजस्काय और वायुकाय इन तीनों में से कौन-सी काय सर्वबादर है, कौन-सी बादरतर है ? गौतम ! अप्काय सर्वबादर है, अप्काय ही बादरतर है । भगवन् ! अग्निकाय और वायुकाय, इन दोनों कायों में से कौन-सी काय सबसे बादर है, कौन-सी बादरतर है ? गौतम ! अग्निकाय सर्वबादर है, अग्निकाय ही बादरतर है ।

भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीवों का शरीर कितना बड़ा कहा गया है ? गौतम ! अनन्त सूक्ष्म वनस्पतिकायिक जीवों के जितने शरीर होते हैं, उतना एक सूक्ष्म वायुकाय का शरीर होता है । असंख्यात सूक्ष्म वायुकायिक जीवों के जितने शरीर होते हैं, उतना एक सूक्ष्म अग्निकाय का शरीर होता है । असंख्य सूक्ष्म अग्निकाय के जितने शरीर होते हैं, उतना एक सूक्ष्म अप्काय का शरीर होता है । असंख्य सूक्ष्म अप्काय के जितने शरीर होते हैं, उतना एक सूक्ष्म पृथ्वीकाय का शरीर होता है, असंख्य सूक्ष्म पृथ्वीकाय के जितने शरीर होते हैं, उतना एक बादर वायुकाय का शरीर होता है । असंख्य बादर वायुकाय के जितने शरीर होते हैं, उतना एक बादर अग्निकाय का शरीर होता है । असंख्य बादर अग्निकाय के जितने शरीर होते हैं, उतना एक बादर अप्काय का शरीर होता है । असंख्य बादर अप्काय समान एक बादर पृथ्वीकाय का शरीर होता है । हे गौतम ! इतना बड़ा पृथ्वीकाय का शरीर होता है ।

सूत्र - ७६४

भगवन् ! पृथ्वीकाय के शरीर की कितनी बड़ी अवगाहना कही गई है ? गौतम ! जैसे कोई तरुणी, बलवती, युगवती, युगावय-प्राप्त, रोगरहित इत्यादि वर्णन-युक्त यावत् कलाकुशल, चातुरन्त चक्रवर्ती राजा की चन्दन घिसने वाली दासी हो । विशेष यह है कि यहाँ चर्मेष्ट, द्रुघण, मौष्टिक आदि व्यायाम-साधनों से सुदृढ़ इत्यादि विशेषण नहीं कहना । ऐसी शिल्पनिपुण दासी, चूर्ण पीसने की वज्रमयी कठोर शिला पर, वज्रमय तीक्ष्ण लोढ़े से लाख के गोले के समान, पृथ्वीकाय का एक बड़ा पिण्ड लेकर बार-बार इकट्ठा करती और समेटती हुई-'मैं अभी इसे पीस डालती हूँ,' यों विचार कर उसे इक्कीस बार पीस दे तो हे गौतम ! कईं पृथ्वीकायिक जीवों का उस शिला और लोढ़े से स्पर्श होता है और कईं पृथ्वीकायिक जीवों का स्पर्श नहीं होता । उनमें से कईं पृथ्वीकायिक जीवों का घर्षण होता है, और कईं पृथ्वीकायिकों का घर्षण नहीं होता । उनमें से कुछ को पीड़ा होती है, कुछ को पीड़ा नहीं होती । उनमें से कईं मरते हैं,

कईं नहीं मरते तथा कईं पीस जाते हैं और कईं नहीं पीसे जाते । गौतम ! पृथ्वी-कायिक जीव के शरीर की इतनी बड़ी अवगाहना होती है ।

भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीव को आक्रान्त करने पर वह कैसी वेदना का अनुभव करता है ? गौतम ! जैसे कोई तरुण, बलिष्ठ यावत् शिल्प में निपुण हो, वह किसी वृद्धावस्था से जीर्ण, जराजर्जरित देह वाले यावत् दुर्बल, ग्लान के सिर पर मुष्टि से प्रहार करे तो उस पुरुष द्वारा मुक्का मारने पर वृद्ध कैसी पीड़ा का अनुभव करता है ? (गौतम-) आयुष्मन् श्रमणवर ! भगवन् ! वह वृद्ध अत्यन्त अनिष्ट पीड़ा का अनुभव करता है । (भगवान-) इसी प्रकार, हे गौतम ! पृथ्वीकायिक जीव को आक्रान्त किये जाने पर, वह उस वृद्धपुरुष को होने वाली वेदना की अपेक्षा अधिक अनिष्टतर यावत् अमनामतर पीड़ा का अनुभव करता है । भगवन् ! अप्कायिक जीव को स्पर्श या घर्षण किये जाने पर वह कैसी वेदना का अनुभव करता है ? गौतम ! पृथ्वीकायिक जीवों के समान अप्काय के जीवों को जानना । इसी प्रकार अग्निकाय, वायुकायिक एवं वनस्पतिकाय में जानना । 'भगवन् ! यह इसी प्रकार है।'

शतक-१९ – उद्देशक-४

सूत्र - ७६५

भगवन् ! क्या नैरयिक जीव महास्रव, महाक्रिया, महावेदना और महानिर्जरा वाले होते हैं ? गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है । भगवन् ! क्या नैरयिक जीव महास्रव, महाक्रिया, महावेदना, अल्पनिर्जरावाले हैं ? हाँ, गौतम ! ऐसे होते हैं । भगवन् ! क्या नैरयिक जीव महास्रव, महाक्रिया, अल्पवेदना, महानिर्जरावाले होते हैं ? गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं। भगवन् ! क्या नैरयिक महास्रव, महाक्रिया, अल्पवेदना, अल्पनिर्जरावाले हैं? गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं

भगवन् ! नैरयिक महास्रव, अल्पक्रिया, महावेदना और महानिर्जरा वाले होते हैं ? गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है । भगवन् ! क्या नैरयिक महास्रव, अल्पक्रिया, महावेदना तथा अल्पनिर्जरा वाले होते हैं ? यह अर्थ भी समर्थ नहीं है । भगवन् ! क्या नैरयिक महास्रव, अल्पक्रिया, अल्पवेदना एवं महानिर्जरा वाले होते हैं ? गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है । भगवन् ! नैरयिक महास्रव, अल्पक्रिया, अल्पवेदना और अल्पनिर्जरा वाले होते हैं ? यह अर्थ भी समर्थ नहीं है । भगवन् ! क्या नैरयिक अल्पास्रव, महाक्रिया, महावेदना और अल्पनिर्जरा वाले हैं ? गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है । भगवन् ! क्या नैरयिक अल्पास्रव, महाक्रिया, महावेदना और अल्पनिर्जरा वाले हैं ? यह अर्थ भी समर्थ नहीं है

भगवन् ! क्या नैरयिक अल्पास्रव, महाक्रिया, अल्पवेदना और महानिर्जरा वाले हैं ? गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है । भगवन् ! क्या नैरयिक अल्पास्रव, महाक्रिया, अल्पवेदना और अल्पनिर्जरा वाले होते हैं ? गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है । भगवन् ! क्या नैरयिक अल्पास्रव, अल्पक्रिया, महावेदना, महानिर्जरावाले हैं ? यह अर्थ समर्थ नहीं है । भगवन् ! क्या नैरयिक अल्पास्रव, अल्पक्रिया, महावेदना, अल्पनिर्जरावाले हैं ? यह अर्थ समर्थ नहीं है । भगवन् ! नैरयिक अल्पास्रव, अल्पक्रिया, अल्पवेदना, महानिर्जरावाले होते हैं ? यह अर्थ समर्थ नहीं है । भगवन् ! नैरयिक कदाचित् अल्पास्रव, अल्पक्रिया, अल्पवेदना, अल्पनिर्जरा वाले हैं ? गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है । ये सोलह भंग हैं

भगवन् ! क्या असुरकुमार महास्रव, महाक्रिया, महावेदना और महानिर्जरा वाले होते हैं ? गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है । इस प्रकार यहाँ केवल चतुर्थ भंग कहना चाहिए, शेष पन्द्रह भंगों का निषेध करना चाहिए । इसी प्रकार स्तनितकुमारों तक समझना चाहिए । भगवन् ! क्या पृथ्वीकायिक जीव कदाचित् महास्रव, महाक्रिया, महावेदना और महानिर्जरा वाले होते हैं ? हाँ, गौतम ! कदाचित् होते हैं । भगवन् ! क्या इसी प्रकार पृथ्वीकायिक यावत् सोलहवे भंग-अल्पास्रव, अल्पक्रिया अल्पवेदना और अल्पनिर्जरा वाले-कदाचित् होते हैं ? हाँ, गौतम ! वे कदाचित् सोलहवे भंग तक होते हैं । इसी प्रकार मनुष्यों तक जानना चाहिए । वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क एवं वैमानिकों के विषय में असुरकुमारों के समान जानना चाहिए । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-१९ – उद्देशक-५

सूत्र - ७६६

भगवन् ! क्या नैरयिक चरम (अल्पायुष्क) भी हैं और परम (अधिक आयुष्य वाले) भी हैं ? हाँ, गौतम ! हैं।

भगवन् ! क्या चरम नैरयिकों की अपेक्षा परम नैरयिक महाकर्म वाले, महाक्रिया वाले, महास्रव वाले और महा वेदना वाले हैं ? तथा परम नैरयिकों की अपेक्षा चरम नैरयिक अल्पकर्म, अल्पक्रिया, अल्पास्रव और अल्पवेदना वाले हैं ? हाँ, गौतम ! हैं । भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहते हैं ? गौतम ! स्थिति की अपेक्षा से इसी कारण, हे गौतम ! ऐसा कहा जाता है कि...यावत्-'अल्पवेदना वाले हैं ।' भगवन् ! क्या असुरकुमार चरम भी हैं और परम भी हैं ? हाँ, गौतम ! वे दोनों हैं, किन्तु विशेष यह है कि यहाँ पूर्वकथन से विपरीत कहना चाहिए । (जैसे कि-) परम असुरकुमार अल्पकर्म वाले हैं और चरम असुरकुमार महाकर्म वाले हैं । शेष पूर्ववत् स्तनितकुमार-पर्यन्त इसी प्रकार जानना । पृथ्वीकायिकों से लेकर मनुष्यों तक नैरयिकों के समान समझना । वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिकों के सम्बन्ध में असुरकुमारों के समान कहना ।

सूत्र - ७६७

भगवन् ! वेदना कितने प्रकार की है ? गौतम ! दो प्रकार की-निदा वेदना और अनिदा वेदना । भगवन् ! नैरयिक निदा वेदना वेदते हैं या अनिदा वेदना ? प्रज्ञापनासूत्र के अनुसार वैमानिकों तक जानना । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-१९ – उद्देशक-६

सूत्र - ७६८

भगवन् ! द्वीप और समुद्र कहाँ हैं ? भगवन् ! द्वीप और समुद्र कितने हैं ? भगवन् ! द्वीप-समुद्रों का आकार कैसा कहा गया है ? (गौतम !) यहाँ जीवाभिगमसूत्र की तृतीय प्रतिपत्ति में, द्वीप-समुद्र-उद्देशक यावत् परिणाम, जीवों का उत्पाद और यावत् अनन्त बार तक कहना चाहिए । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-१९ – उद्देशक-७

सूत्र - ७६९

भगवन् ! असुरकुमारों के कितने लाख भवनावास कहे गए हैं ? गौतम ! चोंसठ लाख भवनावास हैं । भगवन् ! वे भवनावास किससे बने हुए हैं ? गौतम ! वे भवनावास रत्नमय हैं, स्वच्छ, श्लक्ष्ण यावत् प्रतिरूप हैं । उनमें बहुत-से जीव और पुद्गल उत्पन्न होते हैं, विनष्ट होते हैं, च्यवते हैं और पुनः उत्पन्न होते हैं । वे भवन द्रव्यार्थिक रूप से शाश्वत हैं, किन्तु वर्णपर्यायों, यावत् स्पर्शपर्यायों की अपेक्षा से अशाश्वत हैं । इसी प्रकार स्तनित-कुमारों तक जानना चाहिए । भगवन् ! वाणव्यन्तर देवों के भूमिगत नगरावास कितने लाख कहे गए हैं ? गौतम ! अंख्यात लाख नगरावास कहे गए हैं । भगवन् ! वाणव्यन्तरों के वे नगरावास किससे बने हुए हैं ? गौतम ! पूर्ववत् समझना चाहिए ।

भगवन् ! ज्योतिष्क देवों के विमानावास कितने लाख कहे गए हैं ? गौतम ! असंख्येय लाख कहे गए हैं । भगवन् ! वे विमानावास किस वस्तु से निर्मित हैं ? गौतम ! वे विमानावास सर्वस्फटिकरत्नमय हैं और स्वच्छ हैं; शेष पूर्ववत् । भगवन् ! सौधर्मकल्प में कितने लाख विमानावास कहे गए हैं ? गौतम ! बत्तीस लाख हैं । भगवन् ! वे विमानावास किस वस्तु के बने हुए हैं ? गौतम ! वे सर्वरत्नमय हैं, स्वच्छ हैं, शेष पूर्ववत् । इसी प्रकार अनुत्तर-विमान तक कहना चाहिए । विशेष यह कि जहाँ जितने भवन या विमान हों, (उतने कहने चाहिए) 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

सूत्र - ७७०

भगवन् ! जीवनिर्वृत्ति कितने प्रकार की है ? गौतम ! पाँच प्रकार की-एकेन्द्रिय-जीवनिर्वृत्ति यावत् पंचेन्द्रिय-जीवनिर्वृत्ति । भगवन् ! एकेन्द्रिय-जीवनिर्वृत्ति कितने प्रकार की है ? गौतम ! पाँच प्रकार की-पृथ्वी-कायिक-एकेन्द्रिय-जीवनिर्वृत्ति यावत् वनस्पतिकायिक-एकेन्द्रिय-जीवनिर्वृत्ति । भगवन् ! पृथ्वीकायिक-एकेन्द्रिय-जीवनिर्वृत्ति कितने प्रकार की है ? गौतम ! दो प्रकार की-सूक्ष्मपृथ्वीकायिक-एकेन्द्रिय-जीवनिर्वृत्ति और बादर-पृथ्वीकायिक-एकेन्द्रिय-जीवनिर्वृत्ति । इस अभिलाप द्वारा आठवें शतक के बृहद् बन्धाधिकार में कथित तैजस शरीर के भेदों के समान यहाँ भी जानना चाहिए, यावत्-भगवन् ! सर्वार्थसिद्धअनुत्तरौपपातिकवैमानिकदेवपंचेन्द्रि-यजीवनिर्वृत्ति

कितने प्रकार की है ? गौतम ! दो प्रकार की-पर्याप्तसर्वार्थसिद्धअनुत्तरौपपातिकवैमानिक-देवपंचे-न्द्रियजीवनिर्वृत्ति और अपर्याप्तसर्वार्थसिद्ध-अनुत्तरौपपातिकवैमानिकदेवपंचेन्द्रियजीवनिर्वृत्ति ।

भगवन् ! कर्मनिर्वृत्ति कितने प्रकार की कही गई है ? गौतम ! आठ प्रकार की-ज्ञानावरणीयकर्मनिर्वृत्ति यावत् अन्तरायकर्मनिर्वृत्ति । भगवन् ! नैरयिकों की कितने प्रकार की कर्मनिर्वृत्ति कही गई है ? गौतम ! आठ प्रकार की-ज्ञानावरणीयकर्मनिवृत्ति, यावत् अन्तरायकर्मनिर्वृत्ति । इसी प्रकार वैमानिकों तक की कर्मनिर्वृत्ति के विषयमें जानना।

भगवन् ! शरीरनिर्वृत्ति कितने प्रकार की कही गई है ? गौतम ! पाँच प्रकार की-औदारिकशरीरनिर्वृत्ति यावत् कार्मणशरीरनिर्वृत्ति । भगवन् ! नैरयिकों की कितने प्रकार की शरीरनिर्वृत्ति कही गई है ? गौतम ! पूर्ववत् । इसी प्रकार वैमानिकों पर्यन्त कहना चाहिए । विशेष यह है कि जिसके जितने शरीर हों, उतनी निर्वृत्ति कहनी चाहिए ।

भगवन् ! सर्वेन्द्रियनिर्वृत्ति कितने प्रकार की कही गई है ? गौतम ! पाँच प्रकार की-श्रोत्रेन्द्रियनिर्वृत्ति यावत् स्पर्शेन्द्रियनिर्वृत्ति । इस प्रकार नैरयिकों से लेकर स्तनितकुमारों पर्यन्त जानना चाहिए । भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीवों की कितनी इन्द्रियनिर्वृत्ति है ? गौतम ! एक मात्र स्पर्शेन्द्रियनिर्वृत्ति कही गई है । इसी प्रकार जिसके जितनी इन्द्रियाँ हों उतनी इन्द्रियनिर्वृत्ति वैमानिकों पर्यन्त कहनी चाहिए ।

भगवन् ! भाषानिर्वृत्ति कितने प्रकार की कही गई है ? गौतम ! चार प्रकार की-सत्यभाषानिर्वृत्ति, मृषा-भाषानिर्वृत्ति, सत्यामृषाभाषानिर्वृत्ति और असत्याऽमृषाभाषनिर्वृत्ति । इस प्रकार एकेन्द्रिय को छोड़कर वैमानिकों तक, जिसके जो भाषा हो, उसके उतनी भाषानिर्वृत्ति कहनी चाहिए । भगवन् ! मनोनिर्वृत्ति कितने प्रकार की कही गई है ? गौतम ! चार प्रकार की-सत्यमनोनिर्वृत्ति, यावत् असत्यामृषामनोनिर्वृत्ति । इसी प्रकार एकेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय को छोड़कर वैमानिकों तक कहना चाहिए ।

भगवन् ! कषाय-निर्वृत्ति कितने प्रकार की कही गई है ? गौतम ! चार प्रकार की-क्रोधकषायनिर्वृत्ति यावत् लोभकषायनिर्वृत्ति । इसी प्रकार यावत् वैमानिकों पर्यन्त कहना चाहिए । भगवन् ! वर्णनिर्वृत्ति कितने प्रकार की है? गौतम ! पाँच प्रकार की-कृष्णवर्णनिर्वृत्ति, यावत् शुक्लवर्णनिर्वृत्ति । इसी प्रकार वैमानिकों पर्यन्त समग्र वर्ण-निर्वृत्ति कहनी चाहिए । इसी प्रकार दो प्रकार की गन्ध-निर्वृत्ति, इसी तरह पाँच प्रकार की रस-निवृत्ति एवं आठ प्रकार की स्पर्श-निर्वृत्ति वैमानिकों पर्यन्त कहनी चाहिए ।

भगवन् ! संस्थान-निर्वृत्ति कितने प्रकार की कही गई है ? गौतम ! छह प्रकार की-समचतुरस्रसंस्थान-निर्वृत्ति यावत् हुण्डकसंस्थान-निर्वृत्ति । भगवन् ! नैरयिकों के संस्थान-निर्वृत्ति कितने प्रकार की कही है ? गौतम ! एकमात्र हुण्डकसंस्थाननिवृत्ति कही गई है । भगवन् ! असुरकुमारों के कितने प्रकार की संस्थाननिर्वृत्ति कही गई है? गौतम ! एकमात्र समचतुरस्रसंस्थाननिर्वृत्ति कही गई है । इसी प्रकार स्तनितकुमारों पर्यन्त कहना चाहिए । भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीवों के संस्थाननिर्वृत्ति कितनी है ? गौतम ! उनके एकमात्र मसूर चन्द्र-संस्थान-निर्वृत्ति कही गई है । इसी प्रकार जिसके जो संस्थान हो, तदनुसार निर्वृत्ति वैमानिकों तक कहनी चाहिए ।

भगवन् ! संज्ञानिवृत्ति कितने प्रकार की कही गई है ? गौतम ! चार प्रकार की-आहारसंज्ञानिर्वृत्ति यावत् परिग्रह-संज्ञानिर्वृत्ति । इस प्रकार वैमानिकों तक, (संज्ञानिर्वृत्ति का कथन करना चाहिए) । भगवन् ! लेश्यानिवृत्ति कितने प्रकार की कही गई है ? गौतम ! छह प्रकार की-कृष्णलेश्यानिवृत्ति यावत् शुक्ललेश्यानिर्वृत्ति । इस प्रकार वैमानिकों पर्यन्त जिसके जितनी लेश्याएं हों, उतनी ही लेश्यानिर्वृत्ति कहनी चाहिए ।

भगवन् ! दृष्टिनिर्वृत्ति कितने प्रकार की कही गई है ? गौतम ! तीन प्रकार की-सम्यग्दृष्टिनिर्वृत्ति, मिथ्या-दृष्टिनिर्वृत्ति और सम्यग्मिथ्यादृष्टिनिर्वृत्ति । इसी प्रकार वैमानिक पर्यन्त जिसके जो दृष्टि हो, (तदनुसार दृष्टिनिर्वृत्त कहना चाहिए) ।

भगवन् ! ज्ञाननिर्वृत्ति कितने प्रकार की कही गई है ? गौतम ! ज्ञान-निर्वृत्ति पाँच प्रकार की कही गई है, यथा-आभिनिबोधिकज्ञान-निर्वृत्ति यावत् केवलज्ञान-निर्वृत्ति । इस प्रकार एकेन्द्रिय को छोड़कर जिसमें जितने ज्ञान हों, तदनुसार उसमें उतनी ज्ञाननिर्वृत्ति (कहनी चाहिए) । भगवन् ! अज्ञाननिर्वृत्ति कितने प्रकार की कही गई है ? गौतम !

तीन प्रकार की-मति-अज्ञाननिर्वृत्ति, श्रुत-अज्ञाननिर्वृत्ति और विभंगज्ञाननिर्वृत्ति । इस प्रकार वैमानिकों पर्यन्त, जिसके जितने अज्ञान हों, (तदनुसार अज्ञाननिर्वृत्ति कहनी चाहिए) ।

भगवन् ! योगनिर्वृत्ति कितने प्रकार की कही गई है ? गौतम ! तीन प्रकार की-मनोयोगनिर्वृत्ति, वचनयोग-निर्वृत्ति और काययोगनिर्वृत्ति । इस प्रकार वैमानिकों तक जिसके जितने योग हों, (तदनुसार उतनी योगनिर्वृत्ति कहनी चाहिए) । भगवन् ! उपयोगनिर्वृत्ति कितने प्रकार की कही गई है ? गौतम ! दो प्रकार की-साकारोपयोग-निवृत्ति और अनाकारोपयोग-निवृत्ति । इस प्रकार उपयोगनिर्वृत्ति वैमानिकों पर्यन्त (कहना चाहिए) ।

सूत्र - ७७१-७७३

१. जीव, २. कर्मप्रकृति, ३. शरीर, ४. सर्वेन्द्रिय, ५. भाषा, ६. मन, ७. कषाय । तथा-८. वर्ण, ९. गंध, १०. रस, ११. स्पर्श, १२. संस्थान, १३. संज्ञा, १४. लेश्या, १५. दृष्टि, १६. ज्ञान, १७. अज्ञान, १८. उपयोग और १९. योग, (इन सबकी निर्वृत्ति का कथन इस उद्देशक में किया गया है) । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-१९ – उद्देशक-९

सूत्र - ७७४

भगवन् ! करण कितने प्रकार का है ? गौतम ! पाँच प्रकार का-द्रव्यकरण, क्षेत्रकरण, कालकरण, भवकरण और भावकरण । भगवन् ! नैरयिकों के कितने करण हैं ? गौतम ! पाँच प्रकार के यथा-द्रव्यकरण यावत् भावकरण । वैमानिकों तक कहना ।

भगवन् ! शरीरकरण कितने प्रकार का कहा गया है ? गौतम ! पाँच प्रकार का-औदारिकशरीरकरण यावत् कार्मणशरीरकरण । इसी प्रकार वैमानिकों तक जिसके जितने शरीर हों उसके उतने शरीरकरण कहने चाहिए । भगवन् ! इन्द्रियकरण कितने प्रकार का कहा गया है ? गौतम ! पाँच प्रकार का-श्रोत्रेन्द्रियकरण यावत् स्पर्शेन्द्रियकरण । इसी प्रकार वैमानिकों तक जिसके जितनी इन्द्रियाँ हों उसके उतने इन्द्रियकरण कहने चाहिए ।

इसी प्रकार इसी क्रम से चार प्रकार का भाषाकरण, चार प्रकार का मनःकरण, चार प्रकार का कषायकरण सात प्रकार का समुद्घात करण, चार प्रकार का संज्ञाकरण, छह प्रकार का लेश्याकरण, तीन प्रकार का दृष्टिकरण और तीन प्रकार का वेदकरण है ।

प्राणातिपातकरण कितने प्रकार का है ? भगवन् ! पाँच प्रकार का-एकेन्द्रियप्राणातिपातकरण यावत् पंचे-न्द्रियप्राणातिपातकरण । इस प्रकार वैमानिकों तक कहना । भगवन् ! पुद्गलकरण कितने प्रकार का है ? गौतम ! पाँच प्रकार का-वर्णकरण, गन्धकरण, रसकरण, स्पर्शकरण और संस्थानकरण । भगवन् ! वर्णकरण कितने प्रकार का है ? गौतम ! पाँच प्रकार का-कृष्णवर्णकरण यावत् शुक्लवर्णकरण । इसी प्रकार पुद्गलकरण के वर्णादि-भेद कहना यथा-दो प्रकार का गन्धकरण, पाँच प्रकार का रसकरण एवं आठ प्रकार का स्पर्शकरण । भगवन् ! संस्थान करण कितने प्रकार का है ? पाँच प्रकार का-परिमण्डलसंस्थानकरण यावत् आयतसंस्थानकरण ।

सूत्र - ७७५-७७७

द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, भव, शरीर, करण, इन्द्रियकरण, भाषा, मन, कषाय और समुद्घात् । तथा-संज्ञा, लेश्या, दृष्टि, वेद, प्राणातिपातकरण, पुद्गलकरण, वर्ण, गंध, रस, स्पर्श, संस्थान इनका कथन इस उद्देशक में हैं ।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-१९ – उद्देशक-१०

सूत्र - ७७८

भगवन् ! क्या सभी वाणव्यन्तर देव समान आहार वाले होते हैं ? इत्यादि प्रश्न । (गौतम !) सोलहवें शतक के द्वीपकुमारोद्देशक के अनुसार अल्पर्द्धिक-पर्यन्त जानना चाहिए । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-१८ का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

शतक–२०

सूत्र - ७७९

(इस शतक में दश उद्देशक हैं–) द्वीन्द्रिय, आकाश, प्राणवध, उपचय, परमाणु, अन्तर, बन्ध, भूमि, चारण और सोपक्रम जीव ।

शतक-२० – उद्देशक-१

सूत्र - ७८०

'भगवन्!' राजगृह नगर में गौतम स्वामी ने यावत् इस प्रकार पूछा–भगवन् ! क्या कदाचित् दो, तीन, चार या पाँच द्वीन्द्रिय जीव मिलकर एक साधारण शरीर बाँधते हैं, इसके पश्चात् आहार करते हैं ? अथवा आहार को परिणमाते हैं, फिर विशिष्ट शरीर को बाँधते हैं ? गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है, क्योंकि द्वीन्द्रिय जीव पृथक्-पृथक् आहार करने वाले और उसका पृथक्-पृथक् परिणमन करने वाले होते हैं । इसलिए वे पृथक्-पृथक् शरीर बाँधते हैं, फिर आहार करते हैं तथा उसका परिणमन करते हैं और विशिष्ट शरीर बाँधते हैं ।

भगवन् ! उन जीवों के कितनी लेश्याएं हैं ? गौतम ! तीन, यथा–कृष्णलेश्या, नीललेश्या और कापोत-लेश्या । इस प्रकार समग्र वर्णन, उन्नीसवें शतक में अग्निकायिक जीवों के समान उद्वर्तीत होते हैं, तक कहना । विशेष यह है कि ये द्वीन्द्रिय जीव सम्यग्दृष्टि भी होते हैं, मिथ्यादृष्टि भी होते हैं, पर सम्यग्मिथ्यादृष्टि नहीं होते हैं । उनके नियमतः दो ज्ञान या दो अज्ञान होते हैं । वे मनोयोगी नहीं होते, वे वचनयोगी भी होते हैं और काययोगी भी होते हैं । वे नियमतः छह दिशा का आहार लेते–हैं । क्या उन जीवों को–'हम इष्ट और अनिष्ट रस तथा इष्ट-अनिष्ट स्पर्श का प्रतिसंवेदन करते हैं,' ऐसी संज्ञा, प्रज्ञा, मन अथवा वचन होता है ? गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है । वे रसादि का संवेदन करते हैं । उनकी स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट बारह वर्ष की होती है । इसी प्रकार त्रीन्द्रिय तथा चतुरिन्द्रिय जीवों में भी समझना । किन्तु इनकी इन्द्रियों में और स्थिति में अन्तर है । स्थिति प्रज्ञापना-सूत्र के अनुसार जानना ।

भगवन् ! क्या कदाचित् दो, तीन, चार या पाँच आदि पंचेन्द्रिय मिलकर एक साधारण शरीर बाँधते हैं? गौतम! पूर्ववत् द्वीन्द्रियजीवों के समान है । विशेष यह कि इनके छहों लेश्याएं और तीनों दृष्टियाँ होती हैं । इनमें चार ज्ञान अथवा तीन अज्ञान भजना से होते हैं । तीनों योग होते हैं । भगवन् ! क्या उन (पंचेन्द्रिय) जीवों को ऐसी संज्ञा, प्रज्ञा, मन अथवा वचन होता है कि 'हम आहार ग्रहण करते हैं ?' गौतम ! कितने ही (संज्ञी) जीवों को ऐसी संज्ञा, प्रज्ञा, मन अथवा वचन होता है और कईं (असंज्ञी) जीवों को ऐसी संज्ञा यावत् वचन नहीं होता कि, 'हम आहार ग्रहण करते हैं,' परन्तु वे आहार तो करते ही हैं ।

भगवन् ! क्या उन (पंचेन्द्रिय) जीवों को ऐसी संज्ञा, प्रज्ञा, मन अथवा वचन होता है कि हम इष्ट या अनिष्ट शब्द, रूप, गन्ध, रस अथवा स्पर्श का अनुभव करते हैं ? गौतम ! कतिपय (संज्ञी) जीवों को ऐसी संज्ञा, यावत् वचन होता है और किसी-(असंज्ञी) को ऐसी संज्ञा यावत् वचन नहीं होता है । परन्तु वे संवेदन तो करते ही हैं । भगवन् ! क्या ऐसा कहा जाता है कि वे (पंचेन्द्रिय) जीव प्राणातिपात यावत् मिथ्यादर्शनशल्य में रहे हुए हैं ? गौतम ! उनमें से कईं (पंचेन्द्रिय) जीव प्राणातिपात यावत् मिथ्यादर्शनशल्य में रहे हुए हैं, ऐसा कहा जाता है और कईं जीव नहीं रहे हुए हैं, ऐसा कहा जाता है । जिन जीवों के प्रति वे प्राणातिपात आदि करते हैं, उन जीवों में से कईं जीवों को–'हम मारे जाते हैं, और ये हमें मारने वाले हैं' इस प्रकार का विज्ञान होता है और कईं जीवों को इस प्रकार का ज्ञान नहीं होता । उन जीवों का उत्पाद सर्व जीवों से यावत् सर्वार्थसिद्ध से भी होता है । उनकी स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट तैंतीस सागरोपम की होती है । उनमें केवलीसमुद्घात को छोड़कर (शेष) छह समुद्घात होते हैं । वे मरकर सर्वत्र सर्वार्थसिद्ध तक जाते हैं । शेष सब बातें द्वीन्द्रियजीवों के समान है ।

भगवन् ! इन द्वीन्द्रिय यावत् पंचेन्द्रिय जीवों में कौन किससे यावत् विशेषाधिक है ? सबसे अल्प पंचेन्द्रिय जीव हैं । उनसे चतुरिन्द्रिय जीव विशेषाधिक हैं, उनसे त्रीन्द्रिय जीव विशेषाधिक हैं, उनसे द्वीन्द्रिय जीव विशेषाधिक हैं । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-२० – उद्देशक-२

सूत्र - ७८१

भगवन् ! आकाश कितने प्रकार का कहा गया है ? गौतम ! दो प्रकार का-लोकाकाश और अलोकाकाश । भगवन् ! क्या लोकाकाश जीवरूप है, अथवा जीवदेश-रूप है ? गौतम ! द्वीतिय शतक के अस्ति-उद्देशक अनुसार कहना चाहिए । विशेष में धर्मास्तिकाय से लेकर पुद्गलास्तिकाय तक यहाँ कहना चाहिए-भगवन् ! धर्मास्तिकाय कितना बड़ा है ? गौतम ! धर्मास्तिकाय लोक, लोकमात्र, लोक-प्रमाण, लोक-स्पृष्ट और लोक को अवगाढ़ करके रहा हुआ है, इसी प्रकार पुद्गलास्तिकाय तक कहना चाहिए ।

भगवन् ! अधोलोक, धर्मास्तिकाय के कितने भाग को अवगाढ़ करके रहा हुआ है ? गौतम ! वह कुछ अधिक अर्द्ध भाग को अवगाढ़ करके रहा हुआ है । दूसरे शतक के दशवें उद्देशक अनुसार जानना । यावत्-भगवन् ईषत्प्राग्भारापृथ्वी लोकाकाश के संख्यातवें भाग को अवागहित करके रही हुई है अथवा असंख्यातवें भाग को ? गौतम ! वह लोकाकाश के असंख्यातवें भाग को अवगाहित की हुई है, (वह लोक के) संख्यात भागों को अथवा असंख्यात भागों को भी व्याप्त करके स्थित नहीं है और न समग्र लोक को व्याप्त करके ।

सूत्र - ७८२

भगवन् ! धर्मास्तिकाय के कितने अभिवचन हैं ? गौतम ! अनेक । यथा-धर्म, धर्मास्तिकाय, प्राणातिपात-विरमण, यावत् परिग्रहविरमण, अथवा क्रोध-विवेक, यावत्-मिथ्यादर्शन-शल्य-विवेक, अथवा ईर्यासमिति, यावत् उच्चार-प्रस्रवण-खेल-जल्ल-सिंघाण-परिष्ठापनिकासमिति, अथवा मनोगुप्ति, वचनगुप्ति या कायगुप्ति; ये सब तथा इनके समान जितने भी दूसरे इस प्रकार के शब्द हैं, वे धर्मास्तिकाय के अभिवचन हैं । भगवन् ! अधर्मास्तिकाय के कितने अभिवचन हैं ? गौतम ! अनेक । यथा-अधर्म, अधर्मास्तिकाय, अथवा प्राणातिपात यावत् मिथ्यादर्शनशल्य, अथवा ईर्यासम्बन्धी असमिति, यावत् परिष्ठापनिकासम्बन्धी असमिति; अथवा मन-अगुप्ति, यावत् काय-अगुप्ति; ये सब और इसी प्रकार के जो अन्य शब्द हैं, वे सब अधर्मास्तिकाय के अभिवचन हैं ।

भगवन् ! आकाशास्तिकाय के कितने अभिवचन हैं? गौतम! अनेक यथा-आकाश, आकाशास्तिकाय, अथवा गगन, नभ, अथवा सम, विषम, खह, विहायस्, वीचि, विवर, अम्बर, अम्बरस, छिद्र, शुषिर, मार्ग, विमुख, अर्द, व्यर्द, आधार, व्योम, भाजन, अन्तरिक्ष, श्याम, अवकाशान्तर, अगम, स्फटिक और अनन्त; ये सब तथा इनके समान सभी अभिवचन आकाशास्तिकाय के हैं । भगवन् ! जीवास्तिकाय के कितने अभिवचन हैं ? गौतम ! अनेक, यथा-जीव, जीवास्तिकाय, या प्राण, भूत, सत्त्व, अथवा विज्ञ, चेता, जेता, आत्मा, रंगण, हिण्डुक, पुद्गल, मानव, कर्त्ता, विकर्त्ता, जगत्, जन्तु, योनि, स्वयम्भू, सशरीरी, नायक, अन्तरात्मा, ये सब और इसके समान अन्य अनेक अभिवचन जीव के हैं

भगवन् ! पुद्गलास्तिकाय के कितने अभिवचन हैं ? गौतम ! अनेक । यथा-पुद्गल, पुद्गलास्तिकाय, परमाणु-पुद्गल अथवा द्विप्रदेशी, त्रिप्रदेशी यावत् असंख्यातप्रदेशी और अनन्तप्रदेशी स्कन्ध; ये और इसके समान अन्य अनेक अभिवचन पुद्गल के हैं । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । यह इसी प्रकार है ।'

शतक-२० – उद्देशक-३

सूत्र - ७८३

भगवन् ! प्राणातिपात, मृषावाद यावत् मिथ्यादर्शनशल्य, औत्पत्तिकी यावत् पारिणामिकी बुद्धि, अवग्रह यावत् धारणा, उत्थान, कर्म, बल, वीर्य और पुरुषकार-पराक्रम; नैरयिकत्व, असुरकुमारत्व यावत् वैमानिकत्व, ज्ञानावरणीय यावत् अन्तरायकर्म, कृष्णलेश्या यावत् शुक्ललेश्या, सम्यग्दृष्टि, मिथ्यादृष्टि, सम्यग्मिथ्यादृष्टि, चक्षु-दर्शन यावत् केवलदर्शन, आभिनिबोधिकज्ञान यावत् विभंगज्ञान, आहारसंज्ञा यावत् परिग्रहसंज्ञा, औदारिकशरीर यावत् कार्मण शरीर, मनोयोग, वचनयोग, काययोग तथा साकारोपयोग एवं अनाकारोपयोग; ये सब और इनके जैसे अन्य धर्म; क्या आत्मा के सिवाय अन्यत्र परिणमन नहीं करते हैं ? हाँ, गौतम ! यावत् आत्मा के सिवाय अन्यत्र परिणमन नहीं करते हैं ।

सूत्र - ७८४

भगवन् ! गर्भ में उत्पन्न होता हुआ जीव कितने वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श वाले परिणामों से युक्त होता है ? गौतम ! बारहवें शतक के पंचम उद्देशक के अनुसार यहाँ भी-कर्म से जगत है, कर्म के बिना जीव में विविध (रूप से जगत का) परिणाम नहीं होता, यहाँ तक । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-२० – उद्देशक-४

सूत्र - ७८५

भगवन् ! इन्द्रियोपचय कितने प्रकार का कहा है ? गौतम ! पाँच प्रकार का है, श्रोत्रेन्द्रियोपचय इत्यादि सब वर्णन प्रज्ञापनासूत्र के द्वीतिय इन्द्रियोद्देशक समान कहना चाहिए । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, यह इसी प्रकार है

शतक-२० – उद्देशक-५

सूत्र - ७८६

भगवन् ! परमाणु-पुद्गल कितने वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श वाला कहा गया है ? गौतम ! (वह) एक वर्ण, एक गन्ध, एक रस और दो स्पर्श वाला कहा गया है । यदि एक वर्ण वाला हो तो कदाचित् काला, कदाचित् नीला, कदाचित् लाल, कदाचित् पीला और कदाचित् श्वेत होता है । यदि एक गन्ध वाला होता है तो कदाचित् सुरभिगन्ध और कदाचित् दुरभिगन्ध वाला होता है । यदि एक रस वाला होता है तो कदाचित् तीखा, कदाचित् कटुक, कदाचित् कसैला, कदाचित् खट्टा और कदाचित् मीठा होता है । यदि दो स्पर्श वाला होता है तो कदाचित् शीत और स्निग्ध, कदाचित् शीत और रूक्ष, कदाचित् उष्ण और स्निग्ध और कदाचित् उष्ण और रूक्ष होता है ।

भगवन् ! द्विप्रदेशी स्कन्ध कितने वर्ण, आदिवाला होता है? गौतम ! अठारहवें शतक के छठे उद्देशक अनुसार यावत् कदाचित् चार स्पर्श वाला तक कहना । यदि वह एक वर्ण वाला होता है तो कदाचित् काला यावत् श्वेत होता है । यदि वह दो वर्ण वाला होता है तो कदाचित् काला और नीला, कदाचित् काला और लाल, कदाचित् काला और पीला, कदाचित् काला और श्वेत, कदाचित् नीला और लाल, कदाचित् नीला और पीला, कदाचित् नीला और श्वेत, कदाचित् लाल और पीला, कदाचित् लाल और श्वेत और कदाचित् पीला और श्वेत होता है । इस प्रकार द्विकसंयोगी दस भंग होते हैं । यदि वह एक गन्ध वाला होता है तो कदाचित् सुरभिगन्ध, कदाचित् दुरभिगन्ध वाला होता है । यदि दो गन्ध वाला है तो दोनों-सुरभिगन्ध और दुरभिगन्ध वाला होता है । वर्ण के समान रससम्बन्धी पन्द्रह भंग होते हैं । यदि दो स्पर्श वाला होता है तो शीत और स्निग्ध इत्यादि चार भंग परमाणुपुद्गल के समान जानना । यदि वह तीन स्पर्श वाला होता है तो सर्व शीत होता है, उसका एक देश स्निग्ध और एक देश रूक्ष होता है, सर्व उष्ण होता है, उसका एक देश स्निग्ध और एक देश रूक्ष होता है, (अथवा) सर्व स्निग्ध होता है, उसका एक देश शीत और एक देश उष्ण होता है, अथवा सर्व रूक्ष होता है, उसका एक शीत ओर एक देश उष्ण होता है, यदि वह चार स्पर्श वाला होता है तो उसका एक देश शीत, एक देश उष्ण, एक देश स्निग्ध और एक देश रूक्ष होता है । इस प्रकार स्पर्श के नौ भंग होते हैं

भगवन् ! त्रिप्रदेशी स्कन्ध कितने वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श वाला है ? गौतम ! अठारहवें शतक के छठे उद्देशक अनुसार 'कदाचित् चार स्पर्श वाला होता है' तक कहना । यदि एक वर्ण वाला होता है तो कदाचित् काला होता है, यावत् श्वेत होता है । यदि दो वर्ण वाला होता है तो उसका एक अंश कदाचित् काला और एक अंश नीला होता है, अथवा उसका एक अंश काला और दो अंश नीले होते हैं, या उसके दो अंश काले और एक अंश नीला होता है, अथवा एक अंश काला और एक अंश लाल होता है, या एक देश काला और दो देश लाल होते हैं, अथवा दो देश काले और एक देश लाल होता है । इसी प्रकार काले वर्ण के पीले वर्ण के साथ तीन भंग, काले वर्ण के साथ श्वेत वर्ण के तीन भंग । इसी प्रकार नीले वर्ण के लाल वर्ण के साथ तथा नीले वर्ण के पीले के साथ और श्वेत वर्ण के साथ तीन तीन भंग । तथैव लाल और पीले के तीन भंग होते हैं । इसी प्रकार लाल वर्ण के तीन भंग श्वेत के साथ । पीले और श्वेत के भी तीन भंग । ये सब दस द्विसंयोगी मिलकर तीस भंग होते हैं । यदि त्रिप्रदेशी स्कन्ध तीन वर्णों वाला होता है तो कदाचित् काला, नीला और लाल होता है, कदाचित् काला, नीला और पीला होता है, कदाचित् काला, नीला और श्वेत

होता है, कदाचित् काला, लाल और पीला होता है, कदाचित् काला, नीला और श्वेत होता है, कदाचित् काला, लाल और पीला होता है, कदाचित् काला, लाल और श्वेत होता है, कदाचित् काला, पीला और श्वेत होता है, कदाचित् नीला, लाल और पीला होता है, कदाचित् नीला, लाल और श्वेत होता है, कदाचित् नीला, पीला और श्वेत होता है, अथवा कदाचित् लाल, पीला और श्वेत होता है । इस प्रकार ये दस त्रिकसंयोगी भंग होते हैं ।

यदि एक गन्ध वाला होता है तो कदाचित् सुगन्धित होता है, या कदाचित् सुगन्धित होता है । यदि दो गन्ध वाला होता है तो सुगन्धित और दुर्गन्धित के तीन भंग होते हैं । वर्ण के समान रस के भी (४५ भंग) (कहने चाहिए) (त्रिप्रदेशी स्कन्ध) यदि दो स्पर्श वाला होता है, तो कदाचित् शीत और स्निग्ध, इत्यादि चार भंग द्विप्रदेशी स्कन्ध के समान यहाँ भी समझने चाहिए । जब वह तीन स्पर्श वाला होता है तो सर्वशीत, एकदेश स्निग्ध और एकदेश रूक्ष होता है, अथवा-सर्वशीत, एक देश स्निग्ध और अनेक देश रूक्ष होता है, अथवा सर्वशीत अनेकदेश स्निग्ध और एकदेश रूक्ष होता है, या सर्वउष्ण, एकदेश स्निग्ध और एकदेश रूक्ष होता है । यहाँ भी पूर्ववत् तीन भंग होते हैं । अथवा कदाचित् सर्वस्निग्ध, एकदेश शीत और एकदेश उष्ण, यहाँ भी पूर्ववत् तीन भंग कहना । अथवा सर्वरूक्ष, एकदेश शीत और एकदेश उष्ण, इसके भी पूर्ववत् तीन भंग होते हैं । कुल मिलाकर त्रिकसंयोगी त्रिस्पर्शी के बारह भंग होते हैं । यदि त्रिकप्रदेशी स्कन्ध चार स्पर्श वाला होता है, तो एकदेश शीत, एकदेश उष्ण, एकदेश स्निग्ध और एकदेश रूक्ष होता है । अथवा एकदेश शीत, एकदेश उष्ण, एकदेश स्निग्ध और अनेकदेश रूक्ष होते हैं । अथवा एकदेश शीत, एकदेश उष्ण, अनेकदेश स्निग्ध और एकदेश रूक्ष होता है । अथवा एकदेश शीत, अनेकदेश उष्ण, एकदेश स्निग्ध और एकदेश रूक्ष होता है । या एकदेश शीत, अनेकदेश उष्ण, एकदेश स्निग्ध और अनेकदेश रूक्ष होते हैं । अथवा एकदेश शीत अनेकदेश उष्ण, अनेकदेश स्निग्ध और एकदेश रूक्ष होता है । या अनेकदेश शीत, एकदेश उष्ण, एकदेश स्निग्ध और एकदेश रूक्ष । अथवा अनेकदेश शीत, एकदेश उष्ण, एकदेश स्निग्ध और अनेकदेश रूक्ष । अथवा अनेकदेश शीत, एकदेश उष्ण, अनेकदेश स्निग्ध और एकदेश रूक्ष होता है । इस प्रकार त्रिप्रदेशिक स्कन्धमें स्पर्श के कुल पच्चीस भंग होते हैं। भगवन् ! चतुःप्रदेशीस्कन्ध कितने वर्णवाला होता है ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! अठारहवें शतक के छठे उद्देशकवत् कहना चाहिए । यदि वह एक वर्ण वाला होता है तो कदाचित् काला, यावत् श्वेत होता है । जब दो वर्ण वाला होता है, तो कदाचित् उसका एक अंश काला और एक अंश नीला होता है, कदाचित् एकदेश काला और अनेकदेश नीले होते हैं, कदाचित् अनेकदेश काले और एकदेश नीला होता है, कदाचित् अनेकदेश काले और अनेकदेश नीले होते हैं । अथवा कदाचित् एकदेश काला और एकदेश लाल होता है; यहाँ भी पूर्ववत् चार भंग । अथवा कदाचित् एकदेश काला और एकदेश पीला; इत्यादि पूर्ववत् चार भंग । इसी तरह अथवा कदाचित् एक अंश काला और एक अंश श्वेत, इत्यादि पूर्ववत् चार भंग । अथवा कदाचित् एक अंश नीला और एक अंश लाल आदि पूर्ववत् चार भंग । कदाचित् नीला और पीला के पूर्ववत् चार भंग । कदाचित् नीला और श्वेत के पूर्ववत् चार भंग । फिर कदाचित् लाल और पीला के पूर्ववत् चार भंग । कदाचित् लाल और श्वेत के पूर्ववत् चार भंग । इसी प्रकार अथवा कदाचित् पीला और श्वेत के भी चार भंग कहना। यों इन दस द्विकसंयोग के ४० भंग होते हैं ।

यदि वह तीन वर्ण वाला होता है तो-कदाचित् काला, नीला और लाल होता है, अथवा कदाचित् एक अंश काला, एक अंश नीला और अनेक अंश लाल होते हैं, अथवा कदाचित् एकदेश काला, अनेकदेश नीला और एकदेश लाल होता है । अथवा कदाचित् अनेकदेश काले, एकदेश नीला और एकदेश लाल होता है । इस प्रकार प्रथम त्रिकसंयोग के चार भंग होते हैं । इसी प्रकार द्वीतिय त्रिकसंयोग-काला, नीला और पीला वर्ण के चार भंग, तृतीय त्रिकसंयोग-काला, नीला और श्वेत वर्ण के चार भंग, काला, लाल और पीला वर्ण के चार भंग, काला, लाल और श्वेत वर्ण के चार भंग, अथवा काला, पीला और श्वेत वर्ण के चार भंग, अथवा नीला, लाल और पीला वर्ण के चार भंग, या नीला, लाल और श्वेत वर्ण के चार भंग; अथवा नीला, पीला और श्वेत वर्ण के चार भंग होते हैं । इस प्रकार १० त्रिकसंयोगों के प्रत्येक के चार-चार भंग होने से सब मिलाकर ४० भंग हुए ।

यदि वह चार वर्ण वाला होता है तो कदाचित् काला, नीला, लाल और पीला होता है, कदाचित् काला, लाल,

नीला और श्वेत होता है, कदाचित् काला, नीला, पीला और श्वेत होता है, अथवा कदाचित् काला, लाल, पीला और श्वेत होता है, अथवा कदाचित् नीला, लाल, पीला और श्वेत होता है । इस प्रकार चतुःसंयोगी के कुल पाँच भंग होते हैं । इस प्रकार चतुःप्रदेशी स्कन्ध के एक वर्ण के असंयोगी ५, दो वर्ण के द्विकसंयोगी ४०, तीन वर्ण के त्रिकसंयोगी ४० और चार वर्ण के चतुःसंयोगी ५ भंग हुए । कुल वर्णसम्बन्धी ९० भंग हुए । यदि वह चतुःप्रदेशी स्कन्ध एक गन्ध वाला होता है तो कदाचित् सुरभिगन्ध और कदाचित् दुरभिगन्ध वाला होता है । यदि वह दो गन्ध वाला होता है तो कदाचित् सुरभिगन्ध और दुरभिगन्ध वाला होता है, इसके चार भंग होते हैं । गन्ध-सम्बन्धी कुल ६ भंग होते हैं । वर्ण सम्बन्धी भंग के समान रस-सम्बन्धी (९० भंग कहना) ।

यदि वह (चतुःप्रदेशी स्कन्ध) दो स्पर्श वाला होता है, तो उसके परमाणुपुद्गल के समान चार भंग कहने चाहिए । यदि वह तीन स्पर्श वाला होता है तो, सर्वशीत, एकदेश स्निग्ध और एकदेश रूक्ष होता है, अथवा सर्वशीत, एकदेश स्निग्ध और अनेकदेश रूक्ष होते हैं, अथवा सर्वशीत, अनेकदेश स्निग्ध और एकदेश रूक्ष होता है, अथवा सर्वशीत, अनेकदेश स्निग्ध और अनेकदेश रूक्ष होते हैं । इसी प्रकार सर्वउष्ण, एकदेश स्निग्ध और एकदेश रूक्ष इत्यादि चार भंग होते हैं । तथा सर्वस्निग्ध, एकदेश शीत और एकदेश उष्ण, इत्यादि के चार भंग होते हैं, अथवा सर्वरूक्ष, एकदेश शीत और एकदेश उष्ण, इत्यादि के भी चार भंग होते हैं । कुल मिलाकर तीन स्पर्श के त्रिसंयोगी १६ भंग होते हैं । यदि वह चार स्पर्श वाला हो तो उसका एकदेश शीत, एकदेश उष्ण, एकदेश स्निग्ध और एकदेश रूक्ष होता है । अथवा एकदेश शीत, एकदेश उष्ण, एकदेश स्निग्ध और अनेकदेश रूक्ष होते हैं । अथवा एकदेश शीत, अनेकदेश उष्ण, अनेकदेश स्निग्ध और एकदेश रूक्ष होता है । अथवा एकदेश शीत, एकदेश उष्ण, अनेकदेश स्निग्ध और अनेकदेश रूक्ष होते हैं । अथवा एकदेश शीत, अनेकदेश उष्ण, एकदेश स्निग्ध और एकदेश रूक्ष होता है । अथवा एकदेश शीत, अनेकदेश उष्ण, एकदेश स्निग्ध और अनेकदेश रूक्ष होते हैं । अथवा एकदेश शीत, अनेकदेश उष्ण, अनेकदेश स्निग्ध और एकदेश रूक्ष होता है । अथवा एकदेश शीत, अनेकदेश उष्ण, अनेकदेश स्निग्ध और अनेकदेश रूक्ष होते हैं । अथवा अनेकदेश शीत, एकदेश उष्ण, एकदेश स्निग्ध और एकदेश रूक्ष होता है । इस प्रकार चार स्पर्श के सोलह भंग, यावत्-अनेकदेश शीत, अनेकदेश उष्ण, अनेकदेश स्निग्ध और अनेकदेश रूक्ष होते हैं । इस प्रकार द्विकसंयोगी ४, त्रिकसंयोगी १६ और चतुःसंयोगी १६, ये सब मिलकर स्पर्श सम्बन्धी ३६ भंग होते हैं ।

भगवन् ! पंचप्रदेशी स्कन्ध कितने वर्ण वाला है ? गौतम ! अठारहवें शतक के छठे उद्देशक के अनुसार, 'वह कदाचित् चार स्पर्श वाला कहा गया है'; तक जानना । यदि वह एक वर्ण वाला या दो वर्ण वाला होता है, तो चतुःप्रदेशी स्कन्ध के समान हैं । जब वह तीन वर्ण वाला होता है तो कदाचित् एकदेश काला, एकदेश नीला और एकदेश लाल होता है; कदाचित् एकदेश काला, एकदेश नीला और अनेकदेश लाल होता है, कदाचित् एकदेश काला, अनेकदेश नीला और एकदेश लाल होता है; कदाचित् एकदेश काला, अनेकदेश नीला और अनेकदेश लाल होते हैं, अथवा कदाचित् अनेकदेश काला, एकदेश नीला और एकदेश लाल होता है । अथवा अनेकदेश काला, एकदेश नीला और अनेकदेश लाल होते हैं । अथवा अनेकदेश काला, अनेकदेश नीला और एकदेश लाल होता है । अथवा कदाचित् एकदेश काला, एकदेश नीला और एकदेश पीला होता है । इस त्रिक-संयोग से भी सात भंग होते हैं । इसी प्रकार काला, नीला और श्वेत के भी सात भंग होते हैं । (इसी प्रकार) काला, लाल और पीला के भी सात भंग होते हैं । काला, लाल और श्वेत के सात भंग होते हैं । अथवा काला, पीला और श्वेत के भी सात भंग होते हैं । अथवा नीला, लाल और पीला के भी सात भंग होते हैं । अथवा नीला, लाल और श्वेत के सात भंग होते हैं । अथवा नीला, पीला और श्वेत के सात भंग होते हैं । अथवा लाल, पीला और श्वेत के सात भंग होते हैं । इस प्रकार दस त्रिक-संयोगों के प्रत्येक के सात-सात भंग होने से ७० भंग होते हैं ।

यदि वह चार वर्ण वाला हो तो, कदाचित् एकदेश काला, एकदेश नीला, एकदेश लाल और एकदेश पीला होता है । अथवा एकदेश काला, नीला, और लाल तथा अनेकदेश पीला होता है । अथवा कदाचित् एकदेश काला, नीला, अनेकदेश लाल और एकदेश पीला होता है । अथवा एकदेश काला, अनेकदेश नीला, एकदेश लाल और

एकदेश पीला होता है । अथवा अनेकदेश काला, एकदेश नीला, एकदेश लाल और एकदेश पीला होता है । इस प्रकार चतुःसंयोगी पाँच भंग होते हैं । इसी प्रकार कदाचित् एकदेश काला, नीला, लाल और श्वेत के भी पाँच भंग होते हैं । तथैव एकदेश काला, नीला, पीला और श्वेत के भी पाँच भंग होते हैं । इसी प्रकार अथवा काला, लाल, पीला और श्वेत के भी पाँच भंग होते हैं । अथवा नीला, लाल, पीला और श्वेत के पाँच भंग होते हैं । इस प्रकार चतुः संयोगी पच्चीस भंग होते हैं । यदि वह पाँच वर्ण वाला हो तो काला, नीला, लाल, पीला और श्वेत होता है । इस प्रकार असंयोगी ५, द्विकसंयोगी ४०, त्रिकसंयोगी ७०, चतुःसंयोगी २५ और पंचसंयोगी एक, इस प्रकार सब मिलकर वर्ण के १४१ भंग होते हैं । गन्ध के चतुःप्रदेशी स्कन्ध के समान यहाँ भी ६ भंग होते हैं । वर्ण के समान रस के भी १४१ भंग होते हैं । स्पर्श के ३६ भंग चतुःप्रदेशी स्कन्ध के समान होते हैं ।

भगवान् ! षट्-प्रदेशिक स्कन्ध कितने वर्ण वाला होता है ? गौतम ! पंचप्रदेशी स्कन्ध के अनुसार कदाचित् चार स्पर्श वाला होता है, तक (जानना) । यदि वह एक वर्ण और दो वर्ण वाला है तो एक वर्ण के ५ और दो वर्ण के ४ भंग पंच-प्रदेशी स्कन्ध के समान होते हैं । यदि वह तीन वर्ण वाला हो तो कदाचित् काला, नीला और लाल होता है, इत्यादि, पंचप्रदेशिक स्कन्ध के, यावत्-'कदाचित् अनेकदेश काला, अनेकदेश नीला और एकदेश लाल होता है, ये सात भंग कहे हैं', आठवाँ भंग इस प्रकार है-कदाचित् अनेकदेश काला, नीला और लाल होते हैं । इस प्रकार ये दस त्रिकसंयोग होते हैं । प्रत्येक त्रिकसंयोग में ८ भंग होते हैं । अतएव सभी त्रिकसंयोगों के कुल मिलाकर ८० भंग होते हैं । यदि वह चार वर्ण वाला होता है, तो कदाचित् एकदेश काला, एकदेश नीला, एकदेश लाल और एकदेश पीला होता है, कदाचित् एकदेश काला, एकदेश नीला, एकदेश लाल और अनेकदेश पीला होता है, कदाचित् एकदेश काला, एकदेश नीला, अनेकदेश लाल और एकदेश पीला होता है, कदाचित् एकदेश काला, एकदेश नीला, अनेकदेश लाल और अनेकदेश पीला होता है, कदाचित् एकदेश काला, अनेकदेश नीला, एकदेश लाल और एकदेश पीला होता है, कदाचित् एकदेश काला, अनेकदेश नीला, एकदेश लाल और अनेकदेश पीला होता है, कदाचित् एकदेश काला, अनेकदेश नीला, अनेकदेश लाल और एकदेश पीला होता है, कदाचित् अनेकदेश काला, एकदेश नीला, एकदेश लाल और एकदेश पीला होता है; कदाचित् अनेकदेश काला, एकदेश नीला, एकदेश लाल और अनेकदेश पीला होता है, अथवा कदाचित् अनेकदेश काला, एकदेश नीला, अनेकदेश लाल और एकदेश पीला होता है, अथवा कदाचित् अनेकदेश काला, अनेकदेश नीला, एकदेश लाल और एकदेश पीला होता है । इस प्रकार ये चतुःसंयोगी ग्यारह भंग होते हैं । यों पाँच चतुःसंयोग कहना । प्रत्येक चतुःसंयोग के ग्यारह-ग्यारह भंग मिलकर ये ५५ भंग होते हैं ।

यदि वह पाँच वर्ण वाला होता है, तो कदाचित् एकदेश काला, एकदेश नीला, एकदेश लाल, एकदेश पीला और एकदेश श्वेत होता है, कदाचित् एकदेश काला, एकदेश नीला, एकदेश लाल, एकदेश पीला और अनेकदेश श्वेत होता है, कदाचित् एकदेश काला, एकदेश नीला, एकदेश लाल, अनेकदेश पीला और अनेकदेश श्वेत होता है, कदाचित् एकदेश काला, एकदेश नीला, अनेकदेश लाल, एकदेश पीला और एकदेश श्वेत होता है, कदाचित् एकदेश काला, अनेकदेश नीला, एकदेश लाल, एकदेश पीला और एकदेश श्वेत होता है, अथवा कदाचित् अनेकदेश काला, एकदेश नीला, एकदेश लाल, एकदेश पीला और एकदेश श्वेत होता है । इस प्रकार ये छह भंग कहने चाहिए । इस प्रकार वर्णसम्बन्धी १८६ भंग वर्णसम्बन्धी भंग के समान । स्पर्शसम्बन्धी ३६ भंग चतुःप्रदेशी स्कन्ध के समान ।

भगवन् ! सप्तप्रदेशी स्कन्ध कितने वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श का होता है, इत्यादि प्रश्न । गौतम ! पंच-प्रदेशिक स्कन्ध के समान, 'कदाचित् चार स्पर्श वाला होता है' तक कहना चाहिए । यदि वह एक वर्ण, दो वर्ण अथवा तीन वर्ण वाला हो तो षट्प्रदेशी स्कन्ध के एक वर्ण, दो वर्ण एवं तीन वर्ण के भंगों के समान जानना चाहिए। यदि वह चार वर्ण वाला होता है, तो कदाचित् एकदेश काला, एकदेश नीला, एकदेश लाल और एकदेश पीला होता है, कदाचित् एकदेश काला, एकदेश नीला, एकदेश लाल और अनेकदेश पीला होता है, कदाचित् एकदेश काला, एकदेश नीला, अनेकदेश लाल और एकदेश पीला होता है, इस प्रकार चतुष्क-संयोग में कदाचित् अनेकदेश काला, अनेकदेश नीला, अनेकदेश लाल और एकदेश पीला होता है, तक ये पन्द्रह भंग होते हैं । इस प्रकार पाँच चतुः-संयोगी

भंग होते हैं । एक-एक चतुष्कसंयोगी में पन्द्रह-पन्द्रह भंग होते हैं । सब मिलकर ये ७५ भंग होते हैं ।

यदि वह पाँच वर्ण वाला होता है, तो कदाचित् एकदेश काला, एकदेश नीला, एकदेश लाल, एकदेश पीला और एकदेश श्वेत होता है, कदाचित् एकदेश काला, एकदेश नीला, एकदेश लाल, एकदेश पीला और अनेकदेश श्वेत होता है, कदाचित् एकदेश काला, एकदेश नीला, एकदेश लाल, अनेकदेश पीला और एकदेश श्वेत होता है, कदाचित् एकदेश काला, एकदेश नीला, एकदेश लाल, अनेकदेश पीला और अनेकदेश श्वेत होता है, कदाचित् एकदेश काला, एकदेश नीला, अनेकदेश लाल, एकदेश पीला और एकदेश श्वेत होता है, कदाचित् एकदेश काला, एकदेश नीला, अनेकदेश लाल और एकदेश पीला तथा अनेकदेश श्वेत होता है, कदाचित् एकदेश काला, एकदेश नीला, अनेकदेश लाल, अनेकदेश पीला और एकदेश श्वेत होता है, कदाचित् एकदेश काला, अनेकदेश नीला, एकदेश लाल, एकदेश पीला और एकदेश श्वेत होता है, कदाचित् एकदेश काला, अनेकदेश नीला, एकदेश लाल, एकदेश पीला और अनेकदेश श्वेत होता है, कदाचित् एकदेश काला, अनेकदेश नीला, एकदेश लाल, अनेकदेश पीला और एकदेश शुक्ल होता है, कदाचित् एकदेश काला, अनेकदेश नीला, अनेकदेश लाल, एकदेश पीला और एकदेश श्वेत होता है, कदाचित् अनेकदेश काला, एकदेश नीला, एकदेश लाल, एकदेश पीला और एकदेश श्वेत होता है, कदाचित् अनेकदेश काला, एकदेश नीला, एकदेश लाल, एकदेश पीला और अनेकदेश श्वेत होता है, कदाचित् अनेकदेश काला, एकदेश नीला, एकदेश लाल, अनेकदेश पीला और एकदेश श्वेत होता है, कदाचित् अनेकदेश काला, एकदेश नीला, अनेकदेश लाल, एकदेश पीला और एकदेश श्वेत होता है, कदाचित् अनेकदेश काला, अनेकदेश नीला, एकदेश लाल, एकदेश पीला और एकदेश शुक्ल होता है । इस प्रकार सोलह भंग होते हैं । गन्ध के छह भंग चतुःप्रदेशी स्कन्ध के समान हैं । रस के २१६ भंग वर्ण समान हैं । स्पर्श के भंग ३६ चतुःप्रदेशी स्कन्ध समान हैं ।

भगवन् ! अष्टप्रदेशी स्कन्ध कितने वर्ण वाला होता है ? गौतम ! जब वह एक वर्ण वाला होता है, इत्यादि वर्णन सप्तप्रदेशी स्कन्ध के समान यावत्-कदाचित् चार स्पर्श वाला होता है, यदि एक वर्ण, दो वर्ण या तीन वर्ण वाला हो तो सप्तप्रदेशी स्कन्ध के एक वर्ण, द्विवर्ण एवं त्रिवर्ण के समान भंग कहने । यदि वह चार वर्ण वाला होता है, तो कदाचित् एकदेश काला, एकदेश नीला, एकदेश लाल और एकदेश पीला होता है, कदाचित् एकदेश काला, एकदेश नीला, एकदेश लाल और अनेकदेश पीला होता है; इस प्रकार सप्तप्रदेशी स्कन्ध के समान पन्द्रह भंग, कदाचित् अनेकदेश काला, अनेकदेश नीला, अनेकदेश लाल एवं एकदेश पीला, तथा कदाचित् अनेकदेश काला, अनेकदेश नीला, अनेकदेश लाल और अनेकदेश पीला होता है; तक जानना । एक चतुःसंयोग में सोलह भंग होते हैं । इस प्रकार इन पाँच चतुःसंयोगों के प्रत्येक के सोलह-सोलह भंग होने से ८० भंग होते हैं ।

यदि वह पाँच वर्ण वाला होता है, तो कदाचित् एकदेश काला, एकदेश नीला, एकदेश लाल, एकदेश पीला और एकदेश श्वेत होता है, कदाचित् एकदेश काला, एकदेश नीला, एकदेश लाल, एकदेश पीला और अनेकदेश श्वेत होता है । इस प्रकार इस क्रम से कदाचित् एकदेश काला, अनेकदेश नीला, अनेकदेश लाल और अनेकदेश पीला होता है, इस पन्द्रहवे भंग तक कहना चाहिए । कदाचित् अनेकदेश काला, एकदेश नीला, एकदेश लाल, एकदेश पीला और एकदेश श्वेत होता है, कदाचित् अनेकदेश काला, एकदेश नीला, एकदेश लाल, एकदेश पीला और अनेकदेश श्वेत होता है, कदाचित् अनेकदेश काला, एकदेश नीला, एकदेश लाल और अनेकदेश पीला तथा एकदेश श्वेत होता है, कदाचित् अनेकदेश काला, एकदेश नीला, अनेकदेश लाल, एकदेश पीला और एकदेश श्वेत होता है, कदाचित् अनेकदेश काला, एकदेश नीला, अनेकदेश लाल, एकदेश पीला और एकदेश श्वेत होता है, कदाचित् अनेकदेश काला, एकदेश नीला, अनेकदेश लाल, एकदेश पीला और अनेकदेश श्वेत होता है, कदाचित् अनेकदेश काला, एकदेश नीला, अनेकदेश लाल, अनेकदेश पीला और एकदेश श्वेत होता है, कदाचित् अनेकदेश काला, अनेकदेश नीला, एकदेश लाल, एकदेश पीला और एकदेश श्वेत होता है, कदाचित् अनेकदेश काला, अनेक देश नीला, एकदेश लाल, एकदेश पीला और अनेकदेश श्वेत होता है, कदाचित् अनेकदेश काला, अनेकदेश नीला, एकदेश लाल, अनेकदेश पीला और एकदेश श्वेत होता है, अथवा कदाचित् अनेकदेश काला, अनेकदेश नीला, अनेकदेश लाल, एकदेश पीला और एकदेश श्वेत होता है । इस प्रकार पंचसंयोगी छब्बीस भंग हैं । इसी प्रकार कुल मिलाकर

२३१ भंग होते हैं । गन्ध के सप्तप्रदेशी स्कन्ध के समान ६ भंग होते हैं । रस के इसी स्कन्ध के वर्ण के समान २३१ भंग होते हैं । स्पर्श के चतुःप्रदेशी स्कन्ध के ३६ भंग होते हैं ।

भगवन् ! नवप्रदेशी स्कन्ध कितने वर्ण वाला होता है ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! अष्टप्रदेशी स्कन्ध के समान, कदाचित् एकवर्ण (से लेकर) कदाचित् चार स्पर्श वाला होता है; यदि वह एक वर्ण दो, दो वर्ण, तीन वर्ण अथवा चार वर्ण वाला हो तो उसके भंग अष्टप्रदेशी स्कन्ध के समान हैं । यदि वह पाँच वर्ण वाला होता है, तो कदाचित् एकदेश काला, एकदेश नीला, एकदेश लाल, एकदेश पीला और एकदेश श्वेत होता है, कदाचित् एकदेश काला, एकदेश नीला, एकदेश लाल, एकदेश पीला और अनेकदेश श्वेत होता है । इस प्रकार कदाचित् अनेकदेश काला, अनेकदेश नीला, अनेकदेश लाल, अनेकदेश पीला और एकदेश श्वेत होता है, यहाँ तक इकतीस भंग कहना । यों वर्ण की अपेक्षा-सब मिलाकर २३६ भंग होते हैं । गन्ध-विषयक ६ भंग अष्टप्रदेशी के समान होते हैं । रस-विषयक २३६ भंग कहना । स्पर्श के ३६ भंग चतुःप्रदेशी के समान समझना ।

भगवन् ! दशप्रदेशी स्कन्ध संबंधी प्रश्न । गौतम ! नव-प्रदेशिक स्कन्ध के समान कहना । यदि एकवर्णादि वाला हो तो नव-प्रदेशिक स्कन्ध के एक वर्ण, दो वर्ण, तीन वर्ण और चार वर्ण के समान । यदि वह पाँच वर्ण वाला हो तो नवप्रदेशी के समान समझना । विशेष यह है कि यहाँ अनेकदेश काला, अनेकदेश नीला, अनेकदेश पीला और अनेकप्रदेश श्वेत होता है । यह बत्तीसवा भंग अधिक कहना । इस प्रकार वर्ण के २३७ भंग होते हैं । गन्ध के ६ भंग नवप्रदेशी के समान । रस के २३७ भंग वर्ण के समान हैं । स्पर्शसम्बन्धी ३६ भंग चतुःप्रदेशी के समान हैं ।

दशप्रदेशी स्कन्ध के समान संख्यातप्रदेशी स्कन्ध (के) भी (वर्णादि सम्बन्धी भंग कहने चाहिए) । इसी प्रकार असंख्यातप्रदेशी स्कन्ध के विषय में भी समझना चाहिए । सूक्ष्मपरिणाम वाले अनन्तप्रदेशी स्कन्ध के विषय में भी इसी प्रकार भंग कहने चाहिए ।

सूत्र - ७८७

भगवन् ! बादर-परिणाम वाला अनन्तप्रदेशी स्कन्ध कितने वर्ण वाला होता है ? गौतम ! अठारहवे शतक के छठे उद्देशक के समान 'कदाचित् आठ स्पर्श वाला कहा गया है', तक जानना । अनन्तप्रदेशी बादर परिणामी स्कन्ध के वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श के भंग, दशप्रदेशी स्कन्ध के समान कहने । यदि वह चार स्पर्श वाला होता है, तो कदाचित् सर्वकर्कश, सर्वगुरु, सर्वशीत और सर्वस्निग्ध होता है, कदाचित् सर्वकर्कश, सर्वगुरु, सर्वशीत और सर्वरूक्ष होता है, कदाचित् सर्वकर्कश, सर्वगुरु, सर्वउष्ण और सर्वस्निग्ध होता है, कदाचित् सर्वगुरु, सर्वउष्ण और सर्वरूक्ष होता है । कदाचित् सर्वकर्कश, सर्वलघु, सर्वशीत और सर्वस्निग्ध होता है । कदाचित् सर्वकर्कश, सर्वलघु, सर्वशीत और सर्वरूक्ष होता है । कदाचित् सर्वकर्कश, सर्वलघु, सर्वउष्ण और सर्वस्निग्ध होता है । कदाचित् सर्व-कर्कश, सर्वलघु, सर्वउष्ण और सर्वरूक्ष होता है । कदाचित् सर्वमृदु, सर्वगुरु, सर्वशीत और सर्वस्निग्ध होता है । कदाचित् सर्वमृदु, सर्वगुरु, सर्वभीत और सर्वरूक्ष होता है । कदाचित् सर्वमृदु, सर्वगुरु, सर्वउष्ण और सर्वस्निग्ध होता है । कदाचित् सर्वमृदु, सर्वगुरु, सर्वउष्ण और सर्वरूक्ष होता है । कदाचित् सर्वमृदु, सर्वलघु, सर्वशीत और सर्वस्निग्ध होता है । कदाचित् सर्वमृदु, सर्वलघु, सर्वशीत और सर्वरूक्ष होता है । कदाचित् सर्वमृदु, सर्वलघु, सर्व-उष्ण और सर्वस्निग्ध होता है । कदाचित् सर्वमृदु, सर्वलघु, सर्वउष्ण और सर्वरूक्ष होता है । इस प्रकार सोलह भंग हैं ।

यदि पाँच स्पर्श वाला होता है, तो सर्वकर्कश, सर्वगुरु, सर्वशीत, एकदेश स्निग्ध और एकदेश रूक्ष होता है। अथवा सर्वकर्कश, सर्वगुरु, सर्वशीत, एकदेश स्निग्ध और अनेकदेश रूक्ष होता है । अथवा सर्वकर्कश, सर्वगुरु, सर्वशीत, एकदेश स्निग्ध और अनेकदेश रूक्ष होता है । अथवा सर्वकर्कश, सर्वगुरु, सर्वशीत, अनेकदेश स्निग्ध और एकदेश रूक्ष होता है । अथवा सर्वकर्कश, सर्वगुरु, सर्वशीत, अनेकदेश स्निग्ध और अनेकदेश रूक्ष होता है । अथवा सर्वकर्कश, सर्वगुरु, सर्वउष्ण, एकदेश स्निग्ध और एकदेश रूक्ष होता है, इनके चार भंग । कदाचित् सर्व-कर्कश, सर्वलघु, सर्वशीत, एकदेश स्निग्ध और एकदेश रूक्ष होते हैं, इनके भी चार भंग । अथवा कदाचित् सर्व-कर्कश, सर्वलघु, सर्वउष्ण, एकदेश स्निग्ध और एकदेश रूक्ष इसके भी पूर्ववत् चार भंग । इस प्रकार कर्कश के साथ सोलह

भंग होते हैं । अथवा सर्वमृदु, सर्वगुरु, सर्वशीत, एकदेश स्निग्ध और एकदेश रूक्ष होता है, इसके भी पूर्ववत् चार भंग होते हैं । अथवा सर्वकर्कश, सर्वमृदु, सर्वस्निग्ध, एकदेश शीत और एकदेश उष्ण के भी १६ भंग होते हैं । अथवा सर्वकर्कश, सर्वगुरु, सर्वरूक्ष, एकदेश शीत और एकदेश उष्ण के १६ भंग, दोनों मिलाकर बत्तीस भंग होते हैं । इस प्रकार पाँच स्पर्श वाले १२८ भंग हुए ।

यदि छह स्पर्श वाला होता है, तो सर्वकर्कश, सर्वगुरु, एकदेश शीत, एकदेश उष्ण, एकदेश स्निग्ध और एकदेश रूक्ष होता है; कदाचित् सर्वकर्कश, सर्वगुरु, एकदेश शीत, एकदेश उष्ण, एकदेश स्निग्ध और अनेकदेश रूक्ष; इस प्रकार यावत्-सर्वकर्कश, सर्वलघु, अनेकदेश शीत, अनेकदेश उष्ण, अनेकदेश स्निग्ध और अनेकदेश रूक्ष; इस प्रकार सोलहवे भंग तक कहना । ये १६ भंग हुए । कदाचित् सर्वकर्कश, सर्वलघु, एकदेश शीत, एकदेश उष्ण, एकदेश स्निग्ध और एकदेश रूक्ष; यहाँ भी सोलह भंग होते हैं । कदाचित् सर्वमृदु, सर्वगुरु, एकदेश शीत, एकदेश उष्ण, एकदेश स्निग्ध और एकदेश रूक्ष, यहाँ भी सोलह भंग होते हैं । कदाचित् सर्वमृदु, सर्वलघु, एकदेश शीत, एकदेश उष्ण, एकदेश स्निग्ध और एकदेश रूक्ष, कुल सोलह भंग होते हैं । ये सब मिलकर ६४ भंग होते हैं ।

अथवा कदाचित् सर्वकर्कश, सर्वशीत, एकदेशगुरु, एकदेशलघु, एकदेश स्निग्ध और एकदेश रूक्ष होता है; इस प्रकार यावत्-सर्वमृदु, अनेकदेश लघु, अनेकदेश गुरु, अनेकदेश स्निग्ध और अनेकदेश रूक्ष होते हैं; यह चौंसठवाँ भंग है । अथवा कदाचित् सर्वकर्कश, सर्वस्निग्ध, एकदेश गुरु, एकदेश लघु, एकदेश शीत और एकदेश उष्ण होता है; यावत् कदाचित् सर्वमृदु, सर्वरूक्ष, अनेकदेश गुरु, अनेकदेश लघु, अनेकदेश शीत और अनेकदेश उष्ण होता है । यह चौंसठवा भंग है । कदाचित् सर्वगुरु, सर्वशीत, एकदेश कर्कश, एकदेश मृदु, एकदेश उष्ण होता है, इस प्रकार यावत्-सर्वलघु, सर्वउष्ण, अनेकदेश कर्कश, अनेकदेश मृदु, अनेकदेश स्निग्ध और अनेकदेश रूक्ष होते हैं; यह चौंसठवाँ भंग है । कदाचित् सर्वगुरु, सर्वस्निग्ध, एकदेश कर्कश, एकदेश मृदु, एकदेश शीत और एकदेश उष्ण होता है; यावत् कदाचित् सर्वलघु, सर्वरूक्ष, अनेकदेश कर्कश, अनेकदेश मृदु, अनेकदेश शीत और अनेकदेश उष्ण होते हैं; यह चौसठवा भंग है । कदाचित् सर्वशीत, सर्वस्निग्ध, एकदेश कर्कश, एकदेश मृदु, एकदेश गुरु और एकदेश लघु होता है; यावत् कदाचित् सर्वउष्ण, सर्वरूक्ष, अनेकदेश कर्कश, अनेकदेश मृदु, अनेकदेश गुरु, अनेकदेश लघु होता है । यह चौसठवा भंग है । षट्स्पर्श के ३८४ भंग होते हैं ।

यदि वह सात स्पर्श वाला होता है तो कदाचित् सर्वकर्कश, एकदेश गुरु, एकदेश लघु, एकदेश शीत, एकदेश उष्ण, एकदेश स्निग्ध और एकदेश रूक्ष होता है । कदाचित् सर्वकर्कश, एकदेश गुरु, एकदेश लघु, एकदेश गीत, एकदेश उष्ण, एकदेश स्निग्ध और अनेकदेश रूक्ष होते हैं, कदाचित् सर्वकर्कश, एकदेश गुरु, एकदेश लघु, एकदेश शीत, अनेकदेश उष्ण, एकदेश स्निग्ध और एकदेश रूक्ष होता है, इत्यादि चार भंग । कदाचित् सर्वकर्कश, एकदेश गुरु, एकदेश लघु, अनेकदेश शीत, एकदेश उष्ण, एकदेश स्निग्ध और एकदेश रूक्ष, इत्यादि चार भंग तथा कदाचित् सर्वकर्कश, एकदेश गुरु, एकदेश लघु, अनेकदेश शीत, अनेकदेश उष्ण, एकदेश स्निग्ध और एकदेश रूक्ष इत्यादि चार भंग; ये सब मिलाकर १६ भंग हैं । अथवा कदाचित् सर्वकर्कश, एकदेश गुरु, अनेकदेश लघु, एकदेश शीत, एकदेश उष्ण, एकदेश स्निग्ध और एकदेश रूक्ष होता है । इस प्रकार 'गुरु' पद को एकवचन में और 'लघु' पद को अनेक वचन में रखकर पूर्ववत् यहाँ भी सोलह भंग कहने चाहिए । अथवा कदाचित् सर्वकर्कश, अनेकदेश गुरु, एकदेश लघु, एकदेश शीत, एकदेश उष्ण, एकदेश स्निग्ध एवं एकदेश रूक्ष इत्यादि, ये भी सोलह भंग कहने चाहिए । अथवा कदाचित् सर्वकर्कश, अनेकदेश गुरु, अनेकदेश लघु, एकदेश शीत, एकदेश उष्ण, एकदेश स्निग्ध और एकदेश रूक्ष, ये सब मिलाकर सोलह भंग कहने चाहिए ।

अथवा कदाचित् सर्वमृदु, एकदेश गुरु, एकदेश गुरु, एकदेश लघु, एकदेश शीत, एकदेश उष्ण, एकदेश स्निग्ध और एकदेश रूक्ष होता है । रूक्ष की तरह 'मृदु' शब्द के साथ भी पूर्ववत् ६४ भंग । अथवा कदाचित् सर्व-गुरु, एकदेश कर्कश, एकदेश मृदु, एकदेश शीत, एकदेश उष्ण, एकदेश स्निग्ध और एकदेश रूक्ष, इस प्रकार के 'गुरु' के साथ भी पूर्ववत् ६४ भंग । अथवा कदाचित् सर्वलघु, एकदेश कर्कश, एकदेश मृदु, एकदेश शीत, एकदेश उष्ण,

एकदेश स्निग्ध, एकदेश रूक्ष; इस प्रकार 'लघु' के साथ भी पूर्ववत् ६४ भंग । कदाचित् सर्वशीत, एकदेश कर्कश, एकदेश मृदु, एकदेश गुरु, एकदेश लघु, एकदेश स्निग्ध और एकदेश रूक्ष, इस प्रकार 'शीत' के साथ भी ६४ भंग । कदाचित् सर्वउष्ण, एकदेश कर्कश, एकदेश मृदु, एकदेश गुरु, एकदेश लघु, एकदेश स्निग्ध और एकदेश रूक्ष; इस प्रकार 'उष्ण' के साथ भी ६४ भंग । कदाचित् सर्वस्निग्ध, एकदेश कर्कश, एकदेश मृदु, एकदेश गुरु, एकदेश लघु, एकदेश शीत और एकदेश उष्ण होता है; इस प्रकार 'स्निग्ध' के साथ भी ६४ भंग । कदाचित् सर्व-रूक्ष, एकदेश कर्कश, एकदेश मृदु, एकदेश गुरु, एकदेश लघु, एकदेश शीत और एकदेश उष्ण; इस प्रकार 'रूक्ष' के साथ भी ६४ भंग । यावत् सर्वरूक्ष, अनेकदेश कर्कश, अनेकदेश मृदु, अनेकदेश गुरु, अनेकदेश लघु, अनेकदेश शीत और अनेकदेश उष्ण होता है । इस प्रकार ये ५१२ भंग सप्तस्पर्शी के हैं ।

यदि वह आठ स्पर्श वाला होता है, तो कदाचित् एकदेश कर्कश, एकदेश मृदु, एकदेश गुरु, एकदेश लघु, एकदेश शीत, एकदेश उष्ण, एकदेश स्निग्ध और एकदेश रूक्ष होता है । कदाचित् एकदेश कर्कश, एकदेश मृदु, एकदेश गुरु, एकदेश लघु, एकदेश शीत और अनेकदेश उष्ण तथा एकदेश स्निग्ध और एकदेश रूक्ष, इत्यादि चार भंग कहने चाहिए । कदाचित् एकदेश कर्कश, एकदेश मृदु, एकदेश गुरु, एकदेश लघु, अनेकदेश शीत, एकदेश उष्ण, एकदेश स्निग्ध और एकदेश रूक्ष; इत्यादि चार भंग । कदाचित् एकदेश कर्कश, एकदेश मृदु, एकदेश गुरु, एकदेश लघु, अनेकदेश शीत, अनेकदेश उष्ण, एकदेश स्निग्ध और एकदेश रूक्ष, ये चार भंग । इस प्रकार १६ भंग होते हैं । अथवा कदाचित् एकदेश कर्कश, एकदेश मृदु, एकदेश गुरु, अनेकदेश लघु, एकदेश शीत, एकदेश उष्ण, एकदेश स्निग्ध और एकदेश रूक्ष; इस प्रकार 'गुरु' पद को एकवचन में और 'लघु' पद को बहुवचन में रखकर पूर्ववत् १६ भंग है । कदाचित् एकदेश कर्कश, एकदेश मृदु, अनेकदेश गुरु, एकदेश लघु, एकदेश शीत, एकदेश उष्ण, एकदेश स्निग्ध और एकदेश रूक्ष, इसके भी १६ भंग हैं । कदाचित् एकदेश कर्कश, एकदेश मृदु, अनेकदेश गुरु, अनेकदेश लघु, एकदेश शीत, एकदेश उष्ण, एकदेश स्निग्ध और एकदेश रूक्ष; इसके भी १६ भंग हैं । इस प्रकार बादर परिणाम वाले अनन्तप्रदेशी स्कन्ध के १२९६ भंग हैं ।

सूत्र - ७८८

भगवन् ! परमाणु कितने प्रकार का है ? गौतम ! चार प्रकार का, यथा-द्रव्यपरमाणु, क्षेत्रपरमाणु, काल-परमाणु और भावपरमाणु । भगवन् ! द्रव्यपरमाणु कितने प्रकार का है ? गौतम ! चार प्रकार का, यथा-अच्छेद्य, अभेद्य, अदाह्य और अग्राह्य । भगवन् ! क्षेत्रपरमाणु कितने प्रकार का है ? गौतम ! चार प्रकार का, यथा-अनर्द्ध, अमध्य, अप्रदेश और अविभाज्य । भगवन् ! कालपरमाणु कितने प्रकार का है ? गौतम ! चार प्रकार का, यथा-अवर्ण, अगन्ध, अरस और अस्पर्श । भगवन् ! भावपरमाणु कितने प्रकार का है ? गौतम ! चार प्रकार का, यथा-वर्णवान्, गन्धवान्, रसवान् और स्पर्शवान् । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-२० – उद्देशक-६

सूत्र - ७८९

भगवन् ! जो पृथ्वीकायिक जीव, इस रत्नप्रभापृथ्वी और शर्कराप्रभापृथ्वी के बीच में मरणसमुद्घात करके सौधर्मकल्प में पृथ्वीकायिक के रूप में उत्पन्न होने योग्य हैं, वे पहले उत्पन्न होकर पीछे आहार करते हैं, अथवा पहले आहार करके पीछे उत्पन्न होते हैं; इत्यादि वर्णन सत्तरहवे शतक के छठे उद्देशक के अनुसार, विशेष यह है कि वहाँ पृथ्वीकायिक 'सम्प्राप्त करते हैं, -पुद्गल-ग्रहण करते हैं-ऐसा कहा है, और यहाँ 'आहार करते हैं'-ऐसा कहना । शेष सब पूर्ववत् । भगवन् ! जो पृथ्वीकायिक जीव, इस रत्नप्रभा और शर्कराप्रभा पृथ्वी के मध्य में मरणसमुद्घात करके ईशानकल्प में पृथ्वीकायिकरूप से उत्पन्न होने योग्य हैं, वे पहले उत्पन्न होकर पीछे आहार करते हैं या पहले आहार करके पीछे उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! पूर्ववत् । इसी प्रकार ईषत्प्राग्भारापृथ्वी तक कहना ।

भगवन् ! जो पृथ्वीकायिक जीव शर्कराप्रभा और बालुकाप्रभा के मध्य में मरण-समुद्घात करके सौधर्म-कल्प में यावत् ईषत्प्राग्भारापृथ्वी में उत्पन्न होने योग्य हैं, वे पहले उत्पन्न होकर पीछे आहार करते हैं, या पहले आहार

करके पीछे उत्पन्न होते हैं ? पूर्ववत् कहना । इसी क्रम से यावत् तमःप्रभा और अधःसप्तम पृथ्वी के मध्य में मरणसमुद्घात करके सौधर्मकल्प यावत् ईषत्प्राग्भारापृथ्वी में (पूर्ववत्) उपपात कहने चाहिए ।

भगवन् ! जो पृथ्वीकायिक जीव, सौधर्म-ईशान और सनत्कुमार-माहेन्द्र कल्प के मध्य में मरणसमुद्घात करके इस रत्नप्रभापृथ्वी में पृथ्वीकायिकरूप में उत्पन्न होने योग्य हैं, वह पहले उत्पन्न होकर पीछे आहार करता है, अथवा पहले आहार करके फिर उत्पन्न होता है ? गौतम ! पूर्ववत् । यावत् इस कारण से हे गौतम ! ऐसा कहा गया है, इत्यादि उपसंहार तक कहना चाहिए । भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीव, सौधर्म-ईशान और सनत्कुमार-माहेन्द्र कल्प के मध्य में मरणसमुद्घात करके शर्कराप्रभा पृथ्वी में पृथ्वीकायिकरूप से उत्पन्न होने योग्य हैं, वह पहले यावत् पीछे उत्पन्न होता है ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! पूर्ववत् । इसी प्रकार यावत् अधःसप्तमपृथ्वी तक उपपात ।

इसी प्रकार सनत्कुमार-माहेन्द्र और ब्रह्मलोक कल्प के मध्य में मरणसमुद्घात करके पुनः रत्नप्रभा से लेकर यावत् अधःसप्तमपृथ्वी तक उपपात कहने चाहिए । इसी प्रकार ब्रह्मलोक और लान्तक कल्प के मध्य में मरणसमुद् घातपूर्वक पुनः अधःसप्तमपृथ्वी तक के सम्बन्ध में कहना चाहिए । इसी प्रकार लान्तक और महाशुक्र कल्प, महाशुक्र और सहस्रार कल्प, सहस्रार और आनत-प्राणत कल्प, आनत-प्राणत और आरण-अच्युत कल्प, आरण-अच्युत और ग्रैवेयक विमानों, ग्रैवेयक विमानों और अनुत्तरविमानों एवं अनुत्तरविमानों और ईषत्प्राग्भारा-पृथ्वी के अन्तराल में मरणसमुद्घातपूर्वक पुनः अधःसप्तमपृथ्वी तक कहना ।

सूत्र - ७९०

भगवन् ! जो अप्कायिक जीव, इस रत्नप्रभा और शर्कराप्रभा पृथ्वी के बीच में मरणसमुद्घात करके सौधर्मकल्प में अप्कायिक के रूप में उत्पन्न होने योग्य हैं, वह पहले उत्पन्न होकर पीछे आहार करता है या पहले आहार करके पीछे उत्पन्न होता है ? गौतम ! शेष समग्र पृथ्वीकायिक के समान । इसी प्रकार पहली और दूसरी पृथ्वी के बीच में मरणसमुद्घातपूर्वक अप्कायिक जीवों का यावत् ईषत्प्राग्भारापृथ्वी तक उपपात जानना । इसी प्रकार यावत् तमःप्रभा और अधःसप्तमा के मध्य में मरणसमुद्घातपूर्वक अप्कायिक जीवों का यावत् ईषत्प्राग्भारा पृथ्वी तक अप्कायिक रूप में उपपात जानना ।

भगवन् ! जो अप्कायिक जीव, सौधर्म-ईशान और सनत्कुमार-माहेन्द्र कल्प के बीच में मरणसमुद्घात करके रत्नप्रभा-पृथ्वी में घनोदधि-वलयों में अप्कायिक-रूप में उत्पन्न होने योग्य हैं; इत्यादि पूर्ववत् प्रश्न । शेष सब पृथ्वीकायिक के समान जानना चाहिए । इस प्रकार इन अन्तरालों में मरणसमुद्घात को प्राप्त अप्कायिक जीवों का अधःसप्तमपृथ्वी तक के घनोदधिवलयों में अप्कायिकरूप से उपपात कहना चाहिए । इसी प्रकार यावत् अनुत्तरविमान और ईषत्प्राग्भारापृथ्वी के बीच यावत् अप्कायिक के रूप में उपपात जानना ।

सूत्र - ७९१

भगवन् ! जो वायुकायिक जीव, इस रत्नप्रभा और शर्कराप्रभा पृथ्वी के मध्य में मरणसमुद्घात करके सौधर्मकल्प में वायुकायिक रूप से उत्पन्न होने योग्य हैं; इत्यादि पूर्ववत् प्रश्न । गौतम ! सत्तरहवे शतक के दसवे उद्देशक समान यहाँ भी कहना । विशेष यह है कि रत्नप्रभा आदि पृथ्वीयों के अन्तरालों में मरणसमुद्घातपूर्वक कहना चाहिए । इस प्रकार यावत् अनुत्तरविमानों और ईषत्प्राग्भारा पृथ्वी के मध्य में मरणसमुद्घात करके जो वायुकायिक जीव अधःसप्तमपृथ्वी में घनवात और तनुवात तथा घनवातवलयों और तनुवातवलयों में वायुकायिक-रूप से उत्पन्न होने योग्य हैं, इत्यादि सब कथन पूर्ववत्, यावत्–'इस कारण उत्पन्न होते हैं ।' 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-२० – उद्देशक-७

सूत्र - ७९२

भगवन् ! बन्ध कितने प्रकार का कहा गया है ? गौतम ! तीन प्रकार का, यथा–जीवप्रयोगबन्ध, अनन्तर-बन्ध और परम्परबन्ध । भगवन् ! नैरयिक जीवों के बन्ध कितने प्रकार के हैं ? गौतम ! पूर्ववत् । इसी प्रकार वैमानिकों तक

भगवन् ! ज्ञानावरणीय कर्म का बन्ध कितने प्रकार का है ? गौतम ! तीन प्रकार का । यथा जीवप्रयोगबन्ध

अनन्तरबन्ध और परम्परबन्ध । भगवन् ! नैरयिकों के ज्ञानावरणीय कर्म का बन्ध कितने प्रकार का है ? गौतम ! पूर्ववत् । इसी प्रकार वैमानिक पर्यन्त । इसी प्रकार यावत् अन्तराय कर्म तक जानना ।

भगवन् ! उदयप्राप्त ज्ञानावरणीय कर्म का बन्ध कितने प्रकार का है ? गौतम ! तीन प्रकार का । इसी प्रकार नैरयिकों के विषय में जान लेना । इसी प्रकार वैमानिकों तक । और इसी प्रकार अन्तराय कर्म तक कहना चाहिए ।

भगवन् ! स्त्रीवेद का बन्ध कितने प्रकार का है ? गौतम ! तीन प्रकार का । भगवन् ! असुरकुमारों के स्त्री-वेद का बन्ध कितने प्रकार का है ? पूर्ववत् । इसी प्रकार वैमानिकों तक कहना । विशेष यह कि जिसके स्त्रीवेद है, (उसके लिए ही यह जानना) । इसी प्रकार पुरुषवेद एवं नपुंसकवेद के विषय में भी जानना और वैमानिकों तक कथन करना विशेष यह है कि जिसके जो वेद हो, वही जानना ।

भगवन् ! दर्शनमोहनीय कर्म का बन्ध कितने प्रकार का है ? गौतम ! पूर्ववत् । इसी प्रकार वैमानिक पर्यन्त अन्तर-रहित (बन्ध-कथन करना चाहिए) । इसी प्रकार चारित्रमोहनीय के बन्ध के विषयमें भी वैमानिकों तक जानना

इस प्रकार इसी क्रम से औदारिकशरीर, यावत् कार्मणशरीर के, आहारसंज्ञा यावत् परिग्रहसंज्ञा के, कृष्ण-लेश्या यावत् शुक्ललेश्या के, सम्यग्दृष्टि, मिथ्यादृष्टि एवं सम्यग्मिथ्यादृष्टि के, आभिनिबोधिकज्ञान यावत् केवलज्ञान के, मति-अज्ञान, श्रुत-अज्ञान तथा विभंगज्ञान के पूर्ववत् तीन बन्ध हैं ।

भगवन् ! इसी प्रकार आभिनिबोधिकज्ञानके विषय का बन्ध कितने प्रकार का है ? गौतम ! आभिनिबोधिक ज्ञान यावत् केवलज्ञान, मतिअज्ञान, श्रुत-अज्ञान और विभंगज्ञान, इन सब पदों के तीन-तीन प्रकार का बन्ध है ।

इन सब पदों का चौबीस दण्डकों के विषय में (बन्ध-विषयक) कथन करना । इतना विशेष है कि जिसके जो हो, वही जानना । यावत्-भगवन् ! वैमानिकों के विभंगज्ञान-विषय का बन्ध कितने प्रकार का है ? गौतम ! तीन प्रकार का । यथा-जीवप्रयोगबन्ध, अनन्तरबन्ध और परम्परबन्ध । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-२० – उद्देशक-८

सूत्र - ७९३

भगवन् ! कर्मभूमियाँ कितनी हैं ? गौतम ! पन्द्रह हैं । पाँच भरत, पाँच ऐरवत और पाँच महाविदेह । भगवन् ! अकर्मभूमियाँ कितनी हैं ? गौतम ! तीस हैं । पाँच हैमवत, पाँच हैरण्यवत, पाँच हरिवर्ष, पाँच रम्यकवर्ष, पाँच देवकुरु और पाँच उत्तरकुरु । भगवन् ! अकर्मभूमियों मे क्या उत्सर्पिणी और अवसर्पिणीरूप काल है ? (गौतम !) यह अर्थ समर्थ नहीं है । भगवन् ! भरत और ऐरवत में क्या उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी रूप काल है ? हाँ, (गौतम !) है । भगवन् ! इन पाँच महाविदेह क्षेत्रों में क्या उत्सर्पिणी अथवा अवसर्पिणी रूप काल है ? नहीं, वहाँ अवस्थित काल है ।

सूत्र - ७९४

भगवन् ! महाविदेह क्षेत्रों में अरहन्त भगवान सप्रतिक्रमण पंच-महाव्रत वाले धर्म का उपदेश करते हैं ? (गौतम !) यह अर्थ समर्थ नहीं है । भरत तथा ऐरवत क्षेत्रों में प्रथम और अन्तिम ये दो अरहन्त भगवंत सप्रतिक्रमण पाँच महाव्रतोंवाले और शेष अरहन्त भगवंत चातुर्याम धर्म का उपदेश करते हैं और पाँच महाविदेह क्षेत्रों में भी चातुर्याम-धर्म का उपदेश करते हैं ।

भगवन् ! जम्बूद्वीप के अन्तर्गत भरतक्षेत्र में इस अवसर्पिणी काल में कितने तीर्थंकर हुए हैं ? गौतम ! चौबीस यथा-ऋषभ, अजित, सम्भव, अभिनन्दन, सुमति, सुप्रभ, सुपार्श्व, शशी, पुष्प-दन्त, शीतल, श्रेयांस, वासुपूज्य, विमल, अनन्त, धर्म, शान्ति, कुन्थु, अर, मल्लि, मुनिसुव्रत, नमि, नेमि, पार्श्व और वर्द्धमान ।

सूत्र - ७९५

भगवन् ! इन चौबीस तीर्थंकरों के कितने जिनान्तर कहे हैं ? गौतम ! इनके तेईस अन्तर कहे गए हैं । भगवन् ! इन तेईस जिनान्तरों में जिनके अन्तर में कब कालिकश्रुत का विच्छेद कहा गया है ? गौतम ! पहले और पीछे के आठ-आठ जिनान्तरों में कालिकश्रुत का अव्यवच्छेद कहा गया है और मध्य के आठ जिनान्तरों में कालिकश्रुत का व्यवच्छेद कहा गया है; किन्तु दृष्टिवाद का व्यवच्छेद तो सभी जिनान्तरों में हुआ है ।

सूत्र - ७९६

भगवन् ! जम्बूद्वीप के अन्तर्गत भारतवर्ष में इस अवसर्पिणीकाल में आप देवानुप्रिय का पूर्वगतश्रुत कितने काल तक रहेगा ? गौतम ! इस जम्बूद्वीप के भारतवर्ष में इस अवसर्पिणी काल में मेरा पूर्वश्रुतगत एक हजार वर्ष तक रहेगा । भगवन् ! जम्बूद्वीप के भारतवर्ष में, इस अवसर्पिणीकाल में अवशिष्ट अन्य तीर्थंकरों का पूर्वगतश्रुत कितने काल तक रहा था ? गौतम ! कितने ही तीर्थंकरों का पूर्वगतश्रुत संख्यात काल तक रहा और कितने ही तीर्थंकरों का असंख्यात काल तक रहा ।

सूत्र - ७९७

भगवन् ! जम्बूद्वीप के अन्तर्गत भारतवर्ष में इस अवसर्पिणी काल में आप देवानुप्रिय का तीर्थ कितने काल तक रहेगा ? गौतम ! इक्कीस हजार वर्ष तक रहेगा ।

सूत्र - ७९८

हे भगवन् ! भावी तीर्थंकरोंमें से अन्तिम तीर्थंकर का तीर्थ कितने काल तक अविच्छिन्न रहेगा ? गौतम ! कौशलिक ऋषभदेव, अरहन्त का जितना जिनपर्याय है, उतने वर्ष भावी तीर्थंकरोंमें अन्तिम तीर्थंकर का तीर्थ रहेगा ।

सूत्र - ७९९

भगवन् ! तीर्थ को तीर्थ कहते हैं अथवा तीर्थंकर को तीर्थ कहते हैं ? गौतम ! अर्हन् तो अवश्य तीर्थंकर हैं, किन्तु तीर्थ चार प्रकार के वर्णों से युक्त श्रमणसंघ है । यथा-श्रमण, श्रमणियाँ, श्रावक और श्राविकाएं ।

सूत्र - ८००

भगवन् ! प्रवचन को ही प्रवचन कहते हैं, अथवा प्रवचनी को प्रवचन कहते हैं ? गौतम ! अरिहन्त तो अवश्य प्रवचनी हैं, किन्तु द्वादशांग गणिपिटक प्रवचन हैं, यथा-आचारांग यावत् दृष्टिवाद । भगवन् ! जो ये उग्रकुल, भोगकुल, राजन्यकुल, इक्ष्वाकुकुल, ज्ञातकुल और कौरव्यकुल हैं, वे यावत् सर्व दुःखों का अन्त करते हैं ? हाँ, गौतम ! करते हैं; अथवा कितने ही किन्हीं देवलोकों में देवरूप से उत्पन्न होते हैं ।

भगवन् ! देवलोक कितने प्रकार के कहे हैं ? गौतम ! चार प्रकार के हैं । भवनवासी, वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिक । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-२० – उद्देशक-९

सूत्र - ८०१

भगवन् ! चारण कितने प्रकार के कहे हैं ? गौतम ! दो प्रकार के, यथा-विद्याचारण और जंघाचारण । भगवन् विद्याचारण मुनि को 'विद्याचारण' क्यों कहते हैं ? अन्तर-रहित छट्ठ-छट्ठ के तपश्चरणपूर्वक पूर्वश्रुतरूप विद्या द्वारा तपोलब्धि को प्राप्त मुनि को विद्याचारणलब्धि नामकी लब्धि उत्पन्न होती है । इस कारण से यावत् वे विद्याचारण कहलाते हैं । भगवन् ! विद्याचारण की शीघ्र गति कैसी होती है ? और उसका गति-विषय कितना शीघ्र होता है ? गौतम ! यह जम्बूद्वीप नामक द्वीप, जो सर्वद्वीपों में (आभ्यन्तर है,) यावत् जिसकी परिधि (तीन लाख सोलह हजार दो सौ सत्ताईस योजन से) कुछ विशेषाधिक है, उस सम्पूर्ण जम्बूद्वीप के चारों ओर कोई महर्द्धिक यावत् महासौख्य-सम्पन्न देव यावत्-'यह चक्कर लगाकर आता हूँ' यों कहकर तीन चुटकी बजाए उतने समय में, तीन बार चक्कर लगाकर आ जाए, ऐसी शीघ्र गति विद्याचारण की है । उसका इस प्रकार का शीघ्रगति का विषय कहा है । भगवन् ! विद्याचारण की तीरछी गति का विषय कितना कहा है ? गौतम ! वह यहाँ से एक उड़ान से मानुषोत्तरपर्वत पर समवसरण करता है । फिर वहाँ चैत्यों (जिनालयों) की स्तुति करता है । तत्पश्चात् वहाँ से दूसरे उत्पात में नन्दीश्वरद्वीप में स्थिति करता है, फिर वहाँ चैत्यों (जिनालयों) की वन्दना (स्तुति) करता है, तत्पश्चत् वहाँ से (एक ही उत्पात में) वापस लौटता है और यहाँ आ जाता है । यहाँ आकर चैत्यवन्दन करता है ।

भगवन् ! विद्याचारण की ऊर्ध्वगति का विषय कितना कहा गया है ? गौतम ! वह यहाँ से एक उत्पात से नन्दनवन में समवसरण (स्थिति) करता है । वहाँ ठहरकर वह चैत्यों की वन्दना करता है । फिर वहाँ से दूसरे उत्पात में

पण्डकवन में समवसरण करता है, वहाँ भी वह चैत्यों की वन्दना करता है । फिर वहाँ से वह लौटता है, वापस यहाँ आ जाता है । यहाँ आकर वह चैत्यों की वन्दना करता है । हे गौतम ! विद्याचारण मुनि की ऊर्ध्व गति का विषय ऐसा कहा गया है । यदि वह विद्याचारण मुनि उस स्थान की आलोचना और प्रतिक्रमण किए बिना ही काल कर जाए तो उसको आराधना नहीं होती और यदि वह आलोचना और प्रतिक्रमण करके काल करता है तो उसको आराधना होती है ।

सूत्र - ८०२

भगवन् ! जंघाचारण को जंघाचारण क्यों कहते हैं ? गौतम ! अन्तररहित अट्ठम-अट्ठम के तपश्चरण-पूर्वक आत्मा को भावित करते हुए मुनि को 'जंघाचारण' नामक लब्धि उत्पन्न होती है, इस कारण उसे 'जंघाचारण' कहते हैं भगवन् ! जंघाचारण की शीघ्र गति कैसी होती है और उसकी शीघ्रगति का विषय कितना होता है ? गौतम ! समग्र वर्णन विद्याचारणवत् । विशेष यह है कि इक्कीस बार परिक्रमा करके शीघ्र वापस लौटकर आ जाता है । भगवन् ! जंघाचारण की तीरछी गति का विषय कितना है ? गौतम ! वह यहाँ से एक उत्पात से रुचकवरद्वीप में समवसरण करता है, वहाँ चैत्य-वन्दना करता है । चैत्यों की स्तुति करके लौटते समय दूसरे उत्पात से नन्दीश्वर-द्वीप में समवसरण करता है तथा वहाँ चैत्यवन्दन करता है । वहाँ से लौटकर यहाँ आकर वह चैत्य-स्तुति करता है।

भगवन् ! जंघाचारण की ऊर्ध्व-गति का विषय कितना कहा गया है ? गौतम ! वह यहाँ से एक उत्पात में पण्डकवनमें समवसरण करता है । फिर वहाँ ठहरकर चैत्यवन्दन करता है । फिर वहाँ से लौटते हुए दूसरे उत्पात से नन्दनवनमें समवसरण करता है । फिर वहाँ चैत्यवन्दन करता है । वहाँ से वापस यहाँ आकर चैत्यवन्दन करता है । यह जंघाचारण उस स्थान की आलोचना तथा प्रतिक्रमण किए बिना यदि काल कर जाए तो उसको आराधना नहीं होती । यदि वह उस प्रमादस्थान की आलोचना और प्रतिक्रमण करके काल करता है तो उसको आराधना होती है । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-२० – उद्देशक-१०

सूत्र - ८०३

भगवन् ! जीव सोपक्रम-आयुष्य वाले होते हैं या निरुपक्रम-आयुष्य वाले होते हैं ? गौतम ! दोनों । भगवन् नैरयिक सोपक्रम-आयुष्य वाले होते हैं, अथवा निरुपक्रम-आयुष्य वाले ? गौतम ! वे निरुपक्रम-आयुष्य वाले होते हैं । इसी प्रकार स्तनितकुमारों-पर्यन्त (जानना) । पृथ्वीकायिकों का आयुष्य जीवों के समान जानना । इसी प्रकार मनुष्यों-पर्यन्त कहना चाहिए । वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिक नैरयिकों के समान हैं ।

सूत्र - ८०४

भगवन् ! नैरयिक जीव, आत्मोपक्रम से, परोक्रम से या निरुपक्रम से उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! तीनों से । इसी प्रकार यावत् वैमानिक तक कहना । भगवन् ! नैरयिक आत्मोपक्रम से उद्वर्त्तते हैं अथवा परोपक्रम से या निरुपक्रम से उद्वर्त्तते हैं ? गौतम ! वे निरुपक्रम से उद्वर्त्तित होते हैं । इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमारों पर्यन्त कहना चाहिए । पृथ्वीकायिकों से लेकर मनुष्यों तक का उद्वर्त्तन तीनों ही उपक्रमों से होता है । शेष सब जीवों का उद्वर्त्तन नैरयिकों के समान कहना चाहिए । विशेष यह है कि ज्योतिष्क एवं वैमानिक के लिए च्यवन करते हैं, (कहना चाहिए) ।

भगवन् ! नैरयिक जीव आत्मऋद्धि से उत्पन्न होते हैं या परऋद्धि से उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! वे आत्म-ऋद्धि से उत्पन्न होते हैं, परऋद्धि से उत्पन्न नहीं होते । इसी प्रकार वैमानिकों तक कहना चाहिए । भगवन् ! नैरयिक जीव आत्मऋद्धि से उद्वर्तित होते हैं या परऋद्धि से ? गौतम ! वे आत्मऋद्धि से उद्वर्तित होते हैं । इसी प्रकार वैमानिकों तक कहना । विशेष यह है कि ज्योतिष्क और वैमानिक के लिए 'च्यवन' कहना चाहिए ।

भगवन् ! नैरयिक जीव अपने कर्म से उत्पन्न होते हैं या परकर्म से उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! वे आत्मकर्म से उत्पन्न होते हैं, परकर्म से नहीं । इसी प्रकार वैमानिकों (तक कहना) । इसी प्रकार उद्वर्त्तना-दण्डक भी कहना । भगवन्! नैरयिक जीव आत्मप्रयोग से उत्पन्न होते हैं, अथवा परप्रयोग से उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! वे आत्मप्रयोग से उत्पन्न होते हैं । इसी प्रकार वैमानिकों पर्यन्त कहना । इसी प्रकार उद्वर्त्तना-दण्डक भी कहना ।

सूत्र - ८०५

भगवन् ! नैरयिक कतिसंचित हैं, अकतिसंचित हैं अथवा अवक्तव्यसंचित ? गौतम ! तीनों हैं । भगवन् ! ऐसा किस कारण से कहा गया है ? गौतम ! जो नैरयिक संख्यात प्रवेश करते हैं, वे कतिसंचित हैं, जो नैरयिक असंख्यात प्रवेश करते हैं, वे अकतिसंचित हैं और जो नैरयिक एक-एक (करके) प्रवेश करते हैं, वे अवक्तव्यसंचित हैं । इसी प्रकार स्तनितकुमारों तक कहना चाहिए ।

भगवन् ! पृथ्वीकायिक कतिसंचित हैं, इत्यादि प्रश्न । गौतम ! पृथ्वीकायिक जीव कतिसंचित भी नहीं और अवक्तव्यसंचित भी नहीं किन्तु अकतिसंचित हैं । भगवन् ! ऐसा क्यों कहा जाता है ? गौतम ! पृथ्वीकायिक जीव एक साथ असंख्य प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं, इसलिए कहा जाता है कि वे अकतिसंचित हैं । इसी प्रकार वनस्पति कायिक तक (जानना) द्वीन्द्रियों से लेकर वैमानिको पर्यन्त नैरयिकों के समान (कहना) ।

भगवन् ! सिद्ध कतिसंचित हैं ? इत्यादि पूर्ववत् प्रश्न । गौतम ! सिद्ध कतिसंचित और अवक्तव्यसंचित हैं, किन्तु अकतिसंचित नहीं हैं । भगवन् ! यह किस कारण से कहा जाता है ? गौतम ! जो सिद्ध संख्यातप्रदेशक से प्रवेश करते हैं, वे कतिसंचित हैं और जो सिद्ध एक-एक करके प्रवेश करते हैं, वे अवक्तव्यसंचित हैं ।

भगवन् ! इन कतिसंचित, अकतिसंचित और अवक्तव्यसंचित नैरयिकों में से कौन किससे यावत् विशेषा-धिक हैं ? गौतम ! सबसे थोड़े अवक्तव्यसंचित नैरयिक हैं, उनसे कतिसंचित नैरयिक संख्यातगुणे हैं और अकति-संचित उनसे असंख्यातगुणे हैं । एकेन्द्रिय जीवों के सिवाय वैमानिकों तक का इसी प्रकार अल्पबहुत्व कहना । भगवन् ! कतिसंचित और अवक्तव्यसंचित सिद्धों में कौन किससे यावत् विशेषाधिक हैं ? गौतम ! सबसे थोड़े कतिसंचित सिद्ध होते हैं, उनसे अवक्तव्यसंचित सिद्ध संख्यातगुणे हैं ।

भगवन् ! नैरयिक षट्कसमर्जित हैं, नो-षट्कसमर्जित हैं, (एक) षट्क और नोषट्क-समर्जित हैं, अथवा अनेक षट्कसमर्जित हैं या अनेक षट्कसमर्जित-एक नो-षट्कसमर्जित हैं ? गौतम ! नैरयिक षट्कसमर्जित भी हैं, यावत् एक नोषट्कसमर्जित भी हैं । भगवन् ! ऐसा क्यों कहा जाता है ? गौतम ! जो नैरयिक छह की संख्या में प्रवेश करते हैं, वे नैरयिक 'षट्कसमर्जित' हैं । जो नैरयिक जघन्य एक, दो अथवा तीन और उत्कृष्ट पाँच संख्या में प्रवेश करते हैं, वे नो-षट्कसमर्जित हैं । जो नैरयिक एक षट्क संख्या से और अन्य जघन्य एक, दो या तीन और उत्कृष्ट पाँच की संख्या में प्रवेश करते हैं, वे 'षट्क और नो-षट्कसमर्जित' हैं । जो नैरयिक अनेक षट्क संख्या में प्रवेश करते हैं, वे नैरयिक अनेक षट्कसमर्जित हैं । जो नैरयिक अनेक षट्क तथा जघन्य एक, दो या तीन और उत्कृष्ट पाँच संख्या में प्रवेश करते हैं, वे नैरयिक 'अनेक षट्क और एक नो-षट्कसमर्जित' हैं । इसलिए कहा गया है कि यावत् अनेक षट्क और एक नो-षट्कसमर्जित भी होते हैं ।

भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीव षट्कसमर्जित हैं ? इत्यादि प्रश्न पूर्ववत् । गौतम ! पृथ्वीकायिक जीव न तो षट् कसमर्जित हैं, न नो-षट्कसमर्जित हैं और न एक षट्क और एक नो-षट्क से समर्जित हैं; किन्तु अनेक षट्क-समर्जित हैं तथा अनेक षट्क और एक नो-षट्क से समर्जित भी हैं । भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहा जाता है? गौतम ! जो पृथ्वीकायिक जीव अनेक षट्क से प्रवेश करते हैं, वे अनेक षट्कसमर्जित हैं तथा जो पृथ्वी-कायिक अनेक षट्क से तथा जघन्य एक, दो, तीन और उत्कृष्ट पाँच संख्यात में प्रवेश करते हैं, वे अनेक षट्क और एक नो-षट्कसमर्जित कहलाते हैं । इसी प्रकार वनस्पतिकायिक तक समझना और द्वीन्द्रिय से लेकर वैमानिकों तक पूर्ववत् जानना । सिद्धों का कथन नैरयिकों के समान है । भगवन् ! षट्कसमर्जित, नो-षट्क-समर्जित, एक षट्क एक नो-षट् कसमर्जित अनेक षट्कसमर्जित तथा अनेक षट्क एक नो-षट्कसमर्जित नैरयिकों में कौन किनसे यावत् विशेषाधिक हैं ? गौतम ! सबसे कम एक षट्कसमर्जित नैरयिक हैं, नो-षट्कसम-र्जित नैरयिक उनसे संख्यातगुणे हैं, एक षट्क और नो-षट्कसमर्जित नैरयिक उनसे संख्यातगुणे हैं, अनेक षट्क-समर्जित नैरयिक उनसे असंख्यातगुणे हैं, और अनेक षट्क और एक नो-षट्कसमर्जित नैरयिक उनसे संख्यातगुणे हैं । इसी प्रकार स्तनितकुमारों तक समझना । भगवन् ! अनेक षट्कसमर्जित और अनेक षट्क तथा नो-षट्क-समर्जित पृथ्वीकायिकों में कौन किससे

यावत् विशेषाधिक हैं ? गौतम ! सबसे अल्प अनेक षट्कसमर्जित पृथ्वी-कायिक हैं । अनेक षट्क और नो-षट्क-समर्जित पृथ्वीकायिक उनसे संख्यातगुणे हैं । इस प्रकार वनस्पति-कायिकों तक (जानना) । वैमानिकों तक नैरयिकों के समान जानना ।

भगवन् ! इन षट्कसमर्जित, नो-षट्कसमर्जित, यावत् अनेक षट्क और एक नो-षट्कसमर्जित सिद्धों में कौन किनसे अल्प यावत् विशेषाधिक हैं ? गौतम ! अनेक षट्क और नोषट्क से समर्जित सिद्ध सबसे थोड़े हैं । उनसे अनेक षट्कसमर्जित सिद्ध संख्यातगुणे हैं । उनसे एक षट्क और नो-षट्कसमर्जित सिद्ध संख्यातगुणे हैं । उनसे षट् कसमर्जित सिद्ध संख्यातगुणे हैं और उनसे भी नो-षट्कसमर्जित सिद्ध संख्यातगुणे हैं ।

भगवन् ! नैरयिक जीव क्या द्वादशसमर्जित हैं, या नो-द्वादशसमर्जित हैं, अथवा द्वादश-नो-द्वादशसमर्जित हैं, या अनेक द्वादश और नो-द्वादशसमर्जित हैं ? गौतम ! नैरयिक द्वादश-समिर्जत भी हैं और यावत् अनेक द्वादश और नो-द्वादश-समर्जित भी हैं । भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहा जाता है ? गौतम ! जो नैरयिक बारह की संख्या में प्रवेश करते हैं, वे द्वादशसमर्जित हैं । जो नैरयिक जघन्य एक, दो, तीन और उत्कृष्ट ग्यारह तक प्रवेश करते हैं, वे नो-द्वादशसमर्जित हैं । एक समय में बारह तथा जघन्य एक, दो, तीन तथा उत्कृष्ट ग्यारह तक प्रवेश करते हैं, वे द्वादश-नोद्वादशसमर्जित हैं । एक समय में अनेक बारह-बारह की संख्या में प्रवेश करते हैं, वे अनेक-द्वादशसमर्जित हैं । एक समय में अनेक बारह-बारह की संख्या में तथा जघन्य एक-दो-तीन और उत्कृष्ट ग्यारह तक प्रवेश करते हैं, वे अनेक द्वादश-नो-द्वादशसमर्जित हैं । इसी प्रकार स्तनितकुमार तक कहना ।

भगवन् ! पृथ्वीकायिक द्वादश-समर्जित हैं, इत्यादि प्रश्न । गौतम ! पृथ्वीकायिक न तो द्वादशसमर्जित हैं, न नो-द्वादशसमर्जित हैं, न ही द्वादशसमर्जित-नो-द्वादशसमर्जित हैं, किन्तु वे अनेक-द्वादशसमर्जित भी हैं और अनेक द्वादश-नो-द्वादशसमर्जित भी हैं ।

भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहा जाता है कि पृथ्वीकायिक...यावत् समर्जित भी हैं ? जो पृथ्वीकायिक जीव अनेक द्वादश-द्वादश की संख्या में प्रवेश करते हैं, वे अनेक द्वादशसमार्जित हैं और जो पृथ्वीकायिक जीव अनेक द्वादश तथा जघन्य एक, एवं उत्कृष्ट ग्यारह प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं, वे अनेक द्वादश और एक नो-द्वादश -समर्जित हैं । इसी प्रकार वनस्पतिकायिक तक कहना । सिद्धों तक नैरयिकों के समान समझना ।

भगवन् ! इन द्वादशसमर्जित यावत् अनेक द्वादश-नो-द्वादशसमर्जित नैरयिकों में कौन कनसे अल्प यावत् विशेषाधिक हैं ? गौतम ! षट्कसमर्जित आदि जीवों के समान द्वादशसमर्जित आदि सभी जीवों का अल्पबहुत्व कहना चाहिए । विशेष इतना है कि 'षट्क' के स्थान में 'द्वादश', ऐसा अभिलाप करना चाहिए । शेष पूर्ववत् ।

भगवन् ! नैरयिक जीव चतुरशीति-समर्जित हैं या नो-चतुरशीतिसमर्जित हैं, अथवा चतुरशीति-नो-चतुर शीतिसमर्जित हैं, या वे अनेक चतुरशीतिसमर्जित हैं, अथवा अनेक-चतुरशीति-नो-चतुरशीतिसमर्जित हैं ? गौतम ! नैरयिक चतुरशीतिसमर्जित भी हैं, यावत् अनेक-चतुरशीति-नो-चतुरशीतिसमर्जित भी हैं । भगवन् ! ऐसा क्यों कहा जाता है कि यावत् समर्जित भी हैं ? गौतम ! जो नैरयिक चौरासी प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं, वे चतुरशीति-समर्जित हैं। जघन्य एक, दो, तीन और उत्कृष्ट तेयासी प्रवेश करते हैं, वे नो-चतुरशीतिसमर्जित हैं । एक साथ, एक समय में चौरासी तथा जघन्य एक, दो, तीन, यावत् उत्कृष्ट तेयासी प्रवेश करते हैं, वे चतुरशीतिचतुरशीति-समर्जित हैं । जो नैरयिक एक साथ एक समय में अनेक चौरासी प्रवेश करते हैं, वे अनेक चतुरशीति-समर्जित हैं और एक-एक समय में अनेक चौरासी तथा जघन्य एक-दो-तीन उत्कृष्ट तेयासी प्रवेश करते हैं, वे अनेक चतुरशीति-नो-चतुरशीतिसमर्जित हैं। इसी प्रकार स्तनितकुमारों पर्यन्त कहना ।

पृथ्वीकायिक जीवों के विषय में दो पीछले भंग समझने चाहिए । विशेष यह कि यहाँ 'चौरासी' ऐसा कहना । इसी प्रकार वनस्पतिकायिकों तक जानना । द्वीन्द्रिय जीवों से लेकर वैमानिकों तक नैरयिकों के समान । भगवन् ! सिद्ध चतुरशीतिसमर्जित हैं, इत्यादि प्रश्न । गौतम ! सिद्ध भगवान चतुरशीतिसमर्जित भी हैं तथा नो-चतुरशीतिसमर्जित भी हैं तथा चतुरशीति-नो-चतुरशीतिसमर्जित भी हैं, किन्तु वे अनेक चतुरशीतिसमर्जित नहीं हैं,

और न ही वे अनेक चतुरशीति-नो-चतुरशीतिसमर्जित हैं । भगवन् ! उपर्युक्त कथन का कारण क्या है ? गौतम ! जो सिद्ध एक साथ, एक समय में चौरासी संख्या में प्रवेश करते हैं वे चतुरशीतिसमर्जित हैं । जो सिद्ध एक समय में, जघन्य एक-दो-तीन और उत्कृष्ट तेयासी तक प्रवेश करते हैं, वे नो-चतुरशीतिसमर्जित हैं । जो सिद्ध एक समय में एक साथ चौरासी और साथ ही जघन्य एक, दो, तीन और उत्कृष्ट तेयासी तक प्रवेश करते हैं, वे चतुरशीति-समर्जित और नो-चतुरशीतिसमर्जित हैं । भगवन् ! चतुरशीतिसमर्जित आदि नैरयिकों में कौन किनसे यावत् विशेषाधिक हैं ? गौतम! चतुरशीतिसमर्जित नो-चतुरशीतिसमर्जित इत्यादि विशिष्ट नैरयिकों का अल्पबहुत्व षट्क समर्जित आदि के समान समझना और वैमानिक पर्यन्त इसी प्रकार कहना । विशेष यह है कि यहाँ 'षट्क' के स्थान में 'चतुरशीति' शब्द कहना । भगवन् ! चतुरशीतिसमर्जित यावत् सिद्धों में कौन किनसे यावत् विशेषाधिक हैं? गौतम ! सबसे थोड़े चतुरशीति-नो-चतुरशीतिसमर्जित सिद्ध हैं, उनसे चतुरशीतिसमर्जित सिद्ध अनन्तगुणे हैं, उनसे नो-चतुरशीति-समर्जित सिद्ध अनन्तगुणे हैं । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-२० का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

शतक–२१

सूत्र - ८०६

शालि, कलाय, अलसी, बाँस, इक्षु, दर्भ, अभ्र, तुलसी इस प्रकार ये आठ वर्ग हैं । प्रत्येक वर्ग में दस-दस उद्देशक हैं । इस प्रकार कुल ८० उद्देशक हैं ।

शतक-२१ – वर्ग-१ – उद्देशक-१

सूत्र - ८०७

राजगृह नगर में यावत् पूछा–भगवन् ! अब शालि, व्रीहि, गोधूम–(यावत्) जौ, जवजव, इन सब धान्यों के मूल के रूप में जो जीव उत्पन्न होते हैं, वे जीव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? नैरयिकों से आकर अथवा तिर्यंचों, मनुष्यों या देवों से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! व्युत्क्रान्ति-पद के अनुसार उपपात समझना चाहिए । विशेष यह है कि देवगति से आकर ये मूलरूप में उत्पन्न नहीं होते हैं । भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं? गौतम ! वे जघन्य एक, दो या तीन, उत्कृष्ट संख्यात अथवा असंख्यात उत्पन्न होते हैं । इनका अपहार उत्पल-उद्देशक अनुसार है

भगवन् ! इन जीवों के शरीर की अवगाहना कितनी बड़ी कही गई है ? गौतम ! जघन्य अंगुल के असंख्यातवे भाग की और उत्कृष्ट धनुष-पृथक्त्व की । भगवन् ! वे जीव ज्ञानावरणीयकर्म के बन्धक हैं या अबन्धक ? गौतम ! उत्पल-उद्देशक समान जानना चाहिए । इसी प्रकार (कर्मों के) वेदन, उदय और उदीरणा के विषय में भी (जानना) । भगवन् ! वे जीव कृष्णलेश्यी, नीललेश्यी या कापोतलेश्यी होते हैं ? गौतम ! छब्बीस भंग कहना । दृष्टि से लेकर यावत् इन्द्रियों के विषय में उत्पलोद्देशक के अनुसार है ।

भगवन् ! शालि, व्रीहि, गेहूँ, यावत् जौ, जवजव आदि के मूल का जीव कितने काल तक रहता है ? गौतम! जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट असंख्यात काल रहता है । भगवन् ! शालि, व्रीहि, गोधूम, जौ, (यावत्) जवजव के मूल का जीव, यदि पृथ्वीकायिक जीवों में उत्पन्न हो और फिर पुनः शालि, व्रीहि यावत् जौ, जवजव आदि धान्यों के मूल रूप में उत्पन्न हो, तो इस रूप में वह कितने काल तक रहता है ? तथा कितने काल तक गति-आगति करता रहता है ? हे गौतम ! उत्पल-उद्देशक के अनुसार है । इस अभिलाप से मनुष्य एवं सामान्य जीव तक कहना चाहिए। आहार (सम्बन्धी निरूपण) भी उत्पलोद्देशक के समान हैं । (इन जीवों की) स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट वर्ष-पृथक्त्व की है । समुद्घात-समवहत और उद्वर्त्तना उत्पलोद्देशक के अनुसार है ।

भगवन् ! क्या सर्व प्राण, सर्व भूत, सर्व जीव और सर्व सत्त्व शालि, व्रीहि, यावत् जवजव के मूल जीव रूप में इससे पूर्व उत्पन्न हो चूके हैं? हाँ, गौतम! अनेक बार या अनन्त बार (उत्पन्न हो चूके हैं) । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है

शतक-२१ – वर्ग-१ – उद्देशक-२ से १०

सूत्र – ८०८-८१४

भगवन् ! शालि, व्रीहि, यावत् जवजव, इन सबके 'कन्द' रूप में जो जीव उत्पन्न होते हैं, वे जीव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? (गौतम !) 'कन्द' के विषयमें, वही मूल का समग्र उद्देशक, कहना । भगवन् ! यह इसी प्रकार है

इसी प्रकार स्कन्ध का उद्देशक भी कहना चाहिए ।

इसी प्रकार 'त्वचा' का उद्देशक भी कहना चाहिए ।

शाखा के विषय में भी (पूर्ववत्) कहना चाहिए ।

प्रवाल के विषय में भी (पूर्ववत्) कहना चाहिए ।

पत्र के विषयमें भी (पूर्ववत्) कहना चाहिए । ये सातों ही उद्देशक समग्ररूप से 'मूल' उद्देशक समान जानना ।

'पुष्प' के विषय में भी (पूर्ववत्) उद्देशक कहना । विशेष यह है कि 'पुष्प' के रूप में देव उत्पन्न होता है । उत्पलोद्देशकमें जैसे चार लेश्याएं और उनके अस्सी भंग कहे हैं, वैसे यहाँ भी कहना। इसकी अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट अंगुल-पृथक्त्व होती है । 'पुष्प' अनुसार 'फल' के विषयमें भी समग्र उद्देशक कहना । 'बीज' के विषय में भी इसी प्रकार कहना । इस प्रकार दस उद्देशक पूर्ण हुए । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-२१ – वर्ग-२

सूत्र - ८१५

भगवन् ! कलाय, मसूर, तिल, मूँग, उड़द, निष्पाव, कुलथ, आलिसंदक, सटिन और पलिमंथक; इन सबके मूल के रूप में जो जीव उत्पन्न होते हैं, वे कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! शालि आदि के अनुसार यहाँ भी मूल आदि दस उद्देशक कहना ।

शतक-२१ – वर्ग-३

सूत्र - ८१६

भगवन् ! अलसी, कुसुम्ब, कोद्रव, कांग, राल, तूअर, कोदूसा, सण, सर्षप तथा मूलक बीज, इन वनस्पतियों के मूल के रूप में जो जीव उत्पन्न होते हैं, वे कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? (गौतम !) 'शालि' वर्ग के समान कहना ।

शतक-२१ – वर्ग-४

सूत्र - ८१७

भगवन् ! बाँस, वेणु, कनक, कर्कावंश, चारुवंश, उड़ा, कुड़ा, विमा, कण्डा, वेणुका और कल्याणी, इन सब वनस्पतियों के मूल के रूप में जो जीव उत्पन्न होते हैं, वे कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? (गौतम !) शालि-वर्ग के समान मूल आदि दश उद्देशक कहना चाहिए । विशेष यह है कि देव यहाँ किसी स्थान में उत्पन्न नहीं होते । सर्वत्र तीन लेश्याएं और उनके छब्बीस भंग जानने चाहिए । शेष पूर्ववत् ।

शतक-२१ – वर्ग-५

सूत्र - ८१८

भगवन् ! इक्षु, इक्षुवाटिका, वीरण, इक्कड़, भमास, सुंठी, शर, वेत्र, तिमिर, सतबोरग और नल, इन सब वनस्पतियों के मूल रूप में जो जीव उत्पन्न होते हैं, वे कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? वंशवर्ग के मूलादि के समान यहाँ भी कहना । विशेष यह है कि स्कन्धोद्देशक में देव भी उत्पन्न होते हैं, अतः उनके चार लेश्याएं होती हैं (इत्यादि) ।

शतक-२१ – वर्ग-६

सूत्र - ८१९

भगवन् ! सेडिय, भंतिय, कौन्तिय, दर्भ-कुश, पर्वक, पोदेइल, अर्जुन, आषाढ़क, रोहितक, मुतअ, खीर, भुस, एरण्ड, कुरुकुन्द, करकर, सूँठ, विभंगु, मधुरयण, थुरग, शिल्पिक और सुंकलितृण, इन सब वनस्पतियों के मूलरूप में जो जीव उत्पन्न होते हैं, वे कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! चतुर्थ वंशवर्ग के समान कहना चाहिए ।

शतक-२१ – वर्ग-७

सूत्र - ८२०

भगवन् ! अभ्ररुह, वायाण, हरीतक, तंदुलेय्यक, तृण, वत्थुल, बोरक, मार्जाणक, पाई, बिल्ली, पालक, दगपिप्पली, दर्वी, स्वस्तिक, शाकमण्डुकी, मूलक, सर्षप, अम्बिलशाक, जीयन्तक, इन सब वनस्पतियों के मूल रूप में जो जीव उत्पन्न होते हैं, वे कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! चतुर्थ वंशवर्ग के समान मूलादि दश उद्देशक कहना

शतक-२१ – वर्ग-८

सूत्र - ८२१

भगवन् ! तुलसी, कृष्णदराल, फणेज्जा, अज्जा, भूयणा, चोरा, जीरा, दमणा, मरुया, इन्दीवर और शतपुष्प इन सबके मूल के रूप में जो जीव उत्पन्न होते हैं, वे कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? (गौतम !) चौथे वंशवर्ग के समान यहाँ भी मूलादि दश उद्देशक कहने चाहिए । इस प्रकार आठ वर्गों में अस्सी उद्देशक होते हैं ।

शतक-२१ का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

शतक–२२

सूत्र - ८२२

इस शतक में छह वर्ग हैं–ताल, एकास्थिक, बहुबीजक, गुच्छ, गुल्म और वल्लि । प्रत्येक वर्ग के १०-१० उद्देशक होने से, सब मिलाकर साठ उद्देशक हैं ।

शतक-२२ – वर्ग-१

सूत्र - ८२३

राजगृह नगर में यावत् पूछा–भगवन् ! ताल, तमाल, तक्कली, तेतली, शाल, सरल, सारगल्ल, यावत्–केतकी, कदली, चर्मवृक्ष, गुन्दवृक्ष, हिंगवृक्ष, लवंगवृक्ष, पूगफल, खजूर और नारियल, इन सबके मूल के रूप में जो जीव उत्पन्न होते हैं, वे जीव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? (गौतम !) शालिवर्ग के दश उद्देशक के समान यहाँ भी समझना। विशेष यह है कि इन वृक्षों के मूल, कन्द, स्कन्ध, त्वचा और शाखा, इन पाँचों अवयवों में देव आकर उत्पन्न नहीं होते, इसलिए इन पाँचों में तीन लेश्याएं होती हैं, शेष पाँच में देव उत्पन्न होते हैं, इसलिए उनमें चार लेश्याएं होती हैं । पूर्वोक्त पाँच की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट दस हजार वर्ष की होती है, अन्तिम पाँच की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट वर्ष-पृथक्त्व की होती है । मूल और कन्द की अवगाहना धनुष-पृथक्त्व की और स्कन्ध, त्वचा एवं शाखा की गव्यूति पृथक्त्व की होती है । प्रवाल और पत्र की अवगाहना धनुष-पृथक्त्व की होती है । पुष्प की हस्तपृथक्त्व की और फल तथा बीज की अंगुल-पृथक्त्व की होती है । इन सबकी जघन्य अवगाहना अंगुल की असंख्यातवें भाग की होती है । शेष शालिवर्ग के समान ।

शतक-२२ – वर्ग-२

सूत्र - ८२४

भगवन् ! नीम, आम्र, जम्बू, कोशम्ब, ताल, अंकोल्ल, पीलु, सेलु, सल्लकी, मोचकी, मालुक, बकुल, पलाश, करंज, पुत्रंजीवक, अरिष्ट, बहेड़ा, हरितक, भिल्लामा, उम्बरिय, क्षीरणी, धातकी, प्रियाल, पूतिक, निवाग, सेण्हक, पासिय, शीशम, अतसी, पुन्नाग, नागवृक्ष, श्रीपर्णी और अशोक, इन सब वृक्षों के मूल के रूप में जो जीव उत्पन्न होते हैं, वे कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! यहाँ तालवर्ग के समान मूल आदि दश उद्देशक कहना ।

शतक-२२ – वर्ग-३

सूत्र - ८२५

भगवन् ! अगस्तिक, तिन्दुक, बोर, कवीठ, अम्बाडक, बिजौरा, बिल्व, आमलक, फणस, दाड़िम, अश्वत्थ, उंबर, बड़, न्यग्रोध, नन्दिवृक्ष, पिप्पली, सतर, प्लक्षवृक्ष, काकोदुम्बरी, कुस्तुम्भरी, देवदालि, तिलक, लकुच, छत्रोघ, शिरीष, सप्तपर्ण, दधिपर्ण, लोध्रक, धव, चन्दन, अर्जुन, नीप, कुटज और कदम्ब, इन सब वृक्षों के मूलरूप से जो जीव उत्पन्न होते हैं, वे कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! यहाँ प्रथम तालवर्ग के सदृश कहना ।

शतक-२२ – वर्ग-४

सूत्र - ८२६

भगवन् ! बैंगन, अल्लइ, बोंडइ इत्यादि वृक्षों के नाम प्रज्ञापनासूत्र के प्रथम पद की गाथा के अनुसार जानना चाहिए, यावत् गंजपाटला, दासि अंकोल्ल तक, इन सभी वृक्षों के मूल के रूप में जो जीव उत्पन्न होते हैं, वे कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! यहाँ मूलादि दस उद्देशक वंशवर्ग के समान जानने चाहिए ।

शतक-२२ – वर्ग-५

सूत्र - ८२७

भगवन् ! सिरियक, नवमालिक, कोरंटक, बन्धुजीवक, मणोज्ज, इत्यादि सब नाम प्रज्ञापनासूत्र के प्रथम पद की गाथा के अनुसार नलिनी, कुन्द और महाजाति (तक) इन सब पौधों के मूलरूप में जो जीव उत्पन्न होते हैं, वे कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! यहाँ भी मूलादि समग्र दश उद्देशक शालिवर्ग के समान (जानने चाहिए)।

शतक-२२ - वर्ग-६

सूत्र - ८२८

भगवन् ! पूसफलिका, कालिंगी, तुम्बी, त्रपुषी, ऐला, वालुंकी, इत्यादि वल्लीवाचक नाम प्रज्ञापनासूत्र के प्रथम पद की गाथा के अनुसार अलग कर लेने चाहिए, फिर तालवर्ग के समान, यावत् दधिफोल्लइ, काकली, सोक्कली और अर्कबोन्दी, इन सब वल्लियों के मूल के रूप में जो जीव उत्पन्न होते हैं, वे कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! यहाँ भी तालवर्ग के समान मूल आदि दस उद्देशक कहने चाहिए । विशेष यह है कि फल की जघन्य अवगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग की और उत्कृष्ट धनुष-पृथक्त्व की होती है । सब जगह स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट वर्ष-पृथक्त्व की है ।

शतक-२२ का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

शतक–२३

सूत्र - ८२९

भगवद्वाणीरूप श्रुतदेवता भगवती को नमस्कार हो । तेईसवे शतक में पाँच वर्ग हैं–आलुक, लोही, अवक, पाठा और माषपर्णी वल्ली । इस प्रकार पाँच वर्गों के पचास उद्देशक होते हैं ।

शतक-२३ - वर्ग-१

सूत्र - ८३०

राजगृह नगर में गौतम स्वामी ने यावत् इस प्रकार पूछा–भगवन् ! आलू, मूला, अदरक, हल्दी, रुरु, कंडरिक, जीरु, क्षीरविराली, किट्ठि, कुन्दु, कृष्णकडसु, मधु, पयलइ, मधुशृंगी, निरुहा, सर्पसुगन्धा, छिन्नरुहा और बीजरुहा, इन सब वनस्पतियों के मूल के रूप में जो जीव उत्पन्न होते हैं, वे कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! यहाँ वंशवर्ग के समान मूलादि दस उद्देशक कहने चाहिए । विशेष यह है कि इनके मूल के रूप में जघन्य एक, दो या तीन, और उत्कृष्ट संख्यात, असंख्यात और अनन्त जीव आकर उत्पन्न होते हैं । हे गौतम ! यदि एक-एक समय में, एक-एक जीव का अपहार किया जाए तो अनन्त उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी काल तक किए जाने पर भी उनका अपहार नहीं हो सकता; क्योंकि उनकी स्थिति जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त्त की होती है । शेष पूर्ववत् ।

शतक-२३ - वर्ग-२

सूत्र - ८३१

भगवन् ! लोही, नीहू, थीहू, थीभगा, अश्वकर्णी, सिंहकर्णी, सींउंढी और मुसुंढी इन सब वनस्पतियों के मूल के रूप में जो जीव उत्पन्न होते हैं, वे कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! आलुकवर्ग के समान मूलादि दस उद्देशक (कहने चाहिए) । विशेष यह है कि इनकी अवगाहना तालवर्ग के समान है । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है।'

शतक-२३ - वर्ग-३

सूत्र - ८३२

भगवन् ! आय, काय, कुहणा, कुन्दुक्क, उव्वेहलिय, सफा, सज्झा, छत्ता, वंशानिका और कुरा; इन वनस्पतियों के मूलरूप में जो जीव उत्पन्न होते हैं, वे कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! आलूवर्ग के मूलादि समग्र दस उद्देशक कहने चाहिए । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-२३ - वर्ग-४

सूत्र - ८३३

भगवन् ! पाठा, मृगवालुंकी, मधुररसा, राजवल्ली, पद्मा, मोढरी, दन्ती और चण्डी, इन वनस्पतियों के मूल के रूप में जो जीव उत्पन्न होते हैं, वे कहाँ से आते हैं ? गौतम ! आलूवर्ग के समान मूलादि दश उद्देशक कहने चाहिए । विशेष यह है कि इनकी अवगाहना वल्लीवर्ग के समान समझनी चाहिए । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है।'

शतक-२३ - वर्ग-५

सूत्र - ८३४

भगवन् ! माषपर्णी, मुद्गपर्णी, जीवक, सरसव, करेणुका, काकोली, क्षीरकाकोली, भंगी, णही, कृमिराशि, भद्रमुस्ता, लाँगली, पयोदकिण्णा, पयोदलता, हरेणुका और लोही, इन सब वनस्पतियों के मूलरूप में जो जीव उत्पन्न होते हैं, वे कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? (गौतम !) आलुकवर्ग के समान मूलादि दश उद्देशक कहना । इस प्रकार इन पाँचों वर्गों के कुल पचास उद्देशक कहने चाहिए । विशेष यह है कि इन पाँचों वर्गों में कथित वनस्पतियों के सभी स्थानोंमें देव आकर उत्पन्न नहीं होते; इसलिए इन सबमें तीन लेश्याएं जाननी चाहिए । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है

शतक-२३ का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

शतक–२४

सूत्र - ८३५

चौबीसवें शतक में चौबीस उद्देशक इस प्रकार हैं–उपपात, परिमाण, संहनन, ऊंचाई, संस्थान, लेश्या, दृष्टि, ज्ञान, अज्ञान, योग, उपयोग । तथा–

सूत्र - ८३६

संज्ञा, कषाय, इन्द्रिय, समुद्घात, वेदना, वेद, आयुष्य, अध्यवसाय, अनुबन्ध, काय-संवेध । ये बीस द्वार हैं।

सूत्र - ८३७

यह सब विषय चौबीस दण्डक में से प्रत्येक जीवपद में कहे जायेंगे । इस प्रकार चौबीसवें शतक में चौबीस दण्डक-सम्बन्धी चौबीस उद्देशक कहे जायेंगे ।

शतक-२४ – उद्देशक-१

सूत्र - ८३८

राजगृह नगर में गौतम स्वामी ने यावत् इस प्रकार पूछा–भगवन् ! नैरयिक जीव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं? क्या वे नैरयिकों से उत्पन्न होते हैं, यावत् देवों से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! वे नैरयिकों से आकर उत्पन्न नहीं होते, तिर्यंचयोनिकों से उत्पन्न होते हैं, मनुष्यों से भी उत्पन्न होते हैं, देवों में आकर उत्पन्न नहीं होते हैं । (भगवन् !) यदि (नैरयिकजीव) तिर्यंचयोनिकों से आकर उत्पन्न होते हैं तो क्या वे एकेन्द्रिय तिर्यंचयोनिकों से आकर उत्पन्न होते हैं, यावत् पंचेन्द्रिय तिर्यंचयोनिकों से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! वे एकेन्द्रिय तिर्यंचयोनिकों से यावत् चतुरिन्द्रिय तिर्यंचयोनिकों से आकर उत्पन्न नहीं होते हैं, (किन्तु) पंचेन्द्रिय तिर्यंचयोनिकों से आकर उत्पन्न होते हैं ।

भगवन् ! यदि वे पंचेन्द्रिय तिर्यंचयोनिकों से आकर उत्पन्न होते हैं तो क्या संज्ञी-पंचेन्द्रिय तिर्यंचयोनिकों से आकर उत्पन्न होते हैं, या असंज्ञी-पंचेन्द्रिय तिर्यंचयोनिकों से ? गौतम ! वे संज्ञी-पंचेन्द्रिय तिर्यंचयोनिकों से भी आकर उत्पन्न होते हैं, असंज्ञी-पंचेन्द्रिय तिर्यंचयोनिकों से भी । भगवन् ! यदि वे संज्ञी-पंचेन्द्रिय तिर्यंचयोनिकों से आकर उत्पन्न होते हैं, तो क्या जलचरों से, या स्थलचरों से अथवा खेचरों से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! वे जलचरों से, स्थलचरों से तथा खेचरों से भी आकर उत्पन्न होते हैं । (भगवन् !) यदि वे जलचर, स्थलचर और खेचर जीवों से आकर उत्पन्न होते हैं, तो क्या पर्याप्त से अथवा अपर्याप्त से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! वे पर्याप्त से उत्पन्न होते हैं, अपर्याप्त से नहीं ।

भगवन् ! पर्याप्त असंज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंचयोनिक जीव, जो नैरयिकों में उत्पन्न होने योग्य हैं, वह कितनी नरक-पृथ्वीयों में उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! वह एक रत्नप्रभापृथ्वी में उत्पन्न होता है । भगवन् ! पर्याप्त असंज्ञी पंचे-न्द्रियतिर्यंचयोनिक जीव, जो रत्नप्रभापृथ्वी में उत्पन्न होने योग्य है, वह कितने काल की स्थिति वाले नैरयिकों में उत्पन्न होता है ? गौतम ! वह जघन्य दस हजार वर्ष की और उत्कृष्ट पल्योपम के असंख्यातवें भाग की स्थिति वाले नैरयिकों में उत्पन्न होता है । भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! जघन्य एक, दो या तीन और उत्कृष्ट संख्यात या असंख्यात उत्पन्न होते हैं । भगवन् ! उनके शरीर किस संहनन वाले होते हैं ? गौतम ! वे सेवार्त्तसंहनन वाले होते हैं । भगवन् ! उन जीवों के शरीर की अवगाहना कितनी बड़ी होती है ? गौतम ! जघन्य अंगुल के असंख्यातवे भाग की और उत्कृष्ट एक हजार योजन की होती है ।

भगवन् ! उनके शरीर का संस्थान कौन-सा कहा गया है ? गौतम ! हुण्डकसंस्थान है । भगवन् ! उन जीवों के कितनी लेश्याएं कही गई हैं ? गौतम ! तीन लेश्याएं हैं–कृष्ण, नील, कापोत । भगवन् ! वे जीव सम्यग्दृष्टि होते हैं, मिथ्यादृष्टि होते हैं अथवा सम्यग्मिथ्यादृष्टि होते हैं ? गौतम ! वे सम्यग्दृष्टि नहीं होते, मिथ्यादृष्टि होते हैं, सम्यग्-मिथ्यादृष्टि नहीं होते । भगवन् ! वे जीव ज्ञानी होते हैं या अज्ञानी होते हैं ? गौतम ! वे ज्ञानी नहीं होते; अज्ञानी होते हैं, उनके अवश्य दो अज्ञान होते हैं, यथा–मति-अज्ञान और श्रुत-अज्ञान । भगवन् ! वे जीव मनोयोगी होते हैं, या वचनयोगी अथवा काययोगी होते हैं ? गौतम ! वे मनोयोगी नहीं, (किन्तु) वचनयोगी और काययोगी होते हैं । भगवन् !

वे जीव साकारोपयोग वाले हैं या अनाकारोपयोग-युक्त हैं ? गौतम ! वे दोनों उपयोग वाले होते हैं ।

भगवन् ! उन जीवों के कितनी संज्ञाएं कही गई हैं ? गौतम ! चार संज्ञाएं यथा-आहारसंज्ञा, भयसंज्ञा, मैथुनसंज्ञा और परिग्रहसंज्ञा । भगवन् ! उन जीवों के कितने कषाय होते हैं ? गौतम ! उनके चार कषाय होते हैं, यथा-क्रोधकषाय, मानकषाय, मायाकषाय और लोभकषाय । भगवन् ! उन जीवों के कितनी इन्द्रियाँ कही गई हैं ? गौतम ! पाँच इन्द्रियाँ यथा-श्रोत्रेन्द्रिय, चक्षुरिन्द्रिय, यावत् स्पर्शेन्द्रिय । भगवन् ! उन जीवों के कितने समुद्घात कहे हैं ? गौतम ! तीन यथा-वेदनासमुद्घात, कषायसमुद्घात और मारणान्तिकसमुद्घात । भगवन् ! वे जीव साता-वेदक हैं या असाता-वेदक हैं? गौतम ! वे सातावेदक भी हैं और असातावेदक भी हैं । भगवन् ! वे जीव स्त्रीवेदक हैं, पुरुषवेदक हैं या नपुंसकवेदक हैं ? गौतम ! वे न तो स्त्रीवेदक होते हैं और न ही पुरुषवेदक होते हैं, किन्तु नपुंसकवेदक हैं ।

भगवन् ! उन जीवों के कितने काल की स्थिति कही गई है ? गौतम ! जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट पूर्वकोटि भगवन् ! उन जीवों के कितने अध्यवसाय-स्थान कहे हैं ? गौतम ! असंख्यात हैं । भगवन् ! उनके वे अध्यवसाय-स्थान प्रशस्त होते हैं या अप्रशस्त होते हैं ? गौतम ! वे प्रशस्त भी होते हैं और अप्रशस्त भी होते हैं । भगवन् ! वे जीव पर्याप्त असंज्ञीपंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिकरूप में कितने काल तक रहते हैं ? गौतम ! जघन्य अन्त-र्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट पूर्वकोटि रहते हैं । भगवन् ! वे जीव पर्याप्त असंज्ञीपंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिक जीव हैं, फिर रत्न-प्रभापृथ्वी में नैरयिकरूप से उत्पन्न हो और पुनः (उसी) पर्याप्त असंज्ञीपंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिक हों, यों कितना काल सेवन करते हैं और कितने काल तक गति-आगति करते हैं ? गौतम ! भवादेश से दो भव और कालादेश से जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त अधिक दस हजार वर्ष और उत्कृष्ट पूर्वकोटि अधिक पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग ।

भगवन् ! पर्याप्त असंज्ञीपंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिक जीव, जो जघन्यकाल-स्थिति वाले रत्नप्रभापृथ्वी के नैरयिकों में उत्पन्न होने योग्य हों, तो हे भगवन् ! वे कितने काल की स्थिति वाले नैरयिकों में उत्पन्न होते हैं ? गौतम! जघन्य और उत्कृष्ट दोनों दस हजार वर्ष की स्थिति वालों में । भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! पूर्वकथित वक्तव्यता, यावत् अनुबन्ध । भगवन् ! वे जीव पर्याप्त-असंज्ञीपंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिक हों, फिर जघन्य काल की स्थिति वाले रत्नप्रभापृथ्वी के नैरयिकों में उत्पन्न हों और पुनः पर्याप्त-असंज्ञीपंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिक हों तो यावत् कितने काल तक गति-आगति करते हैं ? गौतम ! भवादेश से दो भव ग्रहण करते हैं, और कालादेश से जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त अधिक दस हजार वर्ष और उत्कृष्ट दस हजार वर्ष अधिक पूर्वकोटि ।

भगवन् ! पर्याप्त असंज्ञीपंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिक जीव, रत्नप्रभा में उत्कृष्ट स्थिति वाले नैरयिकों में उत्पन्न होने योग्य हों, तो वह कितने काल की स्थिति वाले नैरयिकों में उत्पन्न होता है ? गौतम ! जघन्य और उत्कृष्ट दोनों पल्योपम के असंख्यातवें भाग की स्थिति वालों में । भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ? इत्यादि प्रश्न । गौतम! पूर्ववत् जानना । भगवन् ! वह जीव, पर्याप्त, असंज्ञीपंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिक हो, फिर उत्कृष्ट काल की स्थिति वाले रत्नप्रभापृथ्वी के नैरयिकों में उत्पन्न हों और पुनः पर्याप्त असंज्ञीपंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिक हो तो वह यावत् गमनागमन करता रहता है ? गौतम ! भवादेश से दो भव ग्रहण करता है और काल की अपेक्षा से जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त अधिक पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग तथा उत्कृष्ट पूर्वकोटि अधिक पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग।

भगवन् ! जघन्य स्थिति वाला पर्याप्त असंज्ञीपंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिक जीव जो रत्नप्रभापृथ्वी के नैरयिकों में उत्पन्न होने योग्य हो, वह कितने काल की स्थिति वाले नैरयिकों में उत्पन्न होता है ? गौतम ! वह जघन्य दस हजार वर्ष की स्थिति वाले और उत्कृष्ट पल्योपम के असंख्यातवें भाग की स्थिति वाले नैरयिकों में उत्पन्न होता है ।

भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! पूर्ववत् समझना । विशेषतः आयु, अध्यवसाय और अनुबन्ध, इन तीन बातों में अन्तर है, यथा-आयुष्य जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट भी अन्तर्मुहूर्त्त की है । भगवन् ! उन जीवों के अध्यवसाय कितने कहे हैं ? गौतम ! असंख्यात हैं । भगवन् ! अध्य-वसाय प्रशस्त होते हैं, या अप्रशस्त ? गौतम ! वे प्रशस्त नहीं होते, अप्रशस्त होते हैं । उनका अनुबन्ध अन्तर्मुहूर्त्त तक रहता है। शेष पूर्ववत् । भगवन् ! वह जीव, जघन्यकाल की स्थिति वाला पर्याप्त असंज्ञीपंचेन्द्रिय-तिर्यंच-योनिक हो, (फिर) रत्नप्रभापृथ्वी में यावत् गमनागमन करता रहता है ? गौतम ! वह भवादेश से दो भव ग्रहण करता है और कालादेश से

जघन्य अन्तमुहूर्त्त अधिक दस हजार वर्ष और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त्त अधिक पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग ।

भगवन् ! जघन्यकाल की स्थिति वाला पर्याप्त असंज्ञीपंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिक जो जीव जघन्यकाल की स्थिति वाले रत्नप्रभापृथ्वी के नैरयिकों में उत्पन्न होने योग्य हो, भगवन् ! वह जीव कितने काल की स्थिति वाले नैरयिकों में उत्पन्न होता है ? गौतम ! जघन्य और उत्कृष्ट दोनों दस हजार वर्ष की स्थिति वालों में । भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ? इत्यादि प्रश्न । (गौतम !) पूर्ववत् समझना । विशेषतः उन्हीं तीन बातों में अन्तर है। भगवन् ! जो जीव, जघन्यकाल की स्थिति वाला पर्याप्त असंज्ञीपंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिक हो, फिर वह जघन्यस्थिति वाले नैरयिकों में उत्पन्न हो, और पुनः वह पर्याप्त असंज्ञीपंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिक हो तो, कितना काल सेवन करता है और कितने काल तक गमनागमन करता रहता है ? गौतम ! भवादेश से वह दो भव ग्रहण करता है और कालादेश से जघन्य और उत्कृष्ट भी अन्तर्मुहूर्त्त अधिक दस हजार वर्ष काल तक ।

भगवन् ! जघन्यकाल की स्थिति वाला, पर्याप्त असंज्ञीपंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिक जीव, जो रत्नप्रभापृथ्वी के उत्कृष्ट स्थिति वाले नैरयिकों में उत्पन्न होने योग्य हो, वह कितने काल की स्थिति वाले नैरयिकों में उत्पन्न होता है ? गौतम ! जघन्य पल्योपम के असंख्यातवें भाग की स्थिति वाले और उत्कृष्ट भी पल्योपम के असंख्यातवें भाग की स्थिति वालों में । भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! पूर्ववत् । विशेषतः उन्हीं तीन बातों में अन्तर है । जिसे अनुबन्ध तक जानना । भगवन् ! वह जीव, जघन्यकाल की स्थिति वाला पर्याप्त असंज्ञी-पंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिक हो, फिर वह उत्कृष्टकाल की स्थिति वाले रत्नप्रभापृथ्वी के नैरयिकों में यावत् कितने काल तक गमनागमन करता है ? गौतम ! भवादेश से दो भव ग्रहण करता है और कालादेश से जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त अधिक पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग तथा उत्कृष्ट भी अन्तमुहूर्त्त अधिक पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग ।

भगवन् ! उत्कृष्ट काल की स्थिति वाला पर्याप्त-असंज्ञीपंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिक जो जीव, रत्नप्रभापृथ्वी के नैरयिकों में उत्पन्न होने योग्य हैं, भन्ते ! वह कितने काल की स्थिति वाले नैरयिकों में उत्पन्न होता है ? गौतम ! जघन्य दस हजार वर्ष की और उत्कृष्ट पल्योपम के असंख्यातवें भाग की स्थिति वालों में । भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! पूर्वोक्त औघिक अनुसार जाननी । किन्तु स्थिति और अनुबन्ध में अन्तर है । (यथा-) स्थिति-जघन्य और उत्कृष्ट भी पूर्वकोटि वर्ष की है । इसी प्रकार अनुबन्ध भी है । भगवन् ! वह जीव, उत्कृष्ट काल की स्थिति वाला पर्याप्त असंज्ञी०-यावत् तिर्यंचयोनिक हों; (फिर) रत्नप्रभापृथ्वी तक यावत् गमनागमन करता है ? गौतम! वह भवादेश से दो भव ग्रहण करता है और कालादेश से जघन्य दस हजार वर्ष अधिक पूर्वकोटि वर्ष और उत्कृष्ट पूर्वकोटि अधिक पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग ।

भगवन् ! उत्कृष्टकाल की स्थिति वाला पर्याप्त असंज्ञीपंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिक जो जीव जघन्यकाल की स्थिति वाले रत्नप्रभा के नैरयिकों में उत्पन्न होने योग्य हो, वह कितने काल की स्थिति वाले नैरयिकों में उत्पन्न होता है? गौतम ! वह जघन्य और उत्कृष्ट दस हजार वर्ष की स्थिति वाले नैरयिकों में उत्पन्न होता है । भगवन् ! वे जीव एकसमय में कितने उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! सप्तम गमन के अनुसार अनुबन्ध तक (जानना चाहिए) । भगवन् ! जो जीव उत्कृष्टकाल की स्थिति वाला यावत् पंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक हो, फिर वह जघन्यकाल की स्थिति वाले रत्न-प्रभापृथ्वी के नैरयिकों यावत् गमनागमन करता है ? गौतम ! वह भवादेश से दो भव ग्रहण करता है तथा कालादेश से जघन्य और उत्कृष्ट दस हजार वर्ष अधिक पूर्वकोटिवर्ष; इतने काल तक गमनागमन करता है । भगवन् ! उत्कृष्ट काल की स्थिति वाला पर्याप्त० यावत् तिर्यंचयोनिक जो जीव, रत्नप्रभापृथ्वी के उत्कृष्ट स्थिति वाले नैरयिकों में उत्पन्न होने योग्य हो तो भगवन् ! वह कितने काल की स्थिति वाले नैरयिकों में उत्पन्न होता है ? गौतम ! वह जघन्य पल्योपम के असंख्यातवे भाग की स्थिति वाले और उत्कृष्ट भी पल्योपम के असंख्यातवे भाग की स्थिति वाले नैरयिकों में उत्पन्न होता है । भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! पूर्ववत् यावत् (अनुबन्ध तक) समझने चाहिए

भगवन् ! वह जीव, उत्कृष्ट काल की स्थिति वाला पर्याप्त यावत् तिर्यंचयोनिक हो, फिर वह उत्कृष्ट काल की स्थिति वाले रत्नप्रभापृथ्वी के नैरयिकों में गमनागमन करता है ? गौतम ! भवादेश से वह दो भव ग्रहण करता है तथा

कालादेश से जघन्य पूर्वकोटि अधिक पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग और उत्कृष्ट भी पूर्वकोटि अधिक पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग, इतना काल सेवन यावत् गमनागमन करता है । इस प्रकार ये तीन गमक औघिक हैं, तीन गमक जघन्यकाल की स्थिति वालों में उत्पत्ति के हैं और तीन गमक उत्कृष्टकाल की स्थिति वालों (में उत्पत्ति) के हैं । ये सब मिलाकर नौ गमक होते हैं ।

सूत्र - ८३९

भगवन् ! यदि नैरयिक संज्ञी-पंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिकों में से आकर उत्पन्न होते हैं, तो क्या वे संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-पंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिकों में से आकर उत्पन्न होते हैं, अथवा असंख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-पंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिकों में से ? गौतम ! वे संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-पंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिकों में से आकर उत्पन्न होते हैं, असंख्यात वर्ष की आयु वाले उत्पन्न नहीं होते हैं । भगवन् ! यदि नैरयिक संख्यातवर्ष की आयु वाले संज्ञी-तिर्यंचपंचेन्द्रियों में से आकर उत्पन्न होते हैं तो क्या वे जलचरों, स्थलचरों अथवा खेचरों में से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! वे जलचरों में से आकर उत्पन्न होते हैं, इत्यादि सब असंज्ञी के समान, यावत् पर्याप्तकों में से आकर उत्पन्न होते हैं, अपर्याप्तकों में से नही; भगवन् ! पर्याप्त-संख्येयवर्षायुष्क-संज्ञीपंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक जो जीव, नरकपृथ्वीयों में उत्पन्न होने योग्य हैं, वह कितनी नरकपृथ्वीयों में उत्पन्न होता है ? गौतम ! वह सातों ही नरकपृथ्वीयों में उत्पन्न होता है, यथा-रत्नप्रभा, यावत् अधःसप्तम पृथ्वी ।

भगवन् ! पर्याप्त संख्यातवर्षायुष्क संज्ञी-पंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक, जो रत्नप्रभापृथ्वी के नैरयिकों में उत्पन्न होने योग्य है, वह कितने काल की स्थिति वाले नैरयिकों में उत्पन्न होता है ? गौतम ! जघन्य दस हजार वर्ष की और उत्कृष्ट एक सागरोपम की स्थिति वाले नैरयिकों में उत्पन्न होता है । भगवन् ! वे जीव, एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! असंज्ञी के समान समझना । भगवन् ! उन जीवों के शरीर किस संहनन वाले होते हैं ? गौतम ! छहों प्रकार के, यथा-वे वज्रऋषभनाराचसंहनन वाले, यावत् सेवार्त्तसंहनन वाले होते हैं । शरीर की अव-गाहना, असंज्ञी के समान जानना । भगवन् ! उन जीवों के शरीर किस संस्थान वाले होते हैं ? गौतम ! छहों प्रकार के, यथा-समचतुरस्र यावत् हुण्डक संस्थान । भगवन् ! उन जीवों के कितनी लेश्याएं कही गई हैं ? गौतम ! छहों लेश्याएं । यथा-कृष्णलेश्या यावत् शुक्ललेश्या । (उनमें) दृष्टियाँ तीनों ही होती हैं । तीन ज्ञान तथा तीन अज्ञान भजना से होते हैं । योग तीनों ही होते हैं । शेष सब यावत् अनुबन्ध तक असंज्ञी के समान समझना । विशेष यह है कि समुद्घात आदि के पाँच होते हैं तथा वेद तीनों ही होते हैं । शेष पूर्ववत् । यावत्-

भगवन् ! वह पर्याप्त संख्येयवर्षायुष्क संज्ञी-पंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक जीव, रत्नप्रभापृथ्वी में नारकरूप में उत्पन्न हो और यावत् गमनागमन करता है ? गौतम ! भव की अपेक्षा जघन्य दो भव और उत्कृष्ट आठ भव तक ग्रहण करता है तथा काल की अपेक्षा से जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त अधिक दस हजार वर्ष और उत्कृष्ट चार पूर्वकोटि अधिक चार सागरोपम काल तक । भगवन् ! पर्याप्त संख्येयवर्षायुष्क संज्ञी-पंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक जीव रत्नप्रभा-पृथ्वी में जघन्य स्थिति वाले नैरयिकों में उत्पन्न हो, तो कितने काल की स्थिति वाले नैरयिकों में उत्पन्न होता है ? गौतम ! जघन्य और उत्कृष्ट दोनो दस हजार वर्ष की स्थिति वाले में उत्पन्न होता है । भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! पूर्ववत् प्रथम गमक पूरा, यावत् काल की अपेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त अधिक दस हजार वर्ष और उत्कृष्ट चालीस हजार वर्ष अधिक चार पूर्वकोटि काल तक । यदि वह उत्कृष्ट काल की स्थिति में उत्पन्न हो तो जघन्य और उत्कृष्ट एक सागरोपम की स्थिति वाले में उत्पन्न होता है । शेष परिमाणादि से लेकर भवादेश-पर्यन्त कथन उसी पूर्वोक्त प्रथम गमक के समान, यावत् काल की अपेक्षा से जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त अधिक सागरोपम और उत्कृष्ट चार पूर्वकोटि अधिक चार सागरोपम काल तक ।

भगवन् ! जघन्यकाल की स्थिति वाला, पर्याप्त संख्येयवर्षायुष्क संज्ञी-पंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक, जो रत्नप्रभा पृथ्वी में नैरयिकरूप में उत्पन्न होने वाला हो, तो वह कितने काल की स्थिति वाले नैरयिकों में उत्पन्न होता है ? गौतम ! वह जघन्य दस हजार वर्ष और उत्कृष्ट एक सागरोपम की स्थिति वाले में उत्पन्न होता है । भगवन् ! वे जीव (एक

समय में कितने उत्पन्न होते हैं ?) गौतम ! प्रथम गमक के समान विशेषता इन आठ विषयों में है, यथा-शरीर की अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग की और उत्कृष्ट धनुषपृथक्त्व की होती है । इनमें आदि की तीन लेश्याएं होती हैं । एकमात्र मिथ्यादृष्टि होते हैं । इनमें नियम से दो अज्ञान होते हैं । आदि के तीन समुद्घात होते हैं । आयुष्य, अध्यवसाय और अनुबन्ध का कथन असंज्ञी के समान । शेष सब प्रथम गमक के समान, यावत् काल की अपेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त अधिक दस हजार वर्ष और उत्कृष्ट चार अन्तर्मुहूर्त्त अधिक चार सागरोपम काल । जघन्य काल की स्थिति वाला, वही जीव, जघन्य दस हजार वर्ष की स्थिति वाले तथा उत्कृष्ट भी दस हजार वर्ष की स्थिति वालो में उत्पन्न होता है ।

भगवन् ! वे जीव (एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ?) इत्यादि प्रश्न । गौतम ! यहाँ सम्पूर्ण कथन चतुर्थ गमक समान, यावत्-काल की अपेक्षा-जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त अधिक १०००० वर्ष तक और उत्कृष्ट चार अन्त-र्मुहूर्त्त अधिक ४०००० वर्ष तक कालयापन करते हैं । वही उत्कृष्ट स्थिति वाले नैरयिकों में उत्पन्न हों, तो जघन्य सागरोपम स्थिति वाले नैरयिकों में उत्पन्न होता है और उत्कृष्ट भी सागरोपम स्थिति वाले नैरयिकों में उत्पन्न होता है । भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ? यहाँ पूर्ववत् सम्पूर्ण चतुर्थ गमक, यावत्-काल की अपेक्षा से जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त अधिक सागरोपम और उत्कृष्ट चार अन्तर्मुहूर्त्त अधिक चार सागरोपम काल यावत् गमनागमन करता है ।

भगवन् ! उत्कृष्ट स्थिति वाला पर्याप्त-संख्येयवर्षायुष्क संज्ञी-पंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक जीव जो रत्नप्रभा-पृथ्वी के नैरयिकों में उत्पन्न होने योग्य है, वह कितने काल की स्थिति वाले नैरयिकों में उत्पन्न होता है ? गौतम ! जघन्यतः दस हजार वर्ष की और उत्कृष्टतः एक सागरोपम की स्थिति वालों में । भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! परिमाण आदि से लेकर भवादेश तक की वक्तव्यता के लिए प्रथम गमक जानना । परन्तु विशेष यह है कि स्थिति जघन्य और उत्कृष्ट पूर्वकोटि वर्ष की है । इसी प्रकार अनुबन्ध भी जानना । शेष पूर्ववत् तथा काल की अपेक्षा से जघन्य दस हजार वर्ष अधिक पूर्वकोटिवर्ष और उत्कृष्ट चार पूर्वकोटि अधिक चार सागरोपम-। यदि वह (उत्कृष्ट० संज्ञी-पंचेन्द्रियतिर्यंच) जघन्य स्थिति वाले (रत्नप्रभापृथ्वी के नैरयिकों) में उत्पन्न हों, तो वह जघन्य और उत्कृष्ट दस हजार वर्ष की स्थिति वाले नैरयिकों में उत्पन्न होता है । भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! सम्पूर्ण सप्तम गमक कहना । काल की अपेक्षा से, जघन्य दस हजार वर्ष अधिक पूर्वकोटिवर्ष और उत्कृष्ट चालीस हजार वर्ष अधिक पूर्वकोटिवर्ष । भगवन् ! उत्कृष्ट काल की स्थिति वाला पर्याप्त यावत् ....तिर्यंचयोनिक, जो उत्कृष्ट स्थिति वाले नैरयिकों में उत्पन्न होने योग्य है, वह कितने काल की स्थिति वाले नैरयिकों में उत्पन्न होता है ? गौतम ! वह जघन्य और उत्कृष्ट एक सागरोपम की स्थिति वालों में । भगवन् ! वे जीव (एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ?) गौतम ! परिमाण से लेकर भवादेश तक के लिए वही पूर्वोक्त सप्तम गमक सम्पूर्ण कहना । काल की अपेक्षा से जघन्य पूर्वकोटि अधिक सागरोपम और उत्कृष्ट चार पूर्वकोटि अधिक चार सागरोपम काल । इस प्रकार ये नौ गमक होते हैं; और इन नौ ही गमकों का प्रारम्भ और उपसंहार असंज्ञी जीवों के समान है ।

सूत्र - ८४०

भगवन् ! पर्याप्त संख्येयवर्षायुष्क संज्ञी-पंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक, जो शर्कराप्रभा पृथ्वी में नैरयिक रूप से उत्पन्न होने योग्य हो, वह कितने काल की स्थिति वाले नैरयिकों में उत्पन्न होता है ? गौतम ! जघन्य एक सागरोपम और उत्कृष्ट तीन सागरोपम की स्थिति वालों में । भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! रत्नप्रभा नरक में उत्पन्न होने वाले पर्याप्त संज्ञी-पंचेन्द्रियतिर्यंच की समग्र वक्तव्यता यहाँ भवादेश पर्यन्त कहनी चाहिए तथा काल की अपेक्षा से जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त अधिक सागरोपम और उत्कृष्ट चार पूर्वकोटि अधिक बारह सागरोपम । इस प्रकार रत्नप्रभापृथ्वी के गमक के समान नौ ही गमक जानना । विशेष यह कि सभी नरकों में नैरयिकों की स्थिति और संवेध के सम्बन्ध में 'सागरोपम' कहना । इसी प्रकार छठी नरकपृथ्वी पर्यन्त जानना । परन्तु जिस नरकपृथ्वी में जघन्य और उत्कृष्ट स्थिति जितने काल की हो, उसे उसी क्रम से चार गुणी करनी चाहिए। जैसे-वालुकाप्रभापृथ्वी में उत्कृष्ट स्थिति सात सागरोपम की है; उसे चार गुणा करने से अठ्ठाईस सागरोपम होती है । इसी

प्रकार पंकप्रभा में चालीस सागरोपम की, धूमप्रभा में अड़सठ सागरोपम की और तमःप्रभा में ८८ सागरोपम की स्थिति होती है । संहनन के विषय में-बालुकाप्रभा में वज्रऋषभनाराच से कीलिका संहनन तक पाँच संहनन वाले जाते हैं । पंकप्रभा में आदि के चार संहनन वाले, धूमप्रभा में प्रथम के तीन संहनन, तमःप्रभा में प्रथम के दो संहनन वाले नैरयिक रूप में उत्पन्न होते हैं ।

भगवन् ! पर्याप्त संख्येयवर्षायुष्क संज्ञी-पंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक, जो अधःसप्तमपृथ्वी में उत्पन्न होने योग्य हो, वह कितने काल की स्थिति वाले नैरयिकों में उत्पन्न होता है ? गौतम ! जघन्य बाईस सागरोपम की और उत्कृष्ट तैंतीस सागरोपम की स्थिति वालों में । भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! रत्नप्रभा-पृथ्वी के समान इसके भी नौ गमक और अन्य सब वक्तव्यता समझनी चाहिए । विशेष यह है कि वहाँ वज्रऋषभ-नाराचसंहनन वाला ही उत्पन्न होता है, स्त्रीवेद वाले जीव वहाँ उत्पन्न नहीं होते । शेष समग्र कथन अनुबन्ध तक पूर्वोक्त प्रकार से जानना । भव की अपेक्षा से जघन्य तीन भव और उत्कृष्ट सात भव तथा काल की अपेक्षा से जघन्य दो अन्तर्मुहूर्त्त अधिक बाईस सागरोपम और उत्कृष्ट चार पूर्वकोटि अधिक ६६ सागरोपम तक गमनागमन करता है । वे (संज्ञी-पंचेन्द्रियतिर्यंच) जघन्य काल की स्थिति वाले नैरयिकों में उत्पन्न होते हैं; इत्यादि सब वक्तव्यता भवादेश तक पूर्वोक्त रूप से जानना । कालादेश से भी जघन्यतः उसी प्रकार यावत् चार पूर्वकोटि अधिक (६६ सागरोपम), काल तक गमनागमन करता है ।

वह जीव उत्कृष्ट स्थिति वाले नैरयिकों में उत्पन्न हो, इत्यादि सब वक्तव्यता, अनुबन्ध तक पूर्ववत् जानना । भव की अपेक्षा से-जघन्य तीन भव और उत्कृष्ट पाँच भव ग्रहण करता है । काल की अपेक्षा से-जघन्य दो अन्त-र्मुहूर्त्त अधिक बाईस सागरोपम और उत्कृष्ट तीन पूर्वकोटि अधिक ६६ सागरोपम । वही जीव स्वयं जघन्य स्थिति वाला हो और वह सप्तम नरकपृथ्वी में नैरयिकों में उत्पन्न हो, तो समस्त वक्तव्यता रत्नप्रभापृथ्वी में उत्पन्न होने योग्य जघन्य स्थिति वाले के अनुसार भवादेश तक कहना । विशेष यह है कि वह प्रथम संहननी होता है, वह स्त्रीवेदी नहीं होता । भव की अपेक्षा से-जघन्य तीन भव और उत्कृष्ट सात भव ग्रहण करता है । काल की अपेक्षा से-जघन्य दो अन्तर्मुहूर्त्त अधिक बाईस सागरोपम और उत्कृष्ट चार अन्तर्मुहूर्त्त अधिक ६६ सागरोपम । वही जघन्य स्थिति वाले सप्तम नरकपृथ्वी के नैरयिकों में उत्पन्न हो तो उस सम्बन्ध में समग्र चतुर्थ गमक कालादेश तक कहना। वही उत्कृष्ट स्थिति वाले सप्तम नरकपृथ्वी के नैरयिकों में उत्पन्न हो तो, इस सम्बन्ध में अनुबन्ध तक पूर्वोक्त वक्तव्यता जानना । भव की अपेक्षा से-जघन्य तीन भव और उत्कृष्ट पाँच भव ग्रहण करता है तथा काल की अपेक्षा से जघन्य दो अन्तर्मुहूर्त्त अधिक तैंतीस सागरोपम और उत्कृष्ट तीन अन्तर्मुहूर्त्त अधिक ६६ सागरोपम । वही स्वयं उत्कृष्ट स्थिति वाला हो और सप्तम नरकपृथ्वी में उत्पन्न हो तो जघन्य बाईस सागरोपम की और उत्कृष्ट तैंतीस सागरोपम की स्थिति वाले नैरयिकों में उत्पन्न होता है ।

भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ? इस विषय में समग्र वक्तव्यता सप्तम नरकपृथ्वी के गमक के समान, भवादेश तक कहनी चाहिए । विशेष यह है कि स्थिति और अनुबन्ध जघन्य और उत्कृष्ट पूर्वकोटि वर्ष जानना । काल की अपेक्षा से-जघन्य दो पूर्वकोटि अधिक बाईस सागरोपम और उत्कृष्ट चार पूर्वकोटि अधिक ६६ सागरोपम । यदि वह जघन्य स्थिति वाले सप्तम नरकपृथ्वी के नैरयिकों में उत्पन्न हो तो उसके सम्बन्ध में वही वक्तव्यता और वही संवेध सप्तम गमक के सदृश कहना । यदि वह उत्कृष्ट स्थिति वाले सप्तम नरक के नैरयिकों में उत्पन्न हो तो, वही पूर्वोक्त वक्तव्यता, यावत् अनुबन्ध तक । भव की अपेक्षा से जघन्य तीन भव और उत्कृष्ट पाँच भव, तथा काल की अपेक्षा से जघन्य दो पूर्वकोटि अधिक तैंतीस सागरोपम और उत्कृष्ट तीन पूर्वकोटि अधिक ६६ सागरोपम, यावत् इतने काल वह गमनागमन करता है ।

सूत्र - ८४१

भगवन् ! यदि वह नैरयिक मनुष्यों में से आकर उत्पन्न होता है, तो क्या वह संज्ञी-मनुष्यों में से या असंज्ञी-मनुष्यों में से उत्पन्न होता है ? गौतम ! वह संज्ञी-मनुष्यों में से उत्पन्न होता है, असंज्ञी मनुष्यों में से उत्पन्न नहीं होता है ।

भगवन् ! यदि वह संज्ञी-मनुष्यों में से आकर उत्पन्न होता है तो क्या संख्येय वर्ष की आयु वाले संज्ञी-मनुष्यों में से अथवा असंख्येय वर्ष की आयु वाले से ? गौतम ! वह संख्येय वर्ष की आयु वाले संज्ञी-मनुष्यों में से उत्पन्न होता है । भगवन् ! यदि वह संख्येयवर्षायुष्क संज्ञी-मनुष्यों में से आकर उत्पन्न होता है, तो क्या वह पर्याप्त संख्येयवर्षा-युष्क संज्ञी-मनुष्यों में से या अपर्याप्त संख्येयवर्षायुष्क संज्ञी-मनुष्यों में से ? गौतम ! वह पर्याप्त संख्येयवर्षायुष्क संज्ञी-मनुष्यों में से उत्पन्न होता है, अपर्याप्त संख्येयवर्षायुष्क संज्ञी-मनुष्यों में से उत्पन्न नहीं होता है । भगवन् ! संख्यात वर्ष की आयु वाला पर्याप्त मनुष्य, जो नैरयिकों में उत्पन्न होने योग्य है, वह कितनी नरकपृथ्वीयों में उत्पन्न होता है ? वह सातों ही नरकपृथ्वीयों में उत्पन्न होता है ।

भगवन् ! पर्याप्त संख्येयवर्षायुष्क संज्ञी-मनुष्य जो रत्नप्रभापृथ्वी के नैरयिकों में उत्पन्न होने योग्य है, वह कितने काल की स्थिति वाले नैरयिकों में उत्पन्न होता है ? गौतम ! वह जघन्य दस हजार वर्ष की और उत्कृष्ट एक सागरोपम की स्थिति वाले नैरयिकों में उत्पन्न होता है । भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! वे जीव जघन्य एक, दो या तीन उत्कृष्ट संख्यात उत्पन्न होते हैं । उनमें छहों संहनन होते हैं । उनके शरीर की अवगाहना जघन्य अंगुल-पृथक्त्व की और उत्कृष्ट पाँच सौ धनुष की होती है । शेष सब कथन यावत् भवादेश तक, संज्ञी-पंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिकों के समान है । विशेष यह है कि उनमें चार ज्ञान तथा तीन अज्ञान विकल्प से होते हैं । केवलिसमुद्घात को छोड़कर शेष छह समुद्घात होते हैं । उनकी स्थिति और अनुबन्ध जघन्य मासपृथक्त्व उत्कृष्ट पूर्वकोटि होता है । शेष सब पूर्ववत् । संवेधकाल की अपेक्षा से जघन्य मासपृथक्त्व अधिक दस हजार वर्ष और उत्कृष्ट चार पूर्वकोटि अधिक चार सागरोपम तक गमनागमन करता है ।

यदि वह मनुष्य जघन्यकाल की स्थिति वाले रत्नप्रभापृथ्वी के नैरयिकों में उत्पन्न हो तो उपर्युक्त सर्व वक्तव्यता कहना । विशेष यह कि काल की अपेक्षा से-जघन्य मासपृथक्त्व अधिक दस हजार वर्ष और उत्कृष्ट चार पूर्वकोटि अधिक चालीस हजार वर्ष । यदि वह मनुष्य, उत्कृष्ट काल की स्थिति वाले रत्नप्रभापृथ्वी के नैरयिकों में उत्पन्न हो, तो पूर्वोक्त सर्व वक्तव्यता जाननी । विशेष यह है कि काल की अपेक्षा से-जघन्य मासपृथक्त्व अधिक एक सागरोपम और उत्कृष्ट चार पूर्वकोटि अधिक चार सागरोपम । यदि वह मनुष्य स्वयं जघन्य काल की स्थिति वाला हो और रत्नप्रभापृथ्वी के नैरयिकों में उत्पन्न हो, तो उसके विषय में भी यही वक्तव्यता कहनी । इसमें इन पाँच बातों में विशेषता है-उनके शरीर की अवगाहना जघन्य और उत्कृष्ट अंगुल-पृथक्त्व होती है । उनके तीन ज्ञान और तीन अज्ञान विकल्प से होते हैं । उनके आदि के पाँच समुद्घात होते हैं, उनकी स्थिति और अनुबन्ध जघन्य मासपृथक्त्व और उत्कृष्ट मासपृथक्त्व होता है । शेष सब भवादेश तक पूर्ववत् । काल की अपेक्षा से-जघन्य मास-पृथक्त्व अधिक दस हजार वर्ष और उत्कृष्ट चार मासपृथक्त्व अधिक चार सागरोपम; इतने काल । यदि वह मनुष्य स्वयं जघन्य काल की स्थिति वाला हो और रत्नप्रभापृथ्वी के नैरयिकों में उत्पन्न हो, तो पूर्वोक्त चतुर्थगमक के समान इसकी वक्तव्यता समझना । विशेष यह है कि काल की अपेक्षा से-जघन्य मासपृथक्त्व अधिक दस हजार वर्ष और उत्कृष्ट चार मासपृथक्त्व अधिक चालीस हजार वर्ष काल ।

यदि वह जघन्य कालस्थिति वाला मनुष्य, उत्कृष्ट काल की स्थिति वाले रत्नप्रभापृथ्वी के नैरयिकों में उत्पन्न हों, तो पूर्वोक्त गमक के समान जानना । विशेष यह है कि काल की अपेक्षा से-जघन्य मासपृथक्त्व अधिक एक सागरोपम और उत्कृष्ट चार मासपृथक्त्व अधिक चार सागरोपम; इतने काल यावत् गमनागमन करता है । यदि वह मनुष्य स्वयं उत्कृष्ट काल की स्थिति वाला हो और उत्पन्न हो, तो उसके विषय में प्रथम गमक के समान समझना । विशेषता यह है कि उसके शरीर की अवगाहना जघन्य पाँच सौ धनुष और उत्कृष्ट भी पाँच सौ धनुष की होती है । स्थिति जघन्य और उत्कृष्ट पूर्वकोटिवर्ष की होती है एवं अनुबन्ध भी उसी प्रकार जानना । काल की अपेक्षा से-जघन्य दस हजार वर्ष अधिक पूर्वकोटि और उत्कृष्ट चार पूर्वकोटि अधिक चार सागरोपम । यदि वही मनुष्य, जघन्य काल की स्थिति वाले (रत्नप्रभा) में उत्पन्न हो, तो उसकी वक्तव्यता सप्तम गमक के समान जानना। विशेष यह है कि काल की अपेक्षा से जघन्य दस हजार वर्ष अधिक पूर्वकोटि और उत्कृष्ट चालीस हजार वर्ष अधिक चार पूर्वकोटि । यदि वह

उत्कृष्ट काल की स्थिति वाला मनुष्य, उत्कृष्ट स्थिति वाले में उत्पन्न हो तो उसी पूर्वोक्त सप्तम गमक के समान वक्तव्यता जानना । विशेष यह है कि काल की अपेक्षा से-जघन्य पूर्वकोटि अधिक एक सागरोपम और उत्कृष्ट चार पूर्वकोटि अधिक चार सागरोपम; इतने काल यावत् गमनागमन करता है ।

सूत्र - ८४२

भगवन् ! पर्याप्त संख्येयवर्षायुष्क संज्ञी-मनुष्य, जो शर्कराप्रभापृथ्वी के नैरयिकों में उत्पन्न होने योग्य हो; वह कितने काल की स्थिति वाले नैरयिकों में उत्पन्न होता है ? गौतम ! वह जघन्य एक सागरोपम की और उत्कृष्ट तीन सागरोपम की स्थिति वाले शर्कराप्रभा नैरयिकों में उत्पन्न होता है । भगवन् ! वे जीव वहाँ एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! उनके विषय में रत्नप्रभापृथ्वी के नैरयिकों के समान गमक जानना । विशेष यह है कि उनके शरीर की अवगाहना जघन्य रत्नीपृथक्त्व और उत्कृष्ट पाँच सौ धनुष होती है । उनकी स्थिति जघन्य वर्ष-पृथक्त्व और उत्कृष्ट पूर्वकोटिवर्ष की होती है । इसी प्रकार अनुबन्ध भी समझना । शेष सब कथन भवादेश तक पूर्ववत् । काल की अपेक्षा से-जघन्य वर्षपृथक्त्व अधिक एक सागरोपम और उत्कृष्ट चार पूर्वकोटि अधिक बारह सागरोपम; इतने काल तक गमनागमन करता है । इस प्रकार औघिक के तीनों गमक मनुष्य की वक्तव्यता के समान जानना । विशेषता नैरयिक की स्थिति और कालादेश से संवेध जान लेना ।

यदि वह स्वयं जघन्य स्थिति वाला संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त मनुष्य, शर्कराप्रभा पृथ्वी के नैरयिकों में उत्पन्न हो, तो तीनों गमकों में पूर्वोक्त वही वक्तव्यता जाननी चाहिए । विशेष यह है कि उनके शरीर की अवगाहना जघन्य और उत्कृष्ट भी रत्नीपृथक्त्व होती है । उनकी स्थिति जघन्य और उत्कृष्ट वर्षपृथक्त्व की होती है । इसी प्रकार अनुबन्ध भी होता है । शेष सब कथन औघिक गमक के समान जानना । संवेध भी उपयोगपूर्वक समझ लेना चाहिए । यदि वह मनुष्य स्वयं उत्कृष्ट स्थिति वाला हो और शर्कराप्रभापृथ्वी के नैरयिकों में उत्पन्न हो, तो उसके भी तीनों गमकों में विशेषता इस प्रकार है-उनके शरीर की अवगाहना जघन्य और उत्कृष्ट पाँच सौ धनुष की होती है । उनकी स्थिति जघन्य और उत्कृष्ट भी पूर्वकोटिवर्ष की होती है । इसी प्रकार अनुबन्ध भी समझना । शेष सब प्रथम गमक के समान है । विशेषता यह है कि नैरयिक की स्थिति और कायसंवेध तदनुकूल जानना चाहिए ।

इसी प्रकार छठी नरकपृथ्वी पर्यन्त जानना चाहिए । परन्तु विशेष यह है कि तीसरी नरकपृथ्वी से लेकर आगे तिर्यंचयोनिक के समान एक-एक संहनन कम होता है । कालादेश भी इसी प्रकार कहना । परन्तु विशेष यह है कि यहाँ मनुष्यों की स्थिति जाननी चाहिए ।

भगवन् ! पर्याप्त-संख्येयवर्षायुष्क-संज्ञी मनुष्य, जो सप्तमपृथ्वी में उत्पन्न होने योग्य है, वह कितने काल की स्थिति वाले नैरयिकों में उत्पन्न होता है ? गौतम ! वह जघन्य बाईस सागरोपम की स्थिति वाले और उत्कृष्ट तैंतीस सागरोपम की स्थिति वालों में । भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ? पूर्ववत् शर्कराप्रभा-पृथ्वी के गमक के समान समझना । विशेष यह है कि सातवीं नरकपृथ्वी में प्रथम संहनन वाले ही उत्पन्न होते हैं । वहाँ स्त्रीवेदी उत्पन्न नहीं होते । शेष कथन अनुबन्ध तक पूर्ववत् । भव की अपेक्षा से-दो भव ग्रहण और काल की अपेक्षा से-जघन्य वर्षपृथक्त्व अधिक बाईस सागरोपम और उत्कृष्ट पूर्वकोटि अधिक तैंतीस सागरोपम । यदि वही मनुष्य, जघन्य काल की स्थिति वाले सप्तमपृथ्वी-नारकों में उत्पन्न हो, तो भी यही वक्तव्यता । विशेष यह है कि यहाँ नैरयिक की स्थिति और संवेध स्वयं विचार करके कहना । यदि वही मनुष्य, उत्कृष्ट काल की स्थिति वाले सप्तमपृथ्वी के नारकों में उत्पन्न हो, तो भी यही वक्तव्यता । विशेष यह है कि इसका संवेध स्वयं जान लेना ।

यदि वही स्वयं जघन्यकाल की स्थिति वाला हो और सप्तमपृथ्वी के नारकों में उत्पन्न हो, तो तीनों गमकों में यही वक्तव्यता समझनी चाहिए । विशेष यह है कि उसके शरीर की अवगाहना जघन्य और उत्कृष्ट रत्नीपृथक्त्व होती है । उनकी स्थिति जघन्य और उत्कृष्ट वर्षपृथक्त्व की होती है । अनुबन्ध भी इसी प्रकार होता है । संवेध के विषय में उपयोग पूर्वक कहना चाहिए । यदि वह संज्ञी मनुष्य स्वयं उत्कृष्ट स्थिति वाला हो और सप्तम नरकपृथ्वी में उत्पन्न हो, तो उसके भी तीनों गमकों में पूर्वोक्त वक्तव्यता समझना । विशेष इतना ही है की शरीर की अवगाहना जघन्य और

उत्कृष्ट पाँच सौ धनुष की है । स्थिति जघन्य और उत्कृष्ट भी पूर्वकोटिवर्ष की है । इसी प्रकार अनुबन्ध भी जानना । इन नौ ही गमकों में नैरयिकों की स्थिति और संवेध स्वयं विचार कर जान लेना । यावत् नौंवे गमक तक दो ही भवग्रहण होता है; काल की अपेक्षा से जघन्य और उत्कृष्ट पूर्वकोटि अधिक तैंतीस सागरोपम; इतना काल सेवन करता है, गमनागमन करता है । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-२४ – उद्देशक-२

सूत्र - ८४३

राजगृह नगर में गौतम स्वामी ने यावत् इस प्रकार पूछा-भगवन् ! असुरकुमार कहाँ से-किस गति से उत्पन्न होते हैं ? क्या वे नैरयिकों से आकर उत्पन्न होते हैं । यावत् देवों से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! वे नैरयिकों से आकर उत्पन्न नहीं होते, तिर्यंचयोनिकों और मनुष्यों से आकर उत्पन्न होते हैं, किन्तु देवों से आकर उत्पन्न नहीं होते । नैरयिक उद्देशक अनुसार प्रश्न भगवन् ! पर्याप्त असंज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंचयोनिक जीव, जो असुर-कुमारों में उत्पन्न होने योग्य है, वह कितने काल की स्थिति वाले असुरकुमारों में उत्पन्न होता है ? गौतम ! वह जघन्य दस हजार वर्ष की और उत्कृष्ट पल्योपम के असंख्यातवे भाग काल की स्थिति वाले असुरकुमारों में उत्पन्न होता है । भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ? (गौतम !) रत्नप्रभापृथ्वी के समान-नौ गमक कहने । विशेष यह है कि यदि वह स्वयं जघन्यकाल की स्थिति वाला हो, तो तीनों गमकों में अध्यवसाय प्रशस्त होते हैं ।

भगवन् ! यदि संज्ञी-पंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिक जीव असुरकुमारों में उत्पन्न हो तो क्या वह संख्यात वर्षों की आयु वाले से अथवा असंख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी तिर्यंच पंचेन्द्रिय जीवों से आकर उत्पन्न होता है ? गौतम ! वह दोनों प्रकार के तिर्यंचों से आकर उत्पन्न होता है । भगवन् ! असंख्यातवर्ष की आयु वाले संज्ञी-पंचेन्द्रिय-तिर्यंच योनिक जीव, कितने काल की स्थिति वाले असुरकुमारों में उत्पन्न होता है ? गौतम ! वह जघन्य दस हजार वर्ष और उत्कृष्ट तीन पल्योपम की स्थिति वाले असुरकुमारों में उत्पन्न होता है ।

भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! वे जघन्य एक, दो या तीन और उत्कृष्ट संख्यात उत्पन्न होते हैं । वे वज्रऋषभनाराचसंहनन वाले होते हैं । उनकी अवगाहना जघन्य धनुष-पृथक्त्व की और उत्कृष्ट छह गाऊ की होती है । वे समचतुरस्रसंस्थान वाले होते हैं । उनमें प्रारम्भ की चार लेश्याएं होती है । वे केवल मिथ्यादृष्टि होते हैं । वे अज्ञानी होते हैं । नियम से दो अज्ञान होते हैं-मति-अज्ञान और श्रुत-अज्ञान । योग तीनों ही पाए जाते हैं । उपयोग भी दोनों प्रकार के होते हैं । चार संज्ञा, चार कषाय, पाँच इन्द्रियाँ तथा आदि के तीन समुद्घात होते हैं । वे समुद्घात करके भी मरते हैं और समुद्घात किए बिना भी मरते हैं । उनमें साता और असाता दोनों प्रकार की वेदना होती है । वे स्त्रीवेदी और पुरुषवेदी होते हैं, नपुंसकवेदी नहीं होते हैं । उनकी स्थिति जघन्य कुछ अधिक पूर्वकोटि वर्ष की और उत्कृष्ट तीन पल्योपम की होती है । उनके अध्यवसाय प्रशस्त भी और अप्रशस्त भी होते हैं । उनकी अनुबन्ध स्थिति के तुल्य होता है, कायसंवेध-भव की अपेक्षा से-दो भव ग्रहण करते हैं, काल की अपेक्षा से-जघन्य दस हजार वर्ष अधिक सातिरेक पूर्वकोटि और उत्कृष्ट छह पल्यो-पम, इतने काल तक गमनागमन करते हैं । यदि वह जीव जघन्य काल की स्थिति वाले असुरकुमारों में उत्पन्न हो तो इसकी वक्तव्यता पूर्वोक्तानुसार । विशेष असुरकुमारों की स्थिति और संवेध स्वयं जान लेना चाहिए । यदि वह उत्कृष्ट काल की स्थिति वाले असुरकुमारों में उत्पन्न हों, तो वह जघन्य और उत्कृष्ट तीन पल्योपम की स्थिति वाले असुरकुमारों में उत्पन्न होता है, इत्यादि पूर्ववत् । विशेष यह है कि उसकी स्थिति अनुबन्ध जघन्य और उत्कृष्ट तीन पल्योपम होता है । काल की अपेक्षा से-जघन्य और उत्कृष्ट छह पल्योपम, इतने काल तक गमनागमन करता है । शेष पूर्ववत् । यदि वह स्वयं जघन्यकाल की स्थिति वाला हो और असुरकुमारों में उत्पन्न हो, तो वह जघन्य दस हजार वर्ष की स्थिति वाले और उत्कृष्ट सातिरेक पूर्वकोटि वर्ष की आयु वाले असुरकुमारों में उत्पन्न होता है ।

भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ? शेष सब कथन, यावत् भवादेश तक उसी प्रकार जानना । विशेष यह है कि उनकी अवगाहना जघन्य धनुषपृथक्त्व और उत्कृष्ट सातिरेक एक हजार धनुष । उनकी

स्थिति जघन्य और उत्कृष्ट सातिरेक पूर्वकोटि की जानना । अनुबन्ध भी इसी प्रकार है । काल की अपेक्षा से-जघन्य दस हजार वर्ष अधिक सातिरेक पूर्वकोटि और उत्कृष्ट सातिरेक दो पूर्वकोटि । यदि वह जघन्य काल की स्थिति वाले असुरकुमारों में उत्पन्न हो तो उसके विषय में भी यही वक्तव्यता कहना । विशेष यह है कि यहाँ असुर-कुमारों की स्थिति और संवेध के विषय में विचार कर स्वयं जान लेना । यदि वह उत्कृष्ट काल की स्थिति वाले असुरकुमारों में उत्पन्न हो, तो जघन्य और उत्कृष्ट सातिरेक पूर्वकोटिवर्ष की आयु वाले असुरकुमारों में उत्पन्न होता है । विशेष यह है कि काल की अपेक्षा से-जघन्य और उत्कृष्ट सातिरेक दो पूर्वकोटिवर्ष । वही जीव स्वयं उत्कृष्ट-काल की स्थिति वाला हो और असुरकुमारों में उत्पन्न हो, तो उसके लिए वही प्रथम गमक कहना चाहिए । विशेष यह है कि उसकी स्थिति जघन्य और उत्कृष्ट तीन पल्योतम है तथा उसका अनुबन्ध भी इसी प्रकार जानना । काल की अपेक्षा से-जघन्य दस हजार वर्ष अधिक तीन पल्योपम और उत्कृष्ट छह पल्योपम ।

यदि वह जघन्य काल की स्थिति वाले असुरकुमारों में उत्पन्न हो, तो उसके विषय में भी पूर्वोक्त वक्तव्यता जाननी चाहिए । विशेष यदि वह उत्कृष्टकाल की स्थिति वाले असुरकुमारों में उत्पन्न हो, तो वह जघन्य और उत्कृष्ट तीन पल्योपम की स्थिति वाले असुरकुमारों में उत्पन्न होता है; इत्यादि वही पूर्वोक्त वक्तव्यता कहनी चाहिए । विशेष यह है कि काल की अपेक्षा से-जघन्य और उत्कृष्ट छह पल्योपम; इतने काल तक यावत् गमनागमन करता है ।

भगवन् ! यदि असुरकुमार, संख्येय वर्षायुष्क संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंचों से आकर उत्पन्न होते हैं, तो क्या वे जलचरों से आकर उत्पन्न होते हैं, इत्यादि यावत्-पर्याप्त संख्येय वर्षायुष्क संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिक जीव जो असुरकुमारों में उत्पन्न होने योग्य है, वह कितने काल की स्थिति वाले असुरकुमारों में उत्पन्न होता है ? गौतम ! वह जघन्य दस हजार वर्ष की स्थिति वाले और उत्कृष्ट सातिरेक एक सागरोपम की स्थिति वाले में उत्पन्न होता है । भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ? (गौतम !) इनके सम्बन्ध में रत्नप्रभापृथ्वी के विषय में वर्णित नौ गमकों के सदृश यहाँ भी नौ गमक जानने चाहिए । विशेष यह है कि जब वह स्वयं जघन्य काल की स्थिति वाला होता है, तब तीनों ही गमकों में यह अन्तर जानना चाहिए-इनमें चार लेश्याएं होती हैं । अध्यवसाय प्रशस्त होते हैं । शेष पूर्ववत् । संवेध सातिरेक सागरोपम से कहना चाहिए ।

भगवन् ! यदि वे (असुरकुमार) मनुष्यों से आकर उत्पन्न होते हैं, तो क्या वे संज्ञी मनुष्यों से आकर उत्पन्न होते हैं या असंज्ञी मनुष्यों से ? गौतम ! वे संज्ञी मनुष्यों से आकर उत्पन्न होते हैं । भगवन् ! यदि वे संज्ञी मनुष्यों से आकर उत्पन्न होते हैं तो क्या संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी मनुष्यों से आकर उत्पन्न होते हैं या असंख्यात वर्ष की आयु वाले से ? गौतम ! वे संख्यात वर्ष की आयु वाले (संज्ञी मनुष्यों से आकर) भी उत्पन्न होते हैं और असंख्यात वर्ष की आयु वाले (संज्ञी मनुष्यों) से (आकर) भी । भगवन् ! असंख्यात वर्ष की आयु वाला संज्ञी मनुष्य, कितने काल की स्थिति वाले असुरकुमारों में उत्पन्न होता है ? गौतम ! जघन्य दस हजार वर्ष की और उत्कृष्ट तीन पल्योपम की ।

इस प्रकार पूर्वोक्त असुरकुमारों की उत्पत्ति के प्रथम के तीनों गमक असंख्यात वर्ष की आयु वाले तिर्यंच-योनिक जीवों के गमक के समान जानना । विशेषता यह है कि प्रथम और द्वीतिय गमक में शरीरावगाहना जघन्य सातिरेक पाँच सौ धनुष की और उत्कृष्ट तीन गाऊ की होती हैं । तृतीय गमक में शरीर की अवगाहना जघन्य और उत्कृष्ट तीन गाऊ की । शेष तिर्यंचयोनिकों के समान है । यदि वह स्वयं जघन्य काल की स्थिति वाला हो और असुरकुमारों में उत्पन्न हो तो उसके भी तीनों गमक जघन्यकाल की स्थिति वाले तिर्यंचयोनिक के समान कहना । विशेषता यह है कि तीनों ही गमकों में शरीर की अवगाहना जघन्य और उत्कृष्ट सातिरेक पाँच सौ धनुष की होती है। यदि वह स्वयं उत्कृष्ट काल की स्थिति वाला हो तो उसके विषय में भी पूर्वोक्त अन्तिम तीनों गमक कहना । विशेष यह है कि शरीरावगाहना जघन्य और उत्कृष्ट तीन गाऊ की होती है ।

भगवन् ! यदि वह (असुरकुमार) संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी मनुष्यों से आकर उत्पन्न होता है, तो क्या वह पर्याप्त संख्येय वर्षायुष्क संज्ञी मनुष्यों से आकर उत्पन्न होता है, अथवा अपर्याप्त से ? गौतम ! वह पर्याप्त संख्येय वर्षायुष्क संज्ञी मनुष्यों से आकर उत्पन्न होता है । भगवन् ! पर्याप्त संख्येय वर्षायुष्क संज्ञी मनुष्य, कितने

काल की स्थिति वाले असुरकुमारों में उत्पन्न होता है ? गौतम ! जघन्य दस हजार वर्ष और उत्कृष्ट सातिरेक सागरोपम काल की स्थिति । भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ? रत्नप्रभापृथ्वी में उत्पन्न होने वाले मनुष्यों के समान नौ गमक कहना । विशेष यह है कि इसका संवेध सातिरेक सागरोपम से कहना । 'हे भगवन् यह इसी प्रकार है

शतक-२४ – उद्देशक-३

सूत्र - ८४४

राजगृह नगर में गौतमस्वामी ने यावत् इस प्रकार पूछा–भगवन् ! नागकुमार कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं? वे नैरयिकों से यावत् उत्पन्न होते हैं, देवों से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! वे न तो नैरयिकों से और न देवों से आकर उत्पन्न होते हैं, वे तिर्यंचयोनिकों से या मनुष्यों से आकर उत्पन्न होते हैं ।

(भगवन् !) यदि वे (नागकुमार) तिर्यंचों से आते हैं, तो...इत्यादि पूर्ववत् प्रश्न । असुरकुमारों के अनुसार इनकी भी वक्तव्यता, यावत् असंज्ञी-पर्यन्त कहना । भगवन् ! यदि वे संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंचयोनिकों से आकर उत्पन्न होते हैं तो क्या वे संख्येय वर्षायुष्क संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंचों से आकर उत्पन्न होते हैं, या असंख्येय से ? दोनों से ।

भगवन् ! असंख्यात वर्ष की आयु वाला संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिक जीव, कितने काल की स्थिति वाले नागकुमारों में उत्पन्न होता है ? गौतम ! जघन्य दस हजार वर्ष की और उत्कृष्ट देशोन दो पल्योपम की स्थिति वाले। भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ? (गौतम !) असुरकुमारों में उत्पन्न होने वाले असंख्येय वर्षा-युष्क पंचेन्द्रिय-तिर्यंचों के समान यहाँ भी भवादेश तक गमक कहना चाहिए । काल की अपेक्षा से–जघन्य दस हजार वर्ष अधिक सातिरेक पूर्वकोटिकवर्ष और उत्कृष्ट देशोन पाँच पल्योपम; इतने काल तक यावत् गमनागमन करता है । यही जघन्यकाल की स्थिति वाले नागकुमारों में उत्पन्न हो, तो उसके भी कहनी चाहिए । विशेष यह है कि यहाँ नागकुमारों की स्थिति और संवेध जानना ।

उत्कृष्ट काल स्थितिवाले नागकुमारों में उत्पन्न हो, तो भी यही कहनी चाहिए । विशेष यह है कि उसकी स्थिति जघन्य देशोन दो पल्योपम की और उत्कृष्ट तीन पल्योपम की होती है । भवादेश तक शेष पूर्ववत् । काल की अपेक्षा से–जघन्य देशोन चार पल्योपम और उत्कृष्ट देशोन पाँच पल्योपम । यदि वह स्वयं जघन्य काल की स्थिति वाले नागकुमारों में उत्पन्न हुआ हो अथवा स्वयं उत्कृष्टकाल की स्थिति वाले नागकुमारों में उत्पन्न हुआ हो, तो उसके भी तीनों गमक, असुरकुमारों में उत्पन्न होने वाले तिर्यंचयोनिक के तीनों गमकों समान कहने । विशेष यह कि यहाँ नाग-कुमार की स्थिति और संवेध जानना । शेष सब वर्णन असुरकुमारोंमें उत्पन्न होनेवाले तिर्यंचयोनिक समान जानना ।

भगवन् ! यदि वे (नागकुमार) संख्यात वर्ष की आयुवाले संज्ञी पंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिकों से आकर उत्पन्न होते हैं, तो क्या वे पर्याप्त संख्येय वर्षायुष्क संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंचों से आकर उत्पन्न होते हैं या अपर्याप्त संख्येय वर्षायुष्क वाले से ? गौतम ! वे पर्याप्त संख्येय वर्षायुष्क संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंचों से आकर उत्पन्न होते हैं । भगवन् ! यदि पर्याप्त संख्येय वर्षायुष्क संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंच, जो नागकुमारों में उत्पन्न होने योग्य हो, तो वह कितने काल की स्थिति वाले नागकुमारोंमें उत्पन्न होता है ? गौतम ! वह जघन्य १०००० वर्ष और उत्कृष्ट देशोन दो पल्योपम की स्थितिवाले नागकुमारों में उत्पन्न होता है; इत्यादि जैसे असुरकुमारों के उत्पन्न होनेवाले संज्ञी-पंचेन्द्रिय तिर्यंच की वक्तव्यता कही है, वैसे यहाँ नौ ही गमकों में कहनी चाहिए । परन्तु विशेष यह कि यहाँ नागकुमारों की स्थिति और संवेध जानना ।

भगवन् ! यदि वह (नागकुमार) मनुष्यों से आकर उत्पन्न होते हैं, तो वे संज्ञी मनुष्यों से आकर उत्पन्न होते हैं, या असंज्ञी मनुष्यों से ? गौतम ! संज्ञी मनुष्यों से आकर उत्पन्न होते हैं, इत्यादि असुरकुमारों में उत्पन्न होने योग्य मनुष्यों की वक्तव्यता का समान जानीए । यावत्–भगवन् ! असंख्यात वर्ष की आयु वाला संज्ञी मनुष्य, कितने काल की स्थिति वाले नागकुमारों में उत्पन्न होता है ? गौतम ! जघन्य दस हजार वर्ष और उत्कृष्ट देशोन दो पल्योपम की स्थिति वाले में । इस प्रकार असंख्यात वर्ष की आयु वाले तिर्यंचों के नागकुमारों में उत्पन्न होने सम्बन्धी आदि के तीन गमक जानने चाहिए । परन्तु पहले और दूसरे गमक में शरीर की अवगाहना जघन्य सातिरेक पाँच सौ धनुष और उत्कृष्ट तीन गाऊ होती है । तीसरे गमक में अवगाहना जघन्य देशोन दो गाऊ और तीन गाऊ की होती है । शेष पूर्ववत्

यदि वह स्वयं (नागकुमार), जघन्य काल की स्थिति वाला हो, तो उसके तीनों गमकों में असुरकुमारों में उत्पन्न होने योग्य असंख्यात वर्ष की आयुष्य वाले संज्ञी मनुष्य के समान समझिए । यदि वह (नागकुमार) स्वयं उत्कृष्ट काल की स्थिति वाला हो, तो उसके सम्बन्ध में भी तीनों गमकों में असुरकुमारों में उत्पन्न होने योग्य उत्कृष्ट काल की स्थिति वाले असंख्यातवर्षीय संज्ञी मनुष्य के समान वक्तव्यता जाननी चाहिए । परन्तु विशेष यह है कि यहाँ नागकुमारों की स्थिति और संवेध जानना चाहिए । शेष पूर्ववत् ।

भगवन् ! यदि वे संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी मनुष्यों से आते हैं तो पर्याप्त या अपर्याप्त संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी मनुष्यों से आते हैं ? गौतम ! वे पर्याप्त संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी मनुष्यों से आते हैं । भगवन् ! पर्याप्त संख्यात वर्ष की आयु वाला संज्ञी मनुष्य नागकुमारों में उत्पन्न हो तो कितनी काल की स्थिति वालों में उत्पन्न होता है ? गौतम ! जघन्य दश हजार वर्ष और उत्कृष्ट देशोन दो पल्योपम की स्थिति के नागकुमारों में उत्पन्न होता है, इत्यादि असुरकुमारों में उत्पन्न होने वाले मनुष्य की वक्तव्यता के समान किन्तु स्थिति और संवेध नागकुमारों के समान जानना चाहिए । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-२४ – उद्देशक-४ से ११

सूत्र - ८४५

सुवर्णकुमारों से लेकर स्तनितकुमारों तक ये आठ उद्देशक भी नागकुमारों के समान कहने चाहिए । 'हे भगवन् ! वह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-२४ – उद्देशक-१२

सूत्र - ८४६

भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? नैरयिकों यावत् देवों से उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! वे नैरयिकों से नहीं, किन्तु तिर्यंचों, मनुष्यों या देवों से उत्पन्न होते हैं । यदि वे तिर्यंचयोनिकों से उत्पन्न होते हैं, तो क्या एकेन्द्रिय तिर्यंचयोनिकों से उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! प्रज्ञापनासूत्र के व्युत्क्रान्ति पद अनुसार यहाँ भी उपपात कहना । यावत्-भगवन् ! यदि वे बादर पृथ्वीकायिक एकेन्द्रिय तिर्यंचयोनिकों से उत्पन्न होते हैं तो पर्याप्त या अपर्याप्त बादर पृथ्वीकायिक से उत्पन्न होते हैं । गौतम ! दोनों से ।

भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीव, कितने काल की स्थिति वाले पृथ्वीकायिकों में उत्पन्न होता है ? गौतम ! जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट बाईस हजार वर्ष कि स्थिति वालों में । भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! वे प्रतिसमय निरन्तर असंख्यात उत्पन्न होते हैं । सेवार्त्तसंहनन वाले होते हैं । शरीर की अवगाहना जघन्य और उत्कृष्ट अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण होती है । संस्थान मसूर की दाल जैसा होता है । चार लेश्याएं होती हैं । मिथ्यादृष्टि ही होते हैं । अज्ञानी ही होते हैं । दो अज्ञान नियम से होते हैं । काययोगी ही होते हैं । साकार और अनाकार दोनों उपयोग होते हैं । चारों संज्ञाएं, चारों कषाय, एकमात्र स्पर्शेन्द्रिय होती है । प्रथम के तीन समुद्घात होते हैं, साता असाता दोनों वेदना होती है । नपुंसकदेवी ही होते हैं । उनकी स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट बाईस हजार वर्ष की होती है । अध्यवसाय प्रशस्त और अप्रशस्त, दोनों प्रकार के होते हैं । अनुबन्ध स्थिति के अनुसार होता है ।

भगवन् ! वह पृथ्वीकायिक मरकर पुनः पृथ्वीकायिक रूप में उत्पन्न हो तो इस प्रकार कितने काल तक सेवन करता है और कितने काल तक गमनागमन करता रहता है ? गौतम ! भव की अपेक्षा से-वह जघन्य दो भव एवं उत्कृष्ट असंख्यात भव ग्रहण करता है और काल की अपेक्षा से-वह जघन्य दो अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट असंख्यात काल । यदि वह जघन्य काल की स्थिति वाले पृथ्वीकायिक में उत्पन्न हो, तो जघन्य और उत्कृष्ट अन्त-र्मुहूर्त्त की स्थिति वाले पृथ्वीकायिकों में उत्पन्न होता है । इस प्रकार समग्र वक्तव्यता जानना । यदि वह उत्कृष्ट काल की स्थिति वाले पृथ्वीकायिकों में उत्पन्न हो, तो जघन्य और उत्कृष्ट बाईस हजार वर्ष की स्थिति वाले पृथ्वीकायिकों में उत्पन्न होता है । शेष सब कथन यावत् अनुबन्ध तक पूर्वोक्त प्रकार से जानना । विशेष यह है कि वे जघन्य एक, दो या तीन और उत्कृष्ट संख्यात या असंख्यात उत्पन्न होते हैं । भव की अपेक्षा से जघन्य दो भव और उत्कृष्ट आठ भव ग्रहण

करता है तथा काल की अपेक्षा से-जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त अधिक बाईस हजार वर्ष और उत्कृष्ट १७६००० वर्ष इतने काल तक गमनागमन करता है ।

यदि वह स्वयं जघन्य काल की स्थिति वाला हो और पृथ्वीकायिक में उत्पन्न हो तो उसके सम्बन्ध में प्रथम गमक समान कहना । किन्तु विशेष यह है कि उसमें लेश्याएं तीन होती हैं । स्थिति जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त्त की होती है । अध्यवसाय अप्रशस्त और अनुबन्ध स्थिति के समान होता है । यदि वह जघन्य काल की स्थिति वाले पृथ्वीकायिकों में उत्पन्न हो तो उसके सम्बन्ध में चतुर्थ गमक के अनुसार कहना । यदि वह उत्कृष्टकाल की स्थिति वाले पृथ्वीकायिक में उत्पन्न हो, तो यही वक्तव्यता । विशेष यह है कि वह जघन्य एक, दो या तीन और उत्कृष्ट संख्यात अथवा असंख्यात उत्पन्न होते हैं । यावत् भवादेश से-जघन्य दो भव और उत्कृष्ट आठ भव ग्रहण करता है। काल की अपेक्षा से-जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त अधिक बाईस हजार वर्ष और उत्कृष्ट चार अन्तर्मुहूर्त्त अधिक ८८ हजार वर्ष । यदि वह स्वयं उत्कृष्ट काल की स्थिति वाला हो और पृथ्वीकायिकों में उत्पन्न हो, तो उसके विषय में तृतीय गमक के समान कहना । विशेष यह है कि उसकी स्वयं की स्थिति जघन्य और उत्कृष्ट बाईस हजार वर्ष की है ।

यदि वह स्वयं जघन्य काल की स्थिति वाले पृथ्वीकायिकों में उत्पन्न हो तो जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त्त की स्थिति वाले पृथ्वीकायिकों में उत्पन्न होता है । यहाँ सातवें गमक की वक्तव्यता यावत् भवादेश तक कहनी चाहिए । काल की अपेक्षा से-जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त अधिक बाईस हजार वर्ष और उत्कृष्ट चार अन्तर्मुहूर्त्त अधिक ८८ हजार वर्ष । यदि वही उत्कृष्ट काल की स्थिति वाले पृथ्वीकायिकों में उत्पन्न हो तो जघन्य और उत्कृष्ट बाईस हजार वर्ष की स्थिति वाले पृथ्वीकायिकों में उत्पन्न होता है । यहाँ सप्तम गमक की समग्र वक्तव्यता भवादेश तक कहनी चाहिए । काल की अपेक्षा से-जघन्य ४४ हजार वर्ष और उत्कृष्ट एक लाख छिहत्तर हजार वर्ष । (भगवन् !) यदि वह अप्कायिक-एकेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिकों से आकर उत्पन्न होता है, तो क्या सूक्ष्म अप्कायिक० से आकर उत्पन्न होता है, या बादर अप्कायिक० से ? (गौतम !) पृथ्वीकायिक जीवों के समान यहाँ भी चार भेद कहना ।

भगवन् ! जो अप्कायिक जीव कितने काल की स्थिति वाले पृथ्वीकायिक जीवों में उत्पन्न होता है ? गौतम! वह जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त उत्कृष्ट बाईस हजार वर्ष की स्थिति वाले पृथ्वीकायिक जीवों में उत्पन्न होता है । इस प्रकार पृथ्वीकायिक के समान अप्कायिक के भी नौ गमक जानना चाहिए । विशेष यह है कि अप्कायिक का संस्थान स्तिबुक के आकार का होता है । स्थिति और अनुबन्ध जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट सात हजार वर्ष है । इसी प्रकार तीनों गमकों में जानना चाहिए । तीसरे, छठे, सातवें, आठवें और नौवें गमकों में संवेध-भव की अपेक्षा से-जघन्य दो भव और उत्कृष्ट असंख्यात भव होते हैं । तीसरे गमक में काल की अपेक्षा से-जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त अधिक बाईस हजार वर्ष और उत्कृष्ट एक लाख सोलह हजार वर्ष । छठे गमक में काल की अपेक्षा से-जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त अधिक बाईस हजार वर्ष और उत्कृष्ट चार अन्तर्मुहूर्त्त अधिक ८८ हजार वर्ष । सातवें गमक में काल की अपेक्षा से-जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त अधिक सात हजार वर्ष और उत्कृष्ट एक लाख सोलह हजार वर्ष तक गमनागमन करता है । आठवें गमक में काल की अपेक्षा से-जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त अधिक सात हजार वर्ष और उत्कृष्ट चार अन्त-र्मुहूर्त्त अधिक २८ हजार वर्ष तक । नौवें गमक में भवादेश से-जघन्य दो भव और उत्कृष्ट आठ भव ग्रहण करता है तथा काल की अपेक्षा से-जघन्य उनतीस हजार वर्ष और उत्कृष्ट एक लाख सोलह हजार वर्ष; इतने काल तक गमनागमन करता है । इस प्रकार नौ ही गमकों में अप्कायिक की स्थिति जानना ।

भगवन् ! यदि वह तेजस्कायिक से आकर उत्पन्न होता हो तो ? इत्यादि प्रश्न । तेजस्कायिकों के विषय में भी यही वक्तव्यता कहनी चाहिए । विशेष यह है कि नौ ही गमकों में तीन लेश्याएं होती हैं । तेजस्काय का संस्थान सूचीकलाप के समान होता है । इसकी स्थिति (तीन अहोरात्र की) जाननी चाहिए । तीसरे गमक में काल की अपेक्षा जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त अधिक बाईस हजार वर्ष और उत्कृष्ट बारह अहोरात्र अधिक ८८,००० वर्ष; इतने काल तक यावत् गमनागमन करता है । इसी प्रकार संवेध भी उपयोग रखकर कहना ।

(भगवन् !) यदि वे वायुकायिकों से आकर उत्पन्न हों तो ? वायुकायिकों के विषय में तेजस्कायिकों की तरह

नौ ही गमक कहने चाहिए । विशेष यह है कि वायुकाय का संस्थान पताका के आकार का होता है । संवेध हजारों वर्षों से कहना चाहिए । तीसरे गमक में काल की अपेक्षा से-जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त अधिक बाईस हजार वर्ष और उत्कृष्ट एक लाख वर्ष । इस प्रकार उपयोगपूर्वक संवेध कहना चाहिए । भगवन् ! यदि वे वनस्पतिकायिकों से आकर उत्पन्न होते हैं, तो ? अप्कायिकों के गमकों के समान वनस्पतिकायिकों के नौ गमक कहने । वनस्पति-कायिकों का संस्थान अनेक प्रकार का होता है । उनके शरीर की अवगाहना इस प्रकार कही गई है-प्रथम के तीन गमकों और अन्तिम तीन गमकों में जघन्य अंगुल के असंख्यातवे भाग की और उत्कृष्ट सातिरेक एक हजार योजन की होती है । बीच के तीन गमकों में अवगाहना पृथ्वीकायिकों के समान समझना । इसकी संवेध और स्थिति जान लेनी चाहिए । तृतीय गमक में काल की अपेक्षा से-जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त अधिक बाईस हजार वर्ष, उत्कृष्ट एक लाख अट्ठाईस हजार वर्ष । इस प्रकार उपयोगपूर्वक संवेध भी कहना ।

सूत्र - ८४७

भगवन् ! यदि वे द्वीन्द्रिय जीवों से आकर उत्पन्न हों तो क्या पर्याप्त द्वीन्द्रिय जीवों से आकर उत्पन्न होते हैं या अपर्याप्त द्वीन्द्रिय जीवों से ? गौतम ! वे पर्याप्त तथा अपर्याप्त द्वीन्द्रियों से भी आकर उत्पन्न होते हैं । भगवन् ! जो द्वीन्द्रिय जीव पृथ्वीकायिक जीवों में उत्पन्न होने योग्य हैं, वे कितने काल की स्थिति वाले पृथ्वीकायिकों में उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! वे जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट बाईस हजार वर्ष की स्थिति वालों में ।

भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! वे जघन्य एक, दो या तीन और उत्कृष्ट संख्यात या असंख्यात उत्पन्न होते हैं । सेवार्त्तसंहनन वाले होते हैं । अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवे भाग की और उत्कृष्ट बारह योजन की होती है । संस्थान हुण्डक होता है । लेश्याएं तीन और दृष्टियाँ दो-सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टि होती है । दो ज्ञान या दो अज्ञान अवश्य होते हैं । वे मनोयोगी नहीं होते, वचनयोगी और काययोगी होते हैं । दो उपयोग, चार संज्ञाएं और चार कषाय होते हैं । जिह्वेन्द्रिय और स्पर्शेन्द्रिय, ये दो इन्द्रियाँ होती हैं । तीन समुद्घात होते हैं । शेष पृथ्वीकायिकों के समान जाननी चाहिए । विशेष-उनकी स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट बारह वर्ष की होती है । अनुबन्ध भी इसी प्रकार होता है । भव की अपेक्षा से-वे जघन्य दो भव और उत्कृष्ट संख्यात भव ग्रहण करते हैं । काल की अपेक्षा से-जघन्य दो अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट संख्यात काल तक । यदि वह जघन्य काल की स्थिति वाले पृथ्वीकायिकों में उत्पन्न हो तो पूर्वोक्त सभी वक्तव्यता समझना । यदि वह, उत्कृष्टकाल की स्थिति वाले पृथ्वीकायिकों में उत्पन्न हो तो भी पूर्वोक्त वक्तव्यता कहना । विशेष यह है कि भव की अपेक्षा से-जघन्य दो भव और उत्कृष्ट आठ भव ग्रहण करता है । काल की अपेक्षा से-जघन्य अन्त-र्मुहूर्त्त अधिक बाईस हजार वर्ष और उत्कृष्ट ४८ वर्ष अधिक ८८,००० वर्ष तक ।

यदि वह (द्वीन्द्रिय) स्वयं जघन्य काल की स्थिति वाला हो और पृथ्वीकायिक जीवों में उत्पन्न हो, तो उसके भी तीनों गमकों में पूर्वोक्त वक्तव्यता कहनी चाहिए । परन्तु विशेष यहाँ सात भेद हैं । यथा-शरीर की अवगाहना पृथ्वीकायिकों के समान वह मिथ्यादृष्टि होता है, इसमें दो अज्ञान नियम से होते हैं, वह काययोगी होता है, उसकी जघन्य और उत्कृष्ट स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त की होती है, अध्यवसाय अप्रशस्त होते हैं और अनुबन्ध स्थिति के अनुसार होता है । दूसरे त्रिक के पहले के दो गमकों से संवेध भी इसी प्रकार समझना चाहिए । छठे गमक में भवादेश भी उसी प्रकार आठ भव जानने चाहिए । कालादेश-जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त अधिक २२,००० वर्ष और उत्कृष्ट चार अन्त-र्मुहूर्त्त अधिक ८८,००० वर्ष तक गमनागमन करता है । यदि वह, स्वयं उत्कृष्ट स्थिति वाला हो और पृथ्वीकायिकों में उत्पन्न हो तो उनके भी तीनों गमक औघिक गमकों के समान कहने चाहिए । विशेष यह है कि इन तीनों गमकों में स्थिति जघन्य और उत्कृष्ट बारह वर्ष की होती है । अनुबन्ध भी इसी प्रकार समझना । भव की अपेक्षा से-जघन्य दो भव और उत्कृष्ट आठ भव ग्रहण करता है । काल की अपेक्षा से-विचार करके संवेध कहना चाहिए, यावत् नौवें गमक में जघन्य बारह वर्ष अधिक २२,००० वर्ष और उत्कृष्ट ४८ वर्ष अधिक ८८,००० वर्ष, इतने काल तक गमनागमन करता है ।

यदि वह पृथ्वीकायिक त्रीन्द्रिय जीवों से आकर उत्पन्न हो, तो ? इत्यादि प्रश्न । यहाँ भी इसी प्रकार नौ गमक

कहना चाहिए । प्रथम के तीन गमकों में शरीर की अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवे भाग तथा उत्कृष्ट तीन गाऊ की होती है । तीन इन्द्रियाँ होती हैं । स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट ४९ अहोरात्र की होती है । तृतीय गमक में काल की अपेक्षा-जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त अधिक, २२,००० वर्ष और उत्कृष्ट १९६ अहोरात्र अधिक ८८,००० वर्ष, इतने काल तक गमनागमन करता है । बीच के तीन गमकों और अन्तिम तीन गमकों की वक्तव्यता भी पूर्ववत् जानना चाहिए । विशेष यह है कि स्थिति जघन्य और उत्कृष्ट ४९ रात्रि-दिवस की होती है । इनका संवेध उपयोगपूर्वक कहना

(भगवन् !) यदि वे पृथ्वीकायिक जीव चतुरिन्द्रिय जीवों से आकर उत्पन्न हों, तो ? इत्यादि प्रश्न । चतुरि-न्द्रिय जीवों के विषय में भी इसी प्रकार नौ गमक कहने चाहिए । विशेष यह है कि इन स्थानों में नानात्व कहना चाहिए-इनके शरीर की अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवे भाग और उत्कृष्ट चार गाऊ की होती है । स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट छह माह की होती है । अनुबन्ध भी स्थिति के अनुसार होता है । चार इन्द्रियाँ होती हैं । शेष पूर्ववत्, यावत् नौवें गमक में कालादेश से जघन्य छह मास अधिक २२,००० वर्ष और उत्कृष्ट चौबीस मास अधिक ८८,००० वर्ष; इतने काल तक गमनागमन करता है ।

(भगवन् !) यदि वे (पृथ्वीकायिक) पंचेन्द्रिय तिर्यंचयोनिक जीवों से आकर उत्पन्न होते हैं तो क्या वे संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिकों से आकर उत्पन्न होते हैं या असंज्ञी से ? गौतम ! वे संज्ञी पंचेन्द्रिय और असंज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिकों से भी उत्पन्न होते हैं । भगवन् ! यदि वे असंज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिकों से उत्पन्न होते हैं तो क्या वे जलचरों से उत्पन्न होते हैं, अथवा यावत् अपर्याप्तकों से उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! वे यावत् सभी के पर्याप्तकों से भी और अपर्याप्तकों से भी आते हैं । भगवन् ! असंज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिक जीव कितने काल की स्थिति वाले पृथ्वीकायिकों में उत्पन्न होता है ? गौतम ! वह जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट बाईस हजार वर्ष की स्थिति वाले पृथ्वीकायिकों में उत्पन्न होता है ।

भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! द्वीन्द्रिय के औघिक गमक अनुसार यहाँ कहनी चाहिए । परन्तु विशेष यह है कि इनके शरीर की अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट एक हजार योजन की है । पाँचों इन्द्रियाँ होती हैं । स्थिति और अनुबन्ध जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट पूर्वकोटि वर्ष का है । शेष पूर्वोक्तानुसार । भव की अपेक्षा से जघन्य दो भव और उत्कृष्ट आठ भव होते हैं । काल की अपेक्षा से जघन्य दो अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट ८८ हजार वर्ष अधिक चार पूर्वकोटि वर्ष । नौ ही गमकों में कायसंवेध-भव की अपेक्षा से जघन्य दो भव और उत्कृष्ट आठ भव होते हैं । काल की अपेक्षा से कायसंवेध उपयोगपूर्वक कहना । विशेष यह है कि तीनों गमकों में द्वीन्द्रिय के मध्य के तीनों गमकों के समान कहना । पीछले तीन गमकों का कथन प्रथम के तीन गमकों के समान समझना चाहिए । यह स्थिति और अनुबन्ध जघन्य तथा उत्कृष्ट पूर्वकोटि समझना । यावत्-नौवे गमक में जघन्य पूर्वकोटि-अधिक २२,००० वर्ष और उत्कृष्ट चार पूर्वकोटि-अधिक ८८,००० वर्ष ।

भगवन् ! यदि वे (पृथ्वीकायिक), संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंचयोनिकों से आकर उत्पन्न होते हैं, तो क्या वे संख्यातवर्ष की आयु वाले संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच से आकर उत्पन्न होते हैं या असंख्यातवर्ष से ? गौतम ! वे संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंचयोनिकों से आकर उत्पन्न होते हैं । असंख्यात से नहीं । यदि वे पृथ्वी-कायिक संख्यातवर्ष की आयु वाले संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंचों से उत्पन्न होते हैं, तो क्या जलचरों से आकर उत्पन्न होते हैं ? इत्यादि प्रश्न । समग्र वक्तव्यता असंज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिकों के समान जाननी चाहिए । यावत्-

भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ? रत्नप्रभा में उत्पन्न होने योग्य संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंचों के अनुसार कहनी चाहिए । विशेष यह है कि उनके शरीर की अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवे भाग और उत्कृष्ट हजार योजन की होती है । यावत् कालादेश से जघन्य दो अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट ८८ हजार वर्ष अधिक चार पूर्वकोटि इसी प्रकार नौ ही गमकों में संवेध भी असंज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंच की तरह कहना । प्रथम के तीन और मध्य के तीन गमकों में भी यही वक्तव्यता जाननी । परन्तु मध्य के तीन गमकों में नौ नानात्व हैं । यथा-शरीर की अवगाहना जघन्य और उत्कृष्ट अंगुल का असंख्यातवाँ भाग होती है । लेश्याएं तीन होती हैं । वे मिथ्यादृष्टि होते हैं । उनमें दो अज्ञान होते

हैं । काययोगी होते हैं । तीन समुद्घात होते हैं । स्थिति जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त्त होती है। अध्यवसाय अप्रशस्त होते हैं और अनुबन्ध भी स्थिति के अनुसार होता है । अन्तिम तीनों गमकों में प्रथम गमक के समान वक्तव्यता कहनी परन्तु विशेष यह है कि स्थिति और अनुबन्ध जघन्य और उत्कृष्ट पूर्वकोटि का होता है

सूत्र - ८४८

(भगवन् !) यदि वे (पृथ्वीकायिक) मनुष्यों से आकर उत्पन्न होते हैं, तो क्या वे संज्ञी मनुष्यों से आकर उत्पन्न होते हैं या असंज्ञी मनुष्यों से ? गौतम ! वे दोनों प्रकार के मनुष्यों से आकर उत्पन्न होते हैं । भगवन् ! असंज्ञी मनुष्य, कितने काल की स्थिति वाले पृथ्वीकायिकों में उत्पन्न होता है ? जघन्य काल की स्थिति वाले असंज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिक अनुसार है, यहाँ भी औघिक तीन गमक सम्पूर्ण कहने चाहिए । शेष गमक नहीं कहने चाहिए । यदि वे संज्ञी मनुष्यों से आकर उत्पन्न होते हैं, तो क्या संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी मनुष्यों से आकर उत्पन्न होते हैं या असंख्यात वर्ष की ? गौतम ! वे संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी मनुष्यों से आकर उत्पन्न होते हैं, असंख्यात से नहीं ।

भगवन् ! यदि वे संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी मनुष्यों से आकर उत्पन्न होते हैं तो क्या पर्याप्त संख्येय वर्षायुष्क संज्ञी मनुष्यों से आकर उत्पन्न होते हैं या अपर्याप्त से ? गौतम ! वे दोनों प्रकार के संख्येय वर्षायुष्क संज्ञी मनुष्यों से आकर उत्पन्न होते हैं । भगवन् ! संख्येय वर्षायुष्क पर्याप्त संज्ञी मनुष्य कितने काल की स्थिति वाले पृथ्वीकायिकों में उत्पन्न होता है ? गौतम ! जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट बाईस हजार वर्ष की । भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! रत्नप्रभा में उत्पन्न होने योग्य मनुष्य के समान कहनी चाहिए । विशेष यह है कि उसके शरीर की अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग की और उत्कृष्ट पाँच सौ धनुष की होती है; स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट पूर्वकोटि वर्ष की होती है । अनुबन्ध भी इसी प्रकार जानना । संवेध-जैसे संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंच का कहा है, वैसे ही यहाँ नौ ही गमकों में कहना चाहिए । बीच के तीन गमकों में संज्ञी पंचेन्द्रिय के मध्यम तीन गमकों समान कहना चाहिए । शेष पूर्ववत् । पीछले तीन गमकों का कथन इसी के प्रथम तीन औघिक गमकों के समान कहना चाहिए । विशेष यह है कि शरीर की अवगाहना जघन्य और उत्कृष्ट पाँच सौ धनुष की है; स्थिति और अनुबन्ध जघन्य और उत्कृष्ट पूर्वकोटि के होते हैं । शेष पूर्ववत् । विशेषता यह है कि पीछले तीन गमकों में संख्यात ही उत्पन्न होते हैं, असंख्यात नहीं ।

भगवन् ! यदि वे (पृथ्वीकायिक) देवों से आकर उत्पन्न होते हैं, तो क्या भवनवासी देवों से आकर उत्पन्न होते हैं, अथवा वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क या वैमानिक देवों से आकर ? गौतम ! वे भवनवासी यावत् वैमानिक देवों से भी आकर उत्पन्न होते हैं । भगवन् ! यदि वे भवनवासी देवों से आकर उत्पन्न होते हैं तो क्या वे असुरकुमार-भवनवासी अथवा यावत् स्तनितकुमार-भवनवासी देवों से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! वे असुरकुमार यावत् स्तनितकुमार-भवनवासी देवों से भी आकर उत्पन्न होते हैं ।

भगवन् ! असुरकुमार कितने काल की स्थिति वाले पृथ्वीकायिकों में उत्पन्न होता है ? गौतम ! जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट बाईस हजार वर्ष की । भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! जघन्य एक, दो या तीन और उत्कृष्ट संख्यात या असंख्यात उत्पन्न होते हैं । भगवन् ! उन जीवों के शरीर किस प्रकार के संहनन वाले हैं ? गौतम ! उनके शरीर छहों प्रकार के संहननों से रहित होते हैं ।

भगवन् ! उन जीवों के शरीर की अवगाहना कितनी बड़ी होती है ? गौतम ! दो प्रकार की है । यथा-भवधारणीय और उत्तरवैक्रिय । उनमें जो भवधारणीय अवगाहना है, वह जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग की और उत्कृष्ट सप्त रत्नी की है तथा उनमें जो उत्तरवैक्रिय अवगाहना है, वह जघन्य अंगुल के संख्यातवे भाग की और उत्कृष्ट एक लाख योजन की है । भगवन् ! उन जीवों के शरीर का संस्थान कौन-सा कहा गया है ? गौतम ! उनके शरीर दो प्रकार के हैं-भवधारणीय और उत्तरवैक्रिय । उनमें जो भवधारणीय शरीर हैं, वे समचतुरस्रसंस्थान वाले कहे गए हैं तथा जो उत्तरवैक्रिय शरीर हैं, वे अनेक प्रकार के संस्थान वाले कहे गए हैं । उनके चार लेश्याएं, तीन दृष्टियाँ नियमतः तीन ज्ञान, तीन अज्ञान भजना से, योग तीन, उपयोग दो, संज्ञाएं चार, कषाय चार, इन्द्रियाँ पाँच, समुद्घात पाँच और

वेदना दो प्रकार की होती है । वे स्त्रीवेदी और पुरुषवेदी होते हैं, स्थिति जघन्य दस हजार वर्ष की और उत्कृष्ट सातिरेक सागरोपम की होती है । अध्ययवसाय संख्यात प्रकार के प्रशस्त और अप्रशस्त दोनों प्रकार के होते हैं । अनुबन्ध स्थिति के अनुसार होता है । (संवेध) भवादेश से वह दो भव ग्रहण करता है । कालादेश से-जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त अधिक दस हजार वर्ष और उत्कृष्ट बाईस हजार वर्ष अधिक सातिरेक सागरोपम । इस प्रकार नौ ही गमक जानने चाहिए । विशेष यह है कि मध्यम और अन्तिम तीन-तीन गमकों में असुरकुमारों की स्थिति-विषयक विशेषता जान लेना । शेष औघिक वक्तव्यता और काय-संवेध जानना । संवेध में सर्वत्र दो भव जानना । इस प्रकार यावत् नौवें गमक में कालादेश से जघन्य बाईस हजार वर्ष साधिक सागरोपम काल तक गमनागमन करता है ।

भगवन् ! नागकुमार देव कितने काल की स्थिति वाले पृथ्वीकायिकों में उत्पन्न होता है ? इत्यादि प्रश्न। गौतम! यहाँ असुरकुमार देव की पूर्वोक्त समस्त वक्तव्यता यावत्-भवादेश तक कहनी चाहिए । विशेष यह है कि उसकी स्थिति जघन्य दस हजार वर्ष की और उत्कृष्ट देशोन दो पल्योपम की होती है । अनुबन्ध भी इसी प्रकार समझना चाहिए । (संवेध) कालोदेश से-जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त अधिक दस हजार वर्ष और उत्कृष्ट बाईस हजार वर्ष अधिक देशोन दो पल्योपम, इस प्रकार नौ ही गमक असुरकुमार के गमकों के समान जानना चाहिए । परन्तु विशेष यह है कि यहाँ स्थिति और कालादेश भिन्न जानना । इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमार पर्यन्त जानना चाहिए ।

भगवन् ! यदि वे (पृथ्वीकायिक जीव), वाणव्यन्तर देवों से आकर उत्पन्न होते हैं तो क्या पिशाच वाण-व्यन्तरों से अथवा यावत् गन्धर्व वाणव्यन्तरों से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! वे पिशाच वाणव्यन्तरों यावत् गन्धर्व वाणव्यन्तरों से भी आकर उत्पन्न होते हैं । भगवन् ! वाणव्यन्तर देव कितने काल की स्थितिवाले पृथ्वीकायिकोंमें उत्पन्न होता है ?इत्यादि प्रश्न। गौतम ! असुरकुमार के नौ गमकों सदृश कहना । परन्तु विशेष यह कि यहाँ स्थिति और कालादेश (भिन्न) जानना । स्थिति जघन्य दस हजार वर्ष की और उत्कृष्ट एक पल्योपम की होती है । शेष पूर्ववत् ।

भगवन् ! यदि वे (पृथ्वीकायिक) ज्योतिष्क देवों से आकर उत्पन्न होते हैं, तो क्या वे चन्द्रविमान-ज्योतिष्क देवों से अथवा यावत् ताराविमान-ज्योतिष्क देवों से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! वे चन्द्रविमान-ज्योतिष्क देवों यावत् ताराविमान-ज्योतिष्कदेवों से भी आकर उत्पन्न होते हैं । भगवन् ! ज्योतिष्क देव जो पृथ्वीकायिकों में उत्पन्न होने योग्य हैं, वे कितने काल की स्थिति वाले पृथ्वीकायिकों में उत्पन्न होते हैं ? (गौतम !) इनके विषय में उत्पत्ति-परिमाणादि की लब्धि असुरकुमारों के समान जानना चाहिए । विशेषता यह है कि इनके एकमात्र तेजोलेश्या होती है इनमें तीन ज्ञान और तीन अज्ञान नियम से होते हैं । स्थिति जघन्य पल्योपम के आठवें भाग की और उत्कृष्ट एक लाख वर्ष अधिक एक पल्योपम की होती है । अनुबन्ध भी इसी प्रकार जानना चाहिए । (संवेध) काल की अपेक्षा से जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त अधिक पल्योपम का आठवा भाग और उत्कृष्ट बाईस हजार वर्ष अधिक एक पल्योपम तथा एक लाख वर्ष, इतने काल तक गमनागमन करता है । इसी प्रकार शेष आठ गमक भी कहने चाहिए। विशेष यह है कि स्थिति और कालादेश (भिन्न) समझने चाहिए ।

भगवन् ! यदि वे, वैमानिक देवों से आकर उत्पन्न होते हैं, तो क्या वे कल्पोपपन्न वैमानिक देवों से आकर उत्पन्न होते हैं अथवा कल्पातीत से ? गौतम ! वे कल्पोपपन्न वैमानिक देवों से आकर उत्पन्न होते हैं, कल्पातीत से नहीं (भगवन् !) यदि वे कल्पोपपन्न वैमानिक देवों से आकर उत्पन्न होते हैं, तो क्या वे सौधर्म-कल्पोपपन्न वैमानिक देवों से आकर उत्पन्न होते हैं, अथवा यावत् अच्युत से ? गौतम ! वे सौधर्म-तथा ईशान-कल्पोपपन्न वैमानिक देवों से आकर उत्पन्न होते हैं, किन्तु सनत्कुमार-वैमानिकदेवों यावत् अच्युत-कल्पोपपन्न वैमानिक देवों से आकर उत्पन्न नहीं होते । भगवन् ! सौधर्मकल्पोपपन्न वैमानिक देव, कितने काल की स्थिति वाले पृथ्वीकायिक में उत्पन्न होता है ? गौतम ! ज्योतिष्क देवों के गमक समान कहना । विशेषता यह है कि इनकी स्थिति और अनुबन्ध जघन्य एक पल्योपम और उत्कृष्ट दो सागरोपम है । (संवेध) कालादेश से जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त अधिक एक पल्योपम और उत्कृष्ट बाईस हजार वर्ष अधिक दो सागरोपम । इसी प्रकार शेष आठ गमक जानना । विशेष यह है कि यहाँ स्थिति और कालादेश (भिन्न) है ।

भगवन् ! ईशानदेव, कितने काल की स्थिति वाले पृथ्वीकायिकों में उसकी उत्पत्ति होती है ? (गौतम !) इस

सम्बन्ध में पूर्वोक्त नौ ही गमक इसी प्रकार कहना चाहिए । विशेष यह है कि स्थिति और अनुबन्ध जघन्य सातिरेक एक पल्योपम और उत्कृष्ट सातिरेक दो सागरोपम होता है । शेष पूर्ववत् । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है।'

शतक-२४ – उद्देशक-१३

सूत्र - ८४९

भगवन् ! अप्कायिक जीव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? पृथ्वीकायिक-उद्देशक अनुसार कहना । यावत् भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीव, कितने काल की स्थिति वाले अप्कायिक में उत्पन्न होता है ? गौतम ! जघन्य अन्त-र्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट सात हजार वर्ष की । इस प्रकार यह समग्र उद्देशक पृथ्वीकायिक के समान है । विशेष यह है कि इसकी स्थिति और संवेध जान लेना । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-२४ – उद्देशक-१४

सूत्र - ८५०

भगवन् ! तेजस्कायिक जीव, कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? पृथ्वीकायिक-उद्देशक की तरह कहना । विशेष यह है कि इसकी स्थिति और संवेध (भिन्न) समझना । तेजस्कायिक जीव देवों से आकर उत्पन्न नहीं होते । भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

शतक-२४ – उद्देशक-१५

सूत्र - ८५१

भगवन् ! वायुकायिक जीव, कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? इत्यादि प्रश्न । तेजस्कायिक-उद्देशक के समान हैं। स्थिति और संवेध तेजस्कायिक से भिन्न समझना चाहिए ।

शतक-२४ – उद्देशक-१६

सूत्र - ८५२

भगवन् ! वनस्पतिकायिक जीव, कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? इत्यादि प्रश्न । यह उद्देशक पृथ्वीकायिक-उद्देशक के समान है । विशेष यह है कि जब वनस्पतिकायिक जीव, वनस्पतिकायिक जीवों में उत्पन्न होते हैं, तब पहले, दूसरे, चौथे और पाँचवें गमक में परिमाण यह है कि प्रतिसमय निरन्तर वे अनन्त जीव उत्पन्न होते हैं । भव की अपेक्षा से-वे जघन्य दो भव और उत्कृष्ट अनन्त भव ग्रहण करते हैं, तथा काल की अपेक्षा से-जघन्य दो अन्त-र्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट अनन्तकाल । शेष पाँच गमकों में उसी प्रकार आठ भव जानने चाहिए । विशेष यह है कि स्थिति और संवेध पहले से भिन्न जानना चाहिए ।

शतक-२४ – उद्देशक-१७

सूत्र - ८५३

भगवन् ! द्वीन्द्रिय जीव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं; इत्यादि, यावत्-हे भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीव, कितने काल की स्थिति वाले द्वीन्द्रियों में उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! यहाँ पूर्वोक्त पृथ्वीकायिक की वक्तव्यता के समान, यावत् कालावेश से-जघन्य दो अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट संख्यात भव । पृथ्वीकायिक के साथ द्वीन्द्रिय का संवेध अनुसार पहला, दूसरा, चौथा और पाँचवा इन चार गमकों में संवेध जानना चाहिए । शेष पाँच गमकों में उसी प्रकार आठ भव होते हैं । पंचेन्द्रिय-तिर्यंचों और मनुष्यों के साथ पूर्वोक्त आठ भव जानना चाहिए । देवों से च्यवकर आया हुआ जीव द्वीन्द्रिय में उत्पन्न नहीं होता । यहाँ स्थिति और संवेध पहले से भिन्न है । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है।'

शतक-२४ – उद्देशक-१८

सूत्र - ८५४

भगवन् ! त्रीन्द्रिय जीव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? इत्यादि प्रश्न । द्वीन्द्रिय-उद्देशक के समान त्रीन्द्रियों के विषय में भी कहना चाहिए । विशेष यह है कि स्थिति और संवेध (भिन्न) समझना चाहिए । तेजस्कायिकों के साथ तीसरे गमक में उत्कृष्ट २०८ रात्रि-दिवस का और द्वीन्द्रियों के साथ तीसरे गमक में उत्कृष्ट १९६ रात्रि-दिवस अधिक

४८ वर्ष होता है । त्रीन्द्रियों के साथ तीसरे गमक में उत्कृष्ट ३९२ रात्रि-दिवस होता है । इस प्रकार यावत्-संज्ञी मनुष्य तक सर्वत्र जानना चाहिए । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-२४ – उद्देशक-१९

सूत्र - ८५५

भगवन् ! चतुरिन्द्रिय जीव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? इत्यादि प्रश्न । त्रीन्द्रिय-उद्देशक चतुरिन्द्रिय जीवों के विषयमें समझना चाहिए । विशेष-स्थिति और संवेध अनुसार (भिन्न) जानना । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-२४ – उद्देशक-२०

सूत्र - ८५६

भगवन् ! पंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिक जीव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? क्या वे नैरयिकों से यावत् देवों से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! वे नैरयिकों से यावत् देवों से भी आकर उत्पन्न होते हैं । भगवन् ! यदि वे नैरयिकों से आकर उत्पन्न होते हैं, तो क्या वे रत्नप्रभापृथ्वी के नैरयिकों से आकर उत्पन्न होते हैं, अथवा यावत् वे अधःसप्तमपृथ्वी के नैरयिकों से ? गौतम ! वे रत्नप्रभापृथ्वी के नैरयिकों से, यावत् अधःसप्तमपृथ्वी के नैरयिकों से आकर उत्पन्न होते हैं । भगवन् ! रत्नप्रभापृथ्वी का नैरयिक, कितने काल की स्थिति वाले पंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिकों में उत्पन्न होता है ? गौतम ! जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट पूर्वकोटि वर्ष की स्थिति ।

भगवन् ! वे जीव, एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ? असुरकुमारों की वक्तव्यता समान कहनी चाहिए । विशेष यह है कि (रत्नप्रभा नैरयिकों के) संहनन में अनिष्ट और अकान्त पुद्गल यावत् परिणमन करते हैं । उनकी अवगाहना दो प्रकार की कही गई है-जो भवधारणीय अवगाहना है, वह जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग की और उत्कृष्ट सात धनुष, तीन रत्नी और छह अंगुल की होती है । उत्तरवैक्रिय अवगाहना जघन्य अंगुल के संख्यातवें भाग की और उत्कृष्ट पन्द्रह धनुष ढ़ाई हाथ की होती है । भगवन् ! उन जीवों के शरीर किस संस्थान वाले होते हैं ? गौतम ! उनके शरीर दो प्रकार के कहे गए हैं-भवधारणीय और उत्तरवैक्रिय । दोनों केवल हुण्डक-संस्थान वाले होते हैं । उनमें एकमात्र कापोतलेश्या होती है । चार समुद्घात होते हैं । वे केवल नपुंसकवेदी होते हैं । स्थिति जघन्य १०००० वर्ष और उत्कृष्ट एक सागरोपम है । अनुबन्ध भी इसी प्रकार होता है । भव अपेक्षा से-जघन्य दो भव, उत्कृष्ठ आठ भव तथा काल अपेक्षा से-जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त अधिक दस हजार वर्ष और उत्कृष्ट चार पूर्वकोटि अधिक चार सागरोपम ।

यदि वह (रत्नप्रभा-नैरयिक) जघन्य काल की स्थिति वाले पंचेन्द्रिय-तिर्यंचों में उत्पन्न हो, तो जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त्त की स्थिति वाले पंचेन्द्रिय-तिर्यंच में उत्पन्न होता है । शेष पूर्ववत् । विशेष यह है कि काल की अपेक्षा से पूर्वोक्त अनुसार और उत्कृष्ट चार अन्तर्मुहूर्त्त अधिक चार सागरोपम । इसी प्रकार शेष सात गमक, नैरयिक-उद्देशक के संज्ञी पंचेन्द्रियों अनुसार जानना चाहिए । बीच के तीन अन्तिम तीन गमकों में स्थिति की विशेषता है । शेष पूर्ववत् सर्वत्र स्थिति और संवेध उपयोगपूर्वक जान लेना ।

भगवन् ! शर्कराप्रभापृथ्वी का नैरयिक कितने काल की स्थिति वाले पंचेन्द्रिय-तिर्यंचों में उत्पन्न होता है ? रत्नप्रभा के नौ गमक अनुसार नौ गमक कहना । विशेष यह है कि शरीर की अवगाहना, अवगाहना-संस्थान-पद के अनुसार जानना । उनमें तीन ज्ञान और तीन अज्ञान नियम से होते हैं । स्थिति और अनुबन्ध पहले कहा गया है । इस प्रकार नौ ही गमक उपयोग-पूर्वक कहना । इसी प्रकार यावत् छठी नरकपृथ्वी तक जानना । विशेष यह कि अवगाहना, लेश्या, स्थिति, अनुबन्ध और संवेध (भिन्न-भिन्न) जानना ।

भगवन् ! अधःसप्तमीपृथ्वी का नैरयिक, कितने काल की स्थिति वाले पंचेन्द्रिय-तिर्यंचों में उत्पन्न होता है? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! पूर्वोक्त सूत्र के अनुसार इसके भी नौ गमक कहने चाहिए । विशेष यह है कि यहाँ अवगाहना, लेश्या, स्थिति और अनुबन्ध भिन्न-भिन्न जानने चाहिए । संवेध-भव की अपेक्षा से-जघन्य दो भव उत्कृष्ट छह भव, तथा काल की अपेक्षा से-जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त अधिक बाईस सागरोपम और उत्कृष्ट तीन पूर्वकोटि अधिक ६६ सागरोपम । प्रथम के छह गमकों में जघन्य दो भव और उत्कृष्ट छह भव तथा अन्तिम तीन गमकों में जघन्य दो भव

और उत्कृष्ट चार भव जानना । नौ ही गमकों में प्रथम गमक के समान वक्तव्यता कहना । परन्तु दूसरे गमक में स्थिति की विशेषता है तथा काल की अपेक्षा से-जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त अधिक बाईस सागरोपम और उत्कृष्ट तीन अन्तर्मुहूर्त्त अधिक ६६ सागरोपम । तीसरे गमक में जघन्य पूर्वकोटि अधिक बाईस सागरोपम और उत्कृष्ट तीन पूर्वकोटि अधिक ६६ सागरोपम, चौथे गमक में जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त अधिक बाईस सागरोपम और उत्कृष्ट तीन पूर्वकोटि अधिक छासठ सागरोपम, पाँचवे गमक में जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त अधिक २२ सागरोपम और उत्कृष्ट तीन अन्तर्मुहूर्त्त अधिक ६६ सागरोपम, छठे गमक में जघन्य पूर्वकोटि अधिक बाईस सागरोपम और उत्कृष्ट तीन पूर्वकोटि अधिक ६६ सागरोपम तथा सातवें गमक में जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त अधिक ३३ सागरोपम और उत्कृष्ट दो पूर्वकोटि अधिक ३६ सागरोपम, आठवें गमक में जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त अधिक ३३ सागरोपम और उत्कृष्ट दो अन्त-र्मुहूर्त्त अधिक ६६ सागरोपम, तथा नौवे गमक में जघन्य पूर्वकोटि अधिक ३३ सागरोपम और उत्कृष्ट दो पूर्वकोटि-अधिक ६६ सागरोपम गमनागमन करता है ।

यदि वह तिर्यंचयोनिकों से आकर उत्पन्न होता है तो क्या एकेन्द्रिय-तिर्यंच योनिकों से आकर उत्पन्न होता है ? पृथ्वीकायिक-उद्देशक अनुसार उपपात समझना । यावत्-भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीव, कितने काल की स्थिति वाले पंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिकों में उत्पन्न होता है । गौतम ! जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट पूर्वकोटि की ।

भगवन् ! वे पृथ्वीकायिक जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ? यहाँ परिमाण से लेकर अनुबन्ध तक, अपने-अपने स्वस्थान में जो वक्तव्यता कही है, तदनुसार ही पंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिकों में भी कहनी चाहिए । विशेष यह है कि नौ ही गमकों में परिमाण-जघन्य एक, दो या तीन और उत्कृष्ट संख्यात या असंख्यात उत्पन्न होते हैं, ऐसा जानना । (संवेध-) नौ ही गमकों में भव की अपेक्षा से जघन्य दो भव और उत्कृष्ट आठ भव ग्रहण करते हैं । शेष पूर्ववत् । कालादेश से-दोनों पक्षों की स्थिति को जोड़ने से (काल) संवेध जानना चाहिए । भगवन् ! यदि वह अप्कायिक जीवों से आकर उत्पन्न हो तो ? पूर्ववत् अप्काय के सम्बन्ध में कहना । इसी प्रकार यावत् चतुरिन्द्रिय तक उपपात कहना; परन्तु सर्वत्र अपनी-अपनी वक्तव्यता कहना । नौ ही गमकों में भव की अपेक्षा से जघन्य दो भव और उत्कृष्ट आठ भव तथा कालादेश से दोनों की स्थिति को जोड़ना । पृथ्वीकायिकों में उत्पन्न होने वाले की वक्तव्यता सभी जीवों के सम्बन्ध में कहनी चाहिए । सर्वत्र स्थिति और संवेध यथायोग्य भिन्न-भिन्न जानना ।

भगवन् ! यदि (वे पंचेन्द्रिय-तिर्यंच), पंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिकों से आकर उत्पन्न हैं, तो क्या वे संज्ञीपंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिकों से आकर उत्पन्न होते हैं या असंज्ञी से ? गौतम ! वे संज्ञीपंचेन्द्रिय-तिर्यंचों तथा असंज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंचों से भी आकर उत्पन्न होते हैं, इत्यादि, पृथ्वीकायिकों में उत्पन्न होने वाले तिर्यंचों के भेद अनुसार कहने चाहिए । यावत् -भगवन् ! असंज्ञीपंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिक कितने काल की स्थिति वाले पंचेन्द्रिय-तिर्यंचों में उत्पन्न होता है ? गौतम ! जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट पल्योपम के असंख्यातवें भाग की ।

भगवन् ! वे (असंज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंच) जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ? पृथ्वीकायिक में उत्पन्न होने वाले असंज्ञी तिर्यंच-पंचेन्द्रियों अनुसार भवादेश तक कहनी चाहिए । कालादेश से-जघन्य दो अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट पूर्वकोटि-पृथक्त्व अधिक पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग । द्वीतिय गमक में भी यही वक्तव्यता कहनी चाहिए । परन्तु विशेष यह है कि कालादेश से-जघन्य दो अन्तर्मुहूर्त्त, और उत्कृष्ट चार अन्तर्मुहूर्त्त अधिक चार पूर्वकोटि, इतने काल तक यावत् गमनागमन करता है । यदि वह उत्कृष्ट काल की स्थिति वाले संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिकों में उत्पन्न हो, तो जघन्य और उत्कृष्ट पल्योपम के असंख्यातवें भाग की स्थिति वाले संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंच में उत्पन्न होता है ।

भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ? रत्नप्रभापृथ्वी में उत्पन्न होने वाले असंज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंच अनुसार यहाँ कालादेश तक कहनी चाहिए । परन्तु परिमाण जघन्य एक, दो या तीन और उत्कृष्ट संख्यात उत्पन्न होते हैं । यदि वह स्वयं जघन्यकाल की स्थिति वाला हो, तो जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट पूर्वकोटि वर्ष की स्थिति वाले संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच में उत्पन्न होता है । भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ? इत्यादि प्रश्न । पृथ्वीकायिकों में उत्पन्न होने वाले जघन्य स्थिति के असंज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंचों के बीच के तीन गमकों अनुसार यहाँ भी तीनों ही गमकों में अनुबन्ध तब सब कहना चाहिए । भवादेव से-जघन्य दो भव और उत्कृष्ट आठ भव ग्रहण

करता है, तथा कालादेश से-जघन्य दो अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट चार अन्तर्मुहूर्त्त अधिक चार पूर्वकोटिवर्ष।

यदि वह (असंज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंच) जघन्य काल की स्थिति वाले संज्ञीपंचेन्द्रिय तिर्यंचों में उत्पन्न हो, तो उसके विषय में भी यही वक्तव्यता कहनी चाहिए । विशेष यह है कि कालादेश से जघन्य दो अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट आठ अन्तर्मुहूर्त्त । यदि वह उत्कृष्ट काल की स्थिति वाले संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिकों में उत्पन्न हो तो वह जघन्य और उत्कृष्ट पूर्वकोटिवर्ष की स्थिति वाले पंचेन्द्रिय-तिर्यंच में उत्पन्न होता है । विशेष यह कि कालादेश (भिन्न) समझना चाहिए । यदि वह स्वयं उत्कृष्ट काल की स्थिति वाला हो, तो प्रथम गमक के अनुसार उसकी वक्तव्यता जाननी चाहिए । विशेष यह है कि उसकी स्थिति जघन्य और उत्कृष्ट पूर्वकोटिवर्ष की होती है । शेष पूर्ववत् । काल की अपेक्षा से-जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त अधिक पूर्वकोटि और उत्कृष्ट पूर्वकोटि-पृथक्त्व अधिक पल्योपम के असंख्यातवें भाग ।

यदि वह (उत्कृष्ट काल स्थितिवाला असंज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंच) जघन्य काल की स्थितिवाले पंचेन्द्रिय तिर्यंच में उत्पन्न हो, तो भी यही सातवें गमक की वक्तव्यता कहनी चाहिए । विशेष यह है कि कालादेश से-जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त अधिक पूर्वकोटि और उत्कृष्ट चार अन्तर्मुहूर्त्त अधिक चार पूर्वकोटि । यदि वही, उत्कृष्ट काल की स्थिति वाले संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंचों में उत्पन्न हो, तो जघन्य और उत्कृष्ट पल्योपम के असंख्यातवें भाग की स्थिति वाले संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंच में उत्पन्न होता है, इत्यादि समग्र वक्तव्यता, रत्नप्रभा में उत्पन्न होने वाले असंज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंच सम्बन्धी नवम गमक की वक्तव्यता के अनुसार कालादेश तक कहनी चाहिए । किन्तु परिमाण इसके तीसरे गमक अनुसार कहना ।

यदि वे (संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंच), संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिकों से आकर उत्पन्न होते हैं, तो क्या वे संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंचों से आकर उत्पन्न होते हैं या असंख्यात वर्ष से ? गौतम ! वे संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंचों से आकर उत्पन्न होते हैं । असंख्यात से नहीं । भगवन् ! यदि वे संख्येय वर्षा-युष्क संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंचों से आकर उत्पन्न होते हैं, तो क्या वे पर्याप्त संख्येय वर्षायुष्क संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंचों से आकर उत्पन्न होते हैं या अपर्याप्त से ? गौतम ! वे दोनों से आकर उत्पन्न होते हैं । भगवन् ! यदि संख्यात वर्ष की आयु वाला संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिक कितने काल की स्थिति वाले संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंचों में उत्पन्न होता है ? गौतम ! जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट तीन पल्योपम की स्थिति वाले ।

भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ? इत्यादि प्रश्न । (गौतम !) रत्नप्रभापृथ्वी में उत्पन्न होने वाले इस संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंच के प्रथम गमक के समान सब वक्तव्यता कहनी चाहिए । परन्तु इसकी अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट १००० योजन की है । शेष कथन भवादेश तक पूर्ववत् जानना । काल की अपेक्षा-जघन्य दो अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट पूर्वकोटि-पृथक्त्व अधिक तीन पल्योपम, यावत् इतने काल गमनागमन करता है । यदि वह जीव, जघन्य काल की स्थिति वाले संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंचों में उत्पन्न हो, तो वही पूर्वोक्त वक्तव्यता कहनी चाहिए । विशेष कालादेश से-जघन्य दो अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट चार अन्तर्मुहूर्त्त अधिक चार पूर्वकोटि ।

यदि वह उत्कृष्ट काल की स्थिति वाले संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंचों में उत्पन्न हो, तो जघन्य और उत्कृष्ट तीन पल्योपम की स्थिति वाले संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंचों में उत्पन्न होता है, इत्यादि पूर्ववत् परिमाण में विशेष यह है कि वह जघन्य एक, दो या तीन और उत्कृष्ट संख्यात उत्पन्न होते हैं । अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग की और उत्कृष्ट एक हजार योजन की होती है । शेष पूर्ववत् यावत् अनुबन्ध तक जानना । भवादेश से-दो भव और कालादेश से-जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त अधिक तीन पल्योपम और उत्कृष्ट पूर्वकोटि-अधिक तीन पल्योपम । यदि वह, स्वयं जघन्य काल की स्थिति वाला हो और उत्पन्न हो, तो वह जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट पूर्वकोटि-वर्ष की स्थिति वाले संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंचयोनिकों में उत्पन्न होता है । इस विषय में पृथ्वीकायिकों में उत्पन्न होने वाले इसी संज्ञी पंचेन्द्रिय के अनुसार मध्य के तीन गमक तथा पंचेन्द्रिय-तिर्यंच में उत्पन्न होने वाले असंज्ञी पंचेन्द्रिय के बीच के तीन गमकों में जो संवेध कहा है, तदनुसार कहना चाहिए । यदि वह स्वयं उत्कृष्ट काल की स्थिति वाला हो, तो उसके विषय में प्रथम गमक के समान कहना । परन्तु विशेष यह है कि स्थिति और अनुबन्ध जघन्य और उत्कृष्ट पूर्वकोटिवर्ष कहना । कालादेश से-जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त अधिक पूर्वकोटि और उत्कृष्ट पूर्वकोटिपृथक्त्व अधिक तीन पल्योपम ।

यदि वही (उत्कृष्ट स्थिति वाला संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंच) जघन्य काल की स्थिति वाले संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंचों में

उत्पन्न हो, तो उसके विषय में भी यही वक्तव्यता कहनी चाहिए । विशेष यह है कि कालादेश से-जघन्य अन्त-र्मुहूर्त्त अधिक पूर्वकोटि और उत्कृष्ट चार अन्तर्मुहूर्त्त अधिक चार पूर्वकोटि यावत् गति-आगति करता रहता है । यदि वह उत्कृष्ट काल की स्थिति वाले संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिकों में उत्पन्न हो तो वह जघन्य और उत्कृष्ट तीन पल्योपम की स्थिति वाले संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंचों में उत्पन्न होता है । शेष पूर्ववत् । विशेष यह है कि परिमाण और अवगाहना तीसरे गमक अनुसार । भावादेश से-दो भव और कालादेश से-जघन्य और उत्कृष्ट पूर्वकोटि-अधिक तीन पल्योपम, यावत् गति-आगति करता रहता है ।

भगवन् ! यदि संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंच, मनुष्यों से आकर उत्पन्न होते हैं तो क्या संज्ञी मनुष्यों से आकर उत्पन्न होते हैं या असंज्ञी मनुष्यों से ? गौतम ! वे-दोनों प्रकार के मनुष्यों से आकर उत्पन्न होते हैं । भगवन् ! असंज्ञी मनुष्य, कितने काल की स्थिति वाले संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच में उत्पन्न होता है ? गौतम ! वह जघन्य अन्त-र्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट पूर्वकोटि की स्थिति वाले संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंचों में उत्पन्न होता है । पृथ्वीकायिकों में उत्पन्न होने वाले असंज्ञी मनुष्य की प्रथम तीन गमकों अनुसार यहाँ भी कहना चाहिए । असंज्ञी-पंचेन्द्रिय के मध्यम तीन गमकों के संवेध अनुसार यहाँ भी कहना चाहिए ।

भगवन् ! यदि वह (संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच) संज्ञी मनुष्यों से आकर उत्पन्न होता है तो, क्या वह संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी मनुष्यों से या असंख्यात वर्ष की आयु वाले ? गौतम ! वह संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी मनुष्यों से आकर उत्पन्न होता है । असंख्यात वर्ष वाले नहीं । भगवन् ! यदि वह संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी मनुष्यों से आकर उत्पन्न होता है, तो क्या वह पर्याप्तक संज्ञी मनुष्यों से या अपर्याप्तक संज्ञी मनुष्यों से ? गौतम ! वह दोनों प्रकार के संज्ञी मनुष्यों से आकर उत्पन्न होता है । भगवन् ! संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी मनुष्य, कितने काल की स्थिति वाले संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंचों में उत्पन्न होता है ? गौतम ! वह जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट तीन पल्योपम की स्थिति वाले संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंचों में उत्पन्न होता है ।

भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ? इत्यादि प्रश्न । (गौतम !) पृथ्वीकायिकों में उत्पन्न होने वाले इसी संज्ञी मनुष्य की प्रथम गमक में कही हुई वक्तव्यता-भवादेश तक कहना । कालादेश से-जघन्य दो अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट पूर्वकोटि-पृथक्त्व अधिक तीन पल्योपम । यदि वह जघन्यकाल की स्थिति वाले संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिकों में उत्पन्न हो, तो उसके लिए यही वक्तव्यता कहना । परन्तु कालादेश से-जघन्य दो अन्त-र्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट चार अन्तर्मुहूर्त्त अधिक चार पूर्वकोटि वर्ष, यावत् गमनागमन करता है ।

यदि वही उत्कृष्ट काल की स्थिति वाले संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंचों में उत्पन्न हो, तो वह जघन्य और उत्कृष्ट तीन पल्योपम की स्थिति वाले संज्ञी-पंचेन्द्रिय-तिर्यंचों में उत्पन्न होता है । विशेष यह है कि उसकी अवगाहना जघन्य अंगुल-पृथक्त्व और उत्कृष्ट पाँच सौ धनुष की होती है । स्थिति जघन्य मासपृथक्त्व और उत्कृष्ट पूर्वकोटि की होती है इसी प्रकार अनुबन्ध भी जान लेना । भवादेश से-जघन्य दो भव तथा कालादेश से-जघन्य मास-पृथक्त्व अधिक तीन पल्योपम और उत्कृष्ट पूर्वकोटि अधिक तीन पल्योपम । यदि वह स्वयं जघन्यकाल की स्थिति वाला हो और संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंचों में उत्पन्न हो, तो संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिक में उत्पन्न होने वाले पंचेन्द्रिय-तिर्यंच की बीच के तीन गमकों अनुसार इसके भी बीच के तीन गमकों अनुसार इसके भी बीच के तीन गमकों भवादेश तक कहना । विशेषता परिमाण के विषय में यह है कि वे उत्कृष्ट संख्यात उत्पन्न होते हैं, यदि वह स्वयं उत्कृष्ट काल की स्थिति वाला हो और संज्ञी पंचेन्द्रियतिर्यंचों में उत्पन्न हो, तो प्रथम गमक की वक्तव्यता । विशेष-शरीर की अवगाहना जघन्य और उत्कृष्ट पाँच सौ धनुष की होती है । स्थिति और अनुबन्ध जघन्य और उत्कृष्ट पूर्वकोटिवर्ष का है । शेष पूर्ववत् भवादेश तक । कालादेश से-जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त अधिक पूर्वकोटि वर्ष और उत्कृष्ट पूर्वकोटि-पृथक्त्व अधिक तीन पल्योपम ।

यदि वह जघन्यकाल की स्थिति वाले संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंच में उत्पन्न हो तो भी पूर्ववत् । विशेष कालादेश से जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त अधिक पूर्वकोटि वर्ष और उत्कृष्ट चार अन्तर्मुहूर्त्त अधिक चार पूर्वकोटि गमनागमन करता है। यदि उत्कृष्ट काल की स्थिति वाले संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंचों में उत्पन्न हो तो जघन्य और उत्कृष्ट तीन पल्योपम की स्थिति वाले

संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंचों में उत्पन्न होता है । यहाँ पूर्वोक्त सप्तम गमक की वक्तव्यता कहनी चाहिए । भवादेश से-जघन्य दो भव ग्रहण करता है तथा कालादेश से-जघन्य पूर्वकोटि अधिक तीन पल्योपम और उत्कृष्ट भी पूर्वकोटि अधिक तीन पल्योपम । यदि देवों से आकर वे उत्पन्न होते हैं, तो क्या वे भवनवासी देवों से यावत् वैमानिक देवों से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! वे भवनवासी देवों से, यावत् वैमानिक देवों से आकर उत्पन्न होते हैं ।

(भगवन् !) यदि वे (संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंच) भवनवासी देवों से आकर उत्पन्न होते हैं, तो क्या वे असुरकुमार अथवा यावत् स्तनितकुमार भवनवासी देवों से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! वे असुरकुमार यावत् स्तनितकुमार भवनवासी देवों से भी आकर उत्पन्न होते हैं । भगवन् ! असुरकुमार, कितने काल की स्थिति वाले पंचेन्द्रिय तिर्यंचों में उत्पन्न होता है ? गौतम ! जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट पूर्वकोटि की स्थिति वाले में । उसके नौ ही गमकों में पृथ्वीकायिकों में उत्पन्न होने वाले असुरकुमारों अनुसार कहनी चाहिए । इसी प्रकार ईशान देवलोक पर्यन्त । भवादेश से-सर्वत्र उत्कृष्टतः आठ भव और जघन्यतः दो भव ग्रहण करता है । सर्वत्र स्थिति और संवेध भिन्न भिन्न समझना चाहिए । भगवन् ! नागकुमार कितने काल की स्थिति वाले संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंचों में उत्पन्न होता है ? गौतम ! पूर्ववत् विशेष यह कि स्थिति और संवेध भिन्न जानना । इसी प्रकार स्तनितकुमार तक जानना ।

भगवन् ! यदि वे वाणव्यन्तर देवों से आकर उत्पन्न होते हैं, तो क्या वे पिशाच वाणव्यन्तर देवों से आकर उत्पन्न होते हैं ? पूर्ववत् समझना चाहिए, यावत्-भगवन् ! वाणव्यन्तर देव कितने काल की स्थितिवाले पंचेन्द्रिय-तिर्यंचों में उत्पन्न होता है ?

यदि वह (संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंच) ज्योतिष्क देवों से आकर उत्पन्न होता है, तो ? इत्यादि प्रश्न । उसका उपपात पूर्वोक्त कथनानुसार यावत्-भगवन् ! ज्योतिष्क देव कितने काल की स्थिति वाले पंचेन्द्रिय-तिर्यंचों में उत्पन्न होता है ? गौतम ! पृथ्वीकायिक-उद्देशक अनुसार कहनी चाहिए । नौ ही गमकों में भवादेश से आठ भव जानना; यावत् कालादेश से जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त अधिक पल्योपम का आठवाँ भाग और उत्कृष्ट चार पूर्वकोटि और चार लाख वर्ष अधिक चार पल्योपम; यावत् गमनागमन करता है । इसी प्रकार नौ ही गमकों के विषय में जानना । किन्तु यहाँ स्थिति और संवेध भिन्न जानना ।

यदि वे वैमानिक देवों से आकर उत्पन्न होते हैं तो क्या वे कल्पोपपन्न-वैमानिक देवों से आकर उत्पन्न होते हैं, या कल्पातीत से ? गौतम ! वे कल्पोपपन्न-वैमानिक देवों से आकर उत्पन्न होते हैं, कल्पातीत से नहीं । भगवन् ! यदि वे कल्पोपपन्न-देवों से आकर उत्पन्न होते हैं तो इत्यादि प्रश्न । गौतम ! वे यावत् सहस्रार-कल्पोपपन्न-वैमानिक देवों से आकर उत्पन्न होते हैं, किन्तु आनत यावत् अच्युत-कल्पोपपन्न-से उत्पन्न नहीं होते ।

भगवन् ! सौधर्म देव कितने काल की स्थिति वाले संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंचों में उत्पन्न होता है ? गौतम ! वह जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट पूर्वकोटि की स्थिति वाले में उत्पन्न होता है । शेष सब नौ ही गमकों पृथ्वी-कायिक उद्देशक अनुसार जानना । विशेष यह कि नौ ही गमकों में-भवादेश से जघन्य दो भव और उत्कृष्ट आठ भव होते हैं । स्थिति और कालादेश भी भिन्न-भिन्न समझना चाहिए । इसी प्रकार ईशान देव के विषय में भी जानना। इसी क्रम से-सहस्रारकल्प पर्यन्त के देवों का-उपपात कहना । अवगाहना अवगाहना-संस्थानपद के अनुसार जानना । लेश्या-सनत्कुमार, माहेन्द्र और ब्रह्मलोक में एक पद्मलेश्या तथा लान्तक, महाशुक्र और सहस्रार में एक शुक्ललेश्या होती है केवल पुरुषवेदी होते हैं । स्थितिपद के अनुसार आयु और अनुबन्ध जानना । शेष सब ईशानदेव के समान । कायसंवेध भिन्न-भिन्न जानना चाहिए । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-२४ – उद्देशक-२१

सूत्र - ८५७

भगवन् ! मनुष्य कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? नैरयिकों से आकर यावत् देवों से आकर होते हैं ? गौतम! नैरयिकों से यावत् देवों से भी आकर उत्पन्न होते हैं । इस प्रकार यहाँ 'पंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिक-उद्देशक' अनुसार, यावत्-तमःप्रभापृथ्वी के नैरयिकों से भी आकर उत्पन्न होते हैं, किन्तु अधःसप्तमपृथ्वी के नैरयिकों से आकर उत्पन्न

नहीं होते, तक उपपात का कथन करना । भगवन् ! रत्नप्रभापृथ्वी का नैरयिक कितने काल की स्थिति वाले मनुष्यों में उत्पन्न होता है ? गौतम ! वह जघन्य मासपृथक्त्व और उत्कृष्ट पूर्वकोटिवर्ष की स्थिति वालों में, शेष वक्तव्यता पंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिक में उत्पन्न होने वाले रत्नप्रभा के नैरयिक के समान जानना । परिमाण में विशेष यह है कि वे जघन्य एक, दो या तीन, अथवा उत्कृष्ट संख्यात उत्पन्न होते हैं, संवेध मासपृथक्त्व के साथ संवेध करना ।

रत्नप्रभा समान शर्कराप्रभा की भी वक्तव्यता कहनी चाहिए । विशेष यह है कि जघन्य वर्षपृथक्त्व की तथा उत्कृष्ट पूर्वकोटिवर्ष की स्थिति वाले मनुष्यों में उत्पन्न होता है । अवगाहना, लेश्या, ज्ञान, स्थिति, अनुबंध और संवेध का नानात्व तिर्यंचयोनिक-उद्देशक अनुसार जानना । इस प्रकार तमःप्रभापृथ्वी के नैरयिक तक जानना चाहिए । भगवन् ! यदि वे (मनुष्य), तिर्यंचयोनिकों से आकर उत्पन्न होते हैं तो क्या वे एकेन्द्रिय, या यावत् पंचेन्द्रिय तिर्यंचयोनिकों से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! वे एकेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिकों से आकर उत्पन्न होते हैं, इत्यादि वक्तव्यता पंचेन्द्रिय-तिर्यंच-उद्देशक अनुसार जाननी चाहिए । विशेष यह कि इस विषय में तेजस्काय और वायुकाय का निषेध करना चाहिए । शेष पूर्ववत् । यावत्-भगवन् ! जो पृथ्वीकायिक, कितने काल की स्थिति वाले मनुष्यों में उत्पन्न होता है ? गौतम ! वह जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट पूर्वकोटिवर्ष की स्थिति वाले में उत्पन्न होता है ।

भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ? इत्यादि प्रश्न । पंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिकों में उत्पन्न होने वाले पृथ्वीकायिक अनुसार मनुष्यों में उत्पन्न होने वाले पृथ्वीकायिक की वक्तव्यता नौ गमकों में कहनी चाहिए। विशेष यह कि तीसरे, छठे और नौंवे गमक में परिमाण जघन्य एक, दो या तीन और उत्कृष्ट संख्यात उत्पन्न होते हैं । जब स्वयं (पृथ्वीकायिक) जघन्यकाल की स्थिति वाला होता है, तब मध्य के तीन गमकों में से प्रथम गमक में अध्यवसाय प्रशस्त भी होते हैं और अप्रशस्त भी । द्वीतिय गमक में अप्रशस्त और तृतीय गमक में प्रशस्त अध्यवसाय होते हैं । शेष पूर्ववत् । यदि वे अप्कायिकों से आकर उत्पन्न हो तो ? (पूर्वोक्त वक्तव्यता कहनी चाहिए) इसी प्रकार वनस्पतिकायिकों के लिए भी (पूर्वोक्त वक्तव्यता जाननी चाहिए) । इसी प्रकार चतुरिन्द्रिय-पर्यन्त जानना । असंज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिक, संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिक, असंज्ञी मनुष्य और संज्ञी मनुष्य, इन सभी के विषय में पंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिक उद्देशक अनुसार कहना चाहिए । विशेषता यह कि परिमाण और अध्यवसायों की भिन्नता पृथ्वीकायिक के इसी उद्देशक में कहे अनुसार समझनी चाहिए । शेष पूर्ववत् ।

भगवन् ! यदि वे (मनुष्य) देवों से आकर उत्पन्न होते हैं, तो भवनवासी देवों से आकर उत्पन्न होते हैं, यावत् वैमानिक देवों से आकर ? गौतम ! वे भवनवासी यावत् वैमानिक देवों से भी आकर उत्पन्न होते हैं । भगवन् ! यदि वे, भवनवासी देवों से आकर उत्पन्न होते हैं, तो क्या वे असुरकुमार-भवनवासी देवों से आकर उत्पन्न होते हैं, अथवा यावत् स्तनितकुमार देवों से उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! वे असुरकुमार यावत् स्तनितकुमार भवनवासी देवों से आकर उत्पन्न होते हैं । भगवन् ! असुरकुमार भवनवासी देव कितने काल की स्थिति वाले मनुष्यों में उत्पन्न होता है? गौतम ! वह जघन्य मासपृथक्त्व और उत्कृष्ट पूर्वकोटि की स्थितिवाले मनुष्यों में उत्पन्न होता है । पंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिक उद्देशक अनुसार यहाँ भी कहनी चाहिए । विशेष यह है कि जिस प्रकार वहाँ जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त की स्थिति वाले तिर्यंच में उत्पन्न होने का कहा है, उसी प्रकार यहाँ मासपृथक्त्व की स्थितिवाले मनुष्यों में उत्पन्न होने का कथन करना चाहिए । इसके परिमाण में जघन्य एक, दो, तीन और उत्कृष्ट संख्यात उत्पन्न होते हैं, शेष सब पूर्वकथितानुसार जानना चाहिए । इसी प्रकार ईशान देव तक वक्तव्यता कहनी चाहिए तथा ये विशेषताएं भी जाननी चाहिए । जैसे पंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिक उद्देशक अनुसार सनत्कुमार से लेकर सहस्रार तक के देव के सम्बन्ध में कहना चाहिए । विशेष यह कि परिमाण-जघन्य एक, दो या तीन और उत्कृष्ट संख्यात उत्पन्न होते हैं । उनकी उत्पत्ति जघन्य वर्षपृथक्त्व और उत्कृष्ट पूर्वकोटि वर्ष की स्थिति वाले मनुष्यों में होती है । संवेध-(जघन्य) वर्ष-पृथक्त्व (उत्कृष्ट) पूर्वकोटि वर्ष से करना चाहिए

सनत्कुमार में स्वयं की उत्कृष्ट स्थिति को चार गुणा करने पर अठ्ठाईस सागरोपम होता है । माहेन्द्र में कुछ अधिक अठ्ठाईस सागरोपम होता है । ब्रह्मलोक में ४० सागरोपम, लान्तक में छप्पन सागरोपम, महाशुक्र में अड़सठ सागरोपम तथा सहस्रार में बहत्तर सागरोपम है । यह उत्कृष्ट स्थिति कही गई है । जघन्य स्थिति को भी चार गुणी

करनी चाहिए । भगवन् ! आनतदेव कितने काल की स्थिति वाले मनुष्यों में उत्पन्न होता है ? गौतम ! जघन्य वर्ष-पृथक्त्व की और उत्कृष्ट पूर्वकोटिवर्ष की ।

भगवन् ! वे (मनुष्य) एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ? सहस्रार देवों अनुसार कहना । परन्तु इनकी अवगाहना, स्थिति और अनुबन्ध के विषय में भिन्नता जानना । भव की अपेक्षा से-जघन्य दो भव और उत्कृष्ट छह भव ग्रहण करते हैं तथा काल की अपेक्षा से-जघन्य वर्षपृथक्त्व अधिक अठारह सागरोपम और उत्कृष्ट तीन पूर्वकोटि अधिक सत्तावन सागरोपम । इसी प्रकार नौ ही गमकों में जानना । विशेष यह है कि इनकी स्थिति, अनुबन्ध और संवेध भिन्न-भिन्न जानना । इसी प्रकार अच्युतदेव तक जानना । विशेष यह है कि इनकी स्थिति, अनुबन्ध और संवेध, भिन्न-भिन्न जानने । प्राणतदेव की स्थिति को तीन गुणी करने पर साठ सागरोपम, आरणदेव की स्थति ६३ सागरोपम और अच्युतदेव की स्थिति छासठ ६६ सागरोपम की हो जाती है ।

भगवन् ! यदि वे मनुष्य कल्पातीत-वैमानिक देवों से आकर उत्पन्न होते हैं तो क्या ग्रैवेयक-कल्पातीत देवों से आकर उत्पन्न होते हैं, अथवा अनुत्तरौपपातिक देवों से ? गौतम ! दोनों प्रकार के कल्पातीत देवों से । यदि वे ग्रैवेयक-कल्पातीत देवों से आकर उत्पन्न होते हैं, तो क्या वे अधस्तन-अधस्तन ग्रैवेयक-कल्पातीत देवों से आकर उत्पन्न होते हैं, अथवा यावत् उपरितन-उपरितन ग्रैवेयक से ? गौतम ! वे अधस्तन-अधस्तन यावत् उपरितन-उपरितन ग्रैवेयक कल्पातीत देवों से भी आकर उत्पन्न होते हैं । भगवन् ! ग्रैवेयक देव कितने काल की स्थिति वाले मनुष्यों में उत्पन्न होता है ? गौतम ! वह जघन्य वर्षपृथक्त्व की और उत्कृष्ट पूर्वकोटिवर्ष की स्थिति वाले मनुष्यों में उत्पन्न होता है । शेष आनतदेव के समान जानना । विशेष यह है कि हे गौतम ! उसके एकमात्र भवधारणीय शरीर होता है । अवगाहना-जघन्य अंगुल के असंख्यातवे भाग की और उत्कृष्ट दो रत्नी की होती है । केवल भवधारणीय शरीर समचतुरस्रसंस्थान से युक्त कहा गया है । पाँच समुद्घात पाए जाते हैं । यथा-वेदना-समुद्घात यावत् तैजस-समुद्घात । किन्तु उन्होंने वैक्रिय-समुद्घात और तैजस-समुद्घात कभी किए नहीं, करते भी नहीं और करेंगे भी नहीं । स्थिति और अनुबन्ध जघन्य बाईस सागरोपम और उत्कृष्ट इकतीस सागरोपम होता है । कालादेश से-जघन्य वर्षपृथक्त्व-अधिक बाईस सागरोपम और उत्कृष्ट तीन पूर्वकोटि-अधिक ९३ सागरोपम । शेष आठों गमकों में भी इसी प्रकार जानना । परन्तु स्थिति और संवेध भिन्न समझना ।

भगवन् ! यदि वे (मनुष्य), अनुत्तरौपपातिक कल्पातीत-वैमानिकों से आकार उत्पन्न होते हैं, तो क्या वे विजय यावत् सर्वार्थसिद्ध वैमानिक देवों से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! वे विजय यावत् सर्वार्थसिद्ध अनुत्तर विमानवासी देवों से आकर उत्पन्न होते हैं । भगवन् ! विजय, वैजयन्त, जयन्त और अपराजित देव कितने काल की स्थिति वाले मनुष्यों में उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! ग्रैवेयक देवों के अनुसार कहना । अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवे भाग और उत्कृष्ट एक रत्नी । सम्यग्दृष्टि होते हैं, ज्ञानी होते हैं, नियम से तीन ज्ञान होते हैं, यथा-आभिनिबोधिकज्ञान, श्रुतज्ञान और अवधिज्ञान । स्थिति जघन्य इकतीस सागरोपम की और उत्कृष्ट ३३ सागरोपम की होती है । भवादेश से-वे जघन्य दो भव और उत्कृष्ट चार भव करते हैं । कालादेश से-जघन्य वर्षपृथक्त्व अधिक इकतीस सागरोपम और उत्कृष्ट दो पूर्वकोटि अधिक छियासठ सागरोपम । इसी प्रकार शेष आठ गमक कहना । विशेष यह कि इनके स्थिति, अनुबन्ध और संवेध भिन्न-भिन्न जानना ।

भगवन् ! सर्वार्थसिद्ध देव कितने काल स्थितिवाले मनुष्योंमें उत्पन्न होते हैं? (गौतम !) विजयादि देव-सम्बन्धी वक्तव्यता कहना । इनकी स्थिति अजघन्य-अनुत्कृष्ट ३३ सागरोपम है । इसी प्रकार अनुबन्ध भी जानना । भवादेश से-दो भव तथा कालादेश से-जघन्य वर्षपृथक्त्व अधिक ३३ सागरोपम और उत्कृष्ट भी । [प्रथम गमक] यदि सर्वार्थ सिद्ध अनुत्तरौपपातिक देव जघन्य काल स्थितिवाले मनुष्योंमें उत्पन्न हो तो उसके विषय में यही वक्तव्यता । काला-देश से जघन्य और उत्कृष्ट वर्षपृथक्त्व-अधिक तैंतीस सागरोपम । यदि वह उत्कृष्टकाल की स्थिति वाले मनुष्यों में उत्पन्न हों तो, उसके सम्बन्ध में यही वक्तव्यता । विशेष यह है कि कालादेश से-जघन्य और उत्कृष्ट पूर्वकोटि-अधिक तैंतीस सागरोपम । यहाँ तीन हीं गमक कहना। शेष छह गमक नहीं कहे जाते । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-२४ – उद्देशक-२२

सूत्र - ८५८

भगवन् ! वाणव्यन्तर देव कहाँ से उत्पन्न होते हैं ? क्या वे नैरयिकों से आकर उत्पन्न होते हैं ? या तिर्यंच-योनिकों से ? (गौतम !) नागकुमार-उद्देशक अनुसार असंज्ञी तक कहना चाहिए । भगवन् ! अंख्यात वर्ष की आयुष्य वाला संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंचयोनिक कितने काल की स्थिति वाले वाणव्यन्तरों में उत्पन्न होता है ? गौतम ! जघन्य दस हजार वर्ष की स्थिति वाले और उत्कृष्ट एक पल्योपम की स्थिति वालों में । शेष नागकुमार-उद्देशक अनुसार जानना, यावत् कालादेश से जघन्य दस हजार वर्ष सातिरेक पूर्वकोटि और उत्कृष्ट चार पल्योपम तक गमनागमन करता है । यदि वह जघन्य काल की स्थिति वाले वाणव्यन्तर में उत्पन्न होता है, तो नागकुमार के दूसरे गमक में कही हुई वक्तव्यता जानना ।

यदि वह उत्कृष्टकाल की स्थिति वाले वाणव्यन्तरों में उत्पन्न हो, तो जघन्य और उत्कृष्ट पल्योपम की स्थिति वाले वाणव्यन्तरों में उत्पन्न होता है, इत्यादि पूर्ववत् । स्थिति जघन्य दो पल्योपम और उत्कृष्ट तीन पल्योपम की जाननी चाहिए । संवेध-जघन्य दो पल्योपम और उत्कृष्ट चार पल्योपम तक गमनागमन करता है । मध्य के तीन गमक नागकुमार के तीन मध्य गमकों के समान कहने चाहिए । अन्तिम तीन गमक भी नागकुमार-उद्देशक अनुसार कहने चाहिए । विशेष यह कि स्थिति और संवेध भिन्न-भिन्न जानना चाहिए । संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंचों की वक्तव्यता भी उसी प्रकार जाननी चाहिए । विशेष यह कि स्थिति और अनुबन्ध भिन्न है तथा संवेध, दोनों की स्थिति को मिलाकर कहना ।

यदि वे (वाणव्यन्तर देव), मनुष्यों से आकर उत्पन्न होते हैं, तो उनकी वक्तव्यता नागकुमार-उद्देशक अनुसार असंख्यात वर्ष की आयु वाले मनुष्यों के समान कहनी चाहिए । विशेष यह है कि तीसरे गमक में स्थिति जघन्य एक पल्योपम की और उत्कृष्ट तीन पल्योपम की जाननी चाहिए । अवगाहना जघन्य एक गाऊ की और उत्कृष्ट तीन गाऊ की होती है । शेष पूर्ववत् । इनका संवेध इसी उद्देशक में जैसे असंख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच अनुसार कहना चाहिए । जिस प्रकार नागकुमार-उद्देशक में कहा गया है, उसी प्रकार संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी मनुष्यों की वक्तव्यता कहनी चाहिए । परन्तु वाणव्यन्तर देवों की स्थिति और संवेध उससे भिन्न जानना । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-२४ – उद्देशक-२३

सूत्र - ८५९

भगवन् ! ज्योतिष्क देव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? क्या वे नैरयिकों से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम! तिर्यंचों और मनुष्यों से आकर उत्पन्न होते हैं, यावत्-वे संज्ञी-पंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिकों से आकर उत्पन्न होते हैं, असंज्ञी पंचेन्द्रिय से नहीं । भगवन् ! यदि वे संज्ञी-पंचेन्द्रिय तिर्यंचों से आकर उत्पन्न होते हैं, तो क्या वे संख्यातवर्ष की आयु वाले संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंचों से आकर उत्पन्न होते हैं, अथवा असंख्यात-वर्ष से ? गौतम ! वे संख्यातवर्ष की और असंख्यातवर्ष की आयु वाले से उत्पन्न होते हैं ।

भगवन् ! असंख्यात वर्ष की आयु वाला संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिक, कितने काल की स्थिति वाले ज्योतिष्क देवों में उत्पन्न होता है ? गौतम ! जघन्य पल्योपम के आठवें भाग की और उत्कृष्ट एक लाख वर्ष अधिक एक पल्योपम की । शेष असुरकुमार-उद्देशक के अनुसार जानना । विशेष यह है कि उसकी स्थिति जघन्य पल्योपम के आठवें भाग और उत्कृष्ट तीन पल्योपम की होती है । अनुबन्ध भी इसी प्रकार होता है । विशेष यह है कि काल की अपेक्षा से जघन्य दो आठवें भाग और उत्कृष्ट एक लाख वर्ष अधिक चार पल्योपम । यदि वह, जघन्य काल की स्थिति वाले ज्योतिष्क देवों में उत्पन्न हो, तो जघन्य और उत्कृष्ट पल्योपम के आठवे भाग की स्थिति वाले ज्योतिष्कों में उत्पन्न होता है, इत्यादि कहना चाहिए । विशेष यह कि कालादेश (भिन्न) जानना चाहिए । यदि वह उत्कृष्ट काल की स्थिति वाले ज्योतिष्क देवों में उत्पन्न हो, तो यही कहना चाहिए । विशेष यह है कि स्थिति जघन्य एक लाख वर्ष

अधिक एक पल्योपम की और उत्कृष्ट तीन पल्योपम की होती है । इसी प्रकार अनुबन्ध भी समझना, कालादेश से-जघन्य दो लाख वर्ष अधिक दो पल्योपम और उत्कृष्ट एक लाख वर्ष अधिक चार पल्योपम।

यदि वह (संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंच) स्वयं जघन्यकाल की स्थिति वाला हो और ज्योतिष्क देवों में उत्पन्न हो, तो जघन्य और उत्कृष्ट पल्योपम के आठवे भाग की स्थिति वाले ज्योतिष्कों में उत्पन्न होता है । भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! इस विषय में पूर्वोक्त वक्तव्यता जानना । विशेष यह कि अवगाहना जघन्य धनुषपृथक्त्व और उत्कृष्ट सातिरेक अठारह सौ धनुष की होती है । स्थिति जघन्य और उत्कृष्ट पल्योपम के आठवें भाग की होती है । अनुबन्ध भी इसी प्रकार समझना । कालादेश से-जघन्य और उत्कृष्ट पल्योपम के दो आठवें भाग तक । जघन्यकाल की स्थिति वाले के लिए यह एक ही गमक होता है । यदि वह स्वयं उत्कृष्ट काल की स्थिति वाला हो और ज्योतिष्कों में उत्पन्न हो, तो औघिक गमक के समान वक्तव्यता जानना । विशेष यह कि स्थिति जघन्य और उत्कृष्ट तीन पल्योपम की । अनुबन्ध भी इसी प्रकार जानना । इसी प्रकार अन्तिम तीन गमक जानने चाहिए । विशेष यह कि स्थिति और संवेध (भिन्न) समझना ।

भगवन् ! यदि वह (ज्योतिष्क देव) संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंच से आकर उत्पन्न हो तो ? यहाँ असुरकुमारों में उत्पन्न होने वाले संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंचों के समान नौ ही गमक जानने चाहिए । विशेष यह कि ज्योतिष्क की स्थिति और संवेध भिन्न जानना चाहिए । यदि वे मनुष्यों से आकर उत्पन्न हों तो? (गौतम !) पूर्वोक्त संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंच के समान जानना चाहिए । पूर्ववत् मनुष्यों के भेदों का उल्लेख करना चाहिए । भगवन् ! असंख्यात वर्ष की आयु वाला संज्ञी मनुष्य कितने काल की स्थिति वाले ज्योतिष्क देवों में उत्पन्न होता है ? (गौतम !) ज्योतिष्कों में उत्पन्न होने वाले असंख्येय वर्षायुष्क संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंच के सात गमक अनुसार मनुष्य के विषय में भी समझना । प्रथम के तीन गमकों में अवगाहना की विशेषता है। जघन्य सातिरेक नौ सौ धनुष और उत्कृष्ट तीन गाऊ की होती है । मध्य के तीन गमक में जघन्य और उत्कृष्ट सातिरेक नौ सौ धनुष होती है तथा अन्तिम तीन गमकों में जघन्य और उत्कृष्ट तीन गाऊ होती है । शेष संवेध तक पूर्ववत् जानना चाहिए । यदि वह संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी मनुष्य से आकर उत्पन्न होता है, तो ? असुर-कुमारों में उत्पन्न होने वाले संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी मनुष्यों के गमकों के समान यहाँ नौ गमक कहने चाहिए । किन्तु ज्योतिष्क देवों की स्थिति और संवेध (भिन्न) जानना । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-२४ – उद्देशक-२४

सूत्र - ८६०

भगवन् ! सौधर्मदेव, किस गति से आकर उत्पन्न होते हैं ? क्या वे नैरयिकों से यावत् देवों से आकर उत्पन्न होते हैं ? ज्योतिष्क-उद्देशक के अनुसार भेद जानना चाहिए । भगवन् ! असंख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिक कितने काल की स्थिति वाले सौधर्मदेवों में उत्पन्न होता है ? गौतम ! जघन्य पल्योपम की और उत्कृष्ट तीन पल्योपम की स्थिति वालों में । भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ? ज्योतिष्क देवों में उत्पन्न होने वाले असंख्येय वर्षायुष्क संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंचों अनुसार कहना । विशेषता यह है कि वे सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टि होते हैं, वे ज्ञानी भी होते हैं, अज्ञानी भी । उसमें दो ज्ञान या अज्ञान नियम से होते हैं । उनकी स्थिति जघन्य दो पल्योपम की और उत्कृष्ट तीन पल्योपम की होती है । अनुबन्ध भी इसी प्रकार जानना । कालादेश से-जघन्य दो पल्योपम और उत्कृष्ट छह पल्योपम ।

यदि वह जघन्यकाल की स्थिति वाले सौधर्म देवों में उत्पन्न हों, तो उसके सम्बन्ध में भी यही वक्तव्यता है । विशेष यह है कि कालादेश से-जघन्य दो पल्योपम और उत्कृष्ट चार पल्योपम । यदि वह उत्कृष्ट काल की स्थिति वाले सौधर्म देवों में उत्पन्न हो तो वह जघन्य और उत्कृष्ट तीन पल्योपम की स्थिति वाले में उत्पन्न होता है, विशेष यह कि स्थिति जघन्य और उत्कृष्ट तीन पल्योपम । कालादेश से-जघन्य और उत्कृष्ट छह पल्योपम । यदि वह स्वयं जघन्यकाल की स्थिति वाला हो और सौधर्म देवों में उत्पन्न हो, जघन्य और उत्कृष्ट एक पल्योपम की स्थिति वाले

सौधर्म देवों में उत्पन्न होता है, इत्यादि पूर्वोक्त कथनानुसार । विशेष इतना कि अवगाहना जघन्य धनुषपृथक्त्व और उत्कृष्ट दो गाऊ । स्थिति जघन्य और उत्कृष्ट पल्योपम की । कालादेश से जघन्य और उत्कृष्ट दो पल्योपम ।

यदि वह (असंख्येय संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंच) स्वयं उत्कृष्ट काल की स्थिति वाला हो और सौधर्म देवों में उत्पन्न हो, तो उसके अन्तिम तीन गमकों का कथन प्रथम के तीन गमकों के समान जानना चाहिए । विशेष यह है कि स्थिति और कालादेश (भिन्न) जानना चाहिए । यदि वह सौधर्म देव, संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंचों से आकर उत्पन्न हो तो ? असुरकुमारों में उत्पन्न होने वाले संख्येय वर्षायुष्क संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंच के समान ही इसके नौ ही गमक जानना । स्थिति और संवेध (भिन्न) समझना । जब वह स्वयं जघन्यकाल की स्थिति वाला हो तो तीनों गमकों में सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टि होता है, इसमें दो ज्ञान या दो अज्ञान नियम से होते हैं । यदि वह मनुष्यों से आकर उत्पन्न हो तो ? ज्योतिष्क देवों में उत्पन्न होने वाले मनुष्यों की वक्तव्यता के समान कहना ।

भगवन् ! असंख्यात वर्ष की आयु वाला संज्ञी मनुष्य कितने काल की स्थिति वाले सौधर्मकल्प के देवों में उत्पन्न होता है ? सौधर्मकल्प में उत्पन्न होने वाले असंख्येय वर्षायुष्क संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिक के समान सातों ही गमक जानने चाहिए । विशेष यह है कि प्रथम के दो गमकों में अवगाहना जघन्य एक गाऊ और उत्कृष्ट तीन गाऊ होती है । तीसरे गमक में जघन्य और उत्कृष्ट तीन गाऊ, चौथे गमक में जघन्य और उत्कृष्ट एक गाऊ और अन्तिम तीन गमकों में जघन्य और उत्कृष्ट तीन गाऊ की अवगाहना होती है । शेष पूर्ववत् । यदि वह संख्यातवर्ष की आयु वाले संज्ञी मनुष्यों से आकर उत्पन्न होता है तो ? असुरकुमारों में उत्पन्न होने वाले संख्यात वर्षायुष्क संज्ञी मनुष्यों के समान नौ गमक कहने चाहिए । विशेष यह कि सौधर्म देव की स्थिति और संवेध (भिन्न) समझना चाहिए।

भगवन् ! ईशान देव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ?, ईशानदेव की यह वक्तव्यता सौधर्म देवों के समान है। विशेष यह कि सौधर्म देवों में उत्पन्न होने वाले जिन स्थानों में असंख्यातवर्ष की आयु वाले संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच की स्थिति एक पल्योपम की कही है, वहाँ सातिरेक पल्योपम की जाननी चाहिए । चतुर्थ गमक में अवगाहना जघन्य धनुषपृथक्त्व, उत्कृष्ट सातिरेक दो गाऊ की होती है । असंख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी की स्थिति, असंख्य वर्ष की आयु वाले पंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिक के समान जानना । अवगाहना सातिरेक गाऊ की जानना । सौधर्म देवों में उत्पन्न होने वाले संख्यात वर्ष की आयु वाले तिर्यंचों और मनुष्यों के विषय में जो नौ गमक कहे हैं, वे ही ईशान देव के विषय में समझने चाहिए । विशेष यह है कि स्थिति और संवेध ईशान देवों के जानना ।

भगवन् ! सनत्कुमार देव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? इनका उपपात शर्कराप्रभापृथ्वी के नैरयिकों के समान जानना चाहिए, यावत् । भगवन् ! पर्याप्त संख्येय वर्षायुष्क संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिक कितने काल की स्थिति वाले सनत्कुमार देवों में उत्पन्न होता है ? इत्यादि प्रश्न । परिमाण से लेकर भवादेशतक की सभी वक्तव्यता, सौधर्मकल्प के समान कहनी चाहिए । परन्तु सनत्कुमार की स्थिति और संवेध (भिन्न) जानना । तब वह स्वयं जघन्य काल की स्थिति वाला होता है, तब तीनों ही गमकों में प्रथम की पाँच लेश्याएं होती हैं । शेष पूर्ववत् । यदि मनुष्यों से आकर उत्पन्न हो तो ? इत्यादि प्रश्न । शर्कराप्रभा में उत्पन्न होने वाले मनुष्यों के समान यहाँ भी नौ गमक कहने चाहिए । विशेष यह है कि सनत्कुमार देवों की स्थिति और संवेध (भिन्न) कहना चाहिए ।

भगवन् ! माहेन्द्र देव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? इत्यादि प्रश्न । सनत्कुमार देव के अनुसार माहेन्द्र देव जानना चाहिए । किन्तु माहेन्द्र देव की स्थिति सनत्कुमार देव से सातिरेक कहनी चाहिए । इसी प्रकार ब्रह्मलोक देवों की भी वक्तव्यता जाननी चाहिए । किन्तु ब्रह्मलोक देव की स्थिति और संवेध (भिन्न) जानना चाहिए । इसी प्रकार सहस्रारदेव तक पूर्ववत् । किन्तु स्थिति और संवेध अपना-अपना जानना चाहिए । लान्तक आदि देवों में उत्पन्न होने वाले जघन्य स्थिति वाले संज्ञी पंचेन्द्रिय-तिर्यंचयोनिक के तीनों ही गमकों में छहों लेश्याएं कहनी चाहिए। ब्रह्मलोक और लान्तक देवों में प्रथम के पाँच संहनन, महाशुक्र चौर सहस्रार में आदि के चार संहनन तथा तिर्यंचयोनिकों तथा मनुष्यों में भी यही जानना ।

भगवन् ! आनतदेव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? (गौतम !) सहस्रार देवों के समान यहाँ उपपात कहना

चाहिए । विशेष यह कि तिर्यंच की उत्पत्ति का निषेध करना चाहिए । यावत्-भगवन् ! संख्यात वर्ष की आयु वाला पर्याप्त संज्ञी मनुष्य कितने काल की स्थिति वाले आनतदेवों में उत्पन्न होता है ? (गौतम !) सहस्रार देवों में उत्पन्न होने वाले मनुष्यों की वक्तव्यता के समान कहना चाहिए । विशेषता यह कि इसमें प्रथम के तीन संहनन होते हैं । शेष पूर्ववत् अनुबन्धपर्यन्त । भवादेश से-जघन्य तीन भव और उत्कृष्ट सात भव ग्रहण करता है । कालादेश से-जघन्य दो वर्षपृथक्त्व अधिक अठारह सागरोपम और उत्कृष्ट चार पूर्वकोटि अधिक सत्तावन सागरोपम; इसी प्रकार शेष आठ गमक कहने चाहिए । परन्तु स्थिति और संवेध (पृथक्-पृथक्) जानना चाहिए । शेष पूर्ववत् । इसी प्रकार यावत् अच्युत देव-पर्यन्त जानना चाहिए । किन्तु स्थिति और संवेध (भिन्न-भिन्न) कहना चाहिए । आनतादि चार देवलोकों में प्रथम के तीन संहनन वाले उत्पन्न होते हैं ।

भगवन् ! ग्रैवेयकदेव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? इत्यादि प्रश्न । यही वक्तव्यता कहनी चाहिए । विशेष - इनमें प्रथम के दो संहनन वाले उत्पन्न होते हैं तथा स्थिति और संवेध (भिन्न) समझना चाहिए । भगवन् ! विजय, वैजयन्त, जयन्त और अपराजित देव, कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? पूर्वोक्त सारी वक्तव्यता अनुबन्ध तक जानना। विशेष-इनमें प्रथम संहनन वाले उत्पन्न होते हैं । शेष पूर्ववत् । भवादेश से-जघन्य तीन भव और उत्कृष्ट पाँच भव तथा कालादेश से-जघन्य दो वर्षपृथक्त्व-अधिक ३१ सागरोपम और उत्कृष्ट तीन पूर्वकोटि अधिक ६६ सागरोपम । शेष आठ गमक की इसी प्रकार कहने चाहिए । विशेष यह है कि इनमें स्थिति और संवेध (भिन्न) जान लेना चाहिए । मनुष्य के नौ ही गमकों में, ग्रैवेयक में उत्पन्न होने वाले मनुष्यों के गमकों के समान कहनी चाहिए । विशेषता यह है कि विजय आदि में प्रथम संहनन वाला ही उत्पन्न होता है । भगवन् ! सर्वार्थसिद्ध देव कहाँ से आकर उत्पन्न होता है ? इसका उपपात आदि विजय आदि के समान है । यावत्-

भगवन् ! वे कितने काल की स्थिति वाले सर्वार्थसिद्ध देवों में उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! जघन्य और उत्कृष्ट तैंतीस सागरोपम की स्थिति वाले । शेष वक्तव्यता विजयादि देवों के समान है । विशेषता यह है कि भवादेश से-तीन भवों का ग्रहण होता है, कालादेश से-जघन्य दो वर्षपृथक्त्व-अधिक तैंतीस सागरोपम और उत्कृष्ट दो पूर्वकोटि अधिक तैंतीस सागरोपम । यदि वह स्वयं जघन्यकाल की स्थिति वाला हो और सर्वार्थसिद्ध देवों में उत्पन्न हो, तो भी यही पूर्वोक्त वक्तव्यता जानना । विशेषता यह है कि इसकी अवगाहना रत्नीपृथक्त्व और स्थिति वर्ष-पृथक्त्व होती है । संवेध (इसका अपना) जानना चाहिए । यदि वह स्वयं उत्कृष्ट काल की स्थिति वाला हो तो यही पूर्वोक्त वक्तव्यता । किन्तु इसकी अवगाहना जघन्य और उत्कृष्ट पाँच सौ धनुष है । इसकी स्थिति जघन्य और उत्कृष्ट पूर्वकोटि है । शेष सब पूर्ववत् यावत् भवादेश तक । काल की अपेक्षा से-जघन्य दो पूर्वकोटि अधिक तैंतीस सागरोपम और उत्कृष्ट भी दो पूर्वकोटि अधिक तैंतीस सागरोपम । सर्वार्थसिद्ध देवों में ये तीन ही गमक होते हैं । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है

शतक-२४ का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

शतक–२५

सूत्र - ८६१

पच्चीसवें शतक के ये बारह उद्देशक हैं–लेश्या, द्रव्य, संस्थान, युग्म, पर्यव, निर्ग्रन्थ, श्रमण, ओघ, भव्य, अभव्य, सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टि ।

शतक-२५ – उद्देशक-१

सूत्र - ८६२

उस काल और उस समय में श्री गौतम स्वामी ने राजगृह में यावत् इस प्रकार पूछा–भगवन् ! लेश्याएं कितनी कही गई हैं ? गौतम ! छह हैं । यथा कृष्णलेश्या आदि । शेष वर्णन प्रथम शतक के द्वीतिय उद्देशक अनुसार यहाँ भी लेश्याओं का विभाग, उनका अल्पबहुत्व, यावत् चार प्रकार के देव और चार प्रकार की देवियों के मिश्रित अल्पबहुत्व-पर्यन्त जानना चाहिए ।

सूत्र - ८६३

भगवन् ! संसारसमापन्नक जीव कितने प्रकार के कहे गए हैं ? गौतम ! चौदह हैं । यथा–सूक्ष्म अपर्याप्तक, सूक्ष्म पर्याप्तक, बादर अपर्याप्तक, बादर पर्याप्तक, द्वीन्द्रिय अपर्याप्तक, द्वीन्द्रिय पर्याप्तक, त्रीन्द्रिय अपर्याप्तक, त्रीन्द्रिय पर्याप्तक, चतुरिन्द्रिय अपर्याप्तक-पर्याप्तक, असंज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्तक, असंज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तक, संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्तक और संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तक ।

भगवन् ! इन चौदह प्रकार के संसार-समापन्नक जीवों में जघन्य और उत्कृष्ट योग की अपेक्षा से, कौन जीव, किससे अल्प, बहुत, तुल्य अथवा विशेषाधिक है ? गौतम ! अपर्याप्त सूक्ष्म एकेन्द्रिय का जघन्य योग सबसे अल्प है, बादर अपर्याप्तक एकेन्द्रिय का जघन्य योग उससे असंख्यातगुना है, उससे अपर्याप्त द्वीन्द्रिय का जघन्य योग असंख्यातगुना है, उससे अपर्याप्त त्रीन्द्रिय का जघन्य योग असंख्यातगुना है, उससे अपर्याप्त चतुरिन्द्रिय का जघन्य योग असंख्यातगुना है, उससे अपर्याप्त असंज्ञी पंचेन्द्रिय का जघन्य योग असंख्यातगुना है, उससे पर्याप्त सूक्ष्म एकेन्द्रिय का जघन्य योग असंख्यातगुना है, उससे पर्याप्त बादर एकेन्द्रिय का जघन्य योग असंख्यातगुना है, उससे अपर्याप्तक सूक्ष्म एकेन्द्रिय का उत्कृष्ट योग असंख्यातगुना, उससे अपर्याप्त बादर एकेन्द्रिय का उत्कृष्ट योग असंख्यातगुना है, उससे पर्याप्त सूक्ष्म एकेन्द्रिय का उत्कृष्ट योग असंख्यातगुना है, उससे पर्याप्त बादर एकेन्द्रिय का उत्कृष्ट योग असंख्यातगुना है, उससे पर्याप्त द्वीन्द्रिय का जघन्य योग असंख्यातगुना है, उससे पर्याप्त त्रीन्द्रिय, पर्याप्त चतुरिन्द्रिय, पर्याप्त असंज्ञी पंचेन्द्रिय और पर्याप्त संज्ञी पंचेन्द्रिय का जघन्य योग उत्तरोत्तर असंख्यातगुना है, उससे अपर्याप्त द्वीन्द्रिय का उत्कृष्ट योग असंख्यातगुना है, इसी प्रकार उनसे अपर्याप्त त्रीन्द्रिय, अपर्याप्त चतु-रिन्द्रिय, अपर्याप्त असंज्ञी पंचेन्द्रिय और अपर्याप्त संज्ञी पंचेन्द्रिय का उत्कृष्ट योग उत्तरोत्तर असंख्यातगुना है, उससे पर्याप्त द्वीन्द्रिय का उत्कृष्ट योग असंख्यातगुना है, पर्याप्त त्रीन्द्रिय का उत्कृष्ट योग असंख्यातगुना है, उससे पर्याप्त चतुरिन्द्रिय का उत्कृष्ट योग असंख्यातगुना है, उससे पर्याप्त असंज्ञी पंचेन्द्रिय का उत्कृष्ट योग असंख्यातगुना है, और उससे भी पर्याप्त संज्ञी पंचेन्द्रिय का उत्कृष्ट योग असंख्यातगुना है ।

सूत्र - ८६४

भगवन् ! प्रथम समय में उत्पन्न दो नैरयिक समयोगी होते हैं या विषमयोगी ? गौतम ! कदाचित् समयोगी होते हैं और कदाचित् विषमयोगी । भगवन् ! ऐसा क्यों कहा जाता है ? गौतम ! आहारक नारक से अनाहारक नारक और अनाहारक नारक से आहारक नारक कदाचित् हीनयोगी, कदाचित् तुल्ययोगी और कदाचित् अधिक-योगी होता है । यदि वह हीन योग वाला होता है तो असंख्यातवे भागहीन, संख्यातवे भागहीन, संख्यातगुणहीन या असंख्यातगुणहीन होता है । यदि अधिक योग वाला होता है तो असंख्यातवा भाग अधिक, संख्यातवा भाग अधिक, संख्यातगुण अधिक या असंख्यातगुण अधिक होता है । इस कारण से कहा गया है । इस प्रकार यावत् वैमानिक तक जानना ।

सूत्र - ८६५

भगवन् ! योग कितने प्रकार का है ? गौतम ! पन्द्रह प्रकार का । यथा-सत्य-मनोयोग, मृषा-मनोयोग, सत्यमृषा-मनोयोग, असत्यामृषा-मनोयोग, सत्य-वचनयोग, मृषा-वचनयोग, सत्यमृषा-वचनयोग, असत्यामृषा-वचनयोग, औदारिकशरीर-काययोग, औदारिक-मिश्रशरीर-काययोग, वैक्रियशरीर-काययोग, वैक्रियमिश्र-शरीर-काययोग, आहारकशरीर-काययोग, आहारकमिश्रशरीर-काययोग और कार्मण-शरीर-काययोग ।

भगवन् ! इन पन्द्रह प्रकार के योगों में, कौन किस योग से जघन्य और उत्कृष्ट रूप से अल्प, बहुत, तुल्य या विशेषाधिक है ? गौतम ! कार्मणशरीर का जघन्य काययोग सबसे अल्प है, उससे औदारिकमिश्र का जघन्य योग असंख्यातगुणा है, उससे वैक्रियमिश्र का जघन्य योग असंख्यातगुणा है, उससे औदारिकशरीर का जघन्य योग असंख्यातगुणा है, उससे वैक्रियशरीर का जघन्य योग असंख्यातगुणा है, उससे कार्मणशरीर का उत्कृष्ट योग असंख्यातगुणा है, उससे आहारिकमिश्र का जघन्य योग असंख्यातगुणा है, उससे आहारिकशरीर का उत्कृष्ट योग असंख्यातगुणा है, उससे औदारिकमिश्र और वैक्रियमिश्र इन दोनों का उत्कृष्ट योग असंख्यातगुणा है, और दोनों परस्पर तुल्य हैं । उससे असत्यामृषामनोयोग का जघन्य योग असंख्यातगुणा है । आहारकशरीर का जघन्य योग असंख्यातगुणा है । उससे तीन प्रकार का मनोयोग और चार प्रकार का वचनयोग, इन सातों का जघन्य योग असंख्यातगुणा है और परस्पर तुल्य है । उससे आहारकशरीर का उत्कृष्ट योग असंख्यातगुणा है, उससे औदारिक-शरीर, वैक्रियशरीर, चार प्रकार का मनोयोग और चार प्रकार का वचनयोग, इन दस का उत्कृष्ट योग असंख्यातगुणा है और परस्पर तुल्य है । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-२५ – उद्देशक-२

सूत्र - ८६६

भगवन् ! द्रव्य कितने प्रकार के कहे गए हैं ? गौतम ! दो प्रकार के-जीवद्रव्य और अजीवद्रव्य ।

भगवन् ! अजीवद्रव्य कितने प्रकार के हैं ? गौतम ! दो प्रकार के-रूपी और अरूपी अजीवद्रव्य । इस प्रकार इस अभिलाप द्वारा प्रज्ञापनासूत्र के पाँचवे पद में कथिन अजीवपर्यवों के अनुसार, यावत्-हे गौतम ! इस कारण से कहा जाता है कि, अजीवद्रव्य संख्यात नहीं, असंख्यात नहीं, किन्तु अनन्त हैं, तक जानना ।

सूत्र - ८६७

भगवन् ! क्या जीवद्रव्य संख्यात हैं, असंख्यात हैं अथवा अनन्त हैं ? गौतम ! जीवद्रव्य संख्यात नहीं, असंख्यात नहीं, किन्तु अनन्त हैं । गौतम ! नैरयिक असंख्यात हैं, यावत् वायुकायिक असंख्यात हैं और वनस्पति-कायिक अनन्त हैं, द्वीन्द्रिय यावत् वैमानिक असंख्यात हैं तथा सिद्ध अनन्त हैं । इस कारण जीवद्रव्य अनन्त हैं ।

भगवन् ! अजीवद्रव्य, जीवद्रव्यों के परिभोग में आते हैं, अथवा जीवद्रव्य, अजीवद्रव्यों के परिभोग में आते हैं? गौतम ! अजीवद्रव्य, जीवद्रव्यों के परिभोग में आते हैं, किन्तु जीवद्रव्य, अजीवद्रव्यों के परिभोग में नहीं आते। भगवन् ! किस कारण से आप ऐसा कहते हैं कि यावत्-नहीं आते ? गौतम ! जीवद्रव्य, अजीवद्रव्यों को ग्रहण करते हैं। ग्रहण करके औदारिक, वैक्रिय, आहारक, तैजस और कार्मण-इन पाँच शरीरों के रूप में, श्रोत्रेन्द्रिय यावत् स्पर्शेन्द्रिय-इन पाँच इन्द्रियों के रूप में, मनोयोग, वचनयोग और काययोग तथा श्वासोच्छ्वास के रूप में परिणमाते हैं। हे गौतम ! इस कारण से ऐसा कहा जाता है ।

भगवन् ! अजीवद्रव्य, नैरयिकों के परिभोग में आते हैं अथवा नैरयिक अजीवद्रव्यों के परिभोग में आते हैं? गौतम ! अजीवद्रव्य, नैरयिकों के परिभोग में आते हैं, किन्तु नैरयिक, अजीवद्रव्यों के परिभोग में नहीं आते । भगवन् ! किस कारण से ? गौतम ! नैरयिक, अजीवद्रव्यों को ग्रहण करते हैं । ग्रहण करके वैक्रिय, तैजस, कार्मण शरीर के रूप में, श्रोत्रेन्द्रिय यावत् स्पर्शेन्द्रिय के रूप में तथा यावत् श्वासोच्छ्वास के रूप में परिणत करते हैं । हे गौतम ! इसी कारण से ऐसा कहा गया है । इसी प्रकार वैमानिकों तक कहना चाहिए । किन्तु विशेष यह है कि जिसके जितने शरीर, इन्द्रियाँ तथा योग हों, उतने यथायोग्य कहने चाहिए ।

सूत्र - ८६८

भगवन् ! असंख्य लोकाकाश में अनन्त द्रव्य रह सकते हैं ? हाँ, गौतम ! होते हैं । गौतम ! निर्व्याघात से छहों दिशाओं से तथा व्याघात की अपेक्षा-कदाचित् तीन दिशाओं से, कदाचित् चार दिशाओं से और कदाचित् पाँच दिशाओं से । भगवन् ! लोक के एक आकाशप्रदेश में एकत्रित पुद्गल कितनी दिशाओं से पृथक् होते हैं ? गौतम ! पूर्ववत् । इसी प्रकार स्कन्ध के रूप में पुद्गल उपचित होते हैं और अपचित होते हैं ।

सूत्र - ८६९

भगवन् ! जीव जिन पुद्गलद्रव्यों को औदारिकशरीर के रूप में ग्रहण करता है, क्या वह उन स्थित द्रव्यों को ग्रहण करता है या अस्थित द्रव्यों को ? गौतम ! वह स्थित द्रव्यों को भी ग्रहण करता है और अस्थित द्रव्यों को भी । भगवन् ! (जीव) उन द्रव्यों को, द्रव्य से ग्रहण करता है या क्षेत्र से, काल से या भाव से ग्रहण करता है ? गौतम ! वह उन द्रव्यों को द्रव्य से यावत् भाव से भी ग्रहण करता है । द्रव्य से-वह अनन्तप्रदेशी द्रव्यों को, क्षेत्र से-असंख्येय-प्रदेशावगाढ़ द्रव्यों को ग्रहण करता है, इत्यादि, प्रज्ञापनासूत्र के आहारउद्देशक अनुसार यहाँ भी यावत्-निर्व्याघात से छहों दिशाओं से और व्याघात हो तो कदाचित् तीन कदाचित् चार और कदाचित् पाँच दिशाओं से पुद्गलों को ग्रहण करता है ।

भगवन् ! जीव जिन द्रव्यों को वैक्रियशरीर के रूप में ग्रहण करता है, तो क्या वह स्थित द्रव्यों को ग्रहण करता है या अस्थित द्रव्यों को ? गौतम ! पूर्ववत् । विशेष यह है कि जिन द्रव्यों को वैक्रियशरीर के रूप में ग्रहण करता है, वे नियम से छहों दिशाओं में आए हुए होते हैं । आहारकशरीर के विषय में भी इसी प्रकार समझना ।

भगवन् ! जीव जिन द्रव्यों को तैजसशरीर के रूप में ग्रहण करता है...? गौतम ! वह स्थित द्रव्यों को ग्रहण करता है, अस्थित द्रव्यों को नहीं । शेष औदारिकशरीर की वक्तव्यतानुसार । कार्मणशरीर के विषय में भी इसी प्रकार जानना चाहिए, यावत् भाव से भी ग्रहण करता है ।

भगवन् ! जीव जिन द्रव्यों को द्रव्य से ग्रहण करता है, वे एक प्रदेश वाले ग्रहण करता है या दो प्रदेश वाले इत्यादि प्रश्न । गौतम ! प्रज्ञापनासूत्र के भाषापद अनुसार आनुपूर्वी से ग्रहण करता है, अनानुपूर्वी से ग्रहण नहीं करता है तक कहना चाहिए । भगवन् ! जीव कितनी दिशाओं से आए हुए द्रव्य ग्रहण करता है ? गौतम ! निर्व्याघात हो तो छहों दिशाओं से इत्यादि औदारिकशरीर से सम्बन्धित वक्तव्यतानुसार कहना । भगवन् ! जीव जिन द्रव्यों को श्रोत्रेन्द्रिय रूप में ग्रहण करता है ? (इत्यादि पूर्ववत्) । गौतम ! वैक्रियशरीर-सम्बन्धी वक्तव्यता के समान जानो । इसी प्रकार यावत् जिह्वेन्द्रिय-पर्यन्त जानना । स्पर्शेन्द्रिय के विषय में औदारिकशरीर के समान समझना चाहिए । कार्मणशरीर की वक्तव्यता के समान मनोयोग की वक्तव्यता समझनी चाहिए तथा नियम से छहों दिशाओं से आए हुए द्रव्यों को ग्रहण करता है । इसी प्रकार वचनयोग के द्रव्यों के विषय में भी समझना चाहिए । काययोग के रूप में ग्रहण का कथन औदारिकशरीर विषयक कथनवत् है ।

भगवन् ! जीव जिन द्रव्यों को श्वासोच्छ्वास के रूप में ग्रहण करता है...? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! औदारिकशरीर के समान कहना चाहिए, यावत् कदाचित् पाँच दिशा से आए हुए द्रव्यों को ग्रहण करता है । कई आचार्य चौबीस दण्डकों पर इन पदों को कहते हैं, किन्तु जिसके जो (शरीर, इन्द्रिय, योग आदि) हो, वही उसके लिए यथायोग्य कहना चाहिए ।

शतक-२५ – उद्देशक-३

सूत्र - ८७०

भगवन् ! संस्थान कितने प्रकार के कहे गए हैं ? गौतम ! छह प्रकार के-परिमण्डल, वृत्त, त्र्यस्र, चतुरस्र, आयत और अनित्थंस्थ ।

भगवन् ! परिमण्डल-संस्थान द्रव्यार्थरूप से संख्यात हैं, असंख्यात हैं या अनन्त हैं ? गौतम ! वे संख्यात नहीं हैं, असंख्यात भी नहीं हैं, किन्तु अनन्त हैं । भगवन् ! वृत्त-संस्थान पृच्छा । गौतम ! पूर्ववत् (अनन्त) हैं । इसी प्रकार

अनित्थंस्थ-संस्थान पर्यन्त जानना । इसी प्रकार प्रदेशार्थरूप से तथा द्रव्यार्थ-प्रदेशार्थरूप से भी जानो ।

भगवन् ! इन परिमण्डल, यावत् अनित्थंस्थ संस्थानों में द्रव्यार्थरूप से, प्रदेशार्थरूप से और द्रव्यार्थ-प्रदेशार्थरूप से कौन किन यावत् विशेषाधिक है ? गौतम ! द्रव्यार्थरूप से परिमण्डल-संस्थान सबसे अल्प है, उनसे वृत्तसंस्थान संख्यातगुणा है, उनसे चतुरस्र-संस्थान संख्यातगुणा है, उनसे त्र्यस्र-संस्थान संख्यातगुणा है, उनसे आयत-संस्थान संख्यातगुणा है और उनसे अनित्थंस्थ-संस्थान असंख्यातगुणा है । प्रदेशार्थरूप से-परिमण्डल-संस्थान सबसे अल्प है, उनसे वृत्तसंस्थान संख्यातगुणा है, इत्यादि यावत्-'अनित्थंस्थ-संस्थान प्रदेशार्थरूप से असंख्यातगुणा है', द्रव्यार्थ-प्रदेशार्थरूप से-परिमण्डल-संस्थान द्रव्यार्थरूप से सबसे अल्प हैं, इत्यादि जो पाठ द्रव्यार्थ सम्बन्धी है, वही यहाँ द्रव्यार्थ-प्रदेशार्थरूप से जानना चाहिए; यावत्-अनित्थंस्थ-संस्थान द्रव्यार्थरूप से असंख्यातगुणा हैं । द्रव्यार्थरूप अनित्थंस्थ-संस्थानों से, प्रदेशार्थरूप से परिमण्डलसंस्थान असंख्यातगुणा है; इत्यादि, यावत् अनित्थंस्थ-संस्थान प्रदेशार्थरूप से असंख्यातगुणा है ।

सूत्र - ८७१

भगवन् ! संस्थान कितने प्रकार के कहे गए हैं ? गौतम ! पाँच प्रकार के-परिमण्डल (से लेकर) आयत तक । भगवन् ! परिमण्डलसंस्थान संख्यात हैं, असंख्यात हैं, अथवा अनन्त हैं ? गौतम ! वे अनन्त हैं । भगवन् ! वृत्तसंस्थान संख्यात हैं, इत्यादि (गौतम !) अनन्त हैं । इसी प्रकार आयतसंस्थान तक जानना चाहिए ।

भगवन् ! इस रत्नप्रभापृथ्वी में परिमण्डलसंस्थान संख्यात हैं, असंख्यात हैं या अनन्त हैं ? गौतम ! अनन्त हैं। भगवन् ! रत्नप्रभापृथ्वी में वृत्तसंस्थान संख्यात है, इत्यादि अनन्त हैं ? पूर्ववत् समझना । इसी प्रकार आयत तक समझना । भगवन् ! शर्कराप्रभापृथ्वी में परिमण्डलसंस्थान संख्यात हैं ? इत्यादि पूर्ववत् समझना । इसी प्रकार आगे आयत पर्यन्त (समझना चाहिए ।) इसी प्रकार अधःसप्तमपृथ्वी तक समझना चाहिए ।

भगवन् ! सौधर्मकल्प में परिमण्डलसंस्थान संख्यात हैं ? पूर्ववत् समझना । अच्युत तक पूर्ववत् । भगवन्! ग्रैवेयक विमानों में परिमण्डलसंस्थान संख्यात हैं ? इत्यादि प्रश्न । (गौतम !) पूर्ववत् जानना । इसी प्रकार यावत् अनुत्तरविमानों के विषय में पूर्ववत् । इसी प्रकार यावत् ईषत्प्राग्भारापृथ्वी के विषय में भी पूर्ववत् ।

भगवन् ! जहाँ एक यवाकार परिमण्डलसंस्थान है, वहाँ अन्य परिमण्डलसंस्थान संख्यात हैं, असंख्यात हैं या अनन्त हैं ? गौतम ! ये अनन्त हैं । भगवन् ! वृत्तसंस्थान संख्यात हैं, असंख्यात हैं या अनन्त हैं ? गौतम ! पूर्ववत् । इसी प्रकार आयतसंस्थान तक जानना । भगवन् ! जहाँ यवाकार एक वृत्तसंस्थान हैं, वहाँ परिमण्डल-संस्थान कितने हैं ? गौतम ! पूर्ववत् । जहाँ यवाकार अनेक वृत्तसंस्थान हों, वहाँ परिमण्डलसंस्थान कितने हैं ? पूर्ववत् । इसी प्रकार वृत्तसंस्थान यावत् आयतसंस्थान भी अनन्त हैं । इसी प्रकार एक-एक संस्थान के साथ पाँचों संस्थानों के सम्बन्ध का विचार करना चाहिए ।

भगवन् ! इस रत्नप्रभापृथ्वी में जहाँ एक यवमध्य परिमण्डलसंस्थान है, वहाँ दूसरे परिमण्डलसंस्थान संख्यात हैं, असंख्यात हैं या अनन्त हैं ? गौतम ! वे अनन्त हैं । भगवन् ! जहाँ यवाकार एक वृत्तसंस्थान है वहाँ परिमण्डलसंस्थान संख्यात हैं, असंख्यात हैं या अनन्त हैं ? गौतम ! पूर्ववत् । इसी प्रकार आयत पर्यन्त समझना ।

भगवन् ! इस रत्नप्रभापृथ्वी में जहाँ यवाकार एक वृत्तसंस्थान है, वहाँ परिमण्डलसंस्थान संख्यात हैं, असंख्यात हैं या अनन्त हैं ? गौतम ! वे अनन्त हैं । भगवन् ! जहाँ यवाकार अनेक वृत्तस्थान हैं, वहाँ परिमण्डल-संस्थान संख्यात हैं ? इत्यादि । गौतम ! पूर्ववत् । इसी प्रकार आयत तक जानना । यहाँ फिर पूर्ववत् प्रत्येक संस्थान के साथ पाँचों संस्थानों का आयतसंस्थान विचार करना चाहिए । इसी प्रकार अधःसप्तमपृथ्वी तक कहना चाहिए । इसी प्रकार कल्पों से ईषत्प्राग्भारापृथ्वी पर्यन्त के लिए जानना चाहिए ।

भगवन् ! वृत्तसंस्थान कितने प्रदेश वाला है और कितने आकाशप्रदेशों में अवगाढ़ रहा हुआ है ? गौतम ! वृत्तसंस्थान दो प्रकार का-घनवृत्त और प्रतरवृत्त । इनमें जो प्रतरवृत्त है, वह दो प्रकार का-ओज-प्रदेशिक और युग्म-प्रदेशिक । इनमें से जो ओज-प्रदेशिक प्रतरवृत्त जघन्य पंच-प्रदेशिक और पाँच आकाश-प्रदेशों में अवगाढ़ है तथा

उत्कृष्ट अनन्त-प्रदेशिक और असंख्यात आकाश-प्रदेशों में अवगाढ़ हैं और जो युग्म-प्रदेशिक प्रतरवृत्त है, वह जघन्य बारह प्रदेश वाला और बारह आकाश-प्रदेशों में अवगाढ़ होता है तथा उत्कृष्ट अनन्तप्रदेशिक और असंख्यात आकाश-प्रदेशों में अवगाढ़ होता है । घनवृत्तसंस्थान दो प्रकार का ओज-प्रदेशिक और युग्म-प्रदेशिक । ओज-प्रदेशिक जघन्य सात प्रदेश वाला और सात आकाशप्रदेशों में अवगाढ़ होता है तथा उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशों वाला और असंख्यात आकाशप्रदेशों में अवगाढ़ है । युग्म-प्रदेशिक घनवृत्तसंस्थान जघन्य बत्तीस प्रदेशों वाला और बत्तीस आकाशप्रदेशों में अवगाढ़ होता है, उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशों वाला और असंख्यात आकाशप्रदेशों में अवगाढ़ है

सूत्र - ८७२

भगवन् ! त्रयस्त्रसंस्थान कितने प्रदेश वाला और कितने आकाशप्रदेशों में अवगाढ़ कहा गया है ? गौतम ! त्रयस्रसंस्थान दो प्रकार का-घनत्र्यस्र और प्रतरत्र्यस्र । उनमें से जो प्रतरत्र्यस्र है, वह दो प्रकार-ओज-प्रदेशिक और युग्म-प्रदेशिक । ओज-प्रदेशिक जघन्य तीन प्रदेश वाला और तीन आकाशप्रदेशों में तथा उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशों वाला और असंख्यात आकाशप्रदेशों में अवगाढ़ होता है । उनमें से जो घनत्र्यस्र है, वह दो प्रकार का-ओज-प्रदेशिक और युग्म-प्रदेशिक । ओज-प्रदेशिक घनत्र्यस्र जघन्य पैंतीस प्रदेशों वाला और पैंतीस आकाशप्रदेशों में तथा उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशिक और असंख्यात आकाशप्रदेशों में अवगाढ़ होता है । युग्म-प्रदेशिक घनत्र्यस्र जघन्य चार प्रदेशों वाला और चार आकाशप्रदेशों में तथा उत्कृष्ट अनन्त-प्रदेशिक और असंख्यात आकाशप्रदेशों में अवगाढ़ होता है ।

भगवन् ! चतुरस्रसंस्थान कितने प्रदेश वाला, कितने प्रदेशों में अवगाढ़ होता है ? गौतम ! चतुरस्रसंस्थान दो प्रकार का-घन-चतुरस्र और प्रतरचतुरस्र, इत्यादि, वृत्तसंस्थान के समान, उसमें से प्रतर-चतुरस्र के दो भेद-ओज-प्रदेशिक और युग्मप्रदेशिक कहना । यावत् ओज-प्रदेशिक प्रतर-चतुरस्र जघन्य नौ प्रदेश वाला और नौ आकाशप्रदेशों में तथा उत्कृष्ट अनन्त-प्रदेशिक और असंख्येय आकाशप्रदेशों में अवगाढ़ होता है । युग्म-प्रदेशिक प्रतरचतुरस्र जघन्य चार प्रदेश वाला और चार आकाशप्रदेशों में तथा उत्कृष्ट अनन्त-प्रदेशिक और असंख्येय प्रदेशों में अवगाढ़ होता है । घन-चतुरस्र दो प्रकार का-ओज-प्रदेशिक और युग्म-प्रदेशिक । ओज-प्रदेशिक घन-चतुरस्र जघन्य सत्ताईस प्रदेशों वाला और सत्ताईस आकाशप्रदेशों में तथा उत्कृष्ट अनन्त-प्रदेशिक और असंख्येय आकाश-प्रदेशों में अवगाढ़ होता है । युग्म-प्रदेशिक घन-चतुरस्र जघन्य आठ प्रदेशों वाला और आठ आकाशप्रदेशों में तथा उत्कृष्ट अनन्त-प्रदेशिक और असंख्येय आकाश प्रदेशों में अवगाढ़ होता है ।

भगवन् ! आयतसंस्थान कितने प्रदेश वाला और कितने आकाशप्रदेशों में अवगाढ़ होता है ? गौतम ! आयतसंस्थान तीन प्रकार का-श्रेणी-आयत, प्रतर-आयत और घन-आयत । श्रेणी-आयत दो प्रकार का-ओज-प्रदेशिक और युग्म-प्रदेशिक । ओज-प्रदेशिक वह जघन्य तीन प्रदेशों वाला और तीन आकाशप्रदेशों में तथा उत्कृष्ट अनन्त-प्रदेशिक और असंख्यात आकाशप्रदेशों में अवगाढ़ होता है । युग्म-प्रदेशिक जघन्य दो प्रदेश वाला और दो आकाशप्रदेशों में तथा उत्कृष्ट अनन्तप्रदेशिक और असंख्यात-प्रदेशावगाढ़ होता है । प्रतर-आयत दो प्रकार का-ओज-प्रदेशिक और युग्म-प्रदेशिक । ओज-प्रदेशिक, जघन्य पन्द्रह आकाश-प्रदेशों में तथा उत्कृष्ट अनन्त-प्रदेशिक और असंख्येय आकाशप्रदेशों में अवगाढ़ होता है । जो युग्म-प्रदेशिक है, वह जघन्य छह प्रदेश वाला और छह आकाशप्रदेशों में उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशिक और असंख्येय आकाश-प्रदेशों में अवगाढ़ होता है । घन-आयत है, दो प्रकार का-ओज-प्रदेशिक और युग्मप्रदेशिक । जो ओज-प्रदेशिक है, वह जघन्य पैंतालीस प्रदेशों वाला और पैंतालीस आकाशप्रदेशों में उत्कृष्ट अनन्त-प्रदेशिक और असंख्येय आकाशप्रदेशों में अवगाढ़ होता है । युग्म-प्रदेशिक जघन्य बारह प्रदेशों वाला और बारह आकाशप्रदेशों में तथा उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशिक और असंख्येय प्रदेशों में अवगाढ़ होता है

सूत्र - ८७३

भगवन् ! परिमण्डल-संस्थान कितने प्रदेशों वाला इत्यादि प्रश्न । गौतम ! परिमण्डलसंस्थान दो प्रकार का-घन-परिमण्डल और प्रतर-परिमण्डल । प्रतर-परिमण्डल, जघन्य बीस प्रदेश वाला और बीस आकाशप्रदेशों में उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशिक और असंख्येय आकाशप्रदेशों में अवगाढ़ होता है । घन-परिमण्डल जघन्य चालीस प्रदेशों वाला और

चालीस आकाशप्रदेशों में तथा उत्कृष्ट अनन्त प्रदेशिक और असंख्यात आकाशप्रदेशों में अवगाढ़ है ।

भगवन् ! परिमण्डल-संस्थान द्रव्यार्थरूप से कृतयुग्म है, त्र्योज है, द्वापरयुग्म है अथवा कल्योज है ? गौतम ! वह कल्योज है । भगवन् ! वृत्त-संस्थान द्रव्यार्थरूप से कृतयुग्म है ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! पूर्ववत् । इसी प्रकार आयत-संस्थान पर्यन्त जानना ।

भगवन् ! (अनेक) परिमण्डल-संस्थान द्रव्यार्थरूप से कृतयुग्म हैं, त्र्योज हैं या कल्योज हैं ? गौतम ! ओघादेश से-कदाचित् कृतयुग्म यावत् कदाचित् कल्योज होते हैं । विधानादेश से-कल्योज हैं । इसी प्रकार (अनेक) आयत-संस्थान तक जानना चाहिए ।

भगवन् ! परिमण्डल-संस्थान प्रदेशार्थरूप से कृतयुग्म है ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! वह कदाचित् कृतयुग्म है, यावत् कदाचित् कल्योज है । इसी प्रकार आयत-संस्थान पर्यन्त जानना चाहिए । भगवन् ! (अनेक) परिमण्डल - संस्थान प्रदेशार्थरूप से कृतयुग्म हैं ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! ओघादेश से-ये कदाचित् कृतयुग्म हैं, यावत् कदाचित् कल्योज होते हैं । विधानादेश से वे कृतयुग्म भी हैं, त्र्योज भी हैं, द्वापरयुग्म भी हैं और कल्योज भी हैं । इसी प्रकार (अनेक) आयत-संस्थान तक जानना चाहिए ।

भगवन् ! परिमण्डल-संस्थान कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ़ है, यावत् अथवा कल्योज-प्रदेशावगाढ़ हैं ? गौतम ! वह कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ़ है । भगवन् ! वृत्त-संस्थान कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ़ हैं ? गौतम ! वह कदाचित् कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ़ हैं, कदाचित् त्र्योज-प्रदेशावगाढ़ हैं और कदाचित् कल्योज-प्रदेशावगाढ़ हैं, किन्तु द्वापरयुग्म-प्रदेशावगाढ़ नहीं होता । भगवन् ! त्र्यस्र-संस्थान कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ़ है ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! वह कदाचित् कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ़, कदाचित् त्र्योज-प्रदेशावगाढ़ और कदाचित् द्वापरयुग्म-प्रदेशावगाढ़ होता है, किन्तु कल्योज-प्रदेशावगाढ़ नहीं होता । भगवन् ! चतुरस्र-संस्थान कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ़ है ? गौतम ! वृत्त-संस्थान अनुसार चतुरस्र - संस्थान जानो । चतुरस्र-संस्थान कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ़ हैं ? गौतम ! वृत्त-संस्थान अनुसार चतुरस्र-संस्थान जानो । भगवन् ! आयत-संस्थान कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ़ हैं ? गौतम ! वह कदाचित् कृतयुग्म-यावत् कदाचित् कल्योज-प्रदेशावगाढ़ होता है ।

भगवन् ! (अनेक) परिमण्डल-संस्थान कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ़ होते हैं, गौतम ! वे ओघादेश से तथा विधानादेश से भी कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ़ होते हैं । भगवन् ! (अनेक) वृत्त-संस्थान कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ़ होते हैं ? गौतम ! वे ओघादेश से कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ़ होते हैं, विधानादेश से वे कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ़ भी हैं, त्र्योज-प्रदेशा-वगाढ़ भी हैं, किन्तु द्वापरयुग्म-प्रदेशावगाढ़ नहीं हैं, हाँ, कल्योज-प्रदेशावगाढ़ हैं । भगवन् ! (अनेक) त्र्यस्र-संस्थान कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ़ होते हैं ? गौतम ! पूर्ववत् । चतुरस्र-संस्थानों के विषय में वृत्त-संस्थानों के समान कहना । भगवन् ! (अनेक) आयत-संस्थान कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ़ होते हैं ? गौतम ! वे ओघादेश से कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ़ होते हैं किन्तु न तो त्र्योज-प्रदेशावगाढ़ होते हैं, विधानादेश से वे कृतयुग्म-यावत् कल्योज-प्रदेशावगाढ़ भी होते हैं ।

भगवन् ! परिमण्डल-संस्थान कृतयुग्म-समय की स्थिति वाला है, या यावत् कल्योज-समय की स्थिति वाला है ? गौतम ! कदाचित् कृतयुग्म-समय की यावत् कदाचित् कल्योज-समय की स्थिति वाला है । इस प्रकार यावत् आयत-संस्थान पर्यन्त जानना । भगवन् ! (अनेक) परिमण्डल-संस्थान कृतयुग्म-समय की स्थिति वाले हैं ? गौतम ! वे ओघादेश से कदाचित् कृतयुग्म-समय की यावत् कदाचित् कल्योज-समय की स्थिति वाले हैं । विधानादेश से कृतयुग्म-समय की यावत् कल्योज-समय की स्थिति वाले भी हैं । इसी प्रकार आयत-संस्थान तक जानना । भगवन् ! परिमण्डल-संस्थान के काले वर्ण के पर्याय क्या कृतयुग्म हैं, यावत् कल्योज रूप हैं ? गौतम ! वे कदाचित् कृतयुग्मरूप होते हैं, इत्यादि पूर्ववत् । इसी प्रकार नीलवर्ण के पर्यायों तथा इसी प्रकार पाँच वर्ण, दो गन्ध, पाँच रस और आठ स्पर्श के विषय में रूक्ष स्पर्शपर्याय तक कहना ।

सूत्र - ८७४

भगवन् ! श्रेणियाँ द्रव्यार्थरूप से संख्यात हैं, असंख्यात हैं या अनन्त हैं ? गौतम ! वे अनन्त हैं । भगवन् ! पूर्व

और पश्चिम दिशा में लम्बी श्रेणियाँ द्रव्यार्थरूप में संख्यात हैं ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! वे अनन्त हैं । इसी प्रकार दक्षिण और उत्तर में लम्बी श्रेणियों तथा उर्ध्व और अधो दिशा में लम्बी श्रेणियों के विषय में भी जानना चाहिए ।

भगवन् ! लोकाकाश की श्रेणियाँ द्रव्यार्थ रूप से संख्यात हैं, असंख्यात हैं या अनन्त हैं ? गौतम ! वे असंख्यात हैं । भगवन् ! पूर्व और पश्चिम में लम्बी लोकाकाश की श्रेणियाँ द्रव्यार्थरूप से संख्यात हैं ? इत्यादि प्रश्न। गौतम ! असंख्यात हैं । इसी प्रकार दक्षिण और उत्तर में लम्बी और ऊर्ध्व और अधो दिशा में लम्बी लोकाकाश की श्रेणियों के सम्बन्ध में जानना । भगवन् ! अलोकाकाश की श्रेणियाँ द्रव्यार्थरूप में संख्यात हैं, असंख्यात हैं या अनन्त हैं ? गौतम ! वे अनन्त हैं । इसी प्रकार पूर्व और पश्चिम में लम्बी तथा दक्षिण और उत्तर में लम्बी तथा ऊर्ध्व और अधोदिशा में लम्बी अलोकाकाश की श्रेणियाँ भी जानना ।

भगवन् ! आकाश की श्रेणियाँ प्रदेशार्थरूप से संख्यात हैं, असंख्यात हैं अथवा अनन्त हैं ? गौतम ! द्रव्यार्थता की वक्तव्यता के समान प्रदेशार्थता की वक्तव्यता कहनी चाहिए । भगवन् ! लोकाकाश की श्रेणियाँ प्रदेशार्थरूप से संख्यात हैं ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! वे कदाचित् संख्यात और कदाचित् असंख्यात हैं, किन्तु अनन्त नहीं हैं । पूर्व और पश्चिम में तथा उत्तर और दक्षिण में लम्बी श्रेणियाँ इसी प्रकार हैं । ऊर्ध्व और अधो दिशा में लम्बी लोकाकाश की श्रेणियाँ संख्यात नहीं और अनन्त भी नहीं; किन्तु असंख्यात हैं ।

भगवन् ! अलोकाकाश की श्रेणियाँ प्रदेशार्थरूप से संख्यात हैं ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! वे कदाचित् संख्यात हैं, कदाचित् असंख्यात हैं और कदाचित् अनन्त हैं । भगवन् ! पूर्व और पश्चिम में लम्बी अलोकाकाश की श्रेणियाँ संख्यात हैं ? गौतम ! वे नहीं अनन्त हैं । इसी प्रकार दक्षिण और उत्तर में समझना । भगवन् ! ऊर्ध्व और अधोदिशा में संख्यात हैं ? गौतम ! वे कदाचित् संख्यात हैं, कदाचित् असंख्यात हैं और कदाचित् अनन्त हैं ।

सूत्र - ८७५

भगवन् ! क्या श्रेणियाँ सादि-सपर्यवसित हैं, अथवा सादि-अपर्यवसित हैं या वे अनादि-सपर्यवसित हैं, अथवा अनादि-अपर्यवसित हैं । गौतम ! वे न तो सादि-सपर्यवसित हैं, न सादि-अपर्यवसित हैं और न अनादि-सपर्यवसित हैं, किन्तु अनादि-अपर्यवसित हैं । इसी प्रकार यावत् ऊर्ध्व और अधो दिशामें लम्बी श्रेणियों के विषयमें भी जानना ।

भगवन् ! लोकाकाश की श्रेणियाँ सादि-सपर्यवसित हैं ? इत्यादि पूर्ववत् प्रश्न । गौतम ! वे सादि-सपर्य-वसित हैं, इसी प्रकार यावत् ऊर्ध्व और अधो लम्बी लोकाकाश-श्रेणियों के विषय में समझना चाहिए । भगवन् ! अलोकाकाश की श्रेणियाँ सादि-सपर्यवसित हैं ? इत्यादि पूर्ववत् प्रश्न । गौतम ! वे कदाचित् सादि-सपर्यवसित हैं, कदाचित् सादि-अपर्यवसित हैं, कदाचित् अनादि-सपर्यवसित हैं और कदाचित् अनादि-सपर्यवसित हैं । पूर्व-पश्चिम लम्बी तथा दक्षिण-उत्तर लम्बी अलोकाकाश-श्रेणियाँ भी इसी प्रकार है । विशेषता यह है कि ये सादि-सपर्यवसित नहीं है और कदाचित् सादि अपर्यवसित है । शेष पूर्ववत् । ऊर्ध्व और अधो लम्बी श्रेणियों के औघिक श्रेणियों के समान चार भंग जानने चाहिए ।

भगवन् ! आकाश की श्रेणियाँ द्रव्यार्थरूप से कृतयुग्म हैं, त्र्योज हैं, द्वापरयुग्म हैं अथवा कल्योज हैं ? गौतम ! वे कृतयुग्म हैं, किन्तु न तो त्र्योज हैं, न द्वापरयुग्म हैं और न ही कल्योज हैं । इसी प्रकार ऊर्ध्व और अधो लम्बी श्रेणियों तक के विषय में कहना । लोकाकाश की श्रेणियाँ एवं अलोकाकाश की श्रेणियों के विषय में भी जानना चाहिए ।

भगवन् ! आकाश की श्रेणियाँ प्रदेशार्थरूप से कृतयुग्म हैं ? इत्यादि प्रश्न । पूर्ववत् । इसी प्रकार यावत् ऊर्ध्व और अधो लम्बी श्रेणियों तक के विषय में कहना चाहिए ।

भगवन् ! लोकाकाश की श्रेणियाँ प्रदेशार्थरूप से कृतयुग्म हैं ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! वे कदाचित् कृतयुग्म हैं और कदाचित् द्वापरयुग्म हैं, किन्तु न तो त्र्योज हैं और न कल्योज ही हैं । इसी प्रकार पूर्व-पश्चिम लम्बी तथा दक्षिण-उत्तर लम्बी लोकाकाश की श्रेणियों के विषय में भी समझना । भगवन् ! ऊर्ध्व और अधो लम्बी लोकाकाश की श्रेणियाँ कृतयुग्म हैं ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! वे कृतयुग्म हैं, किन्तु न तो त्र्योज हैं, न द्वापरयुग्म हैं और न ही कल्योज हैं। भगवन् ! अलोकाकाश की श्रेणियाँ प्रदेशार्थरूप से कृतयुग्म हैं ? इत्यादि । गौतम ! वे कदाचित् कृतयुग्म हैं, यावत्

कदाचित् कल्योज हैं । इसी प्रकार पूर्व-पश्चिम तथा दक्षिण-उत्तर लम्बी श्रेणियाँ जानो। ऊर्ध्व और अधो लम्बी अलोकाकाश श्रेणियाँ भी इसी प्रकार हैं किन्तु ये कल्योज रूप नहीं है, शेष पूर्ववत् ।

सूत्र - ८७६

भगवन् ! श्रेणियाँ कितनी कही है ? गौतम ! सात यथा-ऋज्वायता, एकतोवक्रा, उभयतोवक्रा, एकतःखा, उतयतःखा, चक्रवाल और अर्द्धचक्रवाल ।

भगवन् ! परमाणु-पुद्गलों की गति अनुश्रेणि होती है या विश्रेणि ? गौतम ! परमाणु-पुद्गलों की गति अनुश्रेणि होती है, विश्रेणि गति नहीं होती । भन्ते ! द्विप्रदेशिक स्कन्धों की गति अनुश्रेणि होती है या विश्रेणि ? पूर्ववत्। इसी प्रकार यावत् अनन्त-प्रदेशिक स्कन्ध पर्यन्त जानना । भगवन् ! नैरयिकों की गति अनुश्रेणी होती है या विश्रेणि ? गौतम ! पूर्ववत् । इसी प्रकार वैमानिक-पर्यन्त जानना ।

सूत्र - ८७७

भगवन् ! रत्नप्रभापृथ्वी में कितने लाख नरकावास कहे हैं ? गौतम ! तीस लाख इत्यादि प्रथम शतक के पाँचवे उद्देशक अनुसार यावत् अनुत्तर-विमान तक जानना ।

सूत्र - ८७८

भगवन् ! गणिपिटक कितने प्रकार का है ? गौतम ! बारह-अंगरूप है । यथा-आचारांग यावत् दृष्टिवाद । भगवन् ! आचारांग किसे कहते हैं ? आचारांग-सूत्र में श्रमण-निर्ग्रन्थों के आचार, गोचर-विधि आदि चारित्र-धर्म की प्ररूपणा की गई है । नन्दीसूत्र के अनुसार सभी अंगसूत्रों का वर्णन जानना चाहिए, यावत्-

सूत्र - ८७९

सर्वप्रथम सूत्र का अर्थ । दूसरे में निर्युक्तिमिश्रित अर्थ और तीसरे में सम्पूर्ण अर्थ का कथन करना चाहिए । यह अनुयोग की विधि है ।

सूत्र - ८८०

भगवन् ! नैरयिक यावत् देव और सिद्ध इन पाँचों गतियों के जीवों में कौन जीव किन से अल्प, बहुत, तुल्य अथवा विशेषाधिक हैं ? गौतम ! प्रज्ञापनासूत्र के बहुवक्तव्यता-पद के अनुसार तथा आठ गतियों के समुदाय का भी अल्पबहुत्व जानना । भगवन् ! सइन्द्रिय, एकेन्द्रिय यावत् अनिन्द्रिय जीवों में कौन जीव, किन जीवों से अल्प, बहुत, तुल्य या विशेषाधिक है ? गौतम ! प्रज्ञापनासूत्र के बहुवक्तव्यता-पद के अनुसार औधिक पद कहना चाहिए। सकायिक जीवों का अल्पबहुत्व भी औधिक पद के अनुसार जानना चाहिए । भगवन् ! इन जीवों और पुद्गलों, यावत् सर्वपर्यायों में कौन, किससे अल्प, बहुत, तुल्य या विशेषाधिक है ? गौतम ! बहु वक्तव्यता पद अनुसार जानना ।

भगवन् ! आयुकर्म के बन्धक और अबन्धक जीवों में कौन, किनसे अल्प, बहुत, तुल्य या विशेषाधिक हैं? गौतम ! बहुवक्तव्यता पद के अनुसार, यावत्-आयुकर्म के अबन्धक जीव विशेषाधिक हैं तक कहना चाहिए ।

शतक-२५ – उद्देशक-४

सूत्र - ८८१

भगवन् ! युग्म कितने कहे हैं ? गौतम ! युग्म चार प्रकार के कहे हैं, यथा-कृतयुग्म यावत् कल्योज । भगवन् ! ऐसा क्यों कहा जाता है ? गौतम ! अठारहवें शतक के चतुर्थ उद्देशक में कहे अनुसार यहाँ जानना, यावत् इसीलिए ऐसा कहा है ।

भगवन् ! नैरयिकों में कितने युग्म कहे गए हैं ? गौतम ! उनमें चार युग्म कहे हैं । यथा-कृतयुग्म यावत् कल्योज । भगवन् ! ऐसा किस कारण से कहा जाता है ? पूर्ववत् जानो । इसी प्रकार यावत् वायुकायिक पर्यन्त जानना । भगवन् ! वनस्पतिकायिकों में कितने युग्म कहे हैं ? गौतम ! वनस्पतिकायिक कदाचित् कृतयुग्म होते हैं यावत् कदाचित् कल्योज होते हैं । भगवन् ! ऐसा क्यों कहते हैं ? गौतम ! उपपात की अपेक्षा ऐसा कहा है । द्वीन्द्रिय जीवों की वक्तव्यता नैरयिकों के समान है । इसी प्रकार यावत् वैमानिक तक कहना चाहिए । सिद्धों का कथन

वनस्पतिकायिकों के समान है ।

भगवन् ! सर्व द्रव्य कितने प्रकार के कहे हैं ? गौतम ! छह प्रकार के-धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय यावत् अद्धासमय (काल) । भगवन् ! धर्मास्तिकाय क्या द्रव्यार्थ रूप से कृतयुग्म यावत् कल्योज रूप हैं ? गौतम ! धर्मास्तिकाय द्रव्यार्थ रूप से कल्योज रूप हैं । इसी प्रकार अधर्मास्तिकाय तथा आकाशास्तिकाय को समझना ।

भगवन् ! जीवास्तिकाय द्रव्यार्थ रूप से कृतयुग्म हैं ? गौतम ! वह द्रव्यार्थ रूप से कृतयुग्म हैं, किन्तु त्र्योज, द्वापरयुग्म या कल्योज नहीं है । भगवन् ! पुद्गलास्तिकाय द्रव्यार्थ रूप से कृतयुग्म हैं ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! वह द्रव्यार्थ रूप से कदाचित् कृतयुग्म है, यावत् कदाचित् कल्योज रूप है । अद्धा-समय का कथन जीवास्तिकाय के समान है । भगवन् ! धर्मास्तिकाय प्रदेशार्थरूप से कृतयुग्म है ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! कृतयुग्म है, किन्तु त्र्योज, द्वापरयुग्म और कल्योज नहीं है । इसी प्रकार यावत् अद्धा-समय तक जानना चाहिए ।

भगवन् ! धर्मास्तिकाय यावत् अद्धासमय, इन षट् द्रव्यों में द्रव्यार्थरूप से यावत् विशेषाधिक है ? गौतम ! इन सबका अल्पबहुत्व बहुवक्तव्यतापद अनुसार समझना चाहिए । भगवन् ! धर्मास्तिकाय अवगाढ़ हैं या अनवगाढ़ है ? गौतम ! वह अवगाढ़ है । भगवन् ! यदि वह अवगाढ़ है, तो संख्यात-प्रदेशावगाढ़ है, असंख्यात-प्रदेशावगाढ़ है अथवा अनन्त-प्रदेशावगाढ़ है ? गौतम ! वह असंख्यात-प्रदेशावगाढ़ है । भगवन् ! यद वह असंख्यात-प्रदेशावगाढ़ है, तो क्या कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ़ है ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! वह कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ़ है । इसी प्रकार अधर्मास्ति-काय, आकाशास्तिकाय, जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय और अद्धासमय के विषय में भी यही वक्तव्यता है ।

भगवन् ! यह रत्नप्रभापृथ्वी अवगाढ़ है या अनवगाल है ? गौतम ! धर्मास्तिकाय समान जानो । इसी प्रकार अधःसप्तमपृथ्वी तक जानना चाहिए । सौधर्म देवलोक यावत् ईषत्प्राग्भारा पृथ्वी तक के विषय में यही समझना चाहिए ।

सूत्र - ८८२

भगवन् ! (एक) जीव द्रव्यार्थरूप से कृतयुग्म है ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! वह कल्योज रूप है । इसी प्रकार (एक) नैरयिक यावत् सिद्ध-पर्यन्त जानना ।

भगवन् ! (अनेक) जीव द्रव्यार्थरूप से कृतयुग्म हैं ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! वे ओघादेश से कृतयुग्म है । विधानादेश से कल्योज रूप है । भगवन् ! (अनेक) नैरयिक द्रव्यार्थरूप से कृतयुग्म है ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! ओघादेश से कदाचित् कृतयुग्म यावत् कदाचित् कल्योज हैं, विधानादेश से वे कल्योज हैं । इसी प्रकार सिद्धपर्यन्त जानना ।

भगवन् ! (एक) जीव प्रदेशार्थरूप से कृतयुग्म है ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! जीव प्रदेशार्थ से कृतयुग्म है । शरीरप्रदेशों की अपेक्षा जीव कदाचित् कृतयुग्म यावत् कदाचित् कल्योज भी होता है । इसी प्रकार यावत् वैमानिक तक जानना । भगवन् ! सिद्ध भगवान प्रदेशार्थरूप से कृतयुग्म है ? इत्यादि पृच्छा । गौतम ! वह कृतयुग्म हैं ।

भगवन् ! जीव प्रदेशों की अपेक्षा क्या कृतयुग्म हैं ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! (अनेक) जीव आत्मप्रदेशों की अपेक्षा ओघादेश और विधानादेश से भी कृतयुग्म हैं । शरीरप्रदेशों की अपेक्ष जीव ओघादेश से कदाचित् कृतयुग्म यावत् कदाचित् कल्योज हैं । विधानादेश से वे कृतयुग्म भी हैं यावत् कल्योज भी हैं । इसी प्रकार नैरयिक यावत् वैमानिकों तक जानना । भगवन् ! (अनेक) सिद्ध आत्मप्रदेशों की अपेक्षा से कृतयुग्म हैं ? गौतम ! वे ओघादेश से और विधानादेश से भी कृतयुग्म हैं । त्र्योज, द्वापरयुग्म या कल्योज नहीं है ।

सूत्र - ८८३

भगवन् ! जीव कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ़ है ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! वह कदाचित् कृतयुग्म-यावत् कदाचित् कृतयुग्म-यावत् कदाचित् कल्योज-प्रदेशावगाढ़ होता है । इसी प्रकार (एक) सिद्धपर्यन्त जानना । भगवन् ! (बहुत) जीव कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ़ हैं ? गौतम ! वे ओघादेश से कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ़ हैं । विधानादेश से वे कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ़ यावत् कल्योज-प्रदेशावगाढ़ हैं । भगवन् ! (अनेक) नैरयिक कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ़ हैं ? गौतम ! वे

ओघादेश से कदाचित् कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ़ यावत् कदाचित् कल्योज-प्रदेशावगाढ़ हैं । विधानादेश से कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ़ हैं, यावत् कल्योज-प्रदेशावगाढ़ भी हैं । एकेन्द्रिय जीवों और सिद्धों को छोड़कर शेष सभी जीव इसी प्रकार नैरयिक के समान कदाचित् कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ़ आदि होते हैं । सिद्धों और एकेन्द्रिय जीवों का कथन सामान्य जीवों के समान है ।

भगवन् ! (एक) जीव कृतयुग्म-समय की स्थिति वाला है ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! वह कृतयुग्म-समय की स्थिति वाला है, किन्तु त्र्योज-समय, द्वापरयुग्मसमय अथवा कल्योज-समय की स्थिति वाला नहीं है । भगवन् ! (एक) नैरयिक कृतयुग्म-समय की स्थिति वाला है ? गौतम ! वह कदाचित् कृतयुग्म यावत् कदाचित् कल्योज-समय की स्थिति वाला है । इसी प्रकार यावत् वैमानिक तक । सिद्ध का कथन जीव के समान है ।

भगवन् ! (अनेक) जीव कृतयुग्म-समय की स्थिति वाले हैं ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! वे ओघादेश से तथा विधानादेश से भी कृतयुग्म-समय की स्थिति वाले हैं । भगवन् ! (अनेक) नैरयिक कृतयुग्म-समय की स्थिति वाले हैं ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! ओघादेश से वे कदाचित् कृतयुग्म यावत् कदाचित् कल्योज-समय की स्थिति वाले हैं । विधानादेश से कृतयुग्म यावत् कल्योज-समय की स्थिति वाले हैं । वैमानिकों तक इसी प्रकार जानना चाहिए । सिद्धों का कथन सामान्य जीवों के समान है ।

भगवन् ! जीव काले वर्ण के पर्यायों की अपेक्षा कृतयुग्म हैं ? इत्यादि पृच्छा । गौतम ! जीव प्रदेशों की अपेक्षा न तो कृतयुग्म हैं और यावत् न कल्योज है, किन्तु शरीरप्रदेशों की अपेक्षा कदाचित् कृतयुग्म है, यावत् कदाचित् कल्योज है । यावत् वैमानिक पर्यन्त इसी प्रकार कहना चाहिए । यहाँ सिद्ध के विषय में प्रश्न नहीं करना चाहिए, (क्योंकि वे अरूपी हैं) ।

सूत्र - ८८४

भगवन् ! (अनेक) जीव काले वर्ण के पर्यायों की अपेक्षा कृतयुग्म हैं ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! जीव-प्रदेशों की अपेक्षा ओघादेश से भी और विधानादेश से भी न तो कृतयुग्म हैं यावत् न कल्योज हैं । शरीरप्रदेशों की अपेक्षा ओघादेश से कदाचित् कृतयुग्म हैं, यावत् कदाचित् कल्योज हैं, विधानादेश से वे कृतयुग्म भी हैं, यावत् कल्योज भी हैं । वैमानिकों तक इसी प्रकार का कथन समझना चाहिए । इसी प्रकार एकवचन और बहुवचन से नीले वर्ण के पर्यायों की अपेक्षा भी कहना चाहिए । इसी प्रकार यावत् रूक्ष स्पर्श के पर्यायों की अपेक्षा से भी पूर्ववत् कथन करना चाहिए

भगवन् ! (एक) जीव आभिनिबोधिकाज्ञान के पर्यायों की अपेक्षा कृतयुग्म है ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! वह कदाचित् कृतयुग्म है, यावत् कदाचित् कल्योज है । इसी प्रकार एकेन्द्रिय को छोड़कर वैमानिक पर्यन्त । भगवन् ! (बहुत) जीव आभिनिबोधिकज्ञान के पर्यायों की अपेक्षा कृतयुग्म हैं ? गौतम ! ओघादेश से वे कदाचित् कृतयुग्म हैं, यावत् कदाचित् कल्योज हैं । विधानादेश से कृतयुग्म भी हैं, यावत् कल्योज भी हैं । इसी प्रकार एकेन्द्रिय को छोड़कर वैमानिकों तक । इसी प्रकार श्रुतज्ञान के पर्यायों की अपेक्षा भी जानना । अवधिज्ञान के पर्यायों की अपेक्षा भी यही जानना । विशेष यह कि विकलेन्द्रियों में अवधिज्ञान नहीं होता है । मनःपर्यवज्ञान के पर्यायों के विषय में भी यही कथन, किन्तु वह औघिक जीवों और मनुष्यों को ही होता है, शेष दण्डकों में नहीं पाया जाता ।

भगवन् ! (एक) जीव केवलज्ञान के पर्यायों की अपेक्षा कृतयुग्म है ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! वह कृतयुग्म है, किन्तु त्र्योज, द्वापरयुग्म का कल्योज नहीं है । इसी प्रकार मनुष्य एवं सिद्ध के विषय में भी जानना । भगवन् ! (अनेक) जीव केवलज्ञान के पर्यायों की अपेक्षा कृतयुग्म हैं ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! ओघादेश से और विधानादेश से भी वे कृतयुग्म हैं । इसी प्रकार (अनेक) मनुष्यों तथा सिद्धों के विषय में भी समझना चाहिए ।

भगवन् ! (एक) जीव मतिअज्ञान के पर्यायों की अपेक्षा कृतयुग्म है ? आभिनिबोधिकज्ञान के पर्यायों के समान यहाँ भी दो दण्डक कहने चाहिए । इसी प्रकार श्रुतअज्ञान एवं विभंगज्ञान के पर्यायों का भी कथन करना चाहिए । चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन और अवधिदर्शन के पर्यायों के विषय में भी इसी प्रकार समझना चाहिए, किन्तु जिसमें जो पाया जाता है, वह कहना । केवलदर्शन के पर्यायों का कथन केवलज्ञान के पर्यायों के समान ।

सूत्र - ८८५

भगवन् ! शरीर कितने प्रकार के कहे हैं ? गौतम ! पाँच प्रकार के-औदारिक, वैक्रिय, यावत् कार्मणशरीर । यहाँ प्रज्ञापनासूत्र का शरीरपद समग्र कहना चाहिए ।

सूत्र - ८८६

भगवन् ! जीव सैज (सकम्प) हैं अथवा निरेज (निष्कम्प) हैं ? गौतम ! जीव सकम्प भी हैं और निष्कम्प भी हैं भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहते हैं ? गौतम ! जीव दो प्रकार के कहे हैं यथा-संसार-समापन्नक और असंसार-समापन्नक । उनमें से जो असंसार-समापन्नक हैं, वे सिद्ध जीव हैं । सिद्ध जीव दो प्रकार के कहे हैं । यथा-अनन्तर-सिद्ध और परम्पर-सिद्ध । जो परम्पर-सिद्ध हैं, वे निष्कम्प हैं, और जो अनन्तर-सिद्ध हैं, वे सकम्प हैं। भगवन् ! वे देशकम्पक हैं या सर्वकम्पक हैं ? गौतम ! वे देशकम्पक नहीं, सर्वकम्पक हैं । जो संसार-समापन्नक जीव हैं, वे दो प्रकार के कहे हैं । यथा-शैलेशी-प्रतिपन्नक और अशैलेशी-प्रतिपन्नक । जो शैलेशी-प्रतिपन्नक हैं, वे निष्कम्प हैं, किन्तु जो अशैलेशी-प्रतिपन्नक हैं, वे सकम्प हैं । भगवन् ! वे देशकम्पक हैं या सर्वकम्पक ? गौतम ! वे देशकम्पक भी हैं और सर्वकम्पक भी हैं । इस कारण से हे गौतम ! यावत् वे निष्कम्प भी हैं ।

भगवन् ! नैरयिक देशकम्पक हैं या सर्वकम्पक हैं ? गौतम ! वे देशकम्पक भी हैं और सर्वकम्पक भी हैं । भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहा जाता है ? गौतम ! नैरयिक दो प्रकार के कहे हैं । यथा-विग्रहगति-समापन्नक और अविग्रहगति-समापन्नक । उनमें से जो विग्रहगति-समापन्नक हैं, वे सर्वकम्पक हैं और जो अविग्रहगति-समापन्नक हैं, वे देशकम्पक हैं । इसी प्रकार वैमानिकों तक जानना चाहिए ।

सूत्र - ८८७

भगवन् ! परमाणु-पुद्गल संख्यात हैं, असंख्यात हैं अथवा अनन्त हैं ? गौतम ! संख्यात नहीं, असंख्यात भी नहीं, किन्तु अनन्त हैं । इसी प्रकार यावत् अनन्तप्रदेशी स्कन्ध तक जानना । भगवन् ! आकाश के एक प्रदेश में रहे हुए पुद्गल संख्यात हैं, असंख्यात हैं या अनन्त हैं ? गौतम ! अनन्त हैं । इसी प्रकार यावत् असंख्येय प्रदेशों में रहे हुए पुद्गलों तक जानना चाहिए । भगवन् ! एक समय की स्थिति वाले पुद्गल संख्यात हैं, असंख्यात हैं या अनन्त हैं ? गौतम ! पूर्ववत् जानना । इसी प्रकार यावत् असंख्यात-समय की स्थिति वाले पुद्गलों के विषय में भी कहना चाहिए

भगवन् ! एकगुण काले पुद्गल संख्यात हैं ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! पूर्ववत् जानना । इसी प्रकार यावत् अनन्तगुण काले पुद्गलों के विषय में जानना । इसी प्रकार शेष वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श वाले पुद्गलों के विषय में भी अनन्तगुण रूक्ष पर्यन्त जानना ।

भगवन् ! परमाणु-पुद्गल और द्विप्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से कौन किससे अल्प, बहुत, तुल्य या विशेषाधिक हैं ? गौतम ! द्विप्रदेशी स्कन्धों से परमाणु पुद्गल द्रव्यार्थ से बहुत हैं । भगवन् ! द्विप्रदेशी और त्रिप्रदेशी स्कन्धों में द्रव्यार्थ से कौन किससे अल्प, बहुत, तुल्य या विशेषाधिक हैं ? गौतम ! त्रिप्रदेशी स्कन्ध से द्विप्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से बहुत हैं । इस गमक अनुसार यावत् दशप्रदेशी स्कन्धों से नवप्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से बहुत हैं । भगवन् ! दश-प्रदेशी स्कन्धों और संख्यातप्रदेशी स्कन्धों में द्रव्यार्थ से कौन किससे विशेषाधिक हैं ? गौतम ! दशप्रदेशिक स्कन्धों से संख्यातप्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से बहुत हैं । भगवन् ! इन संख्यातप्रदेशी स्कन्धों और असंख्यातप्रदेशी स्कन्धों में द्रव्यार्थ से कौन किससे अल्प हैं ? गौतम ! संख्यातप्रदेशी स्कन्धों से असंख्यातप्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से बहुत हैं । भगवन् ! असंख्यातप्रदेशी स्कन्धों और अनन्तप्रदेशी स्कन्धों में द्रव्यार्थ से कौन किससे अल्प हैं ? गौतम ! अनन्त-प्रदेशी स्कन्धों से असंख्यातप्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से बहुत हैं ।

भगवन् ! परमाणु-पुद्गल और द्विप्रदेशी स्कन्धों में प्रदेशार्थरूप से कौन किससे बहुत हैं ? गौतम ! परमाणु-पुद्गलों से द्विप्रदेशी स्कन्ध प्रदेशार्थरूप से बहुत हैं । इस प्रकार इस गमक अनुसार यावत् नवप्रदेशी स्कन्धों से दशप्रदेशी स्कन्ध प्रदेशार्थरूप से बहुत हैं । इस प्रकार दशप्रदेशी स्कन्धों से संख्यातप्रदेशी स्कन्ध प्रदेशार्थरूप से बहुत हैं । संख्यातप्रदेशी स्कन्धों से असंख्यातप्रदेशी स्कन्ध प्रदेशार्थरूप से बहुत हैं । भगवन् ! असंख्यातप्रदेशी स्कन्धों

और अनन्तप्रदेशी स्कन्धों में कौन किससे बहुत हैं ? गौतम ! अनन्तप्रदेशी स्कन्धों से असंख्यातप्रदेशी स्कन्ध प्रदेशार्थ रूप से बहुत हैं ।

भगवन् ! एकप्रदेशावगाढ़ और द्विप्रदेशावगाढ़ पुद्गलों में, द्रव्यार्थ से कौन किससे यावत् विशेषाधिक है ? गौतम ! द्विप्रदेशावगाढ़ पुद्गलों से एक प्रदेशावगाढ़ पुद्गल द्रव्यार्थ से विशेषाधिक हैं । इसी गमक अनुसार यावत् दशप्रदेशावगाढ़ पुद्गलों से नवप्रदेशावगाढ़ पुद्गल द्रव्यार्थ से विशेषाधिक हैं । दशप्रदेशावगाढ़ पुद्गलों से संख्यात प्रदेशावगाढ़ पुद्गल द्रव्यार्थ से बहुत हैं । संख्यातप्रदेशावगाढ़ पुद्गलों से असंख्यातप्रदेशावगाढ़ पुद्गल द्रव्यार्थ से बहुत हैं । भगवन् ! एकप्रदेशावगाढ़ और द्विप्रदेशावगाढ़ पुद्गलों में ? गौतम ! एकप्रदेशावगाढ़ पुद्गलों से द्विप्रदेशावगाढ़ पुद्गल प्रदेशार्थरूप से विशेषाधिक हैं । इसी प्रकार यावत् नवप्रदेशावगाढ़ पुद्गलों से दशप्रदेशावगाढ़ । दशप्रदेशावगाढ़ पुद्गलों से संख्यातप्रदेशावगाढ़ पुद्गल और संख्यातप्रदेशावगाढ़ पुद्गलों से असंख्यातप्रदेशावगाढ़ पुद्गल प्रदेशार्थ से बहुत हैं । भगवन् ! एक समय की स्थिति वाले और दो समय की स्थिति वाले पुद्गलों में द्रव्यार्थ रूप से कौन किससे यावत् विशेषाधिक है ? अवगाहना अनुसार स्थिति की वक्तव्यता जानना ।

भगवन् ! एकगुण काले और द्विगुण काले पुद्गलों में द्रव्यार्थरूप से कौन किनसे यावत् विशेषाधिक हैं ? गौतम ! परमाणु पुद्गल अनुसार इनकी सम्पूर्ण वक्तव्यता जाननी चाहिए । इसी प्रकार सभी वर्णों, गन्धों और रसों के विषय में वक्तव्यता जाननी चाहिए ।

भगवन् ! एकगुण कर्कश और द्विगुण कर्कश पुद्गलों में ? गौतम ! एकगुण कर्कश पुद्गलों से द्विगुण कर्कश पुद्गल द्रव्यार्थरूप से विशेषाधिक हैं । इसी प्रकार यावत् नवगुण-कर्कश पुद्गलों से दशगुण-कर्कश पुद्गल। दशगुण-कर्कश पुद्गलों से संख्यातगुण-कर्कश पुद्गल । संख्यातगुण-कर्कश पुद्गलों से असंख्यातगुण-कर्कश पुद्गल और असंख्यातगुण-कर्कश पुद्गलों से अनन्तगुण-कर्कश पुद्गल द्रव्यार्थरूप से बहुत हैं । प्रदेशार्थ रूप से समग्र वक्तव्यता भी इसी प्रकार जाननी चाहिए । कर्कश स्पर्श सम्बन्धी वक्तव्यता के अनुसार मृदु, गुरु और लघु स्पर्श के विषय में समझना चाहिए । शीत, उष्ण, स्निग्ध और रूक्ष स्पर्श के विषय में वर्णों की वक्तव्यता के अनुसार जानना चाहिए ।

सूत्र - ८८८

भगवन् ! परमाणु-पुद्गल, संख्यात-प्रदेशी, असंख्यात-प्रदेशी और अनन्त-प्रदेशी स्कन्धों में द्रव्यार्थरूप से, प्रदेशार्थरूप से तथा द्रव्यार्थ-प्रदेशार्थरूप से कौन-से पुद्गल-स्कन्ध किन पुद्गल-स्कन्धों से यावत् विशेषाधिक हैं । गौतम ! द्रव्यार्थ रूप से-सबसे अल्प अनन्तप्रदेशी स्कन्ध हैं, उनसे द्रव्यार्थ से परमाणु-पुद्गल अनन्तगुणे हैं । उनसे असंख्यातप्रदेशी स्कन्ध संख्यातगुणे हैं, उनसे द्रव्यार्थरूप से असंख्यातप्रदेशी स्कन्ध असंख्यातगुणे हैं, प्रदेशार्थरूप से-सबसे थोड़े अनन्तप्रदेशी स्कन्ध हैं । उनसे अप्रदेशार्थरूप से परमाणु-पुद्गल अनन्तगुणे हैं । उनसे संख्यात-प्रदेशी स्कन्ध प्रदेशार्थरूप से संख्यातगुणे हैं । उनसे असंख्यातप्रदेशी-स्कन्ध प्रदेशार्थरूप से असंख्यात-गुणे हैं । द्रव्यार्थ-प्रदेशार्थरूप से-सबसे अल्प अनन्तप्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से हैं । इनसे अनन्तप्रदेशी स्कन्ध प्रदेशार्थ से अनन्तगुम हैं । उनसे परमाणुपुद्गल द्रव्यार्थ-अप्रदेशार्थरूप से अनन्तगुण हैं । उनसे संख्यातप्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से संख्यातगुण हैं उनसे संख्यातप्रदेशी स्कन्ध स्कन्ध प्रदेशार्थरूप से संख्यातगुणे हैं । उनसे असंख्यातप्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से असंख्यातगुणे हैं । उनसे असंख्यातप्रदेशी स्कन्ध प्रदेशार्थ से असंख्यातगुणे हैं ।

भगवन् ! एकप्रदेशावगाढ़, संख्यातप्रदेशावगाढ़, और असंख्यातप्रदेशावगाढ़ पुद्गलों में, द्रव्यार्थ, प्रदेशार्थ और द्रव्यार्थ-प्रदेशार्थरूप से कौन-से पुद्गल किनसे यावत् विशेषाधिक हैं ? गौतम ! द्रव्यार्थ से-एकप्रदेशावगाढ़ पुद्गल सबसे थोड़े हैं । उनसे संख्यातप्रदेशावगाढ़ पुद्गल द्रव्यार्थ से संख्यातगुण हैं । उनसे असंख्यातप्रदेशावगाढ़ पुद्गल द्रव्यार्थ से असंख्यातगुण हैं । प्रदेशार्थ से-एकप्रदेशावगाढ़ पुद्गल अप्रदेशार्थ से सबसे थोड़े हैं । उनसे संख्यातप्रदेशावगाढ़ पुद्गल प्रदेशार्थ से संख्यातगुण हैं । उनसे असंख्यातप्रदेशावगाढ़ पुद्गल प्रदेशार्थ से असंख्यातगुण हैं । द्रव्यार्थ-प्रदेशार्थ-एकदेशप्रदेशावगाढ़ पुद्गल द्रव्यार्थ-अप्रदेशार्थ से सबसे अल्प हैं । उनसे

संख्यातप्रदेशावगाढ़ पुद्गल द्रव्यार्थ से संख्यातगुण हैं । उनसे संख्यातप्रदेशावगाढ़ पुद्गल प्रदेशार्थ से संख्यातगुण हैं उनसे असंख्यातप्रदेशावगाढ़ पुद्गल द्रव्यार्थ से असंख्यातगुण हैं । उनसे असंख्यातप्रदेशावगाढ़ पुद्गल प्रदेशार्थ से असंख्यातगुण हैं । भगवन् ! एकसमय की स्थिति वाले, संख्यातसमय की स्थिति वाले और असंख्यात-समय की स्थिति वाले पुद्गलों में कौन किससे यावत् विशेषाधिक है ? गौतम ! अवगाहना के अल्पबहुत्व के समान स्थिति का अल्पबहुत्व कहना चाहिए ।

भगवन् ! एकगुण काला, संख्यातगुण काला, असंख्यातगुण काला और अनन्तगुण काला, इन पुद्गलों में द्रव्यार्थ, प्रदेशार्थ और द्रव्यार्थ-प्रदेशार्थ से कौन पुद्गल किन पुद्गलों से यावत् विशेषाधिक है ? गौतम ! परमाणु-पुद्गलों के अल्पबहुत्व अनुसार इनका भी अल्पबहुत्व जानना । इसी प्रकार शेष वर्ण, गन्ध और रस का अल्प-बहुत्व कहना चाहिए ।

भगवन् ! एकगुण कर्कश, संख्यातगुण कर्कश, असंख्यातगुण कर्कश और अनन्तगुण कर्कश पुद्गलों में द्रव्यार्थ, प्रदेशार्थ और द्रव्यार्थ-प्रदेशार्थ से कौन पुद्गल किन पुद्गलों से यावत् विशेषाधिक हैं ? गौतम ! एकगुण कर्कश पुद्गल द्रव्यार्थ से सबसे थोड़े हैं । उनसे संख्यातगुण कर्कश पुद्गल द्रव्यार्थ से संख्यातगुण हैं । उनसे असंख्यातगुण कर्कश पुद्गल द्रव्यार्थ से संख्यात गुण हैं । उनसे अनन्तगुण कर्कश पुद्गल द्रव्यार्थ से अनन्तगुण हैं। प्रदेशार्थ से भी इसी प्रकार । विशेष यह है कि संख्यातगुण कर्कश-पुद्गल प्रदेशार्थ से असंख्यातगुण हैं । द्रव्यार्थ-प्रदेशार्थ से-एकगुण कर्कश पुद्गल द्रव्यार्थ-प्रदेशार्थ से सबसे थोड़े हैं । उनसे संख्यातगुण कर्कश पुद्गल द्रव्यार्थ से संख्यातगुण हैं । उनसे संख्यातगुण कर्कश पुद्गल प्रदेशार्थ से संख्यातगुण हैं । उनसे असंख्यातगुण कर्कश पुद्गल द्रव्यार्थ से असंख्यातगुण हैं । उनसे असंख्यातगुण कर्कश पुद्गल प्रदेशार्थ से असंख्यातगुण हैं, उनसे अनन्तगुण कर्कश पुद्गल द्रव्यार्थ से अनन्तगुण हैं । उनसे अनन्तगुण कर्कश पुद्गल प्रदेशार्थ से अनन्तगुण हैं । इसी प्रकार मृदु, गुरु और लघु स्पर्श के अल्पबहुत्वमें कहना । शीत, उष्ण, स्निग्ध, रूक्ष स्पर्शों-सम्बन्धी अल्पबहुत्व वर्णों के अनुसार हैं

भगवन् ! एक परमाणु पुद्गल द्रव्यार्थ रूप से कृतयुग्म है, त्र्योज, द्वापरयुग्म है या कल्योज है ? गौतम ! वह कृतयुग्म त्र्योज या द्वापरयुग्म नहीं है, किन्तु कल्योज है । इसी प्रकार अनन्तप्रदेशी स्कन्ध तक जानना चाहिए ।

सूत्र - ८८९

भगवन् ! (बहुत) परमाणुपुद्गल द्रव्यार्थ से कृतयुग्म हैं ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! ओघादेश से कदाचित् कृतयुग्म, यावत् कल्योज हैं; किन्तु विधानादेश से कृतयुग्म, त्र्योज या द्वापरयुग्म नहीं हैं, कल्योज हैं । इसी प्रकार यावत् अनन्तप्रदेशी स्कन्धों पर्यन्त जानना । भगवन् ! परमाणुपुद्गल प्रदेशार्थ से कृतयुग्म हैं ? गौतम ! वह कल्योज है । भगवन् ! द्विप्रदेशी स्कन्ध ? गौतम ! वह द्वापरयुग्म है । भगवन् ! त्रिप्रदेशी स्कन्ध ? गौतम ! वह त्र्योज हैं । भगवन् ! चतुष्प्रदेशिक स्कन्ध ? गौतम ! वह कृतयुग्म है । पंचप्रदेशी स्कन्ध परमाणुपुद्गल समान जानना । षट्प्रदेशी द्विप्रदेशीस्कन्ध समान जानना । सप्तप्रदेशी स्कन्ध त्रिप्रदेशी समान है । अष्टप्रदेशी स्कन्ध परमाणुपुद्गल समान जानना । नवप्रदेशी स्कन्ध परमाणुपुद्गल समान जानना । दशप्रदेशी स्कन्ध द्विप्रदेशिक समान है । भगवन् ! संख्यातप्रदेशी पुद्गल ? गौतम ! वह कदाचित् कृतयुग्म हैं, यावत् कदाचित् कल्योज है । इसी प्रकार असंख्यातप्रदेशी और अनन्तप्रदेशी स्कन्ध भी जानना ।

भगवन् ! (बहुत) परमाणुपुद्गल प्रदेशार्थरूप से कृतयुग्म हैं ? गौतम ! ओघादेश से वे कदाचित् कृतयुग्म हैं, यावत् कदाचित् कल्योज हैं । विधानादेश से कल्योज हैं । भगवन् ! (अनेक) द्विप्रदेशी स्कन्ध प्रदेशार्थ से ? गौतम ! ओघादेश से कदाचित् कृतयुग्म हैं, कदाचित् द्वापरयुग्म हैं । भगवन् ! (अनेक) त्रिप्रदेशी स्कन्ध, प्रदेशार्थ से? गौतम ! ओघादेश से कदाचित् कृतयुग्म हैं, यावत् कदाचित् कल्योज हैं । विधानादेश से त्र्योज हैं । भगवन् ! चतुष्प्रदेशिक स्कन्ध, प्रदेशार्थ से ? गौतम ! वे कृतयुग्म हैं । पंचप्रदेशी स्कन्धों परमाणुपुद्गल के समान हैं । षट्-प्रदेशी स्कन्धों द्विप्रदेशी स्कन्धों के समान । सप्तप्रदेशी स्कन्ध त्रिप्रदेशी स्कन्धवत् । अष्टप्रदेशी स्कन्ध चतुष्प्रदेशी स्कन्ध के समान । नवप्रदेशी स्कन्ध परमाणु-पुद्गलों के समान । दशप्रदेशी स्कन्ध द्विप्रदेशी स्कन्ध के समान । भगवन् ! (अनेक)

संख्यातप्रदेशी स्कन्ध प्रदेशार्थरूपसे? गौतम ! ओघादेशसे कदाचित् कृतयुग्म हैं, यावत् कदाचित् कल्योज हैं। विधाना देशसे कृतयुग्म भी हैं यावत् कल्योज भी। इसी प्रकार (अनेक)असंख्यातप्रदेशी व अनन्तप्रदेशी स्कन्धों जानना।

भगवन् ! (एक) परमाणु-पुद्गल कृतयुग्मप्रदेशावगाढ़ है ? इत्यादि पृच्छा । गौतम ! वह कृतयुग्म, त्र्योज या द्वापरयुग्म-प्रदेशावगाढ़ नहीं है, किन्तु कल्योज-प्रदेशावगाढ़ हैं । भगवन् ! द्विप्रदेशी स्कन्ध प्रश्न । गौतम ! वह कदाचित् द्वापरयुग्म प्रदेशावगाढ़ और कदाचित् कल्योज-प्रदेशावगाढ़ है । भगवन् ! त्रिप्रदेशी स्कन्ध ? गौतम ! वह कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ़ नहीं है किन्तु कदाचित् त्र्योज कदाचित् द्वापरयुग्म और कदाचित् कल्योज-प्रदेशावगाढ़ हैं। भगवन् ! चतुष्प्रदेशी स्कन्ध ? गौतम ! वह कदाचित् कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ़ हैं, यावत् कदाचित् कल्योज प्रदेशाव-गाढ़ है । इसी प्रकार अनन्तप्रदेशी स्कन्धावगाढ़ तक जानना ।

भगवन् ! (बहुत) परमाणु-पुद्गल कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ़ हैं । इत्यादि प्रश्न । गौतम ! ओघादेश से कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ़ हैं, किन्तु त्र्योज, द्वापरयुग्म और कल्योज-प्रदेशावगाढ़ नहीं हैं । विधानादेश से वे कृतयुग्म त्र्योज तथा द्वापरयुग्म-प्रदेशावगाढ़ नहीं है, किन्तु कल्योज-प्रदेशावगाढ़ हैं । भगवन् ! (बहुत) द्विप्रदेशीस्कन्ध ? प्रश्न । गौतम ! ओघादेश से वे कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ़ हैं, विधानादेश से द्वापरयुग्म-प्रदेशावगाढ़ एवं कल्योज-प्रदेशावगाढ़ हैं । भगवन्! त्रिप्रदेशीस्कन्ध ? प्रश्न । गौतम ! ओघादेश से वे कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ़ हैं, विधानादेश से वे द्वापरयुग्म और कल्योज-प्रदेशावगाढ़ भी हैं । भगवन् ! चतुष्प्रदेशीस्कन्ध ? प्रश्न । गौतम ! वे ओघादेश से कृतयुग्म-प्रदेशाव-गाढ़ हैं, विधानादेश से वे कृतयुग्म, यावत् कल्योज-प्रदेशावगाढ़ भी हैं । इसी प्रकार अनन्तप्रदेशी स्कन्ध तक जानना चाहिए ।

भगवन् ! (एक) परमाणु-पुद्गल कृतयुग्म-समय की स्थिति वाला है ? गौतम ! वह कदाचित् कृतयुग्म-समय की स्थिति वाला है, यावत् कदाचित् कल्योज-समय की स्थिति वाला है । इसी प्रकार अनन्तप्रदेशीस्कन्ध तक जानना भगवन् ! (बहुत) परमाणु-पुद्गल कृतयुग्म-समय की स्थिति वाले हैं ? ओघादेश से वे कदाचित् कृतयुग्म, यावत् कदाचित् कल्योज-समय की स्थिति वाले हैं, विधानादेश से वे कृतयुग्म-समय, यावत् कल्योज-समय की स्थिति वाले भी हैं । इसी प्रकार यावत् अनन्तप्रदेशी स्कन्ध तक जानना ।

भगवन् ! (एक) परमाणु-पुद्गल काले वर्ण के पर्यायों की अपेक्षा कृतयुग्म हैं अथवा त्र्योज हैं ? गौतम ! स्थिति सम्बन्धी वक्तव्यता समान वर्णों एवं सभी गन्धों जानना । इसी प्रकार सभी रसों की मधुरस तक जानना । भगवन् ! (एक) अनन्तप्रदेशी स्कन्ध कर्कशस्पर्श के पर्यायों की अपेक्षा कृतयुग्म हैं ? वह कदाचित् कृतयुग्म हैं, यावत् कदाचित् कल्योज है । भगवन् ! (अनेक) अनन्तप्रदेशीस्कन्ध कर्कशस्पर्श के पर्यायों की अपेक्षा कृतयुग्म हैं? ओघादेश से वे कदाचित् कृतयुग्म हैं, यावत् कदाचित् कल्योज हैं तथा विधानादेश से कृतयुग्म भी हैं, यावत् कल्योज भी हैं । इसी प्रकार मृदु, गुरु एवं लघु स्पर्श के सम्बन्ध में भी कहना । शीत, उष्ण, स्निग्ध और रूक्ष स्पर्शों वर्णों के समान हैं ।

सूत्र - ८९०

भगवन् ! परमाणु-पुद्गल सार्द्ध है या अनर्द्ध है ? गौतम ! वह सार्द्ध नहीं है, अनर्द्ध है । भगवन् ! द्विप्रदेशिक स्कन्ध ? गौतम ! वह सार्द्ध है, अनर्द्ध नहीं । त्रिप्रदेशीस्कन्ध परमाणु-पुद्गल समान है । चतुष्प्रदेशी-स्कन्ध द्विप्रदेशीस्कन्ध समान है । पंचप्रदेशीस्कन्ध त्रिप्रदेशीस्कन्धवत् है । षट्प्रदेशीस्कन्ध द्विप्रदेशीस्कन्ध समान जानना । सप्तप्रदेशीस्कन्ध त्रिप्रदेशीस्कन्ध समान है । अष्टप्रदेशीस्कन्ध द्विप्रदेशीस्कन्ध जैसा है । नवप्रदेशीस्कन्ध त्रिप्रदेशीस्कन्ध जैसा है । दशप्रदेशीस्कन्ध द्विप्रदेशी स्कन्ध समान जानना । भगवन् ! संख्यातप्रदेशीस्कन्ध ? गौतम! कदाचित् सार्द्ध है और कदाचित् अनर्द्ध है । इसी प्रकार असंख्यातप्रदेशी और अनन्तप्रदेशीस्कन्ध के विषय में कहना

भगवन् ! (अनेक) परमाणु-पुद्गल सार्द्ध हैं या अनर्द्ध हैं ? गौतम ! वे सार्द्ध भी हैं और अनर्द्ध भी हैं । इसी प्रकार अनन्तप्रदेशी स्कन्ध तक जानना चाहिए ।

सूत्र - ८९१

भगवन् ! (एक) परमाणु-पुद्गल सैज (सकम्प) है या निरेज (निष्कम्प) ? गौतम ! वह कदाचित् सकम्प होता

है और कदाचित् निष्कम्प होता है । इसी प्रकार अनन्तप्रदेशी स्कन्धपर्यन्त जानना चाहिए । भगवन् ! (बहुत) परमाणु-पुद्गल सकम्प होते हैं या निष्कम्प ? गौतम ! दोनों । इसी प्रकार अनन्तप्रदेशी स्कन्ध तक जानना ।

भगवन् ! परमाणु-पुद्गल सकम्प कितने काल तक रहता है ? गौतम ! जघन्य एक समय और उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवे भाग । भगवन् ! परमाणु-पुद्गल निष्कम्प कितने काल तक रहता है ? गौतम ! जघन्य एक समय और उत्कृष्ट असंख्यात काल । इसी प्रकार यावत् अनन्तप्रदेशी स्कन्ध तक जानना चाहिए ।

भगवन् ! (बहुत) परमाणु-पुद्गल कितने काल तक सकम्प रहते हैं ? गौतम ! सदा काल । भगवन् ! (बहुत) परमाणु-पुद्गल कितने काल तक निष्कम्प रहते हैं? गौतम! सदाकाल। ऐसे ही यावत् अनन्तप्रदेशीस्कन्ध तकजानना

भगवन् ! (एक) सकम्प परमाणु-पुद्गल का कितने काल का अन्तर है ? गौतम ! स्वस्थान की अपेक्षा जघन्य एक समय और उत्कृष्ट असंख्येय काल का तथा परस्थान की अपेक्षा जघन्य एक समय और उत्कृष्ट असंख्यात काल का । भगवन् ! निष्कम्प परमाणु-पुद्गल का कितने काल तक का अन्तर होता है ? गौतम ! स्वस्थान की अपेक्षा जघन्य एक समय और उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवे भाग का तथा परस्थान की अपेक्षा जघन्य एक समय और उत्कृष्ट असंख्यात काल का । भगवन् ! सकम्प द्विप्रदेशी स्कन्ध ? प्रश्न । गौतम ! स्वस्थान की अपेक्षा जघन्य एक समय का और उत्कृष्ट असंख्यात काल तथा परस्थान की अपेक्षा जघन्य एक समय का और उत्कृष्ट अनन्तकाल । भगवन् ! निष्कम्प द्विप्रदेशी स्कन्ध ? प्रश्न । गौतम ! स्वस्थान की अपेक्षा जघन्य एक समय का और उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग तथा परस्थान की अपेक्षा जघन्य एक समय का और उत्कृष्ट अनन्तकाल । इसी प्रकार यावत् अनन्तप्रदेशी स्कन्ध समझना । भगवन् ! सकम्प (बहुत) परमाणु-पुद्गलों का अन्तर कितने काल का होता है ? गौतम ! उनमें अन्तर नहीं होता । भगवन् ! निष्कम्प परमाणु-पुद्गलों का अन्तर कितने काल का होता है ? गौतम ! उनका भी अन्तर नहीं होता । इसी प्रकार यावत् अनन्तप्रदेशी स्कन्धों का अन्तर समझना ।

भगवन् ! इन सकम्प और निष्कम्प परमाणुपुद्गलों में कौन किनसे यावत् विशेषाधिक होते हैं ? गौतम ! सबसे थोड़े सकम्प परमाणुपुद्गल होते हैं । उनसे निष्कम्प परमाणुपुद्गल असंख्यातगुण हैं । इसी प्रकार यावत् असंख्यात-प्रदेशी स्कन्धों का अल्पबहुत्व जानना । भगवन् ! इन अनन्त-प्रदेशी सकम्प और निष्कम्प स्कन्धों में कौन किन से यावत् विशेषाधिक होते हैं ? गौतम ! सबसे थोड़े अनन्त-प्रदेशी निष्कम्प स्कन्ध हैं । उनसे सकम्प अनन्तप्रदेशी स्कन्ध अनन्तगुण हैं ।

भगवन् ! सकम्प और निष्कम्प परमाणुपुद्गल, संख्यात-प्रदेशी स्कन्ध, असंख्यात-प्रदेशी स्कन्ध और अनन्त-प्रदेशी स्कन्धों में द्रव्यार्थ, प्रदेशार्थ और द्रव्यार्थ-प्रदेशार्थ से कौन पुद्गल, किन पुद्गलों से अल्प, बहुत, तुल्य या विशेषाधिक हैं ? गौतम ! निष्कम्प अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से सबसे अल्प हैं । उनसे सकम्प अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध से अनन्तगुणे उनसे सकम्प परमाणु-पुद्गल अनन्तगुणे । उनसे सकम्प संख्यात-प्रदेशी स्कन्ध संख्यातगुणे । उनसे सकम्प असंख्यात-प्रदेशी स्कन्ध असंख्यातगुणे । उनसे निष्कम्प परमाणु पुद्गल असंख्यात-गुणे । उनसे निष्कम्प संख्यात-प्रदेशी स्कन्ध संख्यातगुणे और उनसे निष्कम्प असंख्यात-प्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से असंख्यातगुणे हैं । द्रव्यार्थ के समान प्रदेशार्थ से भी अल्पबहुत्व जानना । किन्तु परमाणु-पुद्गल में प्रदेशार्थ के बदले 'अप्रदेशार्थ' कहना तथा निष्कम्प संख्यात-प्रदेशी स्कन्ध प्रदेशार्थ से संख्यातगुणे जानना । द्रव्यार्थ-प्रदेशार्थ से–निष्कम्प अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से सबसे अल्प हैं । उनसे निष्कम्प अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध प्रदेशार्थ से अनन्तगुणे । सकम्प अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से अनन्तगुणे । उनसे सकम्प अनन्तप्रदेशी स्कन्ध प्रदेशार्थ से अनन्तगुणे । उनसे सकम्प परमाणु-पुद्गल द्रव्यार्थ से अप्रदेशार्थरूप से अनन्तुणे । उनसे सकम्प संख्यात-प्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से असंख्यातगुणे । उनसे सकम्प संख्यात-प्रदेशी स्कन्ध प्रदेशार्थ से असंख्यातगुणे । उनसे सकम्प असंख्यात-प्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से असंख्यातगुणे । उनसे सकम्प असंख्यात-प्रदेशी स्कन्ध प्रदेशार्थ से असंख्यात गुणे । उनसे निष्कम्प परमाणु-पुद्गल द्रव्यार्थ-अप्रदेशार्थ रूप से असंख्यातगुणे । उनसे निष्कम्प संख्यात-प्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से असंख्यातगुणे । उनसे निष्कम्प संख्यात-प्रदेशी स्कन्ध प्रदेशार्थ से असंख्यातगुण । उनसे निष्कम्प असंख्यात-प्रदेशी

स्कन्ध द्रव्यार्थ से असंख्यातगुणे और उनसे निष्कम्प असंख्यात-प्रदेशी स्कन्ध प्रदेशार्थ से असंख्यातगुणे हैं ।

भगवन् ! परमाणु पुद्गल देशकम्पक है, सर्वकम्पक है या निष्कम्पक है ? गौतम ! परमाणु-पुद्गल देश-कम्पक नहीं है, वह कदाचित् सर्वकम्पक है, कदाचित् निष्कम्पक है । भगवन् ! द्विप्रदेशी स्कन्ध ? गौतम ! वह कदाचित् देशकम्पक, कदाचित् सर्वकम्पक और कदाचित् निष्कम्पक होता है । इसी प्रकार यावत् अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध तक जानना । भगवन् ! (बहुत) परमाणु-पुद्गल ? गौतम ! वे सर्वकम्पक हैं और निष्कम्पक भी हैं । भगवन् (बहुत) द्विप्रदेशी-स्कन्ध ? गौतम ! वे देशकम्पक भी हैं, सर्वकम्पक भी हैं और निष्कम्पक भी हैं । इसी प्रकार यावत् (बहुत) अनन्त-प्रदेशी स्कन्धों को जानना ।

भगवन् ! (एक) परमाणु पुद्गल सर्वकम्पक कितने काल तक रहता है ? गौतम ! जघन्य एक समय तक और उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवे भाग । भगवन् (एक) परमाणु-पुद्गल निष्कम्पक कितने काल तक रहता है? गौतम! जघन्य एक समय और उत्कृष्ट असंख्यात काल । भगवन् ! द्विप्रदेशी-स्कन्ध देशकम्पक काल ? गौतम! जघन्य एक समय और उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवे भाग । भगवन् ! (द्वि-प्रदेशी स्कन्ध) सर्वकम्पक काल ? जघन्य एक समय और उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवे भाग । भगवन् ! (द्वि-प्रदेशी स्कन्ध) निष्कम्पक काल ? गौतम ! जघन्य एक समय और उत्कृष्ट असंख्यात काल । इसी प्रकार यावत् अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध जानना।

भगवन् ! (अनेक) परमाणु-पुद्गल सर्वकम्पक कितने काल तक रहते हैं ? गौतम ! सदा काल । भगवन् ! (अनेक परमाणु-पुद्गल) निष्कम्पक काल ? गौतम ! सदा काल । भगवन् ! द्विप्रदेशी स्कन्ध देशकम्पक काल ? गौतम! सर्वकाल । भगवन् ! वे कितने काल तक सर्वकम्पक रहते हैं ? गौतम ! सदा काल । भगवन् ! (द्विप्रदेशी स्कन्ध) निष्कम्पक काल ? सदा काल । इसी प्रकार अनन्तप्रदेशी स्कन्ध तक का कालमान जानना चाहिए ।

भगवन् ! सर्वकम्पक परमाणु-पुद्गल का अन्तर कितने काल का होता है ? गौतम ! स्वस्थान की अपेक्षा जघन्य एक समय का और उत्कृष्ट असंख्यात काल का अन्तर होता है । परस्थान की अपेक्षा भी जघन्य एक समय का और उत्कृष्ट असंख्यातकाल का । भगवन् ! निष्कम्पक का ? गौतम ! स्वस्थान की अपेक्षा जघन्य एक समय और उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवा भाग । परस्थान की अपेक्षा जघन्य एक समय का और उत्कृष्ट असंख्यात काल । भगवन् ! देशकम्पक द्विप्रदेशी स्कन्ध ? गौतम ! स्वस्थान की अपेक्षा जघन्य एक समय का और उत्कृष्ट असंख्यात काल । भगवन् ! सर्वकम्पक (द्विप्रदेशी स्कन्ध) ? गौतम ! देशकम्पक द्विप्रदेशी स्कन्ध अन्तर समान सर्वकम्पक का भी जानना । भगवन् ! निष्कम्पक (द्विप्रदेशी स्कन्ध) का ? गौतम ! स्वस्थान की अपेक्षा जघन्य एक समय और उत्कृष्ट आवलिका के संख्यातवा भाग । परस्थान की अपेक्षा जघन्य एक समय और उत्कृष्ट अनन्त काल । इसी प्रकार अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध तक के अन्तर को जानना ।

भगवन् ! (अनेक) सर्वकम्पक परमाणु-पुद्गलों का अन्तर कितने काल का है ? गौतम ! (उनका) अन्तर नहीं होता । भगवन् ! निष्कम्प (परमाणु-पुद्गलों) का ? गौतम ! (उनका भी) अन्तर नहीं होता । भगवन् ! (बहुत-से) देशकम्पक द्विप्रदेशी स्कन्धों का ? गौतम ! (उनका) अन्तर नहीं होता । भगवन् ! सर्वकम्पक (द्विप्रदेशी स्कन्धों) का ? गौतम ! (उनका) अन्तर नहीं होता । भगवन् ! निष्कम्प (द्विप्रदेशी स्कन्ध) का ? गौतम ! (उनका अन्तर नहीं होता । इसी प्रकार यावत् अनन्तप्रदेशी स्कन्धों तक के अन्तर का कथन जानना ।

भगवन् ! इन (पूर्वोक्त) सर्वकम्पक और निष्कम्पक परमाणु-पुद्गलों में कौन किनसे यावत् विशेषाधिक हैं? गौतम ! सबसे थोड़े सर्वकम्पक परमाणु-पुद्गल होते हैं । उनसे निष्कम्पक परमाणु-पुद्गल असंख्यातगुणे हैं । भगवन् ! देशकम्पक, सर्वकम्पक और निष्कम्पक द्विप्रदेशी स्कन्धों में कौन किनसे यावत् विशेषाधिक है ? गौतम ! सबसे थोड़े सर्वकम्पक द्विप्रदेशी स्कन्ध हैं, उनसे देशकम्पक और उनसे निष्कम्पक द्विप्रदेशी स्कन्ध उत्तरोत्तर क्रमशः असंख्यात-असंख्यात गुण हैं । इसी प्रकार यावत् असंख्यात-प्रदेशी स्कन्धों तक अल्पबहुत्व जानना । भगवन् ! देशकम्पक, सर्वकम्पक और निष्कम्पक अनन्तप्रदेशी स्कन्धों में कौन किनसे यावत् विशेषाधिक हैं ? गौतम ! सबसे थोड़े सर्वकम्पक अनन्तप्रदेशी स्कन्ध हैं । उनसे निष्कम्पक अनन्तप्रदेशी स्कन्ध अनन्तगुण और देशकम्पक

अनन्तप्रदेशी स्कन्ध अनन्तगुण हैं ।

भगवन् ! इन देशकम्पक, सर्वकम्पक और निष्कम्पक परमाणु-पुद्गलों, संख्यातप्रदेशी, असंख्यात-प्रदेशी और अनन्त-प्रदेशी स्कन्धों में, द्रव्यार्थ से, प्रदेशार्थ तथा द्रव्यार्थ-प्रदेशार्थ से कौन किससे यावत् विशेषाधिक है ? गौतम ! सर्वकम्पक अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से सबसे थोड़े हैं, उनसे निष्कम्पक अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध अनन्त गुणे । उनसे देशकम्पक अनन्तप्रदेशी स्कन्ध अनन्तगुणे । उनसे सर्वकम्पक असंख्यात-प्रदेशी स्कन्ध अनन्तगुणे । उनसे सर्वकम्पक संख्यात-प्रदेशी स्कन्ध असंख्यातगुणे । उनसे सर्वकम्पक परमाणु-पुद्गल असंख्यातगुणे देश-कम्पक संख्यात-प्रदेशी स्कन्ध असंख्यातगुणे हैं । उनसे निष्कम्पक असंख्यात-प्रदेशी स्कन्ध असंख्यातगुणे । उनसे निष्कम्पक परमाणु-पुद्गल असंख्यातगुणे । उनसे निष्कम्पक संख्यात-प्रदेशी स्कन्ध संख्यातगुणे और उनसे निष्कम्पक असंख्यात-प्रदेशी स्कन्ध असंख्यातगुणे हैं । प्रदेशार्थरूप से-सबसे थोड़े (सर्वकम्पक) अनन्त प्रदेशी स्कन्ध हैं । इस प्रकार प्रदेशार्थ से भी (पूर्ववत्) अल्पबहुत्व जानना । (विशेष यह है कि परमाणु-पुद्गल के लिए 'अप्रदेशार्थ' कहना तथा निष्कम्प संख्यात-प्रदेशी, स्कन्ध प्रदेशार्थ से असंख्यातगुण हैं । द्रव्यार्थ-प्रदेशार्थरूप से-सर्वकम्पक अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ सबसे थोड़े हैं । उनसे सर्वकम्पक अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध प्रदेशार्थ से अनन्त गुणे । उनसे निष्कम्पक अनन्तप्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से अनन्तगुणे । उनसे निष्कम्पक अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध प्रदेशार्थ से अनन्तगुणे । उनसे देशकम्पक अनन्तप्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से अनन्तगुणे । उनसे देशकम्पक अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध प्रदेशार्थ से अनन्तगुणे । उनसे सर्वकम्पक असंख्यात-प्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से असंख्यातगुणे । उनसे सर्वकम्पक असंख्यात-प्रदेशी स्कन्ध प्रदेशार्थ से असंख्यातगुणे । उनसे सर्वकम्पक संख्यातप्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से असंख्यातगुणे । उनसे सर्वकम्पक संख्यात-प्रदेशी स्कन्ध प्रदेशार्थ से असंख्यातगुणे । उनसे देशकम्पक संख्यात-प्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से असंख्यातगुणे । उनसे देशकम्पक संख्यात-प्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से असंख्यातगुणे । उनसे देशकम्पक संख्यात-प्रदेशी स्कन्ध प्रदेशार्थ से असंख्यातगुणे । उनसे देशकम्पक असंख्यात-प्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से असंख्यातगुणे । उनसे देशकम्पक असंख्यात-प्रदेशी स्कन्ध प्रदेशार्थ से असंख्यातगुणे । उनसे निष्कम्पक परमाणुपुद्गलद्रव्यार्थ-अप्रदेशार्थरूप से असंख्यातगुणे । उनसे निष्कम्पक संख्यातप्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से संख्यातगुणे । उनसे निष्कम्पक संख्यातप्रदेशी स्कन्ध प्रदेशार्थ से संख्यातगुणे । उनसे निष्कम्पक असंख्यात-प्रदेशी स्कन्ध द्रव्यार्थ से असंख्यातगुणे और उनसे निष्कम्पक असंख्यात-प्रदेशी स्कन्ध प्रदेशार्थ से असंख्यातगुणे हैं ।

सूत्र - ८९२

भगवन् ! धर्मास्तिकाय के मध्य-प्रदेश कितने कहे हैं ? गौतम ! आठ । भगवन् ! अधर्मास्तिकाय के मध्य-प्रदेश कितने कहे हैं ? गौतम ! आठ । भगवन् ! आकाशास्तिकाय के मध्य-प्रदेश कितने कहे हैं ? गौतम ! आठ । भगवन् ! जीवास्तिकाय के मध्य-प्रदेश कितने कहे हैं ? गौतम ! आठ । भगवन् ! जीवास्तिकाय के ये आठ मध्य-प्रदेश कितने आकाशप्रदेशों को अवगाहित कर सकते हैं ? गौतम ! वे जघन्य एक, दो, तीन, चार, पाँच या छह तथा उत्कृष्ट आठ आकाशप्रदेशों में अवगाहित हो सकते हैं, किन्तु सात प्रदेशों में नहीं समाते । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-२५ – उद्देशक-५

सूत्र - ८९३

भगवन् ! पर्यव कितने प्रकार के कहे हैं ? गौतम ! दो प्रकार के-जीवपर्यव और अजीवपर्यव । यहाँ प्रज्ञापनासूत्र का पयृवपद कहना चाहिए ।

सूत्र - ८९४

भगवन् ! क्या आवलिका संख्यात समय की, असंख्यात समय की या अनन्त समय की होती है ? गौतम ! वह केवल असंख्यात समय की होती है । भगवन् ! आनप्राण संख्यात समय का होता है ? इत्यादि । गौतम ! पूर्ववत् । भगवन् ! स्तोक संख्यात समय का होता है ? इत्यादि । गौतम ! पूर्ववत् । इसी प्रकार लव, मुहूर्त्त, अहोरात्र, पक्ष, मास, ऋतु, अयन, संवत्सर, युग, वर्षशत, वर्षसहस्र, लाख वर्ष, पूर्वांग, पूर्व, त्रुटितांग, त्रुटित, अटटांग, अटट, अववांग, अवव,

हूहूकांग, हूहूक, उत्पलांग, उत्पल, पद्मांग, पद्म, नलिनांग, नलिन, अक्षनिपूरांग, अक्षनिपूर, अयुतांग, अयुत, नयुतांग, नयुत, प्रयुतांग, प्रयुत, चूलिकांग, चूलिका, शीर्षप्रहेलिकांग, शीर्षप्रहेलिका, पल्योपम, सागरोपम, अवसर्पिणी और उत्सर्पिणी, इन सबके भी समय (पूर्वोक्त) जानना ।

भगवन् ! पुद्गलपरिवर्तन संख्यात समय का होता है, असंख्यात समय का या अनन्त समय का होता है ? गौतम ! वह अनन्त समय का होता है । इसी प्रकार भूतकाल, भविष्यत्काल तथा सर्वकाल भी समझना चाहिए । भगवन् ! क्या (बहुत) आवलिकाएं संख्यात समय की होती है ? इत्यादि । गौतम ! कदाचित् असंख्यात समय की और कदाचित् अनन्त समय की होती है । भगवन् ! क्या (अनेक) आनप्राण संख्यात समय के होते हैं ? गौतम ! पूर्ववत् । भगवन् ! (अनेक) स्तोक संख्यात समयरूप हैं ? गौतम ! पूर्ववत् । इसी प्रकार यावत् अवसर्पिणीकाल तक समझना । भगवन् ! क्या पुद्गल-परिवर्तन संख्यातसमय के होते हैं ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! वह अनन्त समय के होते हैं ।

भगवन् ! आनप्राण क्या संख्यात आवलिकारूप हैं ? हाँ, गौतम ! इसी प्रकार स्तोक यावत्-शीर्षप्रहेलिका तक जानना । भगवन् ! पल्योपम संख्यात आवलिकारूप है ? गौतम ! वह असंख्यात आवलिकारूप है । इसी प्रकार सागरोपम तथा अवसर्पिणी उत्सर्पिणी काल में जानना । (भगवन् !) पुद्गलपरिवर्तन ? गौतम ! वह अनन्त आवलिकारूप है । इसी प्रकार यावत् सर्वकाल तक जानना ।

भगवन् ! क्या (बहुत) आनप्राण संख्यात आवलिकारूप है ? वे कदाचित् संख्यात कदाचित् असंख्यात और कदाचित् अनन्त आवलिकारूप हैं । इसी प्रकार यावत् शीर्षप्रहेलिका तक जानना । भगवन् ! क्या पल्योपम? वे कदाचित् असंख्यात आवलिकारूप हैं और कदाचित् अनन्त आवलिकारूप हैं । इस प्रकार यावत् उत्सर्पिणी पर्यन्त समझना । भगवन् ! क्या पुद्गलपरिवर्त्तन ? वे अनन्त आवलिकारूप हैं ।

भगवन् ! स्तोक क्या संख्यात आनप्राणरूप हैं या असंख्यात आनप्राणरूप हैं ? आवलिका समान आनप्राण सम्बन्धी समग्र वक्तव्यता जानना । इस प्रकार पूर्वोक्त गम के अनुसार यावत् शीर्षप्रहेलिका तक कहना चाहिए ।

भगवन् ! सागरोपम क्या संख्यात पल्योपमरूप हैं ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! वह संख्यात पल्योपमरूप हैं, किन्तु असंख्यात पल्योपमरूप या अनन्त पल्योपमरूप नहीं है । इसी प्रकार अवसर्पिणी और उत्सर्पिणी के जानना। भगवन् ! पुद्गलपरिवर्तन क्या संख्यात पल्योपमरूप हैं ? गौतम ! वह अनन्तर पल्योपमरूप है । इसी प्रकार सर्वकाल तक जानना । भगवन् ! सागरोपम क्या संख्यात पल्योपमरूप है ? गौतम ! वे कदाचित् संख्यात कदाचित् असंख्यात और कदाचित् पल्योपमरूप हैं । इसी प्रकार यावत् अवसर्पिणी और उत्सर्पिणी काल के सम्बन्ध में जानना। भगवन् ! पुद्गलपरिवर्तन क्या संख्यात पल्योपमरूप होते हैं ? गौतम ! वे अनन्त पल्योपम-रूप हैं । भगवन्! अवसर्पिणी क्या संख्यात सागरोपम रूप है ? गौतम ! पल्योपम अनुसार सागरोपम की वक्तव्यता कहनी चाहिए ।

भगवन् ! पुद्गलपरिवर्तन क्या संख्यात अवसर्पिणीरूप-उत्सर्पिणीरूप है ? गौतम ! वह अनन्त अवस-र्पिणी-उत्सर्पिणीरूप है । इसी प्रकार यावत् सर्वकाल तक जानना । भगवन् ! (अनेक) पुद्गलपरिवर्तन क्या संख्यात अवसर्पिणी-उत्सर्पिणीरूप है ? गौतम ! वे अनन्त अवसर्पिणी-उत्सर्पिणीरूप है । भगवन् ! अतीताद्धा क्या संख्यात पुद्गलपरिवर्तनरूप है ? गौतम ! अनन्त पुद्गलपरिवर्तनरूप है । इसी प्रकार अनागताद्धा को जानना। इसी प्रकार सर्वाद्धा के विषय में जानना ।

सूत्र - ८९५

भगवन् ! अनागतकाल क्या संख्यात अतीतकालरूप है अथवा असंख्यात या अनन्त अतीतकालरूप है ? गौतम ! वह न तो संख्यात अतीतकालरूप है, न असंख्यात और अनन्त अतीतकालरूप है, किन्तु अतीताद्धाकाल से अनागताद्धाकाल एक समय अधिक है और अनागताद्धाकाल से अतीताद्धाकाल एक समय न्यून । भगवन् ! सर्वाद्धा क्या संख्यात अतीताद्धाकालरूप है ? इत्यादि । गौतम ! वह अतीताद्धाकाल से सर्वाद्धा कुछ अधिक द्विगुण है और अतीताद्धाकाल, सर्वाद्धा से कुछ कम अर्द्धभाग है। भगवन् ! सर्वाद्धा क्या संख्यात अनागताद्धा-कालरूप है? इत्यादि गौतम! वह सर्वाद्धा, अनागत-अद्धाकाल से कुछ कम दुगुना है और अनागताद्धाकाल सर्वाद्धा से सातिरेक अर्द्धभाग।

सूत्र - ८९६

भगवन् ! निगोद कितने प्रकार के कहे गए हैं ? गौतम ! दो प्रकार के-निगोद और निगोदजीव । भगवन् ! ये निगोद कितने प्रकार के कहे हैं ? गौतम ! दो प्रकार के-सूक्ष्मनिगोद और बादरनिगोद । इस प्रकार निगोद को जीवाभिगमसूत्र अनुसार जानना ।

सूत्र - ८९७

भगवन् ! नाम कितने प्रकार के हैं ? गौतम ! छह प्रकार के-औदयिक यावत् सान्निपातिक । भगवन् ! वह औदयिक नाम कितने प्रकार का है ? गौतम ! दो प्रकार का-उदय और उदयनिष्पन्न । सत्रहवें शतक के प्रथम उद्देशक में जैसे भाव के सम्बन्ध में कहा है, वैसे ही यहाँ कहना । वहाँ 'भाव' के सम्बन्ध में कहा है, जब कि यहाँ 'नाम' के विषय में है । शेष सान्निपातिक-पर्यन्त पूर्ववत् । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-२५ – उद्देशक-६

सूत्र - ८९८

निर्ग्रन्थ सम्बन्धी छत्रीश द्वार हैं, जैसे कि-वेद, राग, कल्प, चारित्र, प्रतिसेवना, ज्ञान, तीर्थ, लिंग, शरीर, क्षेत्र, काल, गति, संयम, निकाशर्ष । तथा-

सूत्र - ८९९

योग, उपयोग, कषाय, लेश्या, परिणाम, बन्ध, वेद, कर्मों की उदीरणा, उपसंपत्, संज्ञा, आहार । तथा-

सूत्र - ९००

भव, आकर्ष, काल, अन्तर, समुद्घात, क्षेत्र, स्पर्शना, भाव, परिमाण और अल्पबहुत्व ।

सूत्र - ९०१

राजगृह नगर में यावत् पूछा-भगवन् ! निर्ग्रन्थ कितने प्रकार के हैं ? गौतम ! पाँच प्रकार के-पुलाक, बकुश, कुशील, निर्ग्रन्थ और स्नातक ।

भगवन् ! पुलाक कितने प्रकार के कहे हैं ? गौतम ! पाँच प्रकार के-ज्ञानपुलाक, दर्शनपुलाक, चारित्र-पुलाक, लिंगपुलाक, यथासूक्ष्मपुलाक । भगवन् ! बकुश कितने प्रकार के कहे हैं ? गौतम ! पाँच प्रकार के-आभोगबकुश, अनाभोगबकुश, संवृतबकुश, असंवृतबकुश और यथासूक्ष्मबकुश । भगवन् ! कुशील कितने प्रकार के कहे हैं ? गौतम ! दो प्रकार के-प्रतिसेवनाकुशील और कषायकुशील । भगवन् ! प्रतिसेवनाकुशील कितने प्रकार के कहे हैं ? गौतम ! पाँच प्रकार के-ज्ञानप्रतिसेवनाकुशील, दर्शनप्रतिसेवनाकुशील, चारित्रप्रतिसेवना-कुशील, लिंगप्रतिसेवनाकुशील और यथासूक्ष्मप्रतिसेवनाकुशील । भगवन् ! कषायकुशील कितने प्रकार के कहे हैं? गौतम ! पाँच प्रकार के-ज्ञानकषायकुशील, दर्शनकषायकुशील, चारित्रकषायकुशील, लिंगकषायकुशील और पाँचवे यथा-सूक्ष्मकषायकुशील ।

भगवन् ! निर्ग्रन्थ कितने प्रकार के कहे हैं ? गौतम ! पाँच प्रकार के-प्रथम-समय-निर्ग्रन्थ, अप्रथम-समय-निर्ग्रन्थ, चरम-समय-निर्ग्रन्थ, अचरम-समय-निर्ग्रन्थ और पाँचवे यथासूक्ष्मनिर्ग्रन्थ । भगवन् ! स्नातक कितने प्रकार के कहे हैं ? गौतम ! पाँच प्रकार के-अच्छवि, असबल, अकर्मांश, संशुद्ध-ज्ञान-दर्शनधर अर्हन्त जिन केवली एवं अपरिस्रावी ।

भगवन् ! पुलाक सवेदी होता है, अथवा अवेदी होता है ? गौतम ! वह सवेदी होता है, अवेदी नहीं । भगवन् ! यदि पुलाक सवेदी होता है, तो क्या वह स्त्रीवेदी होता है, पुरुषवेदी होता है या पुरुष-नपुंसकवेदी होता है? गौतम ! वह पुरुषवेदी होता है, या पुरुष-नपुंसकवेदी होता है । भगवन् ! बकुश सवेदी होता है, या अवेदी होता है ? गौतम ! बकुश सवेदी होता है । भगवन् ! यदि बकुश सवेदी होता है, तो क्या वह स्त्रीवेदी होता है, पुरुषवेदी होता है, अथवा पुरुष-नपुंसकवेदी होता है ? गौतम ! वह स्त्रीवेदी भी होता है, पुरुषवेदी भी अथवा पुरुष-नपुंसक वेदी भी होता है । इसी प्रकार प्रतिसेवनाकुशील जानना ।

भगवन् ! कषायकुशील सवेदी होता है, या अवेदी होता है ? गौतम ! वह सवेदी भी होता है और अवेदी भी। भगवन् ! यदि वह अवेदी होता है तो क्या वह उपशान्तवेदी होता है, अथवा क्षीणवेदी होता है ? गौतम ! वह उपशान्तवेदी भी होता है, और क्षीणवेदी भी । भगवन् ! यदि वह सवेदी होता है तो क्या स्त्रीवेदी होता है ? इत्यादि। गौतम ! तीनों ही वेदों में होते हैं । भगवन् ! निर्ग्रन्थ सवेदी होता है, या अवेदी होता है ? गौतम ! वह अवेदी होता है। भगवन् ! यदि निर्ग्रन्थ अवेदी होता है, तो क्या वह उपशान्तवेदी होता है, या क्षीणवेदी होता है ? गौतम ! दोनो । भगवन् स्नातक सवेदी होता है, या अवेदी होता है ? इत्यादि । गौतम ! स्नातक अवेदी होता है, किन्तु वह क्षीणवेदी होता है ।

सूत्र - ९०२

भगवन् ! पुलाक सराग होता है या वीतराग ? गौतम ! वह सराग होता है, वीतराग नहीं होता है । इसी प्रकार कषायकुशील तक जानना । भगवन् ! निर्ग्रन्थ सराग होता है या वीतराग होता है ? गौतम ! वह वीतराग होता है । (भगवन !) यदि वह वीतराग होता है तो क्या उपशान्तकषाय वीतराग होता है या क्षीणकषाय वीतराग होता है ? गौतम दोनो । स्नातक के विषय में भी इसी प्रकार जानना । किन्तु क्षीणकषायवीतराग होता है ।

सूत्र - ९०३

भगवन् ! पुलाक स्थितकल्प में होता है, अथवा अस्थितकल्प में होता है ? गौतम ! वह स्थितकल्प में भी होता है और अस्थितकल्प में भी होता है । इसी प्रकार यावत् स्नातक तक जानना । भगवन् ! पुलाक जिनकल्प में होता है, स्थविरकल्प में होता है अथवा कल्पातीत में होता है ? गौतम ! वह स्थविरकल्प में होता है । भगवन् ! बकुश जिनकल्प में होता है ? इत्यादि पृच्छा । गौतम ! वह जिनकल्प में भी होता है, स्थविरकल्प में भी होता है । इसी प्रकार प्रतिसेवनाकुशील समझना । भगवन् ! कषायकुशील जिनकल्प में होता है ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! वह जिनकल्प में भी होता है, स्थविरकल्प में भी और कल्पातीत में भी होता है । भगवन् ! निर्ग्रन्थ जिनकल्प में होता है, स्थविरकल्प में या कल्पातीत होता है ? गौतम ! वह कल्पातीत होता है । इसी प्रकार स्नातक को जानना।

सूत्र - ९०४

भगवन् ! पुलाक सामायिकसंयम से, छेदोपस्थापनिकसंयम, परिहारविशुद्धिसंयम, सूक्ष्मसम्परायसंयम में अथवा यथाख्यातसंयम में होता है ? गौतम ! वह सामायिकसंयम में या छेदोपस्थापनिकसंयम में होता है, किन्तु परिहारविशुद्धि संयम, सूक्ष्मसम्परायसंयम या यथाख्यातसंयम में नहीं होता । बकुश और प्रतिसेवना कुशील के सम्बन्ध में भी इसी प्रकार समझना । भगवन् ! कषायकुशील किस संयमों में होता है ? गौतम ! वह सामायिक से लेकर सूक्ष्मसम्परायसंयम तक होता है । भगवन् ! निर्ग्रन्थ किस संयम में होता है ? गौतम ! वह एकमात्र यथा-ख्यातसंयम में होता है । इसी प्रकार स्नातक में समझना ।

सूत्र - ९०५

भगवन् ! पुलाक प्रतिसेवी होता है या अप्रतिसेवी होता है ? गौतम ! पुलाक प्रतिसेवी होता है, अप्रतिसेवी नहीं होता है । भगवन् ! यदि वह प्रतिसेवी होता है, तो क्या वह मूलगुण-प्रतिसेवी होता है, या उत्तरगुण-प्रतिसेवी होता है ? गौतम ! दोनो । यदि वह मूलगुणों का प्रतिसेवी होता है तो पाँच प्रकार के आश्रवों में से किसी एक आश्रव का प्रतिसेवन करता है और उत्तरगुणों का प्रतिसेवी होता है तो दस प्रकार के प्रत्याख्यानों में से किसी एक प्रख्याख्यान का प्रतिसेवन करता है । भगवन् ! बकुश प्रतिसेवी होता है या अप्रतिसेवी होता है ? गौतम ! वह प्रतिसेवी होता है । भगवन् ! यदि वह प्रतिसेवी होता है, तो क्या मूलगुण प्रतिसेवी होता है या उत्तरगुण-प्रतिसेवी होता है ? गौतम ! वह उत्तरगुण-प्रतिसेवी होता है । और दस में से किसी एक प्रत्याख्यान का प्रतिसेवी होता है । प्रतिसेवनाकुशील का कथन पुलाक के समान जानना । भगवन् ! कषायकुशील प्रतिसेवी होता है या अप्रतिसेवी होता है ? गौतम ! वह अप्रतिसेवी होता है । इसी प्रकार निर्ग्रन्थ और स्नातक में जानना ।

सूत्र - ९०६

भगवन् ! पुलाक में कितने ज्ञान होते हैं ? गौतम ! पुलाक में दो या तीन ज्ञान होते हैं । यदि दो ज्ञान हों तो

आभिनिबोधिकज्ञान और श्रुतज्ञान होते हैं । यदि तीन ज्ञान हों तो आभिनिबोधिकज्ञान, श्रुतज्ञान और अवधिज्ञान होता है । इसी प्रकार बकुश और प्रतिसेवनाकुशील के विषय में जानना चाहिए । भगवन् ! कषायकुशील में कितने ज्ञान होते हैं ? गौतम ! कषायकुशील में दो, तीन या चार ज्ञान होते हैं । यदि दो ज्ञान हों तो आभिनिबोधिकज्ञान और श्रुतज्ञान, तीन ज्ञान हों तो आभिनिबोधिकज्ञान, श्रुतज्ञान और अवीधज्ञान; अथवा आभिनिबोधिकज्ञान, श्रुतज्ञान और मनःपर्यवज्ञान । यदि चार ज्ञान हों तो आभिनिबोधिकज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान और मनःपर्यवज्ञान होते हैं । इसी प्रकार निर्ग्रन्थ में जानना । भगवन् ! स्नातक में कितने ज्ञान होते हैं ? गौतम ! एकमात्र केवलज्ञान ।

सूत्र - ९०७

भगवन् ! पुलाक कितने श्रुत का अध्ययन करता है ? गौतम ! जघन्यतः नौवें पूर्व की तृतीय आचारवस्तु तक का और उत्कृष्टतः पूर्ण नौ पूर्वों का । भगवन् ! बकुश कितने श्रुत पढ़ता है ? गौतम ! जघन्यतः अष्ट प्रवचन माता का और उत्कृष्ट दस पूर्व का अध्ययन करता है । इसी प्रकार प्रतिसेवनाकुशीलमें समझना । भगवन् ! कषाय कुशील कितने श्रुत का अध्ययन करता है ? गौतम ! जघन्य अष्ट प्रवचनमाता का और उत्कृष्ट चौदह पूर्वों का । इसी प्रकार निर्ग्रन्थ में जानना । भगवन् ! स्नातक कितने श्रुत का अध्ययन करता है ? गौतम ! स्नातक श्रुतव्यतिरिक्त होते हैं ।

सूत्र - ९०८

भगवन् ! पुलाक तीर्थ में होता है या अतीर्थ में होता है ? गौतम ! वह तीर्थ में होता है, अतीर्थ में नहीं होता है । इसी प्रकार बकुश एवं प्रतिसेवनाकुशील का कथन समझ लेना । भगवन् ! कषायकुशील ? गौतम ! वह तीर्थ में भी होता है और अतीर्थ में भी होता है । भगवन् ! वह अतीर्थ में होता है तो क्या तीर्थंकर होता है या प्रत्येकबुद्ध होता है ? वह तीर्थंकर भी होता है, प्रत्येकबुद्ध भी । इसी प्रकार निर्ग्रन्थ और स्नातक को जानना ।

सूत्र - ९०९

भगवन् ! पुलाक स्वलिंग में होता है, अन्यलिंग में या गृहीलिंगी होता है ? गौतम ! द्रव्यलिंग की अपेक्षा वह स्वलिंग में, अन्यलिंग में या गृहीलिंग में होता है, किन्तु भावलिंग की अपेक्षा नियम से स्वलिंग में होता है । इसी प्रकार स्नातक तक कहना ।

सूत्र - ९१०

भगवन् ! पुलाक कितने शरीरों में होता है ? गौतम ! वह औदारिक, तैजस और कार्मण, इन तीन शरीरों में होता है । भगवन् ! बकुश ? गौतम ! वह तीन या चार शरीरों में होता है । यदि तीन शरीरों में हो तो औदारिक, तैजस और कार्मण शरीर में होता है, और चार शरीरों में हो तो औदारिक, वैक्रिय, तैजस और कार्मण शरीरों में होता है । इसी प्रकार प्रतिसेवनाकुशील में समझना । भगवन् ! कषायकुशील ? गौतम ! वह तीन, चार या पाँच शरीरों में होता है । यदि तीन शरीरों में हो तो औदारिक, तैजस और कार्मण शरीर में होता है, चार शरीरों में हो तो औदारिक, वैक्रिय, तैजस और कार्मण शरीर में होता है और पाँच शरीरों में हो तो औदारिक, वैक्रिय, आहारक, तैजस और कार्मण शरीर में होता है । निर्ग्रन्थ और स्नातक का शरीरविषयक कथन पुलाक के समान है ।

सूत्र - ९११

भगवन् ! पुलाक कर्मभूमि में होता है या अकर्मभूमि में होता है ? गौतम ! जन्म और सद्भाव की अपेक्षा कर्मभूमि में होता है, अकर्मभूमि में नहीं होता । बकुश ? गौतम ! जन्म और सद्भाव से कर्मभूमि में होता है । संहरण की अपेक्षा कर्मभूमि में भी और अकर्मभूमि में भी होता है । इसी प्रकार स्नातक तक कहना ।

सूत्र - ९१२

भगवन् ! पुलाक अवसर्पिणीकाल में होता है, उत्सर्पिणीकाल में होता है, अथवा नोअवसर्पिणी-नोउत्सर्पिणीकाल में होता है ? गौतम ! पुलाक अवसर्पिणीकाल में भी होता है, उत्सर्पिणीकाल में भी होता है तथा नोअवसर्पिणी-नोउत्सर्पिणीकाल में भी होता है । यदि पुलाक अवसर्पिणीकाल में होता है, तो क्या वह सुषम-सुषमाकाल में होता है अथवा यावत् दुःषम-दुःषमाकाल में होता है ? गौतम ! (पुलाक) जन्म की अपेक्षा सुषम-सुषमा और

सुषमाकाल में नहीं होता, किन्तु सुषम-दुःषमा और दुःषम-सुषमाकाल में होता है तथा दुःषमाकाल एवं दुःषम-दुःषमाकाल में वह नहीं होता । सद्भाव की अपेक्षा वह सुषम-सुषमा, सुषमा तथा दुःषम-दुःषमाकाल में नहीं होता, किन्तु सुषम-दुःषमा, दुःषम-सुषमा एवं दुःषमाकाल में होता है । भगवन् ! यदि पुलाक उत्सर्पिणीकाल में होता है, तो क्या दुःषम-दुःषमामाल में होता है यावत् सुषम-सुषमाकाल में होता है ? गौतम ! जन्म की अपेक्षा दुःषम-दुःषमाकाल में नहीं होता, वह दुःषमाकाल में, दुःषम-सुषमाकाल में या सुषम-दुःषमाकाल में होता है, किन्तु सुषमाकाल में तथा सुषम-सुषमाकाल में नहीं होता । सद्भाव की अपेक्षा वह दुःषम-दुःषमाकाल में, दुःषमाकाल में, सुषमाकाल में तथा सुषम-सुषमाकाल में नहीं होता, किन्तु दुःषम-सुषमाकाल में या सुषम-दुःषमाकाल में होता है । भगवन् ! यदि (पुलाक) नोअवसर्पिणी-नोउत्सर्पिणीकाल में होता है तो क्या वह सुषम-सुषम-समानकाल में, या यावत् दुःषम-सुषमा-समानकाल में होता है ? गौतम ! जन्म और सद्भाव की अपेक्षा वह दुःषम-सुषमा-समान काल में होता है ।

भगवन् ! बकुश किस काल में होता है ? गौतम ! वह अवसर्पिणीकाल में, उत्सर्पिणीकाल में अथवा नोअवसर्पिणी-नोउत्सर्पिणीकाल में होता है । भगवन् ! यदि बकुश अवसर्पिणीकाल में होता है तो क्या सुषम-सुषमाकाल में होता है ? इत्यादि । गौतम ! जन्म और सद्भाव की अपेक्षा (वह) सुषम-दुःषमाकाल में, दुःषम-सुषमाकाल में या दुःषमकाल में होता है । संहरण की अपेक्षा किसी भी काल में होता है । भगवन् ! यदि (बकुश) उत्सर्पिणीकाल में होता है तो क्या दुःषम-दुःषमाकाल में होता है ? इत्यादि । गौतम ! जन्म और सद्भाव की अपेक्षा सब पुलाक के समान जानना । संहरण की अपेक्षा किसी भी काल में होता है । भगवन् ! यदि बकुश नो-अवसर्पिणी-नोउत्सर्पिणीकाल में होता है तो किस आरे में होता है ? गौतम ! जन्म और सद्भाव की अपेक्षा सब पुलाक के समान कहना चाहिए । इसी प्रकार प्रतिसेवनाकुशील और कषायकुशील के विषय में कहना । निर्ग्रन्थ और स्नातक का कथन भी पुलाक के समान है । विशेष यह सहंकरण की अपेक्षा ये सर्वकाल में होते हैं ।

सूत्र - ९१३

भगवन् ! पुलाक मरकर किस गति में जाता है ? गौतम ! देवगति में । भगवन् ! यदि वह देवगति में जाता है तो क्या भवनपत्तियों में उत्पन्न होता है या वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क या वैमानिक देवों में उत्पन्न होता है ? गौतम ! वह केवल वैमानिक देवों में उत्पन्न होता है । वैमानिक देवों में उत्पन्न होता हुआ पुलाक जघन्य सौधर्मकल्प में और उत्कृष्ट सहस्रारकल्प में उत्पन्न होता है । बकुश और प्रतिसेवनाकुशील में यही जानना । किन्तु वह उत्कृष्टतः अच्युत कल्प में उत्पन्न होता है । कषायकुशील की वक्तव्यता पुलाक के समान है, विशेष यह है कि वह उत्कृष्टतः अनुत्तर विमानों में उत्पन्न होता है । भगवन् ! निर्ग्रन्थ ? गौतम ! पूर्ववत् यावत् अजघन्य अनुत्कृष्ट अनुत्तर विमानों में उत्पन्न होता है । भगवन् ! स्नातक मृत्यु प्राप्त कर किस गति में जाता है ? गौतम ! सिद्धिगति में ।

भगवन् ! देवों में उत्पन्न होता हुआ पुलाक क्या इन्द्ररूप में उत्पन्न होता है या सामानिकदेवरूप में, त्रायस्त्रिंशरूप में लोकपालरूप में, अथवा अहमिन्द्ररूप में ? गौतम ! अविराधना की अपेक्षा वह इन्द्ररूप में, सामानिक रूप में, त्रायस्त्रिंशरूप में अथवा लोकपाल के रूप में उत्पन्न होता है, किन्तु अहमिन्द्ररूप में उत्पन्न नहीं होता । विराधना की अपेक्षा अन्यतर देव में उत्पन्न होता है । इसी प्रकार बकुश और प्रतिसेवनाकुशील को समझना । भगवन् कषायकुशील ? गौतम ! अविराधना की अपेक्षा वह इन्द्ररूप यावत् अहमिन्द्ररूप में उत्पन्न होता है । विराधना की अपेक्षा अन्यतरदेव में उत्पन्न होता है । भगवन् ! निर्ग्रन्थ ? गौतम ! अविराधना की (अपेक्षा) अहमि-न्द्ररूप में उत्पन्न होता है । विराधना की अपेक्षा वह किसी भी देवरूप में उत्पन्न होता है ।

भगवन् ! देवलोकों में उत्पन्न होते हुए पुलाक की स्थिति कितने काल की कही है ? गौतम ! जघन्य पल्योपमपृथक्त्व की और उत्कृष्ट अठारह सागरोपम की है । भगवन् ! बकुश की स्थिति ? गौतम ! जघन्य पल्योपम-पृथक्त्व की और उत्कृष्ट बाईस सागरोपम की है । इसी प्रकार प्रतिसेवनाकुशील में जानना । भगवन् ! कषाय-कुशील की स्थिति ? गौतम ! जघन्य पल्योपमपृथक्त्व की और उत्कृष्ट तैंतीस सागरोपम की है । भगवन् ! निर्ग्रन्थ की स्थिति ? गौतम ! अजघन्य-अनुत्कृष्ट तैंतीस सागरोपम की है ।

सूत्र - ९१४

भगवन् ! पुलाक के संयमस्थान कितने कहे हैं ? गौतम ! असंख्यात हैं । इसी प्रकार यावत् कषायकुशील तक कहना । भगवन् ! निर्ग्रन्थ के संयमस्थान ? गौतम ! एक ही अजघन्य-अनुत्कृष्ट संयमस्थान है । इसी प्रकार स्नातक के विषय में समझना ।

भगवन् ! पुलाक, बकुश, प्रतिसेवनाकुशील, कषायकुशील, निर्ग्रन्थ और स्नातक, इनके संयमस्थानों में अल्पबहुत्व क्या है ? गौतम ! निर्ग्रन्थ और स्नातक का संयमस्थान अजघन्य-अनुत्कृष्ट एक ही है और सबसे अल्प है । इनसे पुलाक के संयमस्थान असंख्यातगुणा है । उनसे बकुश के संयमस्थान असंख्यातगुणा है, उनसे प्रति-सेवनाकुशील के संयमस्थान असंख्यातगुणा है और उनसे कषायकुशील के संयमस्थान असंख्यातगुणा हैं ।

सूत्र - ९१५

भगवन् ! पुलाक के चारित्र-पर्यव कितने होते हैं ? गौतम ! अनन्त हैं । इसी प्रकार स्नातक तक कहना चाहिए

भगवन् ! एक पुलाक, दूसरे पुलाक के स्वस्थान-सन्निकर्ष से चारित्र-पर्यायों से हीन है, तुल्य है या अधिक है ? गौतम ! वह कदाचित् हीन होता है, कदाचित् तुल्य और कदाचित् अधिक होता है । यदि हीन हो तो अनन्त-भागहीन, असंख्यातभागहीन तथा संख्यातभागहीन होता है एवं संख्यातगुणहीन, असंख्यातगुणहीन और अनन्त-गुणहीन होता है । यदि अधिक हो तो अनन्तभाग-अधिक संख्यातभाग-अधिक और संख्यातभाग-अधिक होता है; तथैव संख्यातगुण-अधिक, असंख्यातगुण-अधिक और अनन्तगुण-अधिक होता है । भगवन् ! पुलाक अपने चारित्र -पर्यायों से, बकुश से परस्थान-सन्निकर्ष की अपेक्षा हीन हैं, तुल्य हैं या अधिक हैं ? गौतम ! वे अनन्तगुणहीन होते हैं । इसी प्रकार प्रतिसेवनाकुशील में कहना । कषायकुशील से पुलाक के स्वस्थान के समान षट्स्थानपतित कहना चाहिए । बकुश के समान निर्ग्रन्थ के भी कहना । स्नातक का कथन भी बकुश के समान है ।

भगवन् ! बकुश, पुलाक के परस्थान-सन्निकर्ष से चारित्र-पर्यायों की अपेक्षा हीन है, तुल्य है या अधिक है? गौतम ! वह हीन भी नहीं और तुल्य भी नहीं; किन्तु अधिक है; अनन्तगुण अधिक है । भगवन् ! बकुश, दूसरे बकुश के स्वस्थान-सन्निकर्ष से चारित्रपर्यायों से हीन है, तुल्य है या अधिक है ? गौतम ! वह कदाचित् हीन, कदाचित् तुल्य और कदाचित् अधिक होता है । यदि हीन हो तो षट्स्थान-पतित होता है । भगवन् ! बकुश, प्रति-सेवनाकुशील के परस्थान-सन्निकर्ष से, चारित्र-पर्यायों से हीन है, तुल्य है या अधिक है ? गौतम ! वह षट्स्थान-पतित होता है । इसी प्रकार कषायकुशील भी समझना । भगवन् ! बकुश निर्ग्रन्थ के परस्थान-सन्निकर्ष से चारित्र-पर्यायों से हीन, तुल्य या अधिक होते हैं ? गौतम ! वे अनन्तगुण-हीन होते हैं । इसी प्रकार स्नातक भी जानना । प्रतिसेवनाकुशील भी बकुश समान जानना । कषायकुशील भी बकुश समान है । विशेष यह है कि पुलाक के साथ षट्कस्थानपतित कहना ।

भगवन् ! निर्ग्रन्थ, पुलाक के परस्थान-सन्निकर्ष से, चारित्रपर्यायों से हीन है, तुल्य है या अधिक है ? गौतम! वह अनन्तगुण-अधिक है । इसी प्रकार यावत् कषायकुशील की अपेक्षा से भी जानना । भगवन् ! एक निर्ग्रन्थ, दूसरे निर्ग्रन्थ के स्वस्थान-सन्निकर्ष से चारित्र-पर्यायों से हीन है या अधिक हैं ? गौतम ! वह तुल्य होता है । इसी प्रकार स्नातक के साथ भी जानना । भगवन् ! स्नातक पुलाक के परस्थान-सन्निकर्ष से चारित्र-पर्यायों से हीन, तुल्य अथवा अधिक है ? गौतम ! निर्ग्रन्थ के समान जानना । भगवन् ! एक स्नातक दूसरे स्नातक के स्वस्थान-सन्निकर्ष से चारित्र-पर्यायों से हीन, तुल्य या अधिक है ? गौतम ! वह तुल्य है ।

भगवन् ! पुलाक, बकुश, प्रतिसेवनाकुशील, कषायकुशील, निर्ग्रन्थ और स्नातक, इनके जघन्य और उत्कृष्ट चारित्र-पर्यायों में अल्प बहुत्व क्या है ? गौतम ! पुलाक और कषायकुशील इन दोनों के जघन्य चारित्र-पर्याय परस्पर तुल्य हैं और सबसे अल्प हैं । उनसे पुलाक के उत्कृष्ट चारित्र-पर्याय अनन्तगुण । उनसे बकुश और प्रतिसेवनाकुशील इन दोनों के जघन्य चारित्र-पर्याय परस्पर तुल्य हैं और अनन्तगुणे । उनसे बकुश के उत्कृष्ट चारित्र-पर्याय अनन्तगुणे । उनसे प्रतिसेवनाकुशीलके उत्कृष्ट चारित्र-पर्याय अनन्तगुण । उनसे कषायकुशील के उत्कृष्ट चारित्र-पर्याय अनन्तगुण और उनसे निर्ग्रन्थ और स्नातक, इन दोनों के अजघन्य-अनुत्कृष्ट चारित्र-पर्याय अनन्तगुण हैं और परस्पर तुल्य हैं ।

सूत्र - ९१६

भगवन् ! पुलाक सयोगी होता है या अयोगी होता है ? गौतम ! वह सयोगी होता है, अयोगी नहीं होता है । भगवन् ! यदि वह सयोगी होता है तो क्या वह मनोयोगी होता है, वचनयोगी होता है या काययोगी होता है ? गौतम! तीनो योग वाला होता है । इसी प्रकार यावत् निर्ग्रन्थ तक जानना चाहिए । भगवन् ! स्नातक ? गौतम ! वह सयोगी भी होता है और अयोगी भी । भगवन् ! यदि वह सयोगी होता है तो क्या मनोयोगी होता है ? इत्यादि प्रश्न। पुलाक के समान है ।

सूत्र - ९१७

भगवन् ! पुलाक साकारोपयोगयुक्त होता है या अनाकारोपयोगयुक्त होता है ? गौतम ! वह साकारोपयो-गयुक्त भी होता है और अनाकारोपयोगयुक्त भी होता है । इसी प्रकार यावत् स्नातक तक कहना चाहिए ।

सूत्र - ९१८

भगवन् ! पुलाक सकषायी होता है या अकषायी होता है ? गौतम ! वह सकषायी होता है, अकषायी नहीं होता । भगवन् ! यदि वह सकषायी होता है, तो कितने कषायों में होता है ? गौतम ! वह चारों कषायों में होता है । इसी प्रकार बकुश और प्रतिसेवनाकुशील को भी जानना । भगवन् ! कषायकुशील ? गौतम ! वह सकषायी होता है । भगवन् ! यदि वह सकषायी होता है, तो कितने कषायों में होता है ? गौतम ! वह चार, तीन, दो या एक कषाय में होता है । चार कषायों में होने पर संज्वलन क्रोध, मान, माया और लोभ । तीन कषाय में संज्वलन मान, माया और लोभ । दो कषायों में संज्वलन माया और लोभ और एक कषाय में होने पर संज्वलन लोभ में होता है ।

भगवन् ! निर्ग्रन्थ ? गौतम ! वह अकषायी होता है । भगवन् ! यदि निर्ग्रन्थ अकषायी होता है तो क्या उपशान्तकषायी होता है, अथवा क्षीणकषायी होता है ? गौतम ! वह उपशान्तकषायी भी होता है और क्षीणकषायी भी । स्नातक के विषय में भी इसी प्रकार जानना चाहिए । विशेष यह है कि वह क्षीणकषायी होता है ।

सूत्र - ९१९

भगवन् ! पुलाक सलेश्य होता है या अलेश्य होता है ? गौतम ! वह सलेश्य होता है अलेश्य नहीं होता है । भगवन् ! यदि वह सलेश्य होता है तो कितनी लेश्याओं में होता है ? गौतम ! वह तीन विशुद्ध लेश्याओं में होता है, यथा-तेजोलेश्या, पद्मलेश्या और शुक्ललेश्या में । इसी प्रकार बकुश और प्रतिसेवना कुशील जानना । भगवन् ! कषायकुशील ? गौतम ! वह सलेश्य होता है । भगवन् ! यदि वह सलेश्य होता है, तो कितनी लेश्याओं में होता है ? गौतम ! वह छहों लेश्याओं में होता है, यथा-कृष्णलेश्या यावत् शुक्ललेश्या में । भगवन् ! निर्ग्रन्थ ? गौतम ! वह सलेश्य होता है । भगवन् ! यदि निर्ग्रन्थ सलेश्य होता है, तो में होता है ? गौतम ! निर्ग्रन्थ एकमात्र शुक्ललेश्या में होता है । भगवन् ! स्नातक ? वह सलेश्य भी होता है, और अलेश्य भी । भगवन् ! यदि स्नातक सलेश्य होता है, तो वह कितनी लेश्याओं में होता है ? गौतम ! वह एक परम शुक्ललेश्या में होता है ।

सूत्र - ९२०

भगवन् ! पुलाक, वर्द्धमानपरिणामी होता है, हीयमानपरिणामी होता है अथवा अवस्थितपरिणामी होता है? तीनों में होता है । इसी प्रकार यावत् कषायकुशील तक जानना । भगवन् ! निर्ग्रन्थ ? गौतम ! वह वर्द्धमान और अवस्थित परिणाम वाला होता है । इसी प्रकार स्नातक के । भगवन् ! पुलाक कितने काल तक वर्द्धमान-परिणाम में होता है ? गौतम ! जघन्य एक समय और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त्त । भगवन् ! वह कितने काल तक हीयमान परिणामी होता है ? गौतम ! जघन्य एक समय और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त्त । भगवन् ! वह कितने काल तक अवस्थित परिणामी होता है ? गौतम ! जघन्य एक समय और उत्कृष्ट सात समय । इसी प्रकार कषायकुशील तक जानना ।

भगवन् ! निर्ग्रन्थ कितने काल तक वर्द्धमानपरिणामी होता है ? गौतम ! जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त्त । भगवन् ! निर्ग्रन्थ कितने काल तक अवस्थितपरिणामी होता है ? गौतम ! जघन्य एक समय और उत्कृष्ट अन्त-र्मुहूर्त्त । भगवन् ! स्नातक कितने काल तक वर्द्धमानपरिणामी होता है ? गौतम ! जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त्त । भगवन् !

स्नातक कितने काल तक अवस्थितपरिणामी रहता है ? जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट देशोन पूर्वकोटि वर्ष ।

सूत्र - ९२१

भगवन् ! पुलाक कितनी कर्मप्रकृतियाँ बाँधता है ? गौतम ! वह आयुष्यकर्म को छोड़कर सात कर्मप्र-कृतियाँ बाँधता है । भगवन् ! बकुश ? गौतम ! वह सात अथवा आठ कर्मप्रकृतियाँ बाँधता है । यदि सात कर्म-प्रकृतियाँ बाँधता है, तो आयुष्य को छोड़कर शेष सात और यदि आयुष्यकर्म बाँधता है तो सम्पूर्ण आठ कर्मप्रकृतियों को बाँधता है । इसी प्रकार प्रतिसेवनाकुशील को समझना । भगवन् ! कषायकुशील ? गौतम ! वह सात, आठ या छह कर्मप्रकृतियाँ बाँधता है । सात बाँधता हुआ आयुष्य के अतिरिक्त शेष सात । आठ बाँधता हुआ परिपूर्ण आठ कर्मप्रकृतियाँ और छह बाँधता हुआ आयुष्य और मोहनीय कर्म को छोड़कर शेष छह कर्मप्रकृतियाँ बाँधता है । भगवन् ! निर्ग्रन्थ ? गौतम ! वह एकमात्र वेदनीयकर्म बाँधता है । भगवन् ! स्नातक ? गौतम ! वह एक कर्मप्रकृति बाँधता है, अथवा अबन्धक होता है । एक कर्मप्रकृति बाँधता हैं तो वेदनीयकर्म बाँधता है ।

सूत्र - ९२२

भगवन् ! पुलाक कितनी कर्मप्रकृतियों का वेदन करता है ? गौतम ! नियम से आठों कर्मप्रकृतियों का । इसी प्रकार कषायकुशील तक कहना । भगवन् ! निर्ग्रन्थ ? गौतम ! मोहनीयकर्म को छोड़कर सात कर्मप्रकृतियों का वेदन करता है । भगवन् ! स्नातक ? गौतम ! वह वेदनीय, आयुष्य, नाम और गोत्र इन चार कर्मप्रकृतियों का वेदन करता है

सूत्र - ९२३

भगवन् ! पुलाक कितनी कर्मप्रकृतियों की उदीरणा करता है ? गौतम ! वह आयुष्य और वेदनीय के सिवाय शेष छह कर्मप्रकृतियों की उदीरणा करता है । भगवन् ! बकुश ? गौतम ! वह सात, आठ या छह कर्म-प्रकृतियों की उदीरणा करता है । सात की उदीरणा करता हुआ आयुष्य को छोड़कर सात कर्मप्रकृतियों को, आठ की उदीरणा करता है तो परिपूर्ण आठ कर्मप्रकृतियों की तथा छह की उदीरणा करता है तो आयुष्य और वेदनीय को छोड़कर छह की उदीरणा करता है । इसी प्रकार प्रतिसेवनाकुशील जानना ।

कषायकुशील ? गौतम ! वह सात, आठ, छह या पाँच कर्मप्रकृतियों की उदीरणा करता है । सात की उदीरणा करता है तो आयुष्य को छोड़कर सात, आठ की उदीरणा करता है तो परिपूर्ण आठ, छह की उदीरणा करता है तो आयुष्य और वेदनीय को छोड़कर शेष छह तथा पाँच की उदीरणा करता है तो आयुष्य, वेदनीय और मोहनीय को छोड़कर, शेष पाँच की उदीरणा करता है । भगवन् ! निर्ग्रन्थ ? गौतम ! पाँच अथवा दो । जब वह पाँच की उदीरणा करता है तब आयुष्य, वेदनीय और मोहनीय को छोड़कर शेष पाँच और दो की उदीरणा करता है तो नाम और गोत्र कर्म की उदीरणा करता है । भगवन् ! स्नातक ? गौतम ! दो की अथवा बिलकुल उदीरणा नहीं करता । जब दो की उदीरणा करता है तो नाम और गोत्र कर्म की उदीरणा करता है ।

सूत्र - ९२४

भगवन् ! पुलाक, पुलाकपन को छोड़ता हुआ क्या छोड़ता है और क्या प्राप्त करता है ? गौतम ! वह पुलाकपन का त्याग करता है और कषायकुशीलपन या असंयम को प्राप्त करता है । भगवन् ! बकुश ? गौतम ! वह बकुशत्व का त्याग करता है और प्रतिसेवनाकुशीलत्व, कषायकुशीलत्व, असंयम या संयमासंयम को प्राप्त करता है । भगवन् ! प्रतिसेवनाकुशील ? गौतम ! वह प्रतिसेवनाकुशीलत्व को छोड़ता है और बकुशत्व, कषाय-कुशीलत्व, असंयम या संयमासंयम को पाता है । भगवन् ! कषायकुशील ? गौतम ! वह कषायकुशीलत्व को छोड़ता है और पुलाकत्व, बकुशत्व, प्रतिसेवनाकुशीलत्व, निर्ग्रन्थत्व, असंयम अथवा संयासंयम को प्राप्त करता है। भगवन् ! निर्ग्रन्थ ? गौतम ! वह निर्ग्रन्थता को छोड़ता है और कषायकुशीलत्व, स्नाकत्व या असंयम को प्राप्त करता है । भगवन् ! स्नातक ? गौतम ! स्नातक, स्नातकत्व को छोड़ता है और सिद्धगति को प्राप्त करता है ।

सूत्र - ९२५

भगवन् ! पुलाक संज्ञोपयुक्त होता है अथवा नोसंज्ञोपयुक्त होता है ? गौतम ! वह संज्ञोपयुक्त नहीं होता,

नोसंज्ञोपयुक्त होता है । भगवन् ! बकुश ? गौतम ! वह संज्ञोपयुक्त भी होता है और नोसंज्ञोपयुक्त भी होता है । इसी प्रकार प्रतिसेवना और कषाय भी जानना कुशील । कषायकुशील के सम्बन्ध में भी इसी प्रकार जानना चाहिए। निर्ग्रन्थ और स्नातक को पुलाक के समान नोसंज्ञोपयुक्त कहना चाहिए ।

सूत्र - ९२६

भगवन् ! पुलाक आहारक होता है अथवा अनाहारक होता है ? गौतम ! वह आहारक होता है, अनाहारक नहीं होता है । इसी प्रकार निर्ग्रन्थ तक कहना चाहिए । भगवन् ! स्नातक ? गौतम ! वह आहारक भी होता है और अनाहारक भी होता है ।

सूत्र - ९२७

भगवन् ! पुलाक कितने भव ग्रहण करता है ? गौतम ! जघन्य एक और उत्कृष्ट तीन भव । भगवन् ! बकुश ? गौतम ! जघन्य एक और उत्कृष्ट आठ । इसी प्रकार प्रतिसेवन और कषाय कुशील है । कषायकुशील भी इसी प्रकार है । निर्ग्रन्थ पुलाक के समान है । भगवन् ! स्नातक ? वह एक भव ग्रहण करता है ।

सूत्र - ९२८

भगवन् ! पुलाक के एकभव-ग्रहण-सम्बन्धी आकर्ष कितने कहे हैं ? गौतम ! जघन्य एक और उत्कृष्ट तीन आकर्ष । भगवन् ! बकुश ? गौतम ! जघन्य एक और उत्कृष्ट सैकड़ों आकर्ष होते हैं । इसी प्रकार प्रतिसेवना और कषायकुशील को भी जानना । भगवन् ! निर्ग्रन्थ ? गौतम ! जघन्य एक और उत्कृष्ट दो आकर्ष होते हैं । भगवन् ! स्नातक के ? गौतम ! उसको एक ही आकर्ष होता है ।

भगवन् ! पुलाक के नाना-भव-ग्रहण-सम्बन्धी आकर्ष कितने होते हैं ? गौतम ! जघन्य दो और उत्कृष्ट सात । भगवन् ! बकुश के ? जघन्य दो और उत्कृष्ट सहस्रों । इसी प्रकार कषायकुशील तक कहना । भगवन् ! निर्ग्रन्थ के ? गौतम ! जघन्य दो और उत्कृष्ट पाँच । भगवन् ! स्नातक के ? गौतम ! एक भी आकर्ष नहीं होता ।

सूत्र - ९२९

भगवन् ! पुलाकत्व काल की अपेक्षा कितने काल तक रहता है ? गौतम ! जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त्त । भगवन् ! बकुशत्व ? गौतम ! जघन्य एक समय और उत्कृष्ट देशोन पूर्वकोटिवर्ष तक रहता है । इसी प्रकार प्रति-सेवना और कषायकुशील को समझना । भगवन् ! निर्ग्रन्थत्व ? गौतम ! जघन्य एक समय और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त्त। भगवन् ! स्नाकत्व ? गौतम ! जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट देशोन पूर्वकोटिवर्ष तक रहता है ।

भगवन् ! बहुत पुलाक कितने काल तक रहते हैं ? गौतम ! जघन्य एक समय और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त्त । भगवन् ! बहुत बकुश ? गौतम ! सर्वकाल । इसी प्रकार कषायकुशीलों तक जानना । निर्ग्रन्थों पुलाकों के समान । स्नातकों बकुशों के समान हैं ।

सूत्र - ९३०

भगवन् ! (एक) पुलाक का अन्तर कितने काल का होता है ? गौतम ! जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट अनन्तकाल का होता है । (अर्थात्) अनन्त अवसर्पिणी उत्सर्पिणी काल का और क्षेत्र की अपेक्षा देशोन अपार्द्ध पुद्गलपरावर्तन का । इसी प्रकार निर्ग्रन्थ तक जानना । भगवन् ! स्नातक का ? गौतम ! उसका अन्तर नहीं होता।

भगवन् ! (अनेक) पुलाकों का अन्तर कितने काल का होता है ? गौतम ! जघन्य एक समय का और उत्कृष्ट संख्यात वर्षों का । भगवन् ! बकुशों का ? गौतम ! उनका अन्तर नहीं होता । इसी प्रकार कषायकुशीलों तक का कथन जानना । भगवन् ! निर्ग्रन्थों का ? गौतम ! उनका अन्तर जघन्य एक समय का और उत्कृष्ट छह मास का है । स्नातकों का अन्तर बकुशों के समान है ।

सूत्र - ९३१

भगवन् ! पुलाक के कितने समुद्घात कहे हैं ? गौतम ! तीन समुद्घात–वेदनासमुद्घात, कषायसमुद्घात और मारणान्तिकसमुद्घात । भगवन् ! बकुश के ? गौतम ! पाँच समुद्घात कहे हैं, वेदनासमुद्घात से लेकर तैजस

समुद्घात तक । इसी प्रकार प्रतिसेवनाकुशील को समझना । भगवन् ! कषायकुशील के ? गौतम ! छह समुद्घात हैं, वेदनासमुद्घात से लेकर आहारकसमुद्घात तक । भगवन् ! निर्ग्रन्थ के ? गौतम ! एक भी समुद्घात नहीं होता। भगवन् ! स्नातक के ? गौतम ! केवल एक केवलिसमुद्घात है ।

सूत्र - ९३२

भगवन् ! पुलाक लोक के संख्यातवे भाग में होते हैं, असंख्यातवे भाग में होते हैं, संख्यातभागों में होते हैं, असंख्यातभागों में होते हैं या सम्पूर्ण लोक में होते हैं ? गौतम ! वह लोक के संख्यातवे भाग में नहीं होते, किन्तु असंख्यातवे भाग में होते हैं, संख्यातभागों में असंख्यातभागों में या सम्पूर्ण लोक में नहीं होते हैं । इसी प्रकार निर्ग्रन्थ तक समझ लेना । भगवन् ! स्नातक ? गौतम ! वह लोक के संख्यातवे भाग में और संख्यातभागों में नहीं होता, किन्तु असंख्यातवे भाग में, असंख्यात भागों में या सर्वलोक में होता है ।

सूत्र - ९३३

भगवन् ! पुलाक लोक के संख्यातवें भाग को स्पर्श करता है या असंख्यातवे भाग को ? अवगाहना के समान, स्पर्शना के विषय में भी यावत् स्नातक तक जानना ।

सूत्र - ९३४

भगवन् ! पुलाक किस भाव में होता है ? गौतम ! वह क्षायोपशमिक भाव में होता है । इसी प्रकार यावत् कषायकुशील तक जानना । भगवन् ! निर्ग्रन्थ ? गौतम ! औपशमिक या क्षायिक भाव में । भगवन् ! स्नातक ? वह क्षायिक भाव में होता है ।

सूत्र - ९३५

भगवन् ! पुलाक एक समय में कितने होते हैं ? गौतम ! प्रतिपद्यमान पूर्व प्रतिपन्न दोनों अपेक्षा पुलाक कदाचित् होते हैं और कदाचित् नहीं होते । यदि होते हैं तो जघन्य एक, दो या तीन और उत्कृष्ट शतपृथक्त्व होते हैं। पूर्वप्रतिपन्न की अपेक्षा भी पुलाक कदाचित् नहीं होते । यदि होते हैं तो जघन्य एक, दो या तीन और उत्कृष्ट सहस्र पृथक्त्व होते हैं । भगवन् ! बकुश एक समय में कितने होते हैं ? गौतम ! प्रतिपद्यमान की अपेक्षा बकुश कदाचित् होते हैं और कदाचित् नहीं भी होते । यदि होते हैं तो जघन्य एक, दो या तीन और उत्कृष्ट शतपृथक्त्व होते हैं । पूर्वप्रतिपन्न की अपेक्षा बकुश जघन्य और उत्कृष्ट कोटिशतपृथक्त्व होते हैं । इसी प्रकार प्रतिसेवनाकुशील जानना ।

भगवन् ! कषायकुशील एक समय में कितने होते हैं ? गौतम ! प्रतिपद्यमान की अपेक्षा कषायकुशील कदाचित् होते हैं, कदाचित् नहीं होते । यदि होते हैं तो जघन्य एक, दो या तीन और उत्कृष्ट सहस्रपृथक्त्व होते हैं । पूर्वप्रतिपन्न की अपेक्षा कषायकुशील जघन्य और उत्कृष्ट कोटिसहस्रपृथक्त्व होते हैं । भगवन् ! निर्ग्रन्थ ? गौतम ! प्रतिपद्यमान की अपेक्षा कदाचित् होते हैं और कदाचित् नहीं भी होते । यदि होते हैं तो जघन्य एक, दो या तीन और उत्कृष्ट एक सौ बासठ होते हैं । उनमें से क्षपकश्रेणी वाले १०८ और उपशमश्रेणी वाले ५४, यों दोनों मिलकर १६२ होते हैं । पूर्वप्रतिपन्न की अपेक्षा निर्ग्रन्थ कदाचित् होते हैं और कदाचित् नहीं होते । यदि होते हैं तो जघन्य एक, दो या तीन और उत्कृष्ट शतपृथक्त्व होते हैं । भगवन् ! स्नातक ? गौतम ! प्रतिपद्यमान की अपेक्षा वे कदाचित् होते हैं और कदाचित् नहीं होते । यदि होते हैं तो जघन्य एक, दो या तीन और उत्कृष्ट एक सौ आठ होते हैं । पूर्वप्रतिपन्न की अपेक्षा स्नातक जघन्य और उत्कृष्ट कोटिपृथक्त्व होते हैं ।

भगवन् ! पुलाक, बकुश, प्रतिसेवनाकुशील, कषायकुशील, निर्ग्रन्थ, स्नातक, इनमें से कौन किससे अल्प, बहुत, तुल्य या विशेषाधिक है ? गौतम ! सबसे थोड़े निर्ग्रन्थ हैं, उनसे पुलाक संख्यात-गुणे, उनसे स्नातक संख्यात-गुणे, उनसे बकुश संख्यात-गुणे, उनसे प्रतिसेवनाकुशील संख्यात-गुणे और उनसे कषायकुशील संख्यात-गुणे हैं ।

शतक-२५ – उद्देशक-७

सूत्र - ९३६

भगवन् ! संयत कितने प्रकार के हैं ? गौतम ! पाँच, सामायिक-संयत, छेदोपस्थापनिक-संयत, परिहार-

विशुद्धि-संयत, सूक्ष्मसम्पराय-संयत और यथाख्यात-संयत । भगवन् ! सामायिक-संयत कितने प्रकार का है ? गौतम ! दो, इत्वरिक और यावत्कथिक । भगवन् ! छेदोपस्थापनिक-संयत ? गौतम ! दो, सातिचार और निरतिचार भगवन् ! परिहारविशुद्धिक-संयत ? गौतम ! दो, निर्विशमानक और निर्विष्टकायिक । भगवन् ! सूक्ष्मसम्पराय-संयत ? गौतम ! दो, संक्लिश्यमानक और विशुद्ध्यमानक । भगवन् ! यथाख्यात-संयत ? गौतम ! दो, छद्मस्थ और केवली ।

सूत्र - ९३७

सामायिक-चारित्र को अंगीकार करने के पश्चात् चातुर्याम-रूप अनुत्तर धर्म का जो मन, वचन और काया से त्रिविध पालन करता है, वह 'सामायिक-संयत' है ।

सूत्र - ९३८

प्राचीन पर्याय को छेद करके जो अपनी आत्मा को पंचमहाव्रत धर्म में स्थापित करता है, वह 'छेदोपस्थापनीय-संयत' कहलाता है ।

सूत्र - ९३९

जो पंचमहाव्रतरूप अनुत्तर धर्म को मन, वचन और काया से त्रिविध पालन करता हुआ आत्म-विशुद्धि धारण करता है, वह परिहारविशुद्धिक-संयत कहलाता है ।

सूत्र - ९४०

जो सूक्ष्म लोभ का वेदन करता हुआ उपशमक होता है, अथवा क्षपक होता है, वह सूक्ष्मसम्पराय-संयत होता है । यह यथाख्यात-संयत से कुछ हीन होता है ।

सूत्र - ९४१

मोहनीयकर्म उपशान्त या क्षीण हो जाने पर जो छद्मस्थ या जिन होता है, वह यथाख्यात-संयत कहलाता है ।

सूत्र - ९४२

भगवन् ! सामायिकसंयत सवेदी होता है या अवेदी ? गौतम ! वह सवेदी भी होता है और अवेदी भी । यदि वह सवेदी होता है, आदि सभी कथन कषायकुशील के अनुसार कहना । इसी प्रकार छेदोपस्थापनीयसंयत में भी जानना । परिहारविशुद्धिकसंयत का कथन पुलाक समान । सूक्ष्मसम्परायसंयत और यथाख्यातसंयत का कथन निर्ग्रन्थ समान है ।

भगवन् ! सामायिकसंयत सराग होता है या वीतराग ? गौतम ! वह सराग होता है, वीतराग नहीं होता है । इसी प्रकार सूक्ष्मसम्परायसंयत-पर्यन्त कहना चाहिए । यथाख्यातसंयत का कथन निर्ग्रन्थ के समान जानना चाहिए।

भगवन् ! सामायिकसंयत स्थितकल्प में होता है या अस्थितकल्प में ? गौतम ! वह स्थितकल्प में भी होता है और अस्थितकल्प में भी होता है । भगवन् ! छेदोपस्थापनिकसंयत ? गौतम ! वह स्थितकल्प में होता है, अस्थितकल्प में नहीं होता है । इसी प्रकार परिहार-विशुद्धिसंयत में भी समझना । शेष दो-सूक्ष्मसम्परायसंयत और यथाख्यातसंयत का कथन सामायिकसंयत के समान जानना ।

भगवन् ! सामायिकसंयत जिनकल्प में होता है, स्थविरकल्प में होता है या कल्पातीत में होता है ? गौतम! वह जिनकल्प में होता है, इत्यादि कषायकुशील के समान जानना । छेदोपस्थापनिक और परिहारविशुद्धिक-संयत के सम्बन्धमें बकुश के समान जानना । शेष दो-सूक्ष्मसम्परायसंयत और यथाख्यातसंयत 'निर्ग्रन्थ' के समान समझना ।

सूत्र - ९४३

भगवन् ! सामायिकसंयत पुलाक होता है, अथवा बकुश, यावत् स्नातक होता है ? गौतम ! वह पुलाक, बकुश यावत् कषायकुशील होता है, किन्तु 'निर्ग्रन्थ' और स्नातक नहीं होता है । इसी प्रकार छेदोपस्थापनीय जानना । भगवन् ! परिहारविशुद्धिकसंयत ? गौतम ! वह केवल कषायकुशील होता हे । इसी प्रकार सूक्ष्मसम्पराय संयत में भी समझना । भगवन् ! यथाख्यातसंयत ? वह केवल निर्ग्रन्थ या स्नातक होता है ।

भगवन् ! सामायिकसंयत प्रतिसेवी होता है या अप्रतिसेवी होता है ? गौतम ! वह प्रतिसेवी भी होता है और

अप्रतिसेवी भी होता है ? भगवन् ! यदि वह प्रतिसेवी होता है तो क्या मूलगुणप्रतिसेवी होता है ? गौतम ! इस विषय में पुलाक समान जानना । सामायिकसंयत के समान छेदोपस्थापनिकसंयत को जानना । भगवन् ! परिहार-विशुद्धिसंयत ? गौतम ! वह अप्रतिसेवी होता है । इसी प्रकार यथाख्यातसंयत तक कहना ।

भगवन् ! सामायिकसंयत में कितने ज्ञान होते हैं ? गौतम ! दो, तीन या चार । कषायकुशील समान चार ज्ञान भजना से समझना । इसी प्रकार सूक्ष्मसम्परायसंयत तक जानना । यथाख्यातसंयतमें ज्ञानोद्देशक अनुसार पाँच ज्ञान भजना से ।

भगवन् ! सामायिकसंयत कितने श्रुत का अध्ययन करता है ? गौतम ! वह जघन्य आठ प्रवचनमाता का अध्ययन करता है, इत्यादि कषायकुशील समान जानना । इसी प्रकार छेदोपस्थापनीयसंयत में भी जानना । भगवन् परिहारविशुद्धिकसंयत ? गौतम ! जघन्य नौवे पूर्व की तीसरी आचारवस्तु तक तथा उत्कृष्ट दस पूर्व असम्पूर्ण तक अध्ययन करता है । सूक्ष्मसम्परायसंयत सामायिकसंयत के समान जानना । भगवन् ! यथाख्यातसंयत ? गौतम! वह जघन्य अष्ट प्रवचनमाता का, उत्कृष्ट चौदहपूर्व तक का अध्ययन करता है अथवा वह श्रुतव्यतिरिक्त (केवली) होता है

भगवन् ! सामायिकसंयत तीर्थ में होता है अथवा अतीर्थ में होता है ? गौतम ! वह तीर्थ में भी होता है और अतीर्थ में भी, इत्यादि कषायकुशील के समान कहना चाहिए । छेदोपस्थापनीय और परिहारविशुद्धिकसंयत पुलाक समान जानना । शेष सूक्ष्मसम्पराय और यथाख्यात संयत को सामायिकसंयत समान जानना ।

भगवन् ! सामायिकसंयत स्वलिंग में होता है, अन्य लिंग में या गृहस्थलिंग में होता है ? गौतम ! इसका सभी कथन पुलाक के समान जानना । इसी प्रकार छेदोपस्थापनीयसंयत को भी जानना । भगवन् ! परिहारविशु-द्धिकसंयत ? गौतम ! वह द्रव्यलिंग और भावलिंग की अपेक्षा स्वलिंग में ही होता है । शेष कथन सामायिकसंयत समान जानना ।

भगवन् ! सामायिकसंयत कितने शरीरों में होता है ? गौतम ! तीन, चार या पाँच शरीरों में होता है, इत्यादि कषायकुशील समान जानना । इसी प्रकार छेदोपस्थापनीयसंयत को भी जानना । शेष तीनों का शरीर-विषयक कथन पुलाक के समान जानना ।

भगवन् ! सामायिकसंयत कर्मभूमि में होता है या अकर्मभूमि में ? गौतम ! जन्म और सद्भाव की अपेक्षा से वह कर्मभूमि में होता है, इत्यादि बकुश के समान जानना । इसी प्रकार छेदोपस्थापनीयसंयत का कथन है । परिहारविशुद्धिकसंयत को पुलाक के समान जानना । (सूक्ष्मसम्पराय और यथाख्यात संयत) को सामायिकसंयत के समान जानना ।

सूत्र - ९४४

भगवन् ! सामायिकसंयत अवसर्पिणीकाल में होता है, उत्सर्पिणीकाल में होता है, या नोअवसर्पिणी-नोउत्सर्पिणीकाल में होता है ? गौतम ! वह अवसर्पिणीकाल में होता है, इत्यादि सब कथन बकुश के समान है । इसी प्रकार छेदोपस्थापनीयसंयत के विषय में भी समझना । विशेष यह कि जन्म और सद्भाव की अपेक्षा चारों पलिभागों में नहीं होता, संहरण की अपेक्षा किसी भी पालिभाग में होता है । भगवन् ! परिहारविशुद्धिकसंयत ? गौतम ! वह अवसर्पिणीकाल में होता है, उत्सर्पिणीकाल में भी होता है, किन्तु नोअवसर्पिणी-नोउत्सर्पिणीकाल में नहीं होता । यदि अवसर्पिणी या उत्सर्पिणीकाल में होता है, तो पुलाक के समान होता है । सूक्ष्मसम्परायसंयत और यथाख्यात को निर्ग्रन्थ के समान समझना ।

सूत्र - ९४५

भगवन् ! सामायिकसंयत काल कर किस गति में जाता है ? गौतम ! देवगति में । भगवन् ! वह देवगति में जाता हुआ भवनवासी यावत् वैमानिकों में से किन देवों में उत्पन्न होता है ? गौतम ! वह कषायकुशील के समान भवनपति में उत्पन्न नहीं होता, इत्यादि सब कहना । इसी प्रकार छेदोपस्थापनीयसंयत को भी समझना । परिहार-विशुद्धिकसंयत की गति पुलाक के समान जानना । सूक्ष्मसम्परायसंयत की गति निर्ग्रन्थ के समान जानना चाहिए।

भगवन् ! यथाख्यातसंयत कालधर्म प्राप्त कर किस गति में जाता है ? गौतम ! अजघन्यानुत्कृष्ट अनुत्तरविमान में उत्पन्न होता है और कोई सिद्ध होकर है, यावत् सर्व दुःखों का अन्त करता है ।

भगवन् ! देवलोकों में उत्पन्न होता हुआ सामायिकसंयत क्या इन्द्ररूप से उत्पन्न होता है ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! अविराधना की अपेक्षा कषायकुशील के समान जानना । इसी प्रकार छेदोपस्थापनीयसंयत को जानना । परिहारविशुद्धिकसंयत का कथन पुलाक के समान जानना चाहिए । शेष (सूक्ष्मसम्पराय और यथाख्यात संयत) को निर्ग्रन्थ समान जानना ।

भगवन् ! देवलोक में उत्पन्न हुए सामायिकसंयत की कितने काल की स्थिति कही गई है ? गौतम ! जघन्य दो पल्योपम और उत्कृष्ट तैंतीस सागरोपम है । इसी प्रकार छेदोपस्थापनीयसंयत की स्थिति भी समझना । भगवन्! देवलोक में उत्पन्न होते हुए परिहारविशुद्धिकसंयत की स्थिति ? गौतम ! जघन्य दो पल्योपम और उत्कृष्ट अठारह सागरोपम की है । शेष दो संयतों की स्थिति निर्ग्रन्थ के समान जानना ।

सूत्र - ९४६

भगवन् ! सामायिकसंयत के कितने संयमस्थान कहे हैं ? गौतम ! असंख्येय संयमस्थान हैं । इसी प्रकार यावत् परिहारविशुद्धिकसंयत के संयमस्थान होते हैं । भगवन् ! सूक्ष्मसम्परायसंयम के कितने संयमस्थान कहे हैं ? गौतम ! असंख्येय अन्तर्मुहूर्त्त के समय बराबर । भगवन् ! यथाख्यातसंयत के ? गौतम ! अजघन्य-अनुत्कृष्ट एक ही संयमस्थान है ।

भगवन् ! सामायिक, छेदोपस्थापनीय, परिहारविशुद्धिक, सूक्ष्मसम्पराय और यथाख्यात संयत, इनके संयमस्थानों में अल्पबहुत्व क्या है ? विशेषाधिक है ? गौतम ! इनमें से यथाख्यातसंयत का एक अजघन्यानुत्कृष्ट संयमस्थान है और वही सबसे अल्प है, उससे सूक्ष्मसम्परायसंयत के अन्तर्मुहूर्त्त सम्बन्धी संयमस्थान असंख्यात-गुणे उनसे परिहारविशुद्धिसंयत के संयमस्थान असंख्येयगुणे । उनसे सामायिकसंयत और छेदोपस्थापनीय संयत संयमस्थान तुल्य हैं और असंख्येयगुणे हैं ।

सूत्र - ९४७

भगवन् ! सामायिकसंयत के चारित्रपर्यव कितने कहे हैं ? गौतम ! अनन्त हैं । इसी प्रकार यथाख्यातसंयत तक के चारित्रपर्यव के विषय में जानना चाहिए ।

भगवन् ! एक सामायिकसंयत, दूसरे सामायिकसंयत के स्वस्थानसन्निकर्ष की अपेक्षा क्या हीन होता है, तुल्य होता है अथवा अधिक होता है ? गौतम ! वह कदाचित् हीन, कदाचित् तुल्य और कदाचित् अधिक होता है । वह हीनाधिकता में षट्स्थानपतित होता है । भगवन् ! सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनीयसंयत के परस्थानसन्निकर्ष की अपेक्षा क्या हीन, तुल्य या अधिक होता है ? गौतम ! पूर्ववत् । इसी प्रकार परिहारविशुद्धिक संयत के विषय में जानना चाहिए । भगवन् ! सामायिकसंयत, सूक्ष्मसम्परायसंयत के परस्थानसन्निकर्ष की अपेक्षा क्या हीन, तुल्य या अधिक होता है ? गौतम ! वह अनन्तगुणहीन होता है । इसी प्रकार यथाख्यातसंयत के विषय में जानना । इसी प्रकार छेदोपस्थापनीयसंयत भी नीचे के तीनों संयतों के साथ षट्स्थानपतित और ऊपर के दो संयतों के साथ उसी प्रकार अनन्तगुणहीन होता है । परिहारविशुद्धिकसंयत को छेदोपस्थापनीयसंयत समान जानना ।

भगवन् ! सूक्ष्मसम्परायसंयत, सामायिकसंयत के परस्थानसन्निकर्ष की अपेक्षा हीन, तुल्य या अधिक होता है ? गौतम ! वह अनन्तगुण अधिक होता है । इसी प्रकार छेदोपस्थापनीय और परिहारविशुद्धिकसंयत के साथ भी जानना । स्वस्थानसन्निकर्ष की अपेक्षा से कदाचित् हीन और कदाचित् अधिक होते हैं, यदि हीन होते हैं तो अनन्त गुण हीन और अधिक होते हैं तो अनन्तगुण अधिक होते हैं। भगवन् ! सूक्ष्मसम्परायसंयत, सामायिकसंयत के परस्थानसन्निकर्ष की अपेक्षा क्या हीन, तुल्य अथवा अधिक होता है ? गौतम ! अनन्तगुण हीन होता है । यथाख्यात संयत नीचे के चार संयतों की अपेक्षा अनन्तगुण अधिक होता है । स्वस्थानसन्निकर्ष की अपेक्षा वह तुल्य होता है ।

भगवन् ! सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनीयसंयत, परिहारविशुद्धिकसंयत, सूक्ष्मसम्परायसंयत और यथा-

ख्यातसंयत; उनके जघन्य और उत्कृष्ट चारित्रपर्यवों में अल्पबहुत्व ? गौतम ! सामायिकसंयत और छेदोपस्थापनीयसंयत, इन दोनों के जघन्य चारित्रपर्यव परस्पर तुल्य और सबसे अल्प हैं । उनसे परिहारविशुद्धिकसंयत के जघन्य चारित्रपर्यव अनन्तगुणे उनसे परिहारविशुद्धिक संयत के उत्कृष्ट चारित्रपर्यव अनन्तगुणे उनसे सामायिकसंयत और छेदोपस्थापनीयसंयत के उत्कृष्ट चारित्रपर्यव अनन्तगुणे हैं और परस्पर तुल्य उनसे सूक्ष्मसम्परायसंयत के जघन्य चारित्रपर्यव अनन्तगुणे उनसे सूक्ष्मसम्परायसंयत के उत्कृष्ट चारित्रपर्यव अनन्तगुणे । उनसे यथाख्यातसंयत के अजघन्य-अनुत्कृष्ट चारित्रपर्यव अनन्तगुण हैं ।

भगवन् ! सामायिकसंयत सयोगी होता है अथवा अयोगी होता है ? गौतम ! वह सयोगी होता है; इत्यादि पुलाक के समान जानना । इसी प्रकार सूक्ष्मसम्परायसंयत तक समझना । यथाख्यातसंयत स्नातक के समान है ।

भगवन् ! सामायिकसंयत साकारोपयोगयुक्त होता है या अनाकारोपयोगुक्त होता है ? गौतम ! वह साकारोपयोगयुक्त होता है, इत्यादि पुलाक के समान जानना । इसी प्रकार यथाख्यातसंयत-पर्यन्त कहना; किन्तु सूक्ष्मसम्पराय केवल साकारोपयोगयुक्त ही होता है ।

भगवन् ! सामायिकसंयत सकषायी होता है अथवा अकषायी ? गौतम ! वह सकषायी होता है, इत्यादि कषायकुशील के समान जानना । इसी प्रकार छेदोपस्थापनीय भी समझना । परिहारविशुद्धिकसंयत का कथन पुलाक के समान है । भगवन् ! सूक्ष्मसम्परायसंयत ? गौतम ! वह सकषायी होता है, भगवन् ! यदि वह सकषायी होता है तो उसमें कितने कषाय होते हैं ? एकमात्र संज्वलनलोभ है । यथाख्यातसंयत निर्ग्रन्थ के समान है ।

भगवन् ! सामायिकसंयत सलेश्य होता है अथवा अलेश्य ? गौतम ! वह सलेश्य होता है, इत्यादि कषायकुशील के समान जानना । इसी प्रकार छेदोपस्थापनीयसंयत में कहना । परिहारविशुद्धिकसंयत पुलाक के समान है। सूक्ष्मसम्परायसंयत निर्ग्रन्थ के समान है । यथाख्यातसंयत स्नातक के समान है । यदि वह सलेश्य होता है तो शुक्ललेश्यी होता है ।

सूत्र - ९४८

भगवन् ! सामायिकसंयत वर्द्धमान परिणाम वाला होता है, हीयमान परिणाम वाला होता है, अथवा अवस्थित परिणाम वाला होता है ? गौतम ! वह वर्द्धमान परिणाम वाला होता है; इत्यादि पुलाक के समान जानना। इसी प्रकार परिहारविशुद्धिकसंयत पर्यन्त कहना । भगवन् ! सूक्ष्मसम्पराय संयत ? गौतम ! वह वर्द्धमान परिणाम वाला होता है या हीयमान परिणाम वाला होता है । यथाख्यातसंयत निर्ग्रन्थ के समान है ।

भगवन् ! सामायिकसंयत कितने काल तक वर्द्धमान परिणामयुक्त रहता है ? गौतम ! जघन्य एक समय इत्यादि पुलाक के समान है । इसी प्रकार यावत् परिहारविशुद्धिकसंयत तक कहना । भगवन् ! सूक्ष्मसम्परायसंयत कितने काल तक वर्द्धमान परिणामयुक्त रहता है ? गौतम ! जघन्य एक समय और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त्त तक । भगवन् ! वह कितने काल तक हीयमान परिणाम वाला रहता है ? गौतम ! पूर्ववत् ! भगवन् ! यथाख्यातसंयत कितने काल वर्द्धमान परिणाम वाला रहता है ? गौतम ! जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त्त तक । वह कितने काल तक अवस्थितपरिणाम वाला होता है ? गौतम ! जघन्य एक समय और उत्कृष्ट देशोन पूर्वकोटिवर्ष तक ।

सूत्र - ९४९

भगवन् ! सामायिकसंयत कितनी कर्मप्रकृतियाँ बाँधता है ? गौतम ! सात या आठ; इत्यादि बकुश के समान जानना। इसी प्रकार परिहारविशुद्धिकसंयत पर्यन्त कहना । भगवन् ! सूक्ष्मसम्परायसंयत कितनी कर्मप्रकृतियाँ बाँधता है ? गौतम ! आयुष्य और मोहनय कर्म को छोड़कर शेष छह । यथाख्यातसंयत स्नातक के समान हैं ।

भगवन् ! सामायिकसंयत कितनी कर्मप्रकृतियों का वेदन करता है ? गौतम ! नियम से आठ कर्मप्रकृतियों का । इसी प्रकार यावत् सूक्ष्मसम्परायसंयत को जानना । भगवन् ! यथाख्यातसंयत कितनी कर्मप्रकृतियों का वेदन करता है ? गौतम ! सात या चार, यदि सात कर्मप्रकृतियों का वेदन करता है तो मोहनीयकर्म को छोड़कर शेष सात। यदि चार का वेदन करता है तो वेदनीय, आयुष्य, नाम और गोत्र का करता है ।

भगवन् ! सामायिकसंयत कितनी कर्मप्रकृतियों की उदीरणा करता है ? गौतम ! सात कर्मप्रकृतियों की; इत्यादि बकुश के समान जानना । इसी प्रकार यावत् परिहारविशुद्धिकसंयत पर्यन्त कहना चाहिए । भगवन् ! सूक्ष्म सम्परायसंयत कितनी कर्मप्रकृतियों की उदीरणा करता है ? गौतम ! छह या पाँच की । यदि छह की उदीरणा करता है तो आयुष्य और वेदनीय को छोड़कर शेष छह कर्मप्रकृतियों को; यदि पाँच की उदीरणा करता है तो आयुष्य, वेदनीय और मोहनीय को छोड़कर शेष पाँच कर्मप्रकृतियों की उदीरता है । भगवन् ! यथाख्यातसंयत कितनी कर्म-प्रकृतियों की उदीरणा करता है ? गौतम ! वह पाँच या दो की या अनुदीरक होता है । यदि वह पाँच की उदीरणा करता है तो आयुष्य, वेदनीय और मोहनीय को छोड़कर शेष पाँच कर्मप्रकृतियों की उदीरता है, इत्यादि निर्ग्रन्थ के समान जानना।

सूत्र - ९५०

भगवन् ! सामायिकसंयत, सामायिकसंयतत्व त्यागते हुए किसको छोड़ता है और किसे ग्रहण करता है ? गौतम ! वह सामायिकसंयतत्व को छोड़ता है और छेदोपस्थापनीयसंयम, सूक्ष्मसम्परायसंयम, असंयम अथवा संयमासंयम को ग्रहण करता है । भगवन् ! छेदोपस्थापनीयसंयत ? गौतम ! वह छेदोपस्थापनीयसंयतत्व का त्याग करता है और सामायिकसंयम, परिहारविशुद्धिकसंयम, सूक्ष्मसम्परायसंयम, असंयम या संयमासंयम को प्राप्त करता है । भगवन् ! परिहारविशुद्धिकसंयत ? गौतम ! वह सूक्ष्मसम्परायसंयतत्व को छोड़ता है और सामायिक-संयम, छेदोपस्थापनीयसंयम, सूक्ष्मसम्परायसंयम, असंयम अथवा संयमासंयम को ग्रहण करता है । भगवन् ! यथाख्यातसंयत ? गौतम ! वह यथाख्यातसंयतत्व का त्याग करता है और सूक्ष्मसम्परायसंयम, असंयम या सिद्धिगति को प्राप्त करता है ।

सूत्र - ९५१

भगवन् ! सामायिकसंयत संज्ञोपयुक्त होता है या नोसंज्ञोपयुक्त होता है ? गौतम ! वह संज्ञोपयुक्त होता है, इत्यादि बकुश के समान जानना । इसी प्रकार का कथन परिहारविशुद्धिकसंयत पर्यन्त जानना । सूक्ष्मसम्पराय-संयत और यथाख्यातसंयत का कथन पुलाक के समान जानना । भगवन् ! सामायिकसंयत आहारक होता है या अनाहारक होता है ? गौतम ! पुलाक के समान जानना । इसी प्रकार सूक्ष्मसम्परायसंयत तक जानना । यथाख्यात संयत स्नातक के समान जानना ।

भगवन् ! सामायिकसंयत कितने भव ग्रहण करता है ? गौतम ! जघन्य एक भव और उत्कृष्ट आठ भव । इसी प्रकार छेदोपस्थापनीयसंयत को भी जानना । भगवन् ! परिहारविशुद्धिकसंयत ? गौतम ! जघन्य एक और उत्कृष्ट तीन भव ग्रहण करता है । इसी प्रकार यावत् यथाख्यातसंयत तक कहना चाहिए ।

सूत्र - ९५२

भगवन् ! सामायिकसंयत के एक भव में कितने आकर्ष होते हैं ? गौतम ! जघन्य और उत्कृष्ट शतपृथ-क्त्व । भगवन् ! छेदोपस्थापनीयसंयत का एक भव में कितने आकर्ष होते हैं ? गौतम ! जघन्य एक और उत्कृष्ट बीस-पृथक्त्व। भगवन् ! परिहारविशुद्धिकसंयत के ? गौतम ! जघन्य एक और उत्कृष्ट तीन । भगवन् ! सूक्ष्म-सम्परायसंयत के ? गौतम ! जघन्य एक और उत्कृष्ट चार । भगवन् ! यथाख्यातसंयत के एक भव में कितने आकर्ष होते हैं ? गौतम ! जघन्य एक और उत्कृष्ट दो ।

भगवन् ! सामायिकसंयत के अनेक भवों में कितने आकर्ष होते हैं ? गौतम ! बकुश के समान उसके आकर्ष होते हैं । भगवन् ! छेदोपस्थापनीयसंयत के ? गौतम ! जघन्य दो और उत्कृष्ट नौ सौ से ऊपर और एक हजार के अन्दर आकर्ष होते हैं । परिहारविशुद्धिकसंयत के जघन्य दो और उत्कृष्ट सात आकर्ष हैं । सूक्ष्मसम्पराय-संयत के जघन्य दो और उत्कृष्ट नौ आकर्ष हैं । यथाख्यातसंयत के जघन्य दो और उत्कृष्ट पाँच आकर्ष हैं ।

सूत्र - ९५३

भगवन् ! सामायिकसंयत कितने काल तक रहता है ? गौतम ! जघन्य एक समय और उत्कृष्ट देशोन नौ वर्ष कम पूर्वकोटिवर्ष । इसी प्रकार छेदोपस्थापनीयसंयत को भी कहना । परिहारविशुद्धिसंयत जघन्य एक समय और

उत्कृष्ट देशोन २९ वर्ष कम पूर्वकोटिवर्ष पर्यन्त रहता है । सूक्ष्मसम्परायसंयत निर्ग्रन्थ के अनुसार कहना । यथाख्यातसंयत को सामायिकसंयत के समान जानना ।

भगवन् ! (अनेक) सामायिकसंयत कितने काल तक रहते हैं ? गौतम ! (सदाकाल) । भगवन् ! (अनेक) छेदोपस्थापनीयसंयत ? गौतम ! जघन्य अढ़ाई सौ वर्ष और उत्कृष्ट पचास लाख करोड़ सागरोपम तक होते हैं । भगवन् ! (अनेक) परिहारविशुद्धिकसंयत ? गौतम ! जघन्य देशोन दो सौ वर्ष और उत्कृष्ट देशोन दो पूर्वकोटिवर्ष तक होते हैं । भगवन् ! (अनेक) सूक्ष्मसम्परायसंयत ? गौतम ! जघन्य एक समय और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त्त तक रहते हैं । (बहुत) यथाख्यातसंयतों को सामायिकसंयतों के समान जानना ।

भगवन् ! (एक) सामायिकसंयत का अन्तर कितने काल का होता है ? गौतम ! जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त इत्यादि पुलाक के समान जानना । इसी प्रकार का कथन यथाख्यातसंयत तक समझना चाहिए । भगवन् ! (अनेक) सामायिकसंयतों का अन्तर काल ? गौतम ! उनका अन्तर नहीं होता । भगवन् ! (अनेक) छेदोपस्थापनीयसंयतों का अन्तर ? गौतम ! जघन्य तिरेसठ हजार वर्ष और उत्कृष्ट (कुछ कम) अठारह कोड़ाकोड़ी सागरोपम काल । भगवन् ! परिहारविशुद्धिकसंयतों का अन्तर काल ? गौतम ! जघन्य चौरासी हजार वर्ष और उत्कृष्ट देशोन अठारह कोड़ाकोड़ी सागरोपम का है । सूक्ष्मसम्परायसंयतों का अन्तर निर्ग्रन्थों के समान है । यथाख्यातसंयतों का अन्तर सामायिकसंयतों के समान है ।

भगवन् ! सामायिकसंयत के कितने समुद्घात कहे हैं ? गौतम ! छह समुद्घात हैं, इत्यादि वर्णन कषाय-कुशील के समान समझना । इसी प्रकार छेदोपस्थापनीयसंयत जानना । परिहारविशुद्धिकसंयत को पुलाक के समान जानना । सूक्ष्मसम्परायसंयत को निर्ग्रन्थ के समान जानना । यथाख्यातसंयत स्नातक के समान जानना ।

भगवन् ! सामायिकसंयत लोक के संख्यातवे भाग में होता है या असंख्यातवे ? वह लोक के संख्यातवे भाग में नहीं होता; इत्यादि पुलाक के समान । इसी प्रकार सूक्ष्मसम्परायसंयत तक जानना । यथाख्यातसंयत स्नातक अनुसार जानना ।

भगवन् ! सामायिकसंयत क्या लोक के संख्यातवे भाग का स्पर्श करता है ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! क्षेत्र-अवगाहना के समान क्षेत्र-स्पर्शना भी जानना ।

भगवन् ! सामायिकसंयत किस भावमें होता है ? गौतम ! क्षायोपशमिक भावमें । इसी प्रकार सूक्ष्मसम्पराय-संयत तक जानना चाहिए । भगवन् ! यथाख्यातसंयत ? गौतम ! वह औपशमिकभाव या क्षायिक भाव में होता है ।

भगवन् ! सामायिकसंयत एक समय में कितने होते हैं ? गौतम ! प्रतिपद्यमान की अपेक्षा समग्र कथन कषायकुशील के समान जानना । भगवन् ! छेदोपस्थापनीयसंयत ? गौतम ! प्रतिपद्यमान की अपेक्षा से कदाचित् होते हैं और कदाचित् नहीं होते हैं । यदि होते हैं तो जघन्य एक, दो या तीन और उत्कृष्ट शत-पृथक्त्व होते हैं । पूर्व-प्रतिपन्न कदाचित् नहीं भी होते । यदि होते हैं तब जघन्य कोटिशतपृथक्त्व तथा उत्कृष्ट भी कोटिशतपृथक्त्व होते हैं । परिहारविशुद्धिकसंयतों की संख्या पुलाक के समान हैं । सूक्ष्मसम्परायसंयतों की संख्या निर्ग्रन्थों के अनुसार होती है। भगवन् ! यथाख्यातसंयत ? गौतम ! प्रतिपद्यमान की अपेक्षा वे कदाचित् होते हैं और कदाचित् नहीं होते हैं । यदि होते हैं तो जघन्य एक, दो या तीन और उत्कृष्ट १६२ होते हैं; जिनमें से १०८ क्षपक और ५४ उपशमक होते हैं । पूर्वप्रतिपन्न की अपेक्षा जघन्य और उत्कृष्ट कोटिपृथक्त्व होते हैं ।

भगवन् ! इन सामायिक, छेदोपस्थापनीय, परिहारविशुद्धिक, सूक्ष्मसम्पराय और यथाख्यात संयतों में कौन किससे अल्प, बहुत, तुल्य या विशेषाधिक है ? सूक्ष्मसम्परायसंयत सबसे थोड़े है; उनसे परिहारविशुद्धिकसंयत संख्यातगुणे, उनसे यथाख्यातसंयत संख्यातगुणे, उनसे छेदोपस्थापनीयसंयत संख्यातगुणे और उनसे सामयिक-संयत संख्यातगुणे हैं ।

सूत्र - ९५४

प्रतिसेवना, दोषालोचना, आलोचनार्ह, समाचारी, प्रायश्चित्त और तप ।

सूत्र - ९५५, ९५६

प्रतिसेवना कितने प्रकार की है ? दस प्रकार की है, यथा-दर्पप्रतिसेवना, प्रमादप्रतिसेवना, प्रमादप्रतिसेवना, अनाभोगप्रतिसेवना, आतुरप्रतिसेवना, आपत्प्रति-सेवना, संकीर्णप्रतिसेवना, सहसाकारप्रतिसेवना, भयप्रतिसेवना, प्रद्वेषप्रतिसेवना और विमर्शप्रतिसेवना ।

सूत्र - ९५७, ९५८

आलोचना के दस दोष कहे हैं । वे इस प्रकार हैं- आकम्प्य, अनुमान्य, दृष्ट, बादर, सूक्ष्म, छन्न-प्रच्छन्न, शब्दाकुल, बहुजन, अव्यक्त और तत्सेवी ।

सूत्र - ९५९

दस गुणों से युक्त अनगार अपने दोषों की आलोचना करने योग्य होता है । यथा-जातिसम्पन्न, कुलसम्पन्न, विनयसम्पन्न, ज्ञानसम्पन्न, दर्शनसम्पन्न, चारित्रसम्पन्न, क्षान्त, दान्त, अमायी और अपश्चात्तापी ।

सूत्र - ९६०, ९६१

समाचारी दस प्रकार की कही है, यथा- इच्छाकार, मिथ्याकार, तथाकार, आवश्यकी, नैषेधिकी, आपृच्छना, प्रतिपृच्छना, छन्दना, निमंत्रणा और उपसम्पदा ।

सूत्र - ९६२

दस प्रकार का प्रायश्चित्त कहा है । यथा-आलोचनार्ह, प्रतिक्रमणार्ह, तदुभयार्ह, विवेकार्ह, व्युत्सर्गार्ह, तपार्ह, छेदार्ह, मूलार्ह, अनवस्थाप्यार्ह और पारांचिकार्ह ।

सूत्र - ९६३, ९६४

तप दो प्रकार का कहा गया है । यथा-बाह्य और आभ्यन्तर । (भगवन !) वह बाह्य तप किस प्रकार का है? (गौतम !) छह प्रकार का है । अनशन, अवमौदर्य, भिक्षाचर्या, रसपरित्याग, कायक्लेश और प्रतिसंलीनता ।

सूत्र - ९६५

भगवन् ! अनशन कितने प्रकार का है ? गौतम ! दो प्रकार का-इत्वरिक और यावत्कथिक । भगवन् ! इत्वरिक अनशन कितने प्रकार का कहा है ? अनेक प्रकार का यथा-चतुर्थभक्त, षष्ठभक्त, अष्टम-भक्त, दशम-भक्त, द्वादशभक्त, चतुर्दशभक्त, अर्द्धमासिक, मासिकभक्त, द्विमासिकभक्त, त्रिमासिकभक्त यावत् षाण्मासिक-भक्त । यह इत्वरिक अनशन है । भगवन् ! यावत्कथिक अनशन कितने प्रकार का कहा गया है ? गौतम ! दो प्रकार का-पादोपगमन और भक्तप्रत्याख्यान । भगवन् ! पादोपगमन कितने प्रकार का कहा गया है ? गौतम ! दो प्रकार का-निर्हारिम और अनिर्हारिम । ये दोनों नियम से अप्रतिकर्म होते हैं । भगवन् ! भक्तप्रत्याख्यान अनशन क्या है ? दो प्रकार का-निर्हारिम और अनिर्हारिम । यह नियम से सप्रतिकर्म होता है ।

भगवन् ! अवमोदरिका तप कितने प्रकार का है ? गौतम ! दो प्रकार का-द्रव्य-अवमोदरिका और भाव-अवमोदरिका । भगवन् ! द्रव्य-अवमोदरिका कितने प्रकार का है ? गौतम ! दो प्रकार का-उपकरणद्रव्य-अवमोद-रिका और भक्तपानद्रव्य-अवमोदरिका । भगवन् ! उपकरणद्रव्य-अवमोदरिका कितने प्रकार का कहा है ? गौतम ! तीन प्रकार का-एक वस्त्र, एक पात्र और त्यक्तोपकरण-स्वदनता । भगवन् ! भक्तपानद्रव्य-अवमोदरिका कितने प्रकार का है ? गौतम ! अण्डे के प्रमाण के आठ कवल आहार करना अल्पाहार-अवमोदरिका, इत्यादि सातवें शतक के प्रथम उद्देशक के अनुसार यावत् वह प्रकाम-रसभोजी नहीं होता, यहाँ तक जानना । भगवन् ! भाव-अवमोदरिका कितने प्रकार का है ? अनेक प्रकार का-अल्पक्रोध यावत् अल्पलोभ, अल्पशब्द, अल्पझंझा और अल्प तुमन्तुमा ।

भगवन् ! भिक्षाचर्या कितने प्रकार की है ? गौतम ! अनेक प्रकार की-द्रव्याभिग्रहचरक, क्षेत्राभिग्रहचरक, इत्यादि औपपातिकसूत्रानुसार शुद्धैषणिक, संख्यादत्तिक तक कहना ।

भगवन् ! रस-परित्याग के कितने प्रकार हैं ? गौतम ! अनेक प्रकार का-निर्वकृतिक, प्रणीतरस-विवर्जक, इत्यादि औपपातिकसूत्र अनुसार यावत् रूक्षाहार-पर्यन्त कहना चाहिए । भगवन् ! कायक्लेश तप कितने प्रकार का

है? गौतम ! अनेक प्रकार का-स्थानातिग, उत्कुटुकासनिक इत्यादि औपपातिकसूत्र अनुसार यावत् सार्वगात्रप्रति-कर्मविप्रमुक्त तक ।

(भगवन् !) प्रतिसंलीनता कितने प्रकार की कही है ? गौतम ! चार प्रकार की-इन्द्रियप्रतिसंलीनता, कषाय प्रतिसंलीनता, योगप्रतिसंलीनता और विविक्तशय्यासनप्रतिसंलीनता । भगवन् ! इन्द्रियप्रतिसंलीनता कितने प्रकार की है ? गौतम ! पाँच प्रकार की-श्रोत्रेन्द्रियविषय-प्रचारनिरोध अथवा श्रोत्रेन्द्रियविषयप्राप्त अर्थों में रागद्वेषवि-निग्रह, यावत् स्पर्शनेन्द्रियविषयप्रचारनिरोध अथवा स्पर्शनेन्द्रियविषयप्राप्त अर्थों में रागद्वेषविनिग्रह । भगवन् ! कषायप्रतिसंलीनता कितने प्रकार की है ? गौतम ! चार प्रकार की-क्रोधोदयनिरोध अथवा उदयप्राप्त क्रोध का विफलीकरण, यावत् लोभोदयनिरोध अथवा उदयप्राप्त लोभ का विफलीकरण ।

भगवन् ! योगप्रतिसंलीनता कितने प्रकार की है ? गौतम ! तीन प्रकार की-मनोयोगप्रतिसंलीनता, वचन-योगप्रतिसंलीनता और काययोगप्रतिसंलीनता । मनोयोगप्रतिसंलीनता किस प्रकार की है ? अकुशल मन का विरोध, कुशल मन की उदीरणा और मन को एकाग्र करना । वचनयोगप्रतिसंलीनता किस प्रकार की है ? अकुशल वचन का निरोध, कुशल वचन की उदीरणा और वचन की एकाग्रता करना । कायप्रतिसंलीनता किसे कहते हैं ? सम्यक् प्रकार से समाधिपूर्वक प्रशान्तभाव से हाथ-पैरों को संकुचित करना, कछुए के समान इन्द्रियों का गोपन करके स्थिर होना । विविक्तशय्यासनसेवनता किसे कहते हैं ? आराम अथवा उद्यानों आदि में, सोमिल-उद्देशक अनुसार, यावत् निर्दोष शय्यासंस्तारक आदि उपकरण लेकर रहना ।

(भगवन् !) वह आभ्यन्तर तप कितने प्रकार का है ? (गौतम !) छह प्रकार का-प्रायश्चित्त, विनय, वैयावृत्य, स्वाध्याय, ध्यान और व्युत्सर्ग । (भगवन् !) प्रायश्चित्त कितने प्रकार का है ? (गौतम !) दस प्रकार का-आलोचनार्ह यावत् पारांचिकार्ह ।

(भगवन् !) विनय कितने प्रकार का है ? (गौतम !) सात प्रकार का-ज्ञानविनय, दर्शनविनय, चारित्रविनय, मनविनय, वचनविनय, कायविनय और लोकोपचार विनय । भगवन् ! ज्ञानविनय कितने प्रकार का है ? (गौतम !) पाँच प्रकार का-आभिनिबोधिकज्ञानविनय यावत् केवलज्ञानविनय । यह है ज्ञानविनय ।

(भगवन् !) दर्शनविनय कितने प्रकार का है ? (गौतम !) दो प्रकार का-शुश्रूषाविनय और अनाशातना-विनय । (भगवन !) शुश्रूषाविनय कितने प्रकार का है ? (गौतम !) अनेक प्रकार का-सत्कार, सम्मान इत्यादि सब वर्णन चौदहवें शतक के तीसरे उद्देशक अनुसार यावत् प्रतिसंसाधनता तक जानना चाहिए । (भगवन् !) अनाशात-नाविनय कितने प्रकार का है ? (गौतम !) पैंतालीस प्रकार का-अरिहन्ति की अनाशातना, अरिहन्तप्रज्ञप्त धर्म की, आचार्यों की, उपाध्यायों की, स्थविरों की, कुल की, गण की, संघ की, क्रिया की, साम्भोगिक (साधर्मिक साधु-साध्वीगण) की, और आभिनिबोधिकज्ञान से लेकर केवलज्ञान तक की अनाशातना इन पन्द्रह की भक्ति करना, इस प्रकार कुल ४५ भेद अनाशातनाविनय के हैं ।

(भगवन् !) चारित्रविनय कितने प्रकार का है ? (गौतम !) पाँच प्रकार का-सामयिकचारित्रविनय यावत् यथाख्यातचारित्रविनय ।

वह मनोविनय कितने प्रकार का है ? दो प्रकार का-प्रशस्तमनोविनय और अप्रशस्तमनोविनय । वह प्रशस्त मनोविनय कितने प्रकार का है ? सात प्रकार का-अपापक, असावद्य, अक्रिय, निरुपक्लेश-अनाश्रवकर, अच्छविकर और अभूताभिशंकित । अप्रशस्तमनोविनय कितने प्रकार का है ? (गौतम !) सात प्रकार का-पापक, सावद्य, सक्रिय, सोपक्लेश, आश्रवकारी, छविकारी और भूताभिशंकित । (भगवन् !) वचनविनय कितने प्रकार का है ? (गौतम !) दो प्रकार का-प्रशस्तवचनविनय और अप्रशस्तवचनविनय । वह प्रशस्तवचनविनय कितने प्रकार का है ? (गौतम !) सात प्रकार का-अपापक, असावद्य यावत् अभूताभिशंकित । (भगवन् !) अप्रशस्तवचनविनय कितने प्रकार का है ? (गौतम !) सात प्रकार का-पापक, सावद्य यावत् भूताभिशंकित ।

कायविनय कितने प्रकार का है ? दो प्रकार का-प्रशस्तकायविनय और अप्रशस्तकायविनय । प्रशस्त

कायविनय कितने प्रकार का है ? सात प्रकार का कहा-आयुक्त गमन, आयुक्त स्थान, आयुक्त निषीदन, आयुक्त उल्लंघन, आयुक्त प्रलंघन और आयुक्त सर्वेन्द्रिययोगयुंजनता । अप्रशस्त कायविनय कितने प्रकार का है ? सात प्रकार का-अनायुक्त गमन यावत् अनायुक्त सर्वेन्द्रिययोगयुंजनता ।

(भगवन् !) लोकोपचारविनय के कितने प्रकार हैं ? (गौतम !) सात प्रकार का-अभ्यासवृत्तिता, परच्छन्दा-नुवर्तिता, कार्य-हेतु, कृत-प्रतिक्रिया, आर्त्तगवेषणता, देश-कालज्ञता और सर्वार्थ-अप्रतिलोमता ।

सूत्र - ९६६

वैयावृत्य कितने प्रकार का है ? दस प्रकार का-आचार्यवैयावृत्य, उपाध्याय, स्थविर, तपस्वी, ग्लान, शैक्ष, कुल, गण, संघ और साधर्मिक की वैयावृत्य ।

सूत्र - ९६७

(भगवन् !) स्वाध्याय कितने प्रकार का है ? (गौतम !) पाँच प्रकार का-वाचना, प्रतिपृच्छना, परिवर्तना, अनुप्रेक्षा और धर्मकथा ।

सूत्र - ९६८

(भगवन् !) ध्यान कितने प्रकार का ? (गौतम !) चार प्रकार का-आर्त्तध्यान, रौद्रध्यान, धर्मध्यान, शुक्लध्यान ।

आर्त्तध्यान चार प्रकार का कहा गया है । यथा-अमनोज्ञ वस्तुओं की प्राप्ति होने पर उनके वियोग की चिन्ता करना, मनोज्ञ वस्तुओं की प्राप्ति होने पर उनके अवियोग की चिन्ता करना, आतंक प्राप्त होने पर उसके वियोग की चिन्ता करना और परिसेवित या प्रीति-उत्पादक कामभोगों आदि की प्राप्ति होने पर उनके अवियोग की चिन्ता करना। आर्त्तध्यान के चार लक्षण कहे हैं, यथा-क्रन्दनता, सोचनता, तेपनता (अश्रुपात और परिवेदनता (विलाप)) ।

रौद्रध्यान चार प्रकार का कहा है, यथा-(१) हिंसानुबन्धी, (२) मृषानुबन्धी, (३) स्तेयानुबन्धी और (४) संरक्षणाऽनुबन्धी । रौद्रध्यान के चार लक्षण हैं-ओसन्नदोष, बहुलदोष, अज्ञानदोष और आमरणान्तदोष ।

धर्मध्यान चार प्रकार का और चतुष्प्रत्यवतार है, आज्ञाविचय, अपायविचय, विपाकविचय और संस्थान-विचय । धर्मध्यान के चार लक्षण हैं, आज्ञारुचि, निसर्गरुचि, सूत्ररुचि और अवगाढ़रुचि । धर्मध्यान के चार आलम्बन हैं, वाचना, प्रतिपृच्छना, परिवर्तना और धर्मकथा । धर्मध्यान की चार अनुप्रेक्षाएं हैं, एकत्वानुप्रेक्षा, अनित्यानुप्रेक्षा, अशरणानुप्रेक्षा और संसारानुप्रेक्षा ।

शुक्लध्यान चार प्रकार का है और चतुष्प्रत्यवतार है, पृथक्त्ववितर्क-सविचार, एकत्ववितर्क-अविचार, सूक्ष्मक्रिया-अनिवर्ती और समुच्छिन्नक्रिया-अप्रतिपाती । शुक्लध्यान के चार लक्षण हैं, क्षान्ति, मुक्ति (निर्लोभता), आर्जव और मार्दव । शुक्लध्यान के चार आलम्बन हैं, अव्यथा, असम्मोह, विवेक और व्युत्सर्ग । शुक्लध्यान की चार अनुप्रेक्षाएं हैं । अनन्तवर्तितानुप्रेक्षा, विपरिणामानुप्रेक्षा, अशुभानुप्रेक्षा और अपायानुप्रेक्षा ।

सूत्र - ९६९

(भन्ते !) व्युत्सर्ग कितने प्रकार का है ? (गौतम !) दो प्रकार का-द्रव्यव्युत्सर्ग और भावव्युत्सर्ग । (भगवन् !) द्रव्यव्युत्सर्ग कितने प्रकार का है ? (गौतम !) चार प्रकार का-गणव्युत्सर्ग, शरीरव्युत्सर्ग, उपधिव्युत्सर्ग और भक्तपानव्युत्सर्ग । (भगवन् !) भावव्युत्सर्ग कितने प्रकार का कहा है ? तीन प्रकार का-कषायव्युत्सर्ग, संसार-व्युत्सर्ग, कर्मव्युत्सर्ग । (भगवन् !) कषायव्युत्सर्ग कितने प्रकार का है ? (गौतम !) चार प्रकार का है । क्रोधव्युत्सर्ग, मानव्युत्सर्ग, मायाव्युत्सर्ग और लोभव्युत्सर्ग । (भगवन् !) संसारव्युत्सर्ग कितने प्रकार का है ? (गौतम !) चार प्रकार का-नैरयिकसंसारव्युत्सर्ग यावत् देवसंसारव्युत्सर्ग । (भगवन् !) कर्मव्युत्सर्ग कितने प्रकार का है ? (गौतम !) आठ प्रकार का है । ज्ञानावरणीयकर्मव्युत्सर्ग यावत् अन्तरायकर्मव्युत्सर्ग । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-२५ – उद्देशक-८

सूत्र - ९७०

राजगृह नगर में यावत् पूछा-भगवन् ! नैरयिक जीव किस प्रकार उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! जैसे कोई कूदने

वाला पुरुष कूदता हुआ अध्यवसायनिर्वर्तित क्रियासाधन द्वारा उस स्थान को छोड़कर भविष्यत्काल में अगले स्थान को प्राप्त होता है, वैसे ही जीव भी अध्यवसायनिर्वर्तित क्रियासाधन द्वारा अर्थात् कर्मों द्वारा पूर्वभव को छोड़कर भविष्यकाल में उत्पन्न होने योग्य भव को प्राप्त होकर उत्पन्न होते हैं। भगवन्! उन जीवों की शीघ्रगति और शीघ्रगति का विषय कैसा होता है? गौतम! जिस प्रकार कोई पुरुष तरुण और बलवान हो, इत्यादि चौदहवें शतक के पहले उद्देशक अनुसार यावत् तीन समय की विग्रहगति से उत्पन्न होते हैं। उन जीवों की वैसी शीघ्र गति।

भगवन्! वे जीव परभव की आयु किस प्रकार बाँधते हैं? गौतम! अपने अध्यवसाय योग से निष्पन्न करणोपाय द्वारा परभव की आयु बाँधते हैं। भगवन्! उन जीवों की गति किस कारण से प्रवृत्त होती है? गौतम! आयु के क्षय होने से, भव का क्षय होने से और स्थिति का क्षय होने से उनकी गति प्रवृत्त होती है। भगवन्! वे जीव आत्म-ऋद्धि से उत्पन्न होते हैं या पर की ऋद्धि से? गौतम! आत्म-ऋद्धि से उत्पन्न होते हैं। भगवन्! वे जीव अपने कर्मों से उत्पन्न होते हैं या दूसरों के कर्मों से? गौतम! अपने कर्मों से। भगवन्! वे जीव अपने प्रयोग से उत्पन्न होते हैं या परप्रयोग से? गौतम! अपने प्रयोग से।

भगवन्! असुरकुमार कैसे उत्पन्न होते हैं? इत्यादि प्रश्न। गौतम! नैरयिकों के समान 'आत्मप्रयोग से उत्पन्न होते हैं, तक कहना चाहिए।' इसी प्रकार एकेन्द्रिय से अतिरिक्त, वैमानिक तक, (जानना)। एकेन्द्रियों के विषय में। विशेष यह है कि उनकी विग्रहगति उत्कृष्ट चार समय की होती है। शेष पूर्ववत्। 'हे भगवन्! यह इसी प्रकार है।'

शतक-२५ – उद्देशक-९

सूत्र - ९७१

भगवन्! भवसिद्धिक नैरयिक किस प्रकार उत्पन्न होते हैं? गौतम! जैसे कोई कूदने वाला पुरुष कूदता हुआ...इत्यादि पूर्ववत् यावत् वैमानिक पर्यन्त (कहना)।

शतक-२५ – उद्देशक-१०

सूत्र - ९७२

भगवन्! अभवसिद्धिक नैरयिक किस प्रकार उत्पन्न होते हैं? गौतम! जैसे कोई कूदने वाला पुरुष कूदता हुआ, इत्यादि पूर्ववत् यावत् वैमानिक पर्यन्त (कहना)।

शतक-२५ – उद्देशक-११

सूत्र - ९७३

भगवन्! सम्यग्दृष्टि नैरयिक किस प्रकार उत्पन्न होते हैं? गौतम! जैसे कोई कूदने वाला पुरुष कूदता हुआ...इत्यादि, एकेन्द्रिय को छोड़कर वैमानिक पर्यन्त कहना।

शतक-२५ – उद्देशक-१२

सूत्र - ९७४

भगवन्! मिथ्यादृष्टि नैरयिक किस प्रकार उत्पन्न होते हैं? जैसे कोई कूदने वाला पुरुष कूदता हुआ... इत्यादि पूर्ववत्। वैमानिक तक (कहना)।

शतक-२५ का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

शतक–२६

सूत्र - ९७५

भगवती श्रुतदेवता को नमस्कार हो । इस शतक में ग्यारह उद्देशक हैं - जीव, लेश्याएं, पाक्षिक, दृष्टि, अज्ञान, ज्ञान, संज्ञाएं, वेद, कषाय, उपयोग और योग, ये ग्यारह स्थान हैं, जिनको लेकर बन्ध की वक्तव्यता कही जाएगी ।

शतक-२६ – उद्देशक-१

सूत्र - ९७६

उस काल और उस समय में राजगृह नगर में यावत् पूछा-भगवन् ! क्या जीवने पापकर्म बाँधा था, बाँधता है और बाँधेगा ? (अथवा क्या जीवने पापकर्म) बाँधा था, बाँधता है और नहीं बाँधेगा ? (या जीवने पापकर्म) बाँधा था, नहीं बाँधता है और बाँधेगा ? अथवा बाँधा था, नहीं बाँधता है और नहीं बाँधेगा ? गौतम ! किसी जीव ने पापकर्म बाँधा था, बाँधता है और बाँधेगा या किसी जीव ने पापकर्म बाँधा था, बाँधता है, किन्तु आगे नहीं बाँधेगा या किसी जीवने पापकर्म बाँधा था, अभी नहीं बाँधता है, किन्तु आगे बाँधेगा या किसी जीव ने पापकर्म बाँध था, अभी नहीं बाँधता है, आगे भी नहीं बाँधेगा ।

भगवन् ! सलेश्य जीव ने क्या पापकर्म बाँधा था, बाँधता है और बाँधेगा ? अथवा बाँधा था, बाँधता है और नहीं बाँधेगा ? इत्यादि चारों प्रश्न । गौतम ! किसी लेश्या वाले जीव ने पापकर्म बाँधा था, बाँधता है और बाँधेगा; इत्यादि चारों भंग जानना । भगवन् ! क्या कृष्णलेश्यी जीव पहले पापकर्म बाँधता था ? इत्यादि चारों प्रश्न । गौतम! कोई पापकर्म बाँधता था, बाँधता है और बाँधेगा; तथा कोई जीव (पापकर्म) बाँधता था, बाँधता है, किन्तु आगे नहीं बाँधेगा । इसी प्रकार पद्मलेश्या वाले जीव तक समझना । सर्वत्र प्रथम और द्वीतिय भंग जानना । शुक्ल-लेश्यी के सम्बन्ध में सलेश्यजीव के समान चारों भंग कहना ।

भगवन् ! अलेश्यी जीव ने क्या पापकर्म बाँधा था, इत्यादि पूर्ववत् प्रश्न । गौतम ! उस जीव ने पापकर्म बाँधा था, किन्तु वर्तमान में नहीं बाँधता और बाँधेगा भी नहीं ।

भगवन् ! क्या कृष्णपाक्षिक जीव ने पापकर्म बाँधा था ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! किसी जीव ने पापकर्म बाँधा था; इत्यादि पहला और दूसरा भंग जानना । भगवन् ! क्या शुक्लपाक्षिक जीव ने पापकर्म बाँधा था ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! चारों ही भंग जानना ।

सूत्र - ९७७

सम्यग्दृष्टि जीवों में (पूर्ववत्) चारों भंग जानना चाहिए । मिथ्यादृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवों में पहला और दूसरा भंग जानना चाहिए ।

ज्ञानी जीवों में चारों भंग पाए जाते हैं । आभिनिबोधिकज्ञानी से मनःपर्यवज्ञानी जीवों तक भी चारों ही भंग जानना । केवलज्ञानी जीवों में अन्तिम एक भंग अलेश्य जीवों के समान है । अज्ञानी जीवों में पहला और दूसरा भंग है। मति-अज्ञानी, श्रुत-अज्ञानी और विभंगज्ञानी में भी पहला और दूसरा भंग जानना ।

आहार यावत् परिग्रह-संज्ञोपयुक्त जीवों में पहला और दूसरा भंग है । नोसंज्ञोपयुक्त जीवों में चारों भंग पाए जाते हैं । सवेदक जीवों में प्रथम और द्वीतिय भंग हैं । स्त्रीवेदी, पुरुषवेदी और नपुंसकवेदी में भी प्रथम और द्वीतिय भंग हैं । अवेदक जीवों में चारों भंग हैं ।

सकषायी जीवों में चारों भंग पाए जाते हैं । क्रोध यावत् मानकषायी जीवों में पहला और दूसरा भंग पाया जाता है । लोभकषायी जीवों में चारों भंग पाए जाते हैं । भगवन् ! क्या अकषायी जीव ने पापकर्म बाँधा था ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! किसी अकषायी जीव ने बाँधा था, किन्तु अभी नहीं बाँधता है, मगर भविष्य में बाँधेगा तथा किसी जीव ने बाँधा था, किन्तु अभी नहीं बाँधता है और आगे भी नहीं बाँधेगा ।

सयोगी जीवोंमें चारों भंग होते हैं। मनोयोगी, वचनयोगी, काययोगी जीवमें चारों भंग पाए जाते हैं । अयोगी जीव में अन्तिम एक भंग पाया जाता है । साकारोपयुक्त और अनाकारोपयुक्त जीव में चारों ही भंग पाए जाते हैं ।

सूत्र - ९७८

भगवन् ! क्या नैरयिक जीव ने पापकर्म बाँधा था, बाँधता है और बाँधेगा ? गौतम ! किसी ने पापकर्म बाँधा था, इत्यादि पहला और दूसरा भंग । भगवन् ! क्या सलेश्य नैरयिक जीव ने पापकर्म बाँधा था ? गौतम ! पहला और दूसरा भंग । इसी प्रकार कृष्ण, नील और कापोतलेश्या वाले जीव में भी प्रथम और द्वीतिय भंग । इसी प्रकार कृष्णपाक्षिक, शुक्लपाक्षिक, सम्यग्दृष्टि, मिथ्यादृष्टि, सम्यग्मिथ्यादृष्टि, ज्ञानी, आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी, अज्ञानी, मति-अज्ञानी, श्रुत-अज्ञानी, विभंगज्ञानी, आहार यावत् परिग्रहसंज्ञोपयुक्त, सवेदी, नपुंसकवेदी, सकषायी यावत् लोभकषायी, सयोगी, तीन योग काययोगी, साकारोपयुक्त और अनाकारोपयुक्त, इन सब पदों में प्रथम दो भंग कहना ।

असुरकुमारों को यही कहना । विशेष यह है कि इनमें तेजोलेश्या वाले स्त्रीवेदक और पुरुषवेदक अधिक कहना । इन सबमें पहला और दूसरा भंग जानना । इसी प्रकार स्तनितकुमार तक कहना । इसी प्रकार पृथ्वी-कायिक, अप्कायिक से पंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक तक भी सर्वत्र प्रथम और द्वीतिय भंग कहना, विशेष यह है कि जहाँ जिसमें जो लेश्या, जो दृष्टि, ज्ञान, अज्ञान, वेद और योग हों, उसमें वही कहना । मनुष्य में जीवपद समान कहना । वाणव्यन्तर असुरकुमार समान हैं । ज्योतिष्क और वैमानिक में भी इसी प्रकार है, किन्तु जिसके जो लेश्या हो, वही कहना ।

सूत्र - ९७९

भगवन् ! क्या जीव ने ज्ञानावरणीय कर्म बाँधा था, बाँधता है और बाँधेगा ? गौतम ! पापकर्म के समान ज्ञानावरणीय कर्म कहना, परन्तु जीवपद और मनुष्यपद में सकषायी यावत् लोभकषायी में प्रथम और द्वीतिय भंग ही कहना । यावत् वैमानिक तक कहना । ज्ञानावरणीयकर्म के समान दर्शनावरणीयकर्म कहना ।

भगवन् ! क्या जीव ने वेदनीयकर्म बाँधा था, बाँधता है और बाँधेगा ? इत्यादि पूर्ववत् प्रश्न । गौतम ! किसी जीव ने बाँधा था, बाँधता है और बाँधेगा, किसी जीव ने बाँधा था, बाँधता है और नहीं बाँधेगा तथा किसी जीव ने बाँधा था, नहीं बाँधता है और नहीं बाँधेगा । सलेश्य जीव में भी तृतीय भंग को छोड़कर शेष तीन भंग । कृष्णलेश्या वाले से लेकर पद्मलेश्या वाले में पहला और दूसरा भंग है । शुक्ललेश्या वाले में तृतीय भंग को छोड़कर शेष तीन भंग हैं । अलेश्यजीव में अन्तिम भंग है । कृष्णपाक्षिक में प्रथम और द्वीतिय भंग । शुक्लपाक्षिक और सम्यग्दृष्टि में तृतीय भंग को छोड़कर शेष तीनों भंग । मिथ्यादृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि में प्रथम और द्वीतिय भंग । ज्ञानी में तृतीय भंग को छोड़कर शेष तीनों भंग । आभिनिबोधिकज्ञानी से लेकर मनःपर्यवज्ञानी तक में प्रथम और द्वीतिय भंग । केवलज्ञानी में तृतीय भंग के सिवाय तीनों भंग । इसी प्रकार नोसंज्ञोपयुक्त में, अवेदी में, अकषायी में, साकारोपयुक्त एवं अनाकारोपयुक्त में तृतीय भंग को छोड़कर शेष तीनों भंग । अयोगी में अन्तिम भंग और शेष सभी में प्रथम और द्वीतिय भंग जानना ।

भगवन् ! क्या नैरयिक जीव ने वेदनीयकर्म बाँधा, बाँधता है और बाँधेगा ? इत्यादि । इसी प्रकार नैरयिक से वैमानिक तक जिसके जो लेश्यादि हों, वे कहना । इन सभी में पहला और दूसरा भंग है । विशेष यह है कि मनुष्य की वक्तव्यता सामान्य जीव के समान है । भगवन् ! क्या जीव ने मोहनीयकर्म बाँधा था ? गौतम ! पापकर्म-बन्ध के समान समग्र कथन मोहनीयकर्मबन्ध में यावत् वैमानिक तक कहना ।

सूत्र - ९८०

भगवन् ! क्या जीव ने आयुष्यकर्म बाँधा था, इत्यादि प्रश्न । गौतम ! किसी जीवने बाँधा था, इत्यादि चारों भंग हैं । सलेश्य से लेकर शुक्ललेश्यी जीवों तक में चारों भंग पाए जाते हैं । अलेश्य जीवों में एकमात्र अन्तिम भंग है ।

भगवन् ! कृष्णपाक्षिक जीव ने (आयुष्यकर्म) बाँधा था, इत्यादि प्रश्न । गौतम ! किसी जीव ने बाँधा था, बाँधता है और बाँधेगा तथा किसी जीव ने बाँधा था, नहीं बाँधता है और बाँधेगा । शुक्लपाक्षिक सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टि में चारों भंग हैं । भगवन् ! सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव ने आयुष्यकर्म बाँधा था ? किसी जीव ने बाँधा था, नहीं बाँधता है और बाँधेगा तथा किसी जीव ने बाँधा था, नहीं बाँधता और नहीं बाँधेगा ।

ज्ञानी (से लेकर) अवधिज्ञानी तक चारों भंग पाए जाते हैं । भगवन् ! मनःपर्यवज्ञानी जीव ने आयुष्यकर्म बाँधा था ? इत्यादि । गौतम ! किसी ने आयुष्यकर्म बाँधा था, बाँधता है और बाँधेगा; किसीने आयुष्यकर्म बाँधा था, नहीं बाँधता है और बाँधेगा तथा किसीने बाँधा था, नहीं बाँधता है और नहीं बाँधेगा । केवलज्ञानी में एकमात्र चौथा भंग है ।

इसी प्रकार इस क्रम से नोसंज्ञोपयुक्त जीव मनःपर्यवज्ञानी के समान होते हैं । अवेदी और अकषायी में सम्यग्मिथ्यादृष्टि समान हैं । अयोगी केवली जीव में एकमात्र चौथी भंग है । शेष पदों में यावत् अनाकारोपयुक्त तक में चारों भंग पाए जाते हैं ।

भगवन् ! क्या नैरयिक जीव ने आयुष्यकर्म बाँधा था ? गौतम ! चारों भंग । इसी प्रकार सभी स्थानों में नैरयिक के चार भंग, किन्तु कृष्णलेश्यी एवं कृष्णपाक्षिक नैरयिक जीव में पहला तथा तीसरा भंग तथा सम्यग्-मिथ्यादृष्टि में तृतीय और चतुर्थ भंग है । असुरकुमार में भी इसी प्रकार है । किन्तु कृष्णलेश्यी असुरकुमार में पूर्वोक्त चारों भंग । शेष सभी नैरयिकों के समान । इसी प्रकार स्तनितकुमारों तक कहना ।

पृथ्वीकायिकों में सभी स्थानों में चारों भंग होते हैं । किन्तु कृष्णपाक्षिक पृथ्वीकायिक में पहला और तीसरा भंग है । भगवन् ! तेजोलेश्यी पृथ्वीकायिक में ? गौतम ! केवल तृतीय भंग । शेष सभी स्थानों में चार-चार भंग । अप्कायिक और वनस्पतिकायिक जीवों के चारों भंग हैं । तेजस्कायिक और वायुकायिक जीवों में प्रथम और तृतीय भंग । द्वीन्द्रिय, तृतीय और चतुरिन्द्रिय जीवों में प्रथम और तृतीय भंग । विशेष यह है कि इनके सम्यक्त्व, ज्ञान, आभिनिबोधिकज्ञान और श्रुतज्ञान में एकमात्र तृतीय भंग है ।

पंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक में तथा कृष्णपाक्षिक में प्रथम और तृतीय भंग हैं । सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव में तृतीय और चतुर्थ भंग होते हैं । सम्यक्त्व, ज्ञान, आभिनिबोधिकज्ञान, श्रुतज्ञान एवं अवधिज्ञान, इन पाँचों पदों में द्वीतिय भंग को छोड़कर शेष तीन भंग हैं । शेष सभी पूर्ववत् जानना । मनुष्यों का कथन औघिक जीवों के समान है । किन्तु इनके सम्यक्त्व, औघिक ज्ञान, आभिनिबोधिकज्ञान, श्रुतज्ञान और अवधिज्ञान, इन पदों में द्वीतिय भंग को छोड़कर शेष तीन भंग हैं । शेष पूर्ववत् । वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिक देवों का कथन असुरकुमारों के समान है । नामकर्म, गोत्रकर्म और अन्तरायकर्म ज्ञानावरणीयकर्म के समान है । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-२६ – उद्देशक-२

सूत्र - ९८१

भगवन् ! क्या अनन्तरोपपन्नक नैरयिक ने पापकर्म बाँधा था ? इत्यादि । गौतम ! प्रथम और द्वीतिय भंग होता है । भगवन् ! सलेश्यी अनन्तरोपपन्नक नैरयिक ने पापकर्म बाँधा था ? इनमें सर्वत्र प्रथम और द्वीतिय भंग । किन्तु कृष्णपाक्षिक में तृतीय भंग पाया जाता है । इस प्रकार सभी पदों में पहला और दूसरा भंग कहना, किन्तु विशेष यह है कि सम्यग्मिथ्यात्व, मनोयोग और वचनयोग के विषय में प्रश्न नहीं करना । स्तनितकुमार पर्यन्त इसी प्रकार कहना । द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय और चतुरिन्द्रिय में वचनयोग नहीं कहना । पंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिकों में भी सम्यग्-मिथ्यात्व, अवधिज्ञान, विभंगज्ञान, मनोयोग और वचनयोग, ये पाँच पद नहीं कहना । मनुष्यों में अलेश्यत्व, सम्यग्-मिथ्यात्व, मनःपर्यवज्ञान, केवलज्ञान, विभंगज्ञान, नोसंज्ञोपयुक्त, अवेदक, अकषायी, मनोयोग, वचनयोग और अयोगी ये ग्यारह पद नहीं कहना । वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिकों के विषय में नैरयिकों के समान पूर्वोक्त तीन पद नहीं कहना । शेष स्थान में सर्वत्र प्रथम और द्वीतिय भंग । एकेन्द्रिय जीवों के सभी स्थानों में प्रथम और द्वीतिय भंग कहना ।

पापकर्म के समान ज्ञानावरणीयकर्म में भी कहना । इसी प्रकार आयुष्यकर्म को छोड़कर अन्तरायकर्म तक कहना । भगवन् ! अनन्तरोपपन्नक नैरयिक ने आयुष्य कर्म बाँधा था ? गौतम ! तृतीय भंग जानना । भगवन् ! सलेश्य अनन्तरोपपन्नक नैरयिक ने क्या आयुष्यकर्म बाँधा था ? गौतम ! तृतीय भंग जानना । इसी प्रकार यावत् अनाकारोपयुक्त पद तक सर्वत्र तृतीय भंग । इसी प्रकार मनुष्यों के अतिरिक्त वैमानिकों तक तृतीय भंग । मनुष्यों में सभी स्थानों में तृतीय और चतुर्थ भंग, किन्तु कृष्णपाक्षिक मनुष्यों में तृतीय भंग ही होता है । सभी स्थानों में नानात्व पूर्ववत् । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-२६ – उद्देशक-३

सूत्र - ९८२

भगवन् ! क्या परम्परोपपन्नक नैरयिक ने पापकर्म बाँधा था ? गौतम ! प्रथम और द्वीतिय भंग जानना । प्रथम उद्देशक समान परम्परोपपन्नक नैरयिक में पापकर्मादि नौ दण्डक सहित यह उद्देशक भी कहना । आठ कर्म-प्रकृतियों में से जिसके लिए जिस कर्म की वक्तव्यता कही है, उसके लिए उस कर्म की वक्तव्यता अनाकारोपयुक्त वैमानिकों तक अन्यूनाधिकरूप से कहना । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-२६ – उद्देशक-४

सूत्र - ९८३

भगवन् ! क्या अनन्तरावगाढ़ नैरयिक ने पापकर्म बाँधा था ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! किसी ने पापकर्म बाँधा था, इत्यादि क्रम से अनन्तरोपपन्नक के नौ दण्डकों सहित के उद्देशक समान अनन्तरावगाढ़ नैरयिक आदि वैमानिक तक अन्यूनाधिकरूप से कहना चाहिए । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-२६ – उद्देशक-५

सूत्र - ९८४

भगवन् ! क्या परम्परावगाढ़ नैरयिक ने पापकर्म बाँधा था ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! परम्परोपपन्नक के विषय में उद्देशक समान परम्परावगाढ़ (नैरयिकादि) के विषय में यह अन्यूनाधिक रूप से कहना चाहिए । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-२६ – उद्देशक-६

सूत्र - ९८५

भगवन् ! क्या अनन्तरावगाढ़ नैरयिक ने पापकर्म बाँधा था ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! अनन्तरोपपन्नक उद्देशक समान यह समग्र अनन्तराहारक उद्देशक भी कहना ।

शतक-२६ – उद्देशक-७

सूत्र - ९८६

भगवन् ! क्या परम्पराहारक नैरयिक ने पापकर्म का बन्ध किया था ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! परम्परोप-पन्नक नैरयिकादि-सम्बन्धी उद्देशक समान परम्पराहारक उद्देशक कहना ।

शतक-२६ – उद्देशक-८

सूत्र - ९८७

भगवन् ! क्या अनन्तपर्याप्तक नैरयिक ने पापकर्म बाँधा था ? अनन्तरोपपन्नक उद्देशक समान यह सारा उद्देशक कहना । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-२६ – उद्देशक-९

सूत्र - ९८८

भगवन् ! क्या परम्परपर्याप्तक नैरयिक ने पापकर्म बाँधा था ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! परम्परोपपन्नक उद्देशक समान परम्परपर्याप्तक नैरयिकादि उद्देशक समग्ररूप से कहना ।

शतक-२६ – उद्देशक-१०

सूत्र - ९८९

भगवन् ! क्या चरम नैरयिक ने पापकर्म बाँधा था ? परम्परोपपन्नक उद्देशक समान चरम नैरयिकादि समग्र उद्देशक कहना । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-२६ – उद्देशक-११

सूत्र - ९९०

भगवन् ! अचरम नैरयिक ने पापकर्म बाँधा था ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! किसी ने पापकर्म बाँधा था, इत्यादि प्रथम उद्देशक समान सर्वत्र प्रथम और द्वीतिय भंग पंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिक पर्यन्त कहना । भगवन् ! क्या अचरम मनुष्य ने पापकर्म बाँधा था ? किसी मनुष्य ने बाँधा था, बाँधता है और बाँधेगा, किसी ने बाँधा था, बाँधता है और आगे नहीं बाँधेगा, किसी मनुष्य ने बाँधा था, नहीं बाँधता है और आगे बाँधेगा । भगवन् ! क्या सलेश्यी अचरम मनुष्य ने पापकर्म बाँधा था ? गौतम ! पूर्ववत् अन्तिम भंग को छोड़कर शेष तीन भंग समान कहना । विशेष यह है कि जिन बीस पदों में वहाँ चार भंग कहे हैं उन पदों में से यहाँ आदि के तीन भंग कहने । यहाँ अलेश्यी, केवलज्ञानी और अयोगी के विषय में प्रश्न नहीं करना चाहिए । शेष स्थानों में पूर्ववत् जानना । वाण-व्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिक देवों के विषय में नैरयिक समान कहना ।

भगवन् ! अचरम नैरयिक ने ज्ञानावरणीयकर्म बाँधा था ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! पापकर्मबन्ध समान कहना। विशेष यह है कि सकषायी और लोभकषायी मनुष्यों में प्रथम और द्वीतिय भंग कहने चाहिए । शेष अठारह पदों में शेष तीन भंग कहने चाहिए । शेष सर्वत्र वैमानिक पर्यन्त पूर्ववत् जानना । दर्शनावरणीयकर्म के विषय में इसी प्रकार समझना । वेदनीयकर्म के विषय में सभी स्थानों में वैमानिक तक प्रथम और द्वीतिय भंग कहना । विशेष यह है कि अचरम मनुष्यों में अलेश्यी, केवलज्ञानी और अयोगी नहीं होते । भगवन् ! अचरम नैरयिक ने क्या मोहनीय कर्म बाँधा था ? पापकर्मबन्ध समान अचरम नैरयिक के विषय में समस्त कथन वैमानिक तक कहना । भगवन् ! क्या अचरम नैरयिक ने आयुष्य कर्म बाँधा था ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! प्रथम और तृतीय भंग जानना ।

इसी प्रकार नैरयिकों के बहुवचन-सम्बन्धी पदों में पहला और तीसरा भंग कहना । किन्तु सम्यग्मिथ्यात्व में केवल तीसरा भंग कहना । इस प्रकार यावत् स्तनितकुमारों तक कहना चाहिए । पृथ्वीकायिक, अप्कायिक, वनस्पतिकायिक और तेजोलेश्या, इन सबमें तृतीय भंग होता है । शेष पदों में सर्वत्र प्रथम और तृतीय भंग कहना चाहिए । तेजस्कायिक और वायुकायिक के सभी स्थानों में प्रथम और तृतीय भंग कहना चाहिए ।

द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय और चतुरिन्द्रिय जीवों के विषय में भी इसी प्रकार कहना चाहिए । विशेष यह है कि सम्यक्त्व, अवधिज्ञान, आभिनिबोधिकज्ञान और श्रुतज्ञान इन चार स्थानों में केवल तृतीय भंग कहना चाहिए । पंचेन्द्रियतिर्यंचयोनिकों के सम्यग्मिथ्यात्व में तीसरा भंग है । शेष पदों में सर्वत्र प्रथम और तृतीय भंग जानना । मनुष्यों के सम्यग्मिथ्यात्व, अवेदक और अकषाय में तृतीय भंग ही कहना । अलेश्यी, केवलज्ञानी और अयोगी के विषय में प्रश्न नहीं करना । शेष पदों में सभी स्थानों में प्रथम और तृतीय भंग हैं । वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिक देवों का कथन नैरयिकों समान । नाम, गोत्र और अन्तराय, कर्मों का बन्ध ज्ञानावरणीय कर्मबन्ध के समान से कहना । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-२६ का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

शतक–२७

सूत्र - ९९१

भगवन् ! क्या जीव ने पापकर्म किया था, करता है और करेगा ? अथवा किया था, करता है और नहीं करेगा? या किया था, नहीं करता और करेगा ? अथवा किया था, नहीं करता और नहीं करेगा ? गौतम ! किसी जीव ने पापकर्म किया था, करता है और करेगा । किसी जीव ने किया था, करता है और नहीं करेगा । किसी जीव ने किया था, नहीं करता है और करेगा । किसी जीव ने किया था, नहीं करता है और नहीं करेगा ।

भगवन् ! सलेश्य जीव ने पापकर्म किया था ? इत्यादि पूर्वोक्त प्रश्न । (गौतम !) बन्धीशतक में जो वक्तव्यता इस अभिलाप द्वारा कही थी, वह सभी कहना तथा नौ दण्डकसहित ग्यारह उद्देशक भी कहना ।

शतक-२७ का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

शतक–२८

उद्देशक-१

सूत्र - ९९२

भगवन् ! जीवों ने किस गति में पापकर्म का समर्जन किया था और किस गति में आचरण किया था ? गौतम! सभी जीव तिर्यंचयोनिकों में थे अथवा तिर्यंचयोनिकों और नैरयिकों में थे, अथवा तिर्यंचयोनिकों और मनुष्यों में थे, अथवा तिर्यंचयोनिकों और देवों में थे, अथवा तिर्यंचयोनिकों, नैरयिकों और मनुष्यों में थे, अथवा तिर्यंचयोनिकों, नैरयिकों और देवों में थे, अथवा तिर्यंचयोनिकों, मनुष्यों और देवों में थे, अथवा तिर्यंचयोनिकों, नैरयिकों, मनुष्यों और देवों में थे ।

भगवन् ! सलेश्यी जीव ने किस गति में पापकर्म का समार्जन और किस गति में समाचरण किया था ? गौतम! पूर्ववत् । इसी प्रकार कृष्णलेश्यी जीवों यावत् अलेश्यी जीवों तक कहना । कृष्णपाक्षिक, शुक्लपाक्षिक (से लेकर) अनाकारोपयुक्त तक ऐसा ही है ।

भगवन् ! नैरयिकों ने कहाँ पापकर्म का समार्जन और कहाँ समाचरण किया था ? गौतम ! सभी जीव तिर्यंचयोनिकों में थे, इत्यादि पूर्ववत् आठों भंग कहना चाहिए । इसी प्रकार सर्वत्र अनाकारोपयुक्त तक आठ-आठ भंग कहने चाहिए । इसी प्रकार वैमानिक पर्यन्त जानना । इसी प्रकार ज्ञानावरणीय के विषय में भी जानना । अन्तरायिक तक इसी प्रकार जानना । इस प्रकार जीव से लेकर वैमानिक पर्यन्त ये नौ दण्डक होते हैं ।

शतक-२८ – उद्देशक-२

सूत्र - ९९३

भगवन् ! अनन्तरोपपन्नक नैरयिकों ने किस गति में पापकर्मों का समार्जन किया था, कहाँ आचरण किया था। गौतम ! वे सभी तिर्यंचयोनिकों में थे, इत्यादि पूर्वोक्त आठों भंगों कहना । अनन्तरोपपन्नक नैरयिकों की अपेक्षा लेश्या आदि से लेकर यावत् अनाकारोपयोगपर्यन्त भंगों में से जिसमें जो भंग पाया जाता हो, वह सब विकल्प से वैमानिक तक कहना चाहिए । परन्तु अनन्तरोपपन्नक नैरयिकों के जो-जो बोल छोड़ने योग्य हैं, उन-उन बोलों को बन्धीशतक के अनुसार यहाँ भी छोड़ देना चाहिए । इसी प्रकार अन्तरायकर्म तक नौ दण्डकसहित यह सारा उद्देशक कहना । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-२८ – उद्देशक-३ से ११

सूत्र - ९९४

'बन्धीशतक' में उद्देशकों की परिपाटी समान आठों ही भंगों में जानना । विशेष यह है कि जिसमें जो बोल सम्भव हों, उसमें वे ही बोल यावत् अचरम उद्देशक तक कहने चाहिए । इस प्रकार वे सब ग्यारह उद्देशक हूँ । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-२८ का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

शतक–२९

उद्देशक-१

सूत्र - ९९५

भगवन् ! जीव पापकर्म का वेदन एकसाथ प्रारम्भ करते हैं और एक साथ ही समाप्त करते हैं ? अथवा एक साथ प्रारम्भ करते हैं और भिन्न-भिन्न समय में समाप्त करते हैं ? या भिन्न-भिन्न समय में प्रारम्भ करते हैं और एक साथ समाप्त करते हैं ? अथवा भिन्न-भिन्न समय में प्रारम्भ करते हैं और भिन्न-भिन्न समय में समाप्त करते हैं? गौतम ! कितने ही जीव (पापकर्मवेदन) एक साथ करते हैं और एक साथ ही समाप्त करते हैं यावत् कितने ही जीव विभिन्न समय में प्रारम्भ करते और विभिन्न समय में समाप्त करते हैं । भगवन् ! ऐसा क्यों कहा कि कितने ही जीव ? गौतम ! जीव चार प्रकार के कहे हैं । यथा–कईं जीव समान आयु वाले हैं और समान उत्पन्न होते हैं, कईं जीव समान आयु वाले हैं, किन्तु विषम समय में उत्पन्न होते हैं, कितने ही जीव विषम आयु वाले हैं और सम उत्पन्न होते हैं और कितने ही जीव विषम आयु वाले हैं और विषम समय में उत्पन्न होते हैं । इनमें से जो समान आयु वाले और समान उत्पन्न होते हैं, वे पापकर्म का वेदन एक साथ प्रारम्भ करते हैं और एक साथ ही समाप्त करते हैं, जो समान आयु वाले हैं, किन्तु विषम समय में उत्पन्न होते हैं, वे पापकर्म का वेदन एक साथ प्रारम्भ करते हैं किन्तु भिन्न-भिन्न समय में समाप्त करते हैं, जो विषम आयु वाले हैं और समान समय में उत्पन्न होते हैं, वे पापकर्म का भोग भिन्न-भिन्न समय में प्रारम्भ करते हैं और एक साथ अन्त करते हैं और जो विषय आयु वाले हैं और विषम समय में उत्पन्न होते हैं, वे पापकर्म का वेदन भी भिन्न-भिन्न समय में प्रारम्भ करते हैं और अन्त भी विभिन्न समय में करते हैं, इस कारण से हे गौतम ! पूर्वोक्त प्रकार का कथन किया है ।

भगवन् ! सलेश्यी जीव पापकर्म का वेदन एक काल में करते हैं ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! पूर्ववत् समझना। इसी प्रकार सभी स्थानों में अनाकारोपयुक्त पर्यन्त जानना । इन सभी पदों में यही वक्तव्यता कहना । भगवन् ! क्या नैरयिक पापकर्म भोगने का प्रारम्भ एक साथ करते हैं और उसका अन्त भी एक साथ करते हैं ? गौतम ! (पूर्वोक्त चतुर्भंगी का) कथन सामान्य जीवों के समान अनाकारोपयुक्त तक नैरयिकों के सम्बन्ध में जानना । इसी प्रकार वैमानिकों तक जिसमें जो बोल हों, उन्हें इसी क्रम से कहना चाहिए ।

पापकर्म के दण्डक समान इसी क्रम से सामान्य जीव से लेकर वैमानिकों तक आठों कर्म-प्रकृतियों के सम्बन्ध में आठ दण्डक कहने चाहिए । इस रीति से नौ दण्डकसहित यह प्रथम उद्देशक कहना चाहिए । 'हे भगवन् यह इसी प्रकार है ।'

शतक-२९ – उद्देशक-२

सूत्र - ९९६

भगवन् ! क्या अनन्तरोपपन्नक नैरयिक एक काल में पापकर्म वेदन करते हैं तथा एक साथ ही उसका अन्त करते हैं ? गौतम ! कईं पापकर्म को एक साथ भोगते हैं ? एक साथ अन्त करते हैं तथा कितने ही एक साथ पापकर्म को भोगते हैं, किन्तु उसका अन्त विभिन्न समय में करते हैं । भगवन् ! ऐसा क्यों कहते हैं कि कईं...एक साथ भोगते हैं? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! अनन्तरोपपन्नक नैरयिक दो प्रकार के हैं । यथा–कईं समकाल के आयुष्य वाले और समकाल में ही उत्पन्न होते हैं तथा कतिपय समकाल के आयुष्य वाले, किन्तु पृथक्-पृथक् काल के उत्पन्न हुए होते हैं। उनमें से जो समकाल के आयुष्य वाले होते हैं तथा एक साथ उत्पन्न होते हैं, वे एक काल में पापकर्म के वेदन का प्रारम्भ करते हैं तथा उसका अन्त भी एक काल में करते हैं ? जो समकाल के आयुष्य वाले होते हैं, किन्तु भिन्न-भिन्न समय में उत्पन्न होते हैं, वे पापकर्म को भोगने का प्रारम्भ तो एक साथ करते हैं, किन्तु उसका अन्त पृथक्-पृथक् काल में करते हैं, इस कारण से हे गौतम ! ऐसा कहा जाता है ।

भगवन् ! क्या लेश्या वाले अनन्तरोपपन्नक नैरयिक पापकर्म को भोगने का प्रारम्भ एक काल में करते हैं? गौतम ! पूर्ववत् समझना । इसी प्रकार अनाकारोपयुक्त तक समझना । असुरकुमारों से लेकर वैमानिकों तक भी इसी

प्रकार कहना । विशेष यह है कि जिसमें जो बोल पाया जाता हो, वही कहना । इसी प्रकार ज्ञानावरणीयकर्म से अन्तरायकर्म के सम्बन्ध में भी दण्डक कहना । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-२९ – उद्देशक-३ से ११

सूत्र - ९९७

बन्धीशतक में उद्देशकों की जो परिपाटी कही है, यहाँ भी इस पाठ से समग्र उद्देशकों की वह परिपाटी यावत् अचरमोद्देशक पर्यन्त कहनी चाहिए । अनन्तर सम्बन्धी चार उद्देशकों की एक वक्तव्यता और शेष सात उद्देशकों की एक वक्तव्यता कहना । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-२९ का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

शतक–३०

उद्देशक–१

सूत्र - ९९८

भगवन् ! समवसरण कितने कहे हैं? गौतम! चार, यथा–क्रियावादी, अक्रियावादी, अज्ञानवादी, विनयवादी ।

भगवन् ! जीव क्रियावादी हैं, अक्रियावादी हैं, अज्ञानवादी हैं या विनयवादी हैं ? गौतम ! जीव क्रियावादी भी हैं, अक्रियावादी भी हैं, अज्ञानवादी भी हैं और विनयवादी भी हैं । भगवन् ! सलेश्य जीव क्रियावादी भी हैं? इत्यादि प्रश्न। गौतम! सलेश्य जीव क्रियावादी भी हैं यावत् विनयवादी भी हैं । इस प्रकार शुक्ललेश्यावाले जीव पर्यन्त जानना। भगवन् ! अलेश्य जीव क्रियावादी हैं ? इत्यादि प्रश्न । गौतम! वे क्रियावादी हैं। भगवन् ! कृष्णपाक्षिक जीव क्रियावादी हैं ? गौतम ! कृष्णपाक्षिक जीव अक्रियावादी, अज्ञानवादी, विनयवादी हैं । शुक्लपाक्षिक जीवों को सलेश्य जीवों समान जानना । सम्यग्दृष्टि जीव, अलेश्य जीव के समान हैं । मिथ्यादृष्टि जीव, कृष्णपाक्षिक जीवों के समान हैं

भगवन् ! सम्यग्मिथ्या दृष्टि जीव क्रियावादी हैं ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! वे अज्ञानवादी और विनयवादी हैं। ज्ञानी यावत् केवलज्ञानी जीव, अलेश्य जीवों के तुल्य हैं । अज्ञानी यावत् विभंगज्ञानी जीव, कृष्णपाक्षिक जीवों के समान हैं । आहारसंज्ञोपयुक्त यावत् परिग्रहसंज्ञोपयुक्त जीव सलेश्य जीवों के समान हैं । नोसंज्ञोपयुक्त जीवों का कथन अलेश्य जीवों के समान है । सवेदी से लेकर नपुंसकवेदी जीव तक सलेश्य जीवों के सदृश है । अवेदी जीवों अलेश्य जीवों के तुल्य हैं । सकषायी यावत् लोभकषायी जीवों सलेश्य जीवों के समान हैं । अकषायी जीवों अलेश्य जीवों के सदृश हैं । सयोगी से लेकर काययोगी पर्यन्त जीवों सलेश्य जीवों के समान हैं । अयोगी जीव, सलेश्य जीवों के समान हैं । साकारोपयुक्त और अनाकारोपयुक्त जीव, सलेश्य जीवों के तुल्य हैं ।

भगवन् ! नैरयिक क्रियावादी हैं ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! वे क्रियावादी यावत् विनयवादी भी होते हैं । भगवन्! सलेश्य नैरयिक क्रियावादी होते हैं ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! वे क्रियावादी यावत् विनयवादी भी हैं । इसी प्रकार कापोतलेश्य नैरयिकों तक जानना । कृष्णपाक्षिक नैरयिक क्रियावादी नहीं हैं । इसी प्रकार और इसी क्रम से सामान्य जीवों की वक्तव्यता समान अनाकारोपयुक्त तक वक्तव्यता कहना । विशेष यह है कि जिसके जो हो, वही कहना चाहिए, शेष नहीं कहना चाहिए । नैरयिकों समान स्तनितकुमार पर्यन्त कहना ।

भगवन् ! क्या पृथ्वीकायिक क्रियावादी होते हैं ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! वे अक्रियावादी भी हैं और अज्ञान वादी भी हैं । इसी प्रकार पृथ्वीकायिक आदि जीवों में जो पद संभवित हों, उन सभी पदों में अक्रियावादी और अज्ञानवादी हैं, ये ही अनाकारोपयुक्त पृथ्वीकायिक पर्यन्त होते हैं । इसी प्रकार चतुरिन्द्रिय जीवों तक सभी पदों में मध्य के दो समवसरण होते हैं । इनके सम्यक्त्व और ज्ञान में भी ये दो मध्यम समवसरण जानने चाहिए । पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चयोनिक जीवों का कथन औघिक जीवों के समान है, किन्तु इनमें भी जिसके जो पद हों, वे कहने चाहिए मनुष्यों का समग्र कथन औघिक जीवों के सदृश है । वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिक जीवों का कथन असुरकुमारों के समान जानना ।

भगवन् ! क्रियावादी जीव नरकायु बाँधते हैं, तिर्यञ्चायु बाँधते हैं, मनुष्यायु बाँधते हैं अथवा देवायु बाँधते हैं ? गौतम ! क्रियावादी जीव मनुष्यायु और देवायु बाँधते हैं । भगवन् ! यदि क्रियावादी जीव देवायुष्य बाँधते हैं तो क्या वे भवनवासी देवायुष्य बाँधते हैं, यावत् वैमानिक देवायुष्य बाँधते हैं ? गौतम ! वे वैमानिक-देवायुष्य बाँधते हैं। भगवन् ! अक्रियावादी जीव नैरयिकायुष्य यावत् देवायुष्य बाँधते हैं ? गौतम ! वे नैरयिकायुष्य यावत् देवायुष्य भी बाँधते हैं । इसी प्रकार अज्ञानवादी और विनयवादी जीवों के आयुष्य-बन्ध को समझना ।

भगवन् ! क्या सलेश्य क्रियावादी जीव नैरयिकायुष्य बाँधते हैं ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! वे नैरयिकायुष्य नहीं बाँधते इत्यादि सब औघिक जीव के समान सलेश्य में चारों समवसरणों का कथन करना । भगवन् ! क्या कृष्णलेश्यी क्रियावादी जीव, नैरयिक का आयुष्य बाँधते हैं ? इत्यादि । गौतम ! वे केवल मनुष्यायुष्य बाँधते हैं । कृष्णलेश्यी अक्रियावादी, अज्ञानवादी और विनयवादी जीव, नैरयिक आदि चारों प्रकार का आयुष्य बाँधते हैं । इसी प्रकार

नीललेश्यी और कापोतलेश्यी के विषय में भी जानना । भगवन् ! क्या तेजोलेश्यी क्रियावादी जीव नैरयिका-युष्य बाँधते हैं ? इत्यादि । गौतम ! वे मनुष्यायुष्य और देवायुष्य भी बाँधते हैं । भगवन् ! यदि वे देवायुष्य बाँधते हैं तो क्या भवनवासी, यावत् वैमानिक देवायुष्य बाँधते हैं ? पूर्ववत् जानना ।

भगवन् ! तेजोलेश्यी अक्रियावादी जीव नैरयिकायुष्य बाँधते हैं ? इत्यादि । गौतम ! वे तिर्यञ्चायुष्य यावत् देवायुष्य बाँधते हैं । इसी प्रकार अज्ञानवादी और विनयवादी को जानना । तेजोलेश्यी के आयुष्य-बन्ध के समान पद्मलेश्यी और शुक्ललेश्यी के आयुष्यबन्ध को जानना । भगवन् ! अलेश्यी क्रियावादी जीव नैरयिकायुष्य बाँधते हैं? इत्यादि । गौतम ! नैरयिक यावत् देव, किसी का आयुष्य नहीं बाँधते । भगवन् ! कृष्णपाक्षिक अक्रियावादी जीव नैरयिकायुष्य बाँधते हैं ? इत्यादि । गौतम ! वे नैरयिक आदि चारों प्रकार का आयुष्य बाँधते हैं । इसी प्रकार कृष्णपाक्षिक अज्ञानवादी और विनयवादी जीवों के आयुष्यबन्ध को जानना । शुक्लपाक्षिक जीव सलेश्यी जीवों के समान आयुष्यबन्ध करते हैं ।

भगवन् ! क्या सम्यग्दृष्टि क्रियावादी जीव नैरयिकानुबन्ध करते हैं ? इत्यादि । गौतम ! वे मनुष्य और देव का आयुष्य बाँधते हैं । मिथ्यादृष्टि क्रियावादी जीव का आयुष्यबन्ध कृष्णपाक्षिक के समान है । भगवन् ! सम्यग्-मिथ्यादृष्टि अज्ञानवादी जीव नैरयिकायुष्य बाँधते हैं ? इत्यादि । गौतम ! अलेश्यी जीव के समान जानना । इसी प्रकार विनयवादी जीवों को जानना । ज्ञानी, आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी का कथन सम्यग्दृष्टि के समान है । भगवन् ! मनःपर्यवज्ञानी नैरयिकायुष्य बाँधते हैं ? इत्यादि । गौतम ! वे केवल देव का आयुष्य बाँधते हैं । भगवन् ! यदि वे देवायुष्य बाँधते हैं, तो क्या भवनवासी देवायुष्य बाँधते हैं ? गौतम ! वे केवल वैमानिकदेव का आयुष्य बाँधते हैं । केवलज्ञानी के विषय में अलेश्यी के समान जानना ।

अज्ञानी से लेकर विभंगज्ञानी तक का आयुष्यबन्ध कृष्णपाक्षिक के समान समझना । आहारादि चारों संज्ञाओं वाले जीवों का आयुष्यबन्ध सलेश्य जीवों के समान है । नोसंज्ञोपयुक्त जीवों का आयुष्यबन्ध मनःपर्यव-ज्ञानी के सदृश है । सवेदी से लेकर नपुंसकवेदी तक सलेश्य जीवों के समान हैं । अवेदी जीवों का आयुष्यबन्ध अलेश्य जीवों के समान है । सकषायी से लेकर लोभकषायी तक को सलेश्य जीवों के समान जानना । अकषायी जीवों के विषय में अलेश्य के समान जानना । सयोगी से लेकर काययोगी तक सलेश्य जीवों के समान समझना । अयोगी जीवों को अलेश्य के समान कहना । साकारोपयुक्त और अनाकारोपयुक्त को सलेश्य जीवों के समान जानना ।

सूत्र - ९९९

भगवन् ! क्या क्रियावादी नैरयिक जीव नैरयिकायुष्य बाँधते हैं ? गौतम ! वे नारक, तिर्यञ्च और देव का आयुष्य नहीं बाँधते, किन्तु मनुष्य का आयुष्य बाँधते हैं । भगवन् ! अक्रियावादी नैरयिक जीव नैरयिक का आयुष्य बाँधते हैं ? गौतम ! वे नैरयिक और देव का आयुष्य नहीं बाँधते, किन्तु तिर्यञ्च और मनुष्य का आयुष्य बाँधते हैं । इसी प्रकार अज्ञानवादी और विनयवादी नैरयिक के आयुष्यबन्ध के विषय में समझना चाहिए । भगवन् ! क्या सलेश्य क्रियावादी नैरयिक, नैरयिकायुष्य बाँधते हैं ? गौतम ! सभी नैरयिक, जो क्रियावादी हैं, वे एकमात्र मनुष्या-युष्य ही बाँधते हैं तथा जो अक्रियावादी, अज्ञानवादी और विनयवादी नैरयिक हैं, वे सभी स्थानों में तिर्यञ्च और मनुष्य का आयुष्य बाँधते हैं । विशेष यह है कि सम्यग्मिथ्यादृष्टि अज्ञानवादी और विनयवादी इन दो समवसरणों में जीवपद के समान किसी भी प्रकार के आयुष्य का बन्ध नहीं करते । इसी प्रकार स्तनितकुमारों तक नैरयिकों के समान जानना । भगवन् ! अक्रियावादी पृथ्वीकायिक जीव नैरयिक का आयुष्य बाँधते हैं ? गौतम ! वे तिर्यञ्च और मनुष्य का आयुष्यबन्ध करते हैं । इसी प्रकार अज्ञानवादी (पृथ्वीकायिक) जीवों का आयुष्यबन्ध समझना । भगवन् ! सलेश्य अक्रियावादी पृथ्वीकायिक जीव नैरयिक का आयुष्य बाँधते हैं ? गौतम ! जो-जो पद पृथ्वी-कायिक जीवों के होते हैं, उन-उन में अक्रियावादी और अज्ञानवादी, इन दो समवसरणों में इसी प्रकार मनुष्य और तिर्यञ्च आयुष्य बाँधते हैं । किन्तु तेजोलेश्या में तो किसी भी प्रकार का आयुष्यबन्ध नहीं होता । इसी प्रकार अप्कायिक और वनस्पतिकायिक जीवों का आयुष्य-बन्ध जानना । तेजस्कायिक और वायुकायिक जीव, सभी स्थानों में अक्रियावादी और अज्ञानवादी

में, एकमात्र तिर्यञ्च का आयुष्य बाँधते हैं । द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय और चतु-रिन्द्रिय जीवों का आयुष्यबन्ध पृथ्वीकायिक जीवों के तुल्य है । परन्तु सम्यक्त्व और ज्ञान में वे किसी भी आयुष्य का बन्ध नहीं करते ।

भगवन् ! क्या क्रियावादी पंचेन्द्रियतिर्यञ्च नैरयिक का आयुष्य बाँधते हैं ? गौतम ! इनका आयुष्यबन्ध मनःपर्यवज्ञानी के समान है । अक्रियावादी, अज्ञानवादी और विनयवादी चारों प्रकार का आयुष्य बाँधते हैं । सलेश्य जीवों का निरूपण औघिक जीव के सदृश है । भगवन् ! क्या कृष्णलेश्यी क्रियावादी पंचेन्द्रियतिर्यञ्च नैरयिक का आयुष्य बाँधते हैं ? गौतम ! वे नैरयिक यावत् देव किसी का भी आयुष्य नहीं बाँधते । अक्रियावादी, अज्ञानवादी और विनयवादी चारों प्रकार का आयुष्यबन्ध करते हैं । नीललेश्यी और कापोतलेश्यी का आयुष्यबन्ध भी कृष्ण-लेश्यी के समान है । तेजोलेश्यी का आयुष्यबन्ध सलेश्य के समान है । परन्तु अक्रियावादी, अज्ञानवादी और विनयवादी जीव तिर्यञ्च, मनुष्य और देव का आयुष्य बाँधते हैं । इसी प्रकार पद्मलेश्यी और शुक्ललेश्यी जीवों को कहना ।

कृष्णपाक्षिक अक्रियावादी, अज्ञानवादी और विनयवादी चारों ही प्रकार का आयुष्यबन्ध करते हैं । शुक्ल-पाक्षिकों का कथन सलेश्य के समान है । सम्यग्दृष्टि जीव मनःपर्यवज्ञानी के सदृश वैमानिक देवों का आयुष्यबन्ध करते हैं । मिथ्यादृष्टि का आयुष्यबन्ध कृष्णपाक्षिक के समान है । सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव एक भी प्रकार का आयुष्यबन्ध नहीं करते । उनमें नैरयिकों के समान दो समवसरण होते हैं । ज्ञानी से लेकर अवधिज्ञानी तक के जीवों को सम्यग्दृष्टि जीवों के समान जानना । अज्ञानी से लेकर विभंगज्ञानी तक के जीवों को कृष्णपाक्षिकों के समान हैं । शेष सभी अनाकारोपयुक्त पर्यन्त जीवों को सलेश्य जीवों के समान कहना । पंचेन्द्रियतिर्यञ्चयोनिक जीवों के समान मनुष्यों को कहना । विशेष यह है कि मनःपर्यवज्ञानी और नोसंज्ञोपयुक्त मनुष्यों का आयुष्यबन्ध-कथन सम्यग्दृष्टि तिर्यञ्चयोनिक के समान है । अलेश्यी, केवलज्ञानी, अवेदी, अकषायी और अयोगी, ये औघिक जीवों के समान किसी भी प्रकार का आयुष्यबन्ध नहीं करते । शेष पूर्ववत् । वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिक जीवों को असुरकुमारों के समान जानना ।

भगवन् ! क्रियावादी जीव भवसिद्धिक हैं या अभवसिद्धिक हैं ? गौतम ! वे अभवसिद्धिक नहीं, भव-सिद्धिक हैं । भगवन् ! अक्रियावादी जीव भवसिद्धिक हैं या अभवसिद्धिक हैं ? गौतम ! वे भवसिद्धिक भी हैं और अभवसिद्धिक भी । इसी प्रकार अज्ञानवादी और विनयवादी जीवों को समझना । भगवन् ! सलेश्य क्रियावादी जीव भवसिद्धिक हैं या अभवसिद्धिक हैं ? गौतम ! वे भवसिद्धिक हैं । भगवन् ! सलेश्य अक्रियावादी जीव भव-सिद्धिक हैं या अभवसिद्धिक ? गौतम ! वे भवसिद्धिक भी हैं और अभवसिद्धिक भी हैं । इसी प्रकार अज्ञानवादी और विनयवादी भी जानना । शुक्ललेश्यी पर्यन्त सलेश्य के समान जानना ।

भगवन् ! अलेश्यी क्रियावादी जीव भवसिद्धिक हैं या अभवसिद्धिक हैं ? गौतम ! वे भवसिद्धिक हैं । इस अभिलाप से कृष्णपाक्षिक तीनों समवसरणों में भजना से भवसिद्धिक हैं । शुक्लपाक्षिक जीव चारों समवसरणों में भवसिद्धिक हैं । सम्यग्दृष्टि अलेश्यी जीवों के समान हैं । मिथ्यादृष्टि जीव कृष्णमाभिक के सदृश हैं । सम्यग्मिथ्या-दृष्टि जीव अज्ञानवादी और विनयवादी में अलेश्यी जीवों के समान भवसिद्धिक हैं । ज्ञानी से लेकर केवलज्ञानी तक भवसिद्धिक हैं । अज्ञानी से लेकर विभंगज्ञानी तक कृष्णपाक्षिकों के सदृश हैं ।

चारों संज्ञाओं से युक्त जीवों सलेश्य जीवों के समान हैं । नोसंज्ञोपयुक्त जीवों सम्यग्दृष्टि के समान हैं । सवेदी से लेकर नपुंसकवेदी जीवों सलेश्य जीवों के सदृश हैं । अवेदी जीवों सम्यग्दृष्टि के समान हैं । सकषायी यावत् लोभकषायी, सलेश्य जीवों के समान जानना । अकषायी जीव सम्यग्दृष्टि के समान जानना । सयोगी यावत् काययोगी जीव सलेश्यी के समान हैं । अयोगी जीव सम्यग्दृष्टि के सदृश हैं । साकारोपयुक्त और अनाकारोपयुक्त जीव सलेश्य जीवों के सदृश जानना । इसी प्रकार नैरयिकों के विषय में कहना, किन्तु उनमें जो बोल हों, वह कहना । इसी प्रकार असुरकुमारों से लेकर स्तनितकुमारों तक जानना ।

पृथ्वीकायिक जीव सभी स्थानों में मध्य के दोनों समवसरणों में भवसिद्धिक भी होते हैं और अभवसिद्धिक भी होते हैं । इसी प्रकार वनस्पतिकायिक पर्यन्त जानना चाहिए । द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय और चतुरिन्द्रिय जीवों के विषय में

भी इसी प्रकार जानना चाहिए । विशेष यह है कि सम्यक्त्व, औधिक ज्ञान, आभिनिबोधिकज्ञान और श्रुतज्ञान, इनके मध्य के दोनों समवसरणों में भवसिद्धिक हैं । शेष पूर्ववत् । पंचेन्द्रियतिर्यञ्चयोनिक जीव नैरयिकों के सदृश जानना, किन्तु उनमें जो बोल पाये जाते हों, (वे सब कहने चाहिए) । मनुष्यों का कथन औधिक जीवों के समान है। वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिकों का निरूपण असुरकुमारों के समान जानना । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है

शतक-३० – उद्देशक-२

सूत्र - १०००

भगवन् ! क्या अनन्तरोपपन्नक नैरयिक क्रियावादी हैं ? गौतम ! वे क्रियावादी भी हैं, यावत् विनयवादी भी हैं। भगवन् ! क्या सलेश्य अनन्तरोपपन्नक नैरयिक क्रियावादी हैं ? गौतम ! पूर्ववत् । प्रथम उद्देशक में नैरयिकों की वक्तव्यता समान यहाँ भी कहना चाहिए । विशेष यह है कि अनन्तरोपपन्न नैरयिकों में से जिसमें जो बोल सम्भव हों, वही कहने चाहिए । सर्व जीवों की, यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता इसी प्रकार कहनी चाहिए, किन्तु अनन्तरोपपन्नक जीवों में जहाँ जो सम्भव हो, वहाँ वह कहना चाहिए ।

भगवन् ! क्या क्रियावादी अनन्तरोपपन्नक नैरयिक, नैरयिक का आयुष्य बाँधते हैं ? गौतम ! वे नारक यावत् देव का आयुष्य नहीं बाँधते । इसी प्रकार अक्रियावादी, अज्ञानवादी और विनयवादी अनन्तरोपपन्नक नैरयिक के विषय में समझना चाहिए । भगवन् ! क्या सलेश्य क्रियावादी अनन्तरोपपन्नक नैरयिक नारकायुष्य बाँधते हैं ? गौतम ! वे नैरयिकायुष्य यावत् देवायुष्य नहीं बाँधते । इसी प्रकार वैमानिक पर्यन्त जानना । इसी प्रकार सभी स्थानों में अनन्तरोपपन्नक नैरयिक, यावत् अनाकारोपयुक्त जीव किसी भी प्रकार का आयुष्यबन्ध नहीं करते हैं । इसी प्रकार वैमानिक पर्यन्त समझना । किन्तु जिसमें जो बोल सम्भव हों, वह उसमें कहना चाहिए ।

भगवन् ! क्रियावादी अनन्तरोपपन्नक नैरयिक भवसिद्धिक हैं या अभवसिद्धिक हैं ? गौतम ! वे भव-सिद्धिक हैं, अभवसिद्धिक नहीं हैं । भगवन् ! अक्रियावादी ? गौतम ! वे भवसिद्धिक भी हैं और अभवसिद्धिक भी हैं । इसी प्रकार अज्ञानवादी और विनयवादी भी समझने चाहिए । भगवन् ! सलेश्य क्रियावादी ? गौतम ! वे भव-सिद्धिक हैं, अभवसिद्धिक नहीं हैं । इसी प्रकार इस अभिलाप से औधिक उद्देशक में नैरयिकों की वक्तव्यता समान यहाँ भी अनाकारयुक्त तक कहनी चाहिए । इसी प्रकार वैमानिक पर्यन्त कहना चाहिए; किन्तु जिसमें जो बोल हो उसके सम्बन्ध में वह कहना चाहिए । उनका लक्षण यह है कि क्रियावादी, शुक्लपाक्षिक और सम्यग्-मिथ्यादृष्टि, ये सब भवसिद्धिक हैं, अभवसिद्धिक नहीं । शेष सब भवसिद्धिक भी हैं, अभवसिद्धिक भी हैं। हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है

शतक-३० – उद्देशक-३

सूत्र - १००१

भगवन् ! परम्परोपपन्नक नैरयिक क्रियावादी हैं ? इत्यादि । गौतम ! औधिक उद्देशकानुसार परम्परोप-पन्नक नैरयिक आदि (नारक से वैमानिक तक) हैं और उसी प्रकार वैमानिक पर्यन्त समग्र उद्देशक तीन दण्डक सहित करना 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-३० – उद्देशक-४ से ११

सूत्र - १००२

इसी प्रकार और इसी क्रम से बन्धीशतक में उद्देशकों की जो परिपाटी है, वही परिपाटी यहाँ भी अचरम उद्देशक पर्यन्त समझना । विशेष यह कि 'अनन्तर' शब्द वाले चार उद्देशक एक गम वाले हैं । 'परम्पर' शब्द वाले चार उद्देशक एक गम वाले हैं । इसी प्रकार 'चरम' और 'अचरम' वाले उद्देशकों के विषय में भी समझना चाहिए, किन्तु अलेश्यी, केवली और अयोगी का कथन यहाँ नहीं करना चाहिए । शेष पूर्ववत् है । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।' इस प्रकार ये ग्यारह उद्देशक हुए ।

शतक-३० का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

शतक–३१

उद्देशक–१

सूत्र - १००३

राजगृह नगर में गौतमस्वामी ने यावत् इस प्रकार पूछा–भगवन् ! क्षुद्रयुग्म कितने कहे हैं ? गौतम ! चार । यथा–कृतयुग्म, त्र्योज, द्वापरयुग्म और कल्योज । भगवन् ! यह क्यों कहा जाता है कि क्षुद्रयुग्म चार हैं ? गौतम ! जिस राशि में से चार-चार का अपहार करते हुए अन्त में चार रहें, उसे क्षुद्रकृतयुग्म कहते हैं । जिस राशि में चार-चार का अपहार करते हुए अन्त में तीन शेष रहें, उसे क्षुद्रत्र्योज कहते हैं । जिस राशि में से चार-चार का अपहार करते हुए अन्त में दो शेष रहें, उसे क्षुद्रद्वापरयुग्म कहते हैं और जिस राशि में से चार-चार का अपहार करते हुए अन्त में एक ही शेष रहे, उसे क्षुद्रकल्योज कहते हैं । इस कारण से हे गौतम ! यावत् कल्योज कहा है ।

भगवन् ! क्षुद्रकृतयुग्म-राशिपरिमाण नैरयिक कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? क्या वे नैरयिकों से आकर उत्पन्न होते हैं ? अथवा तिर्यञ्चयोनिकों से ? गौतम ! वे नैरयिकों से आकर उत्पन्न नहीं होते । इत्यादि व्युत्क्रान्ति-पद के नैरयिकों के उपपात के अनुसार कहना । भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! वे चार, आठ, बारह, सोलह, संख्यात या असंख्यात उत्पन्न होते हैं । भगवन् ! वे जीव किस प्रकार उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! जिस प्रकार कोई कूदने वाला, कूदता-कूदता यावत् अध्यवसायरूप कारण से आगामी भव को प्राप्त करते हैं, इत्यादि पच्चीसवें शतक के आठवें उद्देशक में उक्त नैरयिक-सम्बन्धी वक्तव्यता के समान यहाँ भी कहना चाहिए कि यावत् वे आत्मप्रयोग से उत्पन्न होते हैं, परप्रयोग से उत्पन्न नहीं होते हैं ।

भगवन् ! क्षुद्रकृतयुग्म-राशिप्रमाण रत्नप्रभापृथ्वी के नैरयिक कहाँ उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! औघिक नैरयिकों समान रत्नप्रभापृथ्वी के नैरयिकों के लिए भी कि वे परप्रयोग से उत्पन्न नहीं होते, तक कहना । इसी प्रकार शर्कराप्रभा से लेकर अधःसप्तमपृथ्वी तक जानना चाहिए । व्युत्क्रान्तिपद के अनुसार यहाँ भी उपपात जानना चाहिए । असंज्ञी जीव प्रथम नरक तक, सरीसृप द्वीतिय नरक तक और पक्षी तृतीय नरक तक उत्पन्न होते हैं, इत्यादि उपपात जानना । शेष पूर्ववत् । भगवन् ! क्षुद्रत्र्योज-राशिप्रमाण नैरयिक कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? इनका उपपात भी व्युत्क्रान्तिपद अनुसार जानना । भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! वे एक समय में तीन, सात, ग्यारह, पन्द्रह, संख्यात या असंख्यात उत्पन्न होते हैं । शेष सभी कृतयुग्म नैरयिक समान जानना। इसी प्रकार अधःसप्तमपृथ्वी तक समझना ।

भगवन् ! क्षुद्रद्वापरयुग्म-राशिप्रमाण नैरयिक कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! क्षुद्रकृतयुग्मराशि के अनुसार जानना । किन्तु ये परिमाण में–दो, छह, दस, चौदह, संख्यात या असंख्यात उत्पन्न होते हैं । शेष पूर्ववत् अधःसप्तमपृथ्वी पर्यन्त जानना । भगवन् ! क्षुद्रकल्योज-राशिप्रमाण नैरयिक कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! क्षुद्रकृतयुग्मराशि के अनुसार जानना । किन्तु ये परिमाण में–एक, पाँच, नौ, तेरह, संख्यात या असंख्यात उत्पन्न होते हैं । शेष पूर्ववत् । इसी प्रकार अधःसप्तमपृथ्वी पर्यन्त जानना । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।' यों कहकर गौतमस्वामी यावत् विचरते हैं ।

शतक-३१ – उद्देशक-२

सूत्र - १००४

भगवन् ! क्षुद्रकृतयुग्म-राशिप्रमाण कृष्णलेश्यी नैरयिक कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! औघिक-गम अनुसार समझना यावत् वे परप्रयोग से उत्पन्न नहीं होते । विशेष यह है कि धूमप्रभापृथ्वी के नैरयिकों का उपपात व्युत्क्रान्तिपद अनुसार कहना । शेष पूर्ववत् ! भगवन् ! धूमप्रभापृथ्वी के क्षुद्रकृतयुग्म-राशिप्रमाण कृष्ण-लेश्यी नैरयिक कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! पूर्ववत् जानना । इसी प्रकार तमःप्रभा और अधःसप्तम-पृथ्वी पर्यन्त कहना चाहिए । किन्तु उपपात सर्वत्र व्युत्क्रान्तिपद अनुसार जानना ।

भगवन् ! क्षुद्रत्र्योज-राशिप्रमाण (धूमप्रभापृथ्वी के) कृष्णलेश्यी नैरयिक कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ?

गौतम ! पूर्ववत् । विशेष यह है कि ये तीन, सात, ग्यारह, पन्द्रह, संख्यात या असंख्यात उत्पन्न होते हैं । शेष पूर्ववत् इसी प्रकार यावत् अधःसप्तमपृथ्वी तक जानना ।

भगवन् ! कृष्णलेश्यी क्षुद्रद्वापरयुग्म-राशिप्रमाण नैरयिक कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! इसी प्रकार समझना । किन्तु दो, छह, दस या चौदह, संख्यात या असंख्यात उत्पन्न होते हैं । शेष पूर्ववत् । इसी प्रकार धूमप्रभा से अधःसप्तमपृथ्वी पर्यन्त जानना । भगवन् ! क्षुद्रकल्योज-राशिपरिमाण कृष्णलेश्या वाले नैरयिक कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! पूर्ववत् । किन्तु परिमाण में वे एक, पाँच, नौ, तेरह, संख्यात या असंख्यात उत्पन्न होते हैं । शेष पूर्ववत् । इसी प्रकार धूमप्रभा, तमःप्रभा और अधःसप्तमपृथ्वी पर्यन्त समझना । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-३१ – उद्देशक-३

सूत्र - १००५

भगवन् ! क्षुद्रकृतयुग्म-राशि-प्रमाण नीललेश्यी नैरयिक कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! कृष्ण-लेश्यी क्षुद्रकृतयुग्म नैरयिक के समान । किन्तु इनका उपपात बालुकाप्रभापृथ्वी के समान है । शेष पूर्ववत् । भगवन्! नीललेश्या वाले क्षुद्रकृतयुग्म-राशिप्रमाण बालुकाप्रभापृथ्वी के नैरयिक कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! पूर्ववत् । इसी प्रकार पंकप्रभा और धूमप्रभा वाले में समझना । इसी प्रकार चारों युग्मों के विषय में समझना । परन्तु कृष्णलेश्या के उद्देशक समान परिमाण यहाँ भी समझना । शेष पूर्ववत् । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-३१ – उद्देशक-४

सूत्र - १००६

भगवन् ! कापोतलेश्या वाले क्षुद्रकृतयुग्म-राशिप्रमित नैरयिक कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! कृष्णलेश्या वाले क्षुद्रकृतयुग्म-राशिप्रमाण नैरयिकों के समान जानना । विशेष यह है कि इनका उपपात रत्नप्रभा में होता है । शेष पूर्ववत् । भगवन् ! कापोतलेश्या वाले क्षुद्रकृतयुग्म-राशिप्रमाण रत्नप्रभापृथ्वी नैरयिक कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! पूर्ववत् । इसी प्रकार शर्कराप्रभा और बालुकाप्रभा में भी जानना । इसी प्रकार चारों युग्मों जानना । विशेष यह कि परिमाण कृष्णलेश्या वाले उद्देशक अनुसार कहना । शेष पूर्ववत् । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-३१ – उद्देशक-५

सूत्र - १००७

भगवन् ! क्षुद्रकृतयुग्म-राशिप्रमित भवसिद्धिक नैरयिक कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! औघिक गमक के समान जानना यावत् ये परप्रयोग से उत्पन्न नहीं होते । भगवन् ! रत्नप्रभापृथ्वी के क्षुद्रकृतयुग्म-राशि-प्रमित भवसिद्धिक नैरयिक कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! इनका समग्र कथन पूर्ववत् जानना । इसी प्रकार अधःसप्तमपृथ्वी तक कहना चाहिए । इसी प्रकार भवसिद्धिक क्षुद्रत्र्योज-राशिप्रमाण नैरयिक के विषय में भी तथा कल्योज पर्यन्त जानना । किन्तु परिमाण पूर्वकथित प्रथम उद्देशक अनुसार जानना । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है

शतक-३१ – उद्देशक-६

सूत्र - १००८

भगवन् ! कृष्णलेश्या वाले भवसिद्धिक क्षुद्रकृतयुग्म-प्रमाण नैरयिक कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम! औघिक कृष्णलेश्या उद्देशक समान जानना । चारों युग्मों में इसका कथन करना चाहिए । भगवन् ! अधः-सप्तमपृथ्वी के कृष्णलेश्यी क्षुद्रकल्योज-राशिप्रमाण नैरयिक कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? पूर्ववत् । भगवन् ! यह इसी प्रकार है

शतक-३१ – उद्देशक-७

सूत्र - १००९

नीललेश्या वाले भवसिद्धिक नैरयिक के चारों युग्मों का कथन औघिक नीललेश्या अनुसार समझना । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-३१ – उद्देशक-८

सूत्र - १०१०

कापोतलेश्यी भवसिद्धिक नैरयिक के चारों ही युग्मों का कथन औघिक कापोत उद्देशक अनुसार कहना । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-३१ – उद्देशक-९ से १२

सूत्र - १०११

भवसिद्धिक-सम्बन्धी चार उद्देशक समान अभवसिद्धिक-सम्बन्धी चारों उद्देशक कापोतलेश्या उद्देशकों तक कहना । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-३१ – उद्देशक-१३ से १६

सूत्र - १०१२

इसी प्रकार लेश्या सहित सम्यग्दृष्टि के चार उद्देशक कहना । विशेष यह है कि सम्यग्दृष्टि का प्रथम और द्वीतिय, इन दो उद्देशकों में कथन है । पहले और दूसरे उद्देशक में अधःसप्तमनरकपृथ्वी में सम्यग्दृष्टि का उपपात नहीं कहना । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-३१ – उद्देशक-१७ से २०

सूत्र - १०१३

मिथ्यादृष्टि के भी भवसिद्धिकों के समान चार उद्देशक कहने चाहिए ।

शतक-३१ – उद्देशक-२१ से २४

सूत्र - १०१४

इसी प्रकार कृष्णपाक्षिक के लेश्याओं सहित चार उद्देशक भवसिद्धिकों के समान कहना । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-३१ – उद्देशक-२५ से २८

सूत्र - १०१५

इसी प्रकार शुक्लपाक्षिक के भी लेश्या-सहित चार उद्देशक कहने चाहिए । यावत् भगवन् ! बालुकाप्रभा-पृथ्वी के कापोतलेश्या वाले शुक्लपाक्षिक क्षुद्रकल्योज-राशिप्रमाण नैरयिक कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम! पूर्ववत् । यावत् वे परप्रयोग से उत्पन्न नहीं होते । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।' ये सब मिलाकर अट्ठाईस उद्देशक हुए ।

शतक-३१ का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

शतक–३२

उद्देशक–१

सूत्र - १०१६

भगवन् ! क्षुद्रकृतयुग्म-राशिप्रमाण नैरयिक कहाँ से उद्वर्तित होकर (मरकर) तुरन्त कहाँ जाते हैं और कहाँ उत्पन्न होते हैं ? क्या वे नैरयिकों में उत्पन्न होते हैं यावत् देवों में उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! इनका उद्वर्त्तन व्युत्क्रान्तिक पद अनुसार जानना । भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उद्वर्त्तित होते हैं ? गौतम ! चार, आठ, बारह, सोलह, संख्यात या असंख्यात उद्वर्त्तित होते हैं । भगवन् ! ये जीव किस प्रकार उद्वर्त्तित होते हैं ? गौतम ! जैसे कोई कूदने वाला इत्यादि पूर्ववत् यावत् वे आत्मप्रयोग से उद्वर्त्तित होते हैं, परप्रयोग से नहीं ।

भगवन् ! रत्नप्रभापृथ्वी के क्षुद्रकृतयुग्म-राशिप्रमाण नैरयिक कहाँ से उद्वर्त्तित होकर तुरन्त कहाँ जाते हैं ? गौतम ! रत्नप्रभापृथ्वी के समान इनकी उद्वर्त्तना जानना । इसी प्रकार अधःसप्तमपृथ्वी तक उद्वर्त्तना जानना । इस प्रकार क्षुद्रत्र्योज, क्षुद्रद्वापरयुग्म और क्षुद्रकल्योज जानना । परन्तु इनका परिमाण पूर्ववत् पृथक्-पृथक् कहना । शेष पूर्ववत् । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-३२ – उद्देशक-२ से २८

सूत्र - १०१७

भगवन् ! कृष्णलेश्या वाले क्षुद्रकृतयुग्म-राशिप्रमाण नैरयिक कहाँ से नीकलकर कहाँ जाते हैं, कहाँ उत्पन्न होते हैं ? इसी प्रकार उपपातशतक के समान उद्वर्त्तनाशतक के भी अट्ठाईस उद्देशक जानना । विशेष यह है कि 'उत्पन्न' के स्थान पर 'उद्वर्त्तित' कहना । शेष पूर्ववत् । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-३२ का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

शतक–३३

शतकशतक-१ – उद्देशक–१

सूत्र - १०१८

भगवन् ! एकेन्द्रिय जीव कितने प्रकार के कहे हैं ? गौतम ! पाँच प्रकार के–पृथ्वीकायिक यावत् वनस्पतिकायिक । भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीव कितने प्रकार के कहे हैं ? गौतम ! दो प्रकार के–सूक्ष्मपृथ्वीकायिक और बादरपृथ्वीकायिक । भगवन् ! सूक्ष्मपृथ्वीकायिक जीव कितने प्रकार के कहे हैं ? गौतम ! दो प्रकार के–पर्याप्त सूक्ष्मपृथ्वीकायिक, अपर्याप्त सूक्ष्मपृथ्वीकायिक । भगवन् ! बादरपृथ्वीकायिक जीव कितने प्रकार के कहे हैं ? गौतम पूर्ववत् । इसी प्रकार अप्कायिक जीवों के चार भेद जानने चाहिए । इसी प्रकार वनस्पतिकायिक जीव पर्यन्त जानना

भगवन् ! अपर्याप्त सूक्ष्मपृथ्वीकायिक जीवों के कितनी कर्मप्रकृतियाँ कही हैं ? गौतम ! आठ । ज्ञानावरणीय यावत् अन्तरायकर्म । भगवन् ! पर्याप्त सूक्ष्मपृथ्वीकायिक जीवों के कितनी कर्मप्रकृतियाँ कही हैं ? गौतम ! आठ । ज्ञानावरणीय यावत् अन्तरायकर्म । भगवन् ! अपर्याप्तबादर पृथ्वीकायिक जीवों के कितनी कर्मप्रकृतियाँ कही हैं ? गौतम ! पूर्ववत् आठ । भगवन् ! पर्याप्तबादर पृथ्वीकायिक जीवों के कितनी कर्मप्रकृतियाँ कही हैं ? गौतम! पूर्ववत् आठ । इसी प्रकार से यावत् पर्याप्तबादर वनस्पतिकायिक जीवों की कर्मप्रकृतियों समझना ।

भगवन् ! अपर्याप्त सूक्ष्मपृथ्वीकायिक जीव कितनी कर्मप्रकृतियाँ बाँधते हैं ? गौतम ! सात भी बाँधते हैं और आठ भी । सात बाँधते हुए आयुकर्म को छोड़कर शेष सात तथा आठ बाँधते हुए सम्पूर्ण आठ बाँधते हैं । भगवन् ! पर्याप्त सूक्ष्मपृथ्वीकायिक कितनी कर्मप्रकृतियाँ बाँधते हैं ? गौतम ! पूर्ववत् सात या आठ । भगवन् ! इसी प्रकार शेष सभी पर्याप्तबादर वनस्पतिकायिक पर्यन्त कितनी कर्मप्रकृतियाँ बाँधते हैं ? गौतम ! पूर्ववत् ।

भगवन् ! अपर्याप्त सूक्ष्मपृथ्वीकायिक जीव कितनी कर्मप्रकृतियाँ वेदते हैं ? गौतम ! वे चौदह कर्म-प्रकृतियाँ वेदते हैं, यथा–ज्ञानावरणीय यावत् अन्तरायकर्म, श्रोत्रेन्द्रियावरण, चक्षुरिन्द्रियावरण, घ्राणेन्द्रियावरण, जिह्वेन्द्रियावरण, स्त्रीवेदावरण और पुरुषवेदावरण । इसी प्रकार चारों भेदों सहित, यावत्–हे भगवन् ! पर्याप्त-बादरवनस्पतिकायिक जीव कितनी कर्मप्रकृतियाँ वेदते हैं ? गौतम ! पूर्ववत् चौदह । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-३३ – शतकशतक-१ – उद्देशक–२

सूत्र - १०१९

भगवन् ! अनन्तरोपपन्नक एकेन्द्रिय जीव कितने प्रकार के हैं ? गौतम ! पाँच प्रकार के–पृथ्वीकायिक यावत् वनस्पतिकायिक । भगवन् ! अनन्तरोपपन्नक पृथ्वीकायिक जीव कितने प्रकार के कहे गए हैं ? गौतम ! दो प्रकार के–सूक्ष्म अनन्तरोपपन्नक पृथ्वीकायिक और बादर अनन्तरोपपन्नक पृथ्वीकायिक । इसी प्रकार दो-दो भेद वनस्पतिकायिक पर्यन्त समझना ।

भगवन् ! अनन्तरोपपन्नक सूक्ष्मपृथ्वीकायिक जीव के कितनी कर्मप्रकृतियाँ हैं ? गौतम ! आठ यथा–ज्ञानावरणीय यावत् अन्तरायकर्म । भगवन् ! अनन्तरोपपन्नक बादरपृथ्वीकायिक के कितनी कर्मप्रकृतियाँ कही गई हैं ? गौतम ! आठ, यथा–ज्ञानावरणीय यावत् अन्तरायकर्म । इसी प्रकार अनन्तरोपपन्नक बादरवनस्पतिकायिक पर्यन्त जानना । भगवन् ! अनन्तरोपपन्नक सूक्ष्मपृथ्वीकायिक जीव कितनी कर्मप्रकृतियाँ बाँधते हैं ? गौतम ! आयुकर्म को छोड़कर शेष सात । इसी प्रकार यावत् अनन्तरोपपन्नक बादरवनस्पतिकायिक पर्यन्त जानना ।

भगवन् ! अनन्तरोपपन्नक सूक्ष्मपृथ्वीकायिक जीव कितनी कर्मप्रकृतियाँ वेदते हैं ? गौतम ! वे (पूर्वोक्त) चौदह कर्मप्रकृतियाँ वेदते हैं, यथा–पूर्वोक्त प्रकार से ज्ञानावरणीय यावत् पुरुषवेदबध्य (पुरुषवेदावरण) वेदते हैं । इसी प्रकार यावत् अनन्तरोपपन्नक बादरवनस्पतिकायिक पर्यन्त कहना । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-३३ / १ – उद्देशक–३

सूत्र - १०२०

भगवन् ! परम्परोपपन्नक एकेन्द्रिय जीव कितने प्रकार के कहे गए हैं ? गौतम ! पाँच प्रकार के–पृथ्वी-कायिक

इत्यादि और औधिक उद्देशक के अनुसार इनके चार-चार भेद कहने चाहिए । भगवन् ! परम्परोपपन्नक-अपर्याप्तसूक्ष्मपृथ्वीकायिक जीवों के कितनी कर्मप्रकृतियाँ कही गई हैं ? गौतम ! से औधिक उद्देशक अनुसार यावत् चौदह कर्मप्रकृतियाँ वेदते हैं; तक पूर्ववत् कहना । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-३३ / १ – उद्देशक–४ से ११

सूत्र - १०२१

अनन्तरावगाढ़ एकेन्द्रिय, अनन्तरोपपन्नक उद्देशक समान कहना । परम्परावगाढ़ एकेन्द्रिय, परम्परोपपन्नक उद्देशक समान जानना । अनन्तराहारक एकेन्द्रिय, अनन्तरोपपन्नक उद्देशक अनुसार जानना । परम्पराहारक एकेन्द्रिय, परम्परोपपन्नक उद्देशक अनुसार समझना ।

अनन्तरपर्याप्तक एकेन्द्रिय, अनन्तरोपपन्नक समान जानना । परम्परपर्याप्तक एकेन्द्रिय परम्परोपपन्नक समान जानना । चरम एकेन्द्रिय परम्परोपपन्नक अनुसार जानना । इसी प्रकार अचरम एकेन्द्रिय भी जान लेना । ये सभी ग्यारह उद्देशक हुए । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-३३ – शतकशतक-२

सूत्र - १०२२

भगवन् ! कृष्णलेश्यी एकेन्द्रिय जीव कितने प्रकार के कहे गए हैं ? गौतम ! पाँच प्रकार के यथा–पृथ्वीकायिक यावत् वनस्पतिकायिक । भगवन् ! कृष्णलेश्या वाले पृथ्वीकायिक जीव कितने प्रकार के हैं ? गौतम ! दो प्रकार के, यथा–सूक्ष्मपृथ्वीकायिक और बादरपृथ्वीकायिक । भगवन् ! कृष्णलेश्यी सूक्ष्मपृथ्वीकायिक जीव कितने प्रकार के हैं ? गौतम ! औधिक उद्देशक अनुसार यहाँ भी प्रत्येक एकेन्द्रिय के चार-चार भेद कहना ।

भगवन् ! कृष्णलेश्यी अपर्याप्तक सूक्ष्मपृथ्वीकायिक जीव को कितनी कर्मप्रकृतियाँ हैं ? गौतम ! औधिक उद्देशक अनुसार कर्मप्रकृतियाँ कहना । उसी प्रकार वे बाँधते हैं। उसी प्रकार वे वेदते हैं। हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है

भगवन् ! अनन्तरोपपन्नक कृष्णलेश्यी एकेन्द्रिय जीव कितने प्रकार के हैं ? गौतम ! पाँच प्रकार के । इस अभिलाप से वनस्पतिकायिक पर्यन्त पूर्ववत् प्रत्येक के दो-दो भेद होते हैं । भगवन् ! अनन्तरोपपन्नक कृष्णलेश्यी सूक्ष्मपृथ्वीकायिक जीवों को कितनी कर्मप्रकृतियाँ हैं ? गौतम ! पूर्वोक्त अभिलाप से औधिक अनन्तरोपपन्नक के अनुसार 'वेदते हैं', तक कहना । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

भगवन् ! परम्परोपपन्नक कृष्णलेश्यी एकेन्द्रिय जीव कितने प्रकार के हैं ? गौतम ! पाँच प्रकार के । यथा–पृथ्वीकायिक इत्यादि । इस प्रकार वनस्पतिकायिक पर्यन्त चार-चार भेद कहना । भगवन् ! परम्परोपपन्नक कृष्ण-लेश्यी अपर्याप्त सूक्ष्मपृथ्वीकायिक जीवों के कितनी कर्मप्रकृतियाँ हैं ? गौतम ! औधिक परम्परोपपन्नक उद्देशक के अनुसार 'वेदते हैं' तक कहना । औधिक एकेन्द्रियशतक के ग्यारह उद्देशक समान यावत् अचरम और चरम कृष्ण-लेश्यी एकेन्द्रिय पर्यन्त कृष्णलेश्यीशतक में भी कहना ।

शतक-३३ – शतकशतक-३ से १२

सूत्र - १०२३

कृष्णलेश्यी एकेन्द्रिय शतक के समान नीललेश्यी एकेन्द्रिय जीवों का समग्र शतक कहना । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

सूत्र - १०२४

कापोतलेश्यी एकेन्द्रिय को इसी प्रकार शतक कहना । किन्तु 'कापोतलेश्या', ऐसा पाठ कहना ।

सूत्र - १०२५

भगवन् ! भवसिद्धिक एकेन्द्रिय कितने प्रकार के कहे हैं ? गौतम ! पाँच प्रकार के, यथा–पृथ्वीकायिक यावत् वनस्पतिकायिक।इनके चार-चार भेद वनस्पतिकायिक पर्यन्त पूर्ववत् कहना। भगवन् ! भवसिद्धिक अपर्याप्त सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक जीव के कितनी कर्मप्रकृतियाँ कही हैं ? गौतम ! प्रथम एकेन्द्रियशतक के समान भव-सिद्धिकशतक भी

कहना चाहिए । उद्देशकों की परिपाटी भी उसी प्रकार अचरम पर्यन्त कहना । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

सूत्र - १०२६

भगवन् ! कृष्णलेश्यी भवसिद्धिक एकेन्द्रिय जीव कितने प्रकार के हैं ? गौतम ! पाँच प्रकार के, यथा-पृथ्वीकायिक यावत् वनस्पतिकायिक । भगवन् ! कृष्णलेश्यी भवसिद्धिक पृथ्वीकायिक कितने प्रकार के कहे हैं ? गौतम ! दो प्रकार के, यथा-सूक्ष्मपृथ्वीकायिक और बादरपृथ्वीकायिक । भगवन् ! कृष्णलेश्यी भवसिद्धिक सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक कितने प्रकार के कहे हैं ? गौतम ! दो प्रकार के, यथा-पर्याप्तक और अपर्याप्तक । इसी प्रकार बादर पृथ्वीकायिकों के भी दो भेद हैं । इसी अभिलाप से उसी प्रकार प्रत्येक के चार-चार भेद कहने चाहिए ।

भगवन् ! कृष्णलेश्यी-भवसिद्धिक-अपर्याप्त-सूक्ष्मपृथ्वीकायिक जीवों के कितनी कर्मप्रकृतियाँ कही हैं ? गौतम ! औघिक उद्देशक के समान 'वेदते हैं' तक कहना ।

भगवन् ! अनन्तरोपपन्नक कृष्णलेश्यी भवसिद्धिक एकेन्द्रिय कितने प्रकार के हैं ? गौतम ! पाँच प्रकार के, यथा-पृथ्वीकायिक यावत् वनस्पतिकायिक । भगवन् ! अनन्तरोपपन्नक कृष्णलेश्यी-भवसिद्धिक-पृथ्वीकायिक कितने प्रकार के कहे हैं ? गौतम ! दो प्रकार के, यथा-सूक्ष्मपृथ्वीकायिक और बादरपृथ्वीकायिक । इसी प्रकार अप्कायिक आदि के भी दो-दो भेद कहने चाहिए ।

भगवन् ! अनन्तरोपपन्नक कृष्णलेश्यी भवसिद्धिक सूक्ष्मपृथ्वीकायिकों के कितनी कर्मप्रकृतियाँ कही हैं ? गौतम ! औघिक उद्देशक के अनुसार, यावत् 'वेदते हैं' तक कहना । इसी प्रकार इसी अभिलाप से, औघिक शतक अनुसार, ग्यारह की उद्देशक 'अचरमउद्देशक' पर्यन्त कहना ।

सूत्र - १०२७

कृष्णलेश्यी भवसिद्धिक एकेन्द्रिय जीवों को शतक समान नीललेश्यी भवसिद्धिक का शतक भी कहना ।

सूत्र - १०२८

कापोतलेश्यी भवसिद्धिक एकेन्द्रिय जीवों का शतक भी इसी प्रकार कहना ।

सूत्र - १०२९

भगवन् ! अभवसिद्धिक एकेन्द्रिय कितने प्रकार के कहे गए हैं ? गौतम ! पाँच प्रकार के, यथा-पृथ्वी-कायिक यावत् वनस्पतिकायिक । भवसिद्धिकशतक समान अभवसिद्धिकशतक भी कहना; किन्तु 'चरम' और 'अचरम' को छोड़कर शेष नौ उद्देशक कहने चाहिए । शेष पूर्ववत् ।

सूत्र - १०३०

इसी प्रकार कृष्णलेश्यी अभवसिद्धिक शतक भी कहना ।

सूत्र - १०३१

इसी प्रकार नीललेश्यी अभवसिद्धिक शतक भी जानना ।

सूत्र - १०३२

कापोतलेश्यी अभवसिद्धिक शतक भी इसी प्रकार कहना । इस प्रकार (नौवें से बारहवें तक) चार अभव-सिद्धिक शतक हैं । इनमें प्रत्येक के नौ-नौ उद्देशक हैं । इस प्रकार एकेन्द्रिय जीवों के बारह शतक होते हैं ।

शतक-३३ का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

शतक–३४

शतकशतक-१ – उद्देशक–१

सूत्र - १०३३

भगवन् ! एकेन्द्रिय कितने प्रकार के कहे गए हैं ? गौतम ! पाँच प्रकार के, यथा–पृथ्वीकायिक यावत् वनस्पतिकायिक । इनके भी प्रत्येक के चार-चार भेद वनस्पतिकायिक-पर्यन्त कहने चाहिए ।

भगवन् ! अपर्याप्त सूक्ष्मपृथ्वीकायिक जीव इस रत्नप्रभापृथ्वी के पूर्वदिशा के चरमान्त में मरणसमुद्घात करके इस रत्नप्रभापृथ्वी के पश्चिमी चरमान्त में अपर्याप्त सूक्ष्मपृथ्वीकायिकरूप में उत्पन्न होने योग्य हैं, तो हे भगवन् ! वह कितने समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है ? गौतम ! एक समय की, दो समय की अथवा तीन समय की । भगवन् ! ऐसा क्यों कहा जाता है कि वह एक समय, दो समय अथवा तीन समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है ? हे गौतम ! मैंने सात श्रेणियाँ कही हैं, यथा–ऋज्वायता, एकतोवक्रा, उभयतोवक्रा, एकतः खा, उभयतः खा, चक्रवाल और अर्द्धचक्रवाल । जो पृथ्वीकायिक जीव ऋज्वायता श्रेणी से उत्पन्न होता है, वह एक समय की विग्रहगति से जो एकतोवक्रा श्रेणी से उत्पन्न होता है, वह दो समय की विग्रहगति से जो उभयतोवक्रा श्रेणी से उत्पन्न होता है, वह तीन समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है । इस कारण से हे गौतम ! यह कहा जाता है ।

भगवन् ! अपर्याप्त सूक्ष्मपृथ्वीकायिक जीव जो रत्नप्रभापृथ्वी के पूर्वदिशा के चरमान्त में मरणसमुद्घात करके इस रत्नप्रभापृथ्वी के पश्चिमदिशा के चरमान्त में पर्याप्त सूक्ष्मपृथ्वीकायिक-रूप से उत्पन्न होने योग्य है, तो हे भगवन् ! वह कितने समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है ? गौतम ! एक समय, दो समय अथवा तीन समय की इत्यादि शेष पूर्ववत्, इस कारण...तक कहना चाहिए । इसी प्रकार अपर्याप्त सूक्ष्मपृथ्वीकायिक जीव का पूर्व-दिशा के चरमान्त में मृत्यु प्राप्त कर पश्चिमदिशा के चरमान्त में बादर अपर्याप्त पृथ्वीकायिक-रूप से उपपात कहना । और वहीं पर्याप्त-रूप से उपपात कहना चाहिए । इसी प्रकार अप्कायिक जीव के भी चार आलापक कहना–सूक्ष्म अपर्याप्तक का, सूक्ष्म पर्याप्तक का, बादर-अपर्याप्तक का तथा बादर पर्याप्तक का उपपात कहना चाहिए । इसी प्रकार सूक्ष्म तेजस्कायिक अपर्याप्तक और पर्याप्तक का उपपात कहना चाहिए ।

भगवन् ! अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव, जो इस रत्नप्रभापृथ्वी के पूर्वदिशा के चरमान्त में मरण-समुद् घात करके मनुष्य-क्षेत्र में अपर्याप्त बादरतेजस्कायिक रूप में उत्पन्न होने योग्य हैं, तो हे भगवन् ! वह कितने समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है ? गौतम ! पूर्ववत् कहना । इसी प्रकार पर्याप्त बादरतेजस्कायिक रूप से उपपात का कथन करना । सूक्ष्म और बादर अप्कायिक समान सूक्ष्म और बादर वायुकायिक का उपपात कहना । इसी प्रकार वनस्पतिकायिक जीवों के उपपात के विषय में भी कहना ।

भगवन् ! पर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव, इस रत्नप्रभा पृथ्वी के इत्यादि प्रश्न ? गौतम ! पर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव भी रत्नप्रभा पृथ्वी के पूर्वदिशा के चरमान्त में मरणसमुद्घात से क्रमशः इन बीस स्थानों में बादर पर्याप्त वनस्पतिकायिक तक, उपपात कहना । इसी प्रकार अपर्याप्त बादर पृथ्वीकायिक का उपपात भी कहना । इसी प्रकार पर्याप्त बादर पृथ्वीकायिक के उपपात को जानना । इसी प्रकार अप्कायिक जीवों के चार गमकों द्वारा पूर्व-चरमान्त में मरणसमुद्घातपूर्वक मरकर इन्हीं पूर्वोक्त बीस स्थानों में पूर्ववत् का कथन करना । अपर्याप्त और पर्याप्त सूक्ष्म तेजस्कायिक जीवों का भी इन्हीं बीस स्थानों में पूर्वोक्तरूप से उपपात कहना ।

भगवन् ! अपर्याप्त बादर तेजस्कायिक जीव, जो मनुष्यक्षेत्र में मरणसमुद्घात करके रत्नप्रभापृथ्वी के पश्चिम-चरमान्त में अपर्याप्त पृथ्वीकायिक-रूप से उत्पन्न होने योग्य हैं, हे भगवन् ! वह कितने समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है ? गौतम ! पूर्ववत् इस कारण से वह...तीन समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है, तक कहना । इसी प्रकार चारों प्रकार के पृथ्वीकायिक जीवों में भी पूर्ववत् उपपात कहना । चार प्रकार के अप्कायिकों में भी इसी प्रकार उपपात कहना । सूक्ष्मतेजस्कायिक जीव के पर्याप्तक और अपर्याप्तक में भी इसी प्रकार उपपात कहना ।

भगवन् ! अपर्याप्त बादर तेजस्कायिक जीव, जो मनुष्यक्षेत्र में मरणसमुद्घात करके मनुष्यक्षेत्र में अपर्याप्त

बादर तेजस्कायिक रूप से उत्पन्न होने योग्य है, तो हे भगवन् ! वह कितने समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है ? गौतम ! पूर्ववत् कहना । इसी प्रकार पर्याप्त बादर तेजस्कायिक रूप से उपपात का भी कथन करना । पृथ्वीकायिक जीवों के उपपात के समान चार भेदों से, वायुकायिक तथा वनस्पतिकायिक रूप से उपपात का कथन करना । इसी प्रकार पर्याप्त बादर तेजस्कायिक का भी समय क्षेत्र में समुद्घात करके इन्हीं बीस स्थानों में उपपात का कथन करना। अपर्याप्त के उपपात समान पर्याप्त और अपर्याप्त बादर तेजस्कायिक के मनुष्यक्षेत्र में समुद्घात और उपपात का कथन करना चाहिए । पृथ्वीकायिक-उपपात के समान चार-चार भेद से वायुकायिक और वनस्पतिकायिक जीवों का उपपात कहना । यावत्-भगवन् ! पर्याप्त बादर वनस्पतिकायिक जीव रत्नप्रभा-पृथ्वी के पूर्वी-चरमान्त से मरणसमुद्घात करके इस रत्नप्रभापृथ्वी के पश्चिम-चरमान्त में बादर वनस्पतिकायिक रूप में उत्पन्न होने योग्य हो तो, हे भगवन् ! वह कितने समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है ? पूर्ववत् कथन करना ।

भगवन् ! अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक रत्नप्रभापृथ्वी के पश्चिम-चरमान्त में समुद्घात करके रत्नप्रभा-पृथ्वी के पूर्वी-चरमान्त में अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक रूप से उत्पन्न हो तो कितने समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है ? गौतम ! पूर्ववत् ! पूर्वी-चरमान्त के सभी पदों में समुद्घात करके पश्चिम चरमान्त में और मनुष्यक्षेत्र में और जिनका मनुष्यक्षेत्र में समुद्घातपूर्वक पश्चिम-चरमान्त में और मनुष्यक्षेत्र में उपपात के समान उसी क्रम से पश्चिम-चरमान्त में मनुष्यक्षेत्र में समुद्घातपूर्वक पूर्वीय-चरमान्त में और मनुष्यक्षेत्र के उसी गमक से उपपात होता है । इसी गमक से दक्षिण के चरमान्त में समुद्घात करके मनुष्यक्षेत्र में और उत्तर के चरमान्त में तथा मनुष्यक्षेत्र में तथा उत्तरी-चरमान्त में और मनुष्यक्षेत्र में समुद्घात करके दक्षिणी-चरमान्त में और मनुष्यक्षेत्र में उपपात कहना चाहिए ।

भगवन् ! अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव शर्कराप्रभापृथ्वी के पूर्वी-चरमान्त में मरणसमुद्घात करके शर्कराप्रभापृथ्वी के पश्चिम-चरमान्त में अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक रूप से उत्पन्न होने योग्य हो तो वह कितने समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है ? गौतम ! रत्नप्रभापृथ्वी कथनानुसार 'इस कारण से ऐसा कहा है', तक कहना । इसी क्रम से पर्याप्त सूक्ष्म तेजस्कायिक पर्यन्त कहना ।

भगवन् ! अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव शर्कराप्रभापृथ्वी के पूर्व चरमान्त में मरणसमुद्घात करके, मनुष्यक्षेत्र के अपर्याप्त बादर तेजस्कायिक-रूप से उत्पन्न होने योग्य हो, तो वह कितने समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है ? गौतम ! दो या तीन समय की । भगवन् ! किस कारण से ? गौतम ! मैंने सात श्रेणियाँ कही हैं, यथा- ऋज्वायता से लेकर अर्द्धचक्रवाल पर्यन्त । जो एकतोवक्रा श्रेणी से उत्पन्न होता है, वह दो समय की विग्रह-गति से और जो उभयतोवक्रा श्रेणी से उत्पन्न होता है, वह तीन समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है । इस कारण से मैंने पूर्वोक्त बात कही है । इस प्रकार पर्याप्त बादर तेजस्कायिक-रूप से (कहना चाहिए) शेष रत्नप्रभापृथ्वी के समान ।

जो बादरतेजस्कायिक अपर्याप्त और पर्याप्त जीव मनुष्यक्षेत्र में मरणसमुद्घात करके शर्कराप्रभापृथ्वी के पश्चिम चरमान्त में, चारों प्रकार के पृथ्वीकायिक जीवों में, चारों प्रकार के अप्कायिक जीवों में, दो प्रकार के तेजस्कायिक जीवों में और चार प्रकार के वायुकायिक जीवों में तथा चार प्रकार के वनस्पतिकायिक जीवों में उत्पन्न होते हैं, उनका भी दो या तीन समय की विग्रहगति से उपपात कहना चाहिए । जब पर्याप्त और अपर्याप्त बादर तेजस्कायिक जीव उन्हीं में उत्पन्न होते हैं, तब रत्नप्रभापृथ्वी अनुसार एक समय, दो समय या तीन समय की विग्रहगति कहनी । शेष सब रत्नप्रभापृथ्वी अनुसार जानना । शर्कराप्रभा-सम्बन्धी वक्तव्यता समान अधःसप्तम-पृथ्वीपर्यन्त कहनी चाहिए ।

सूत्र - १०३४

भगवन् ! अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव अधोलोक क्षेत्र की त्रसनाडी के बाहर के क्षेत्र में मरण-समुद्घात करके ऊर्ध्वलोक की त्रसनाडी के बाहर के क्षेत्र में अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक-रूप से उत्पन्न होने योग्य है तो हे भगवन् ! वह कितने समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है ? गौतम ! तीन समय या चार समय की । भगवन् ! ऐसा कहने का क्या कारण है कि वह जीव या चार समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है ? गौतम ! जो अपर्याप्त

सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव अधोलोकक्षेत्रीय त्रसनाडी के बाहर के क्षेत्र में मरणसमुद्घात करके ऊर्ध्वलोक-क्षेत्र की त्रसनाडी के बाहर क्षेत्र में अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक के रूप में एक प्रतर में अनुश्रेणी (समश्रेणी) में उत्पन्न होने योग्य है, वह तीन समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है और जो विश्रेणी में उत्पन्न होने योग्य है, वह चार समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है । इस कारण हे गौतम ! ऐसा कहा है कि वह तीन या चार समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है । इसी प्रकार पर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक-रूप से उत्पन्न होने वाले एवं पर्याप्त सूक्ष्म तेजस्कायिक-रूप से उत्पन्न होने वाले को जानना चाहिए ।

भगवन् ! अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव अधोलोकक्षेत्रीय त्रसनाडी के बाहर के क्षेत्र में मरणसमुद्घात करके मनुष्यक्षेत्र में अपर्याप्त बादर तेजस्कायिक-रूप से उत्पन्न होने योग्य हो तो भगवन् ! वह कितने समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है ? गौतम ! दो या तीन समय की । भगवन् ! यह किस कारण से कहा जाता है ? गौतम! मैंने सात श्रेणियाँ कही हैं, यथा–ऋज्वायता यावत् अर्द्धचक्रवाल । वह जीव एकतोवक्रा श्रेणी से उत्पन्न होता है, तो दो समय की विग्रहगति से और वह उभयतोवक्राश्रेणी से उत्पन्न होता है, तो तीन समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है । इसी कारण हे गौतम ! पूर्वोक्त कथन है । इसी प्रकार पर्याप्त बादरतेजस्कायिक जीव में भी उपपात जानना ।

अप्कायिक-रूप में उपपात के समान वायुकायिक और वनस्पतिकायिक रूप में भी चार-चार भेद से उत्पन्न होने की वक्तव्यता कहना । अपर्याप्त सूक्ष्मपृथ्वीकायिक के गमन अनुसार पर्याप्त सूक्ष्मपृथ्वीकायिक का गमक भी कहना और उसी प्रकार बीस स्थानों में उपपात कहना । अधोलोकक्षेत्र की त्रसनाडी के बाहर के क्षेत्र में मरणसमुद्घात करके...यावत् विग्रहगति में उपपात के समान पर्याप्त और अपर्याप्त बादरपृथ्वीकायिक के उपपात का भी कथन करना । चारों प्रकार के अप्कायिक जीवों का तथा पर्याप्त और अपर्याप्त सूक्ष्मतेजस्कायिक जीव के उपपात का कथन भी इसी प्रकार है ।

भगवन् ! यदि अपर्याप्त बादरतेजस्कायिक जीव मनुष्यक्षेत्र में मरणसमुद्घात करके ऊर्ध्वलोकक्षेत्र की त्रसनाडी से बाहर के क्षेत्र में अपर्याप्त सूक्ष्मपृथ्वीकायिक-रूप से उत्पन्न होने योग्य है, तो हे भगवन् ! वह कितने समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है ? गौतम ! वह दो समय या तीन समय (अथवा चार समय) की विग्रहगति से उत्पन्न होता है । भगवन् ! ऐसा किस कारण से कहा गया है ? इसका कथन सप्तश्रेणी तक समझना चाहिए । भगवन् ! इसी प्रकार यावत् जो अपर्याप्त बादरतेजस्कायिक जीव मनुष्यक्षेत्र में मरणसमुद्घात करके ऊध्वलोक-क्षेत्र की त्रसनाडी के बाहर के क्षेत्र में पर्याप्त सूक्ष्मतेजस्कायिक-रूप में उत्पन्न हो तो वह कितने समय की विग्रह-गति से...? गौतम ! इसका कथन भी पूर्ववत् ।

भगवन् ! यदि अपर्याप्त बादरतेजस्कायिक जीव मनुष्यक्षेत्र में मरणसमुद्घात करके मनुष्यक्षेत्र में अपर्याप्त बादरतेजस्कायिक-रूप में उत्पन्न होने योग्य है तो भगवन् ! वह कितने समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है ? गौतम! एक समय, दो समय या तीन समय की । भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहते हैं ? गौतम ! जैसे रत्नप्रभापृथ्वी में सप्तश्रेणीरूप हेतु कहा, वही हेतु यहाँ जानना चाहिए । इसी प्रकार पर्याप्त बादरतेजस्कायिक-रूप में उपपात का भी कथन करना । पृथ्वीकायिक के चारों भेदों सहित उपपात समान वायुकायिक और वनस्पति कायिक का भी चार-चार भेद सहित उपपात कहना चाहिए । इसी प्रकार पर्याप्त बादरतेजस्कायिक का उपपात भी इन्हीं स्थानों में जानना । पृथ्वीकायिक जीव के उपपात कथन समान वायुकायिक और वनस्पतिकायिक जीवों के उपपात का कथन करना ।

भगवन् ! जो अपर्याप्त सूक्ष्मपृथ्वीकायिक ऊर्ध्वलोकक्षेत्रीय त्रसनाडी के बाहर के क्षेत्र में मरणसमुद्घात करके, अधोलोकक्षेत्रीय त्रसनाडी के बाहर के क्षेत्र में अपर्याप्त सूक्ष्मपृथ्वीकायिकरूप से उत्पन्न होने योग्य है तो भन्ते! वह कितने समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है ? गौतम ! ऊर्ध्वलोकक्षेत्रीय त्रसनाडी के बाहर के क्षेत्र में मरणसमुद्घात करके अधोलोकक्षेत्रीय त्रसनाडी के बाहर के क्षेत्र में उत्पन्न होने वाले पृथ्वीकायिकादि के लिए भी वही समग्र पूर्वोक्त गमक पर्याप्त बादरवनस्पतिकायिक जीव का पर्याप्त बादरवनस्पतिकायिकरूप में उपपात तक कथन यहाँ करना । भगवन् ! जो अपर्याप्त सूक्ष्मपृथ्वीकायिक जीव, लोक के पूर्वी-चरमान्त में मरणसमुद्घात करके

लोक के पूर्वी-चरमान्त में अपर्याप्त सूक्ष्मपृथ्वीकायिक-रूप में उत्पन्न होने योग्य है, तो वह कितने समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है ? गौतम ! वह एक, दो, तीन या चार समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है । भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहा जाता है कि वह एक समय की यावत् उत्पन्न होता है ? गौतम ! मैंने सात श्रेणियाँ बताईं हैं, यथा–ऋज्वायता यावत् अर्द्धचक्रवाला । ऋज्वायता श्रेणी से उत्पन्न होता है तो एक समय की विग्रहगति से एकतोवक्रा श्रेणी से उत्पन्न होता है तो दो समय की विग्रहगति से उभयतोवक्रा श्रेणी से उत्पन्न होता है तो जो एक प्रतर में अनुश्रेणी से उत्पन्न होने योग्य है, वह तीन समय की विग्रहगति से और यदि वह विश्रेणी से उत्पन्न होने योग्य है तो वह चार समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है । इसी कारण हे गौतम ! पूर्वोक्त कथन किया गया है कि वह एक समय की...यावत् चार समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है ।

इसी प्रकार अपर्याप्त सूक्ष्मपृथ्वीकायिक जीव का लोक के पूर्वी-चरमान्त में (मरण) समुद्घात करके लोक के पूर्वी-चरमान्त में ही अपर्याप्त और पर्याप्त सूक्ष्मपृथ्वीकायिक जीवों में, अपर्याप्त और पर्याप्त सूक्ष्मअप्कायिक जीवों में, अपर्याप्त और पर्याप्त सूक्ष्मतेजस्कायिक जीवों में, अपर्याप्त और पर्याप्त सूक्ष्मवायुकायिक जीवों में, अपर्याप्त और पर्याप्त बादरवायुकायिक जीवों में तथा अपर्याप्त और पर्याप्त सूक्ष्मवनस्पतिकायिक जीवों में, इस प्रकार इन अपर्याप्त और पर्याप्त-रूप बारह ही स्थानों में इसी क्रम से उपपात कहना चाहिए । पर्याप्त सूक्ष्मपृथ्वी-कायिक जीव का उपपात पूर्ववत् बारह स्थानों में करना । ऐसे ही पर्याप्त सूक्ष्मवनस्पतिकायिक तक पर्याप्त सूक्ष्म-वनस्पतिकायिक जीवों में उपपात का कथन करना चाहिए ।

भगवन् ! जो अपर्याप्त सूक्ष्मपृथ्वीकायिक जीव लोक के पूर्वी-चरमान्त में समुद्घात करके लोक के दक्षिण-चरमान्त में अपर्याप्त सूक्ष्मपृथ्वीकायिक जीवों में उत्पन्न होने योग्य है, वह कितने समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है ? गौतम ! दो समय, तीन समय या चार समय की । भगवन् ! ऐसा किस कारण से कहते हैं ? गौतम! मैंने सात श्रेणियाँ बताईं हैं, यथा–ऋज्वायता यावत् अर्द्धचक्रवाला । एकतोवक्रा श्रेणी से उत्पन्न होता है तो दो समय की उभयतोवक्रा श्रेणी से एक प्रतर में अनुश्रेणी से उत्पन्न होने योग्य है, तो तीन समय की और यदि वह विश्रेणी से उत्पन्न होने योग्य है तो चार समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है । हे गौतम ! इसी कारण मैंने कहा है। इसी प्रकार से पूर्वी-चरमान्त में समुद्घात करके दक्षिण-चरमान्त में यावत् पर्याप्त सूक्ष्मवनस्पतिकायिक, पर्याप्त सूक्ष्मवनस्पतिकायिक जीवों में भी उपपात का कथन करना चाहिए । इन सभी में यथायोग्य दो समय, तीन समय या चार समय की विग्रहगति कहनी चाहिए ।

भगवन् ! जो अपर्याप्त सूक्ष्मपृथ्वीकायिक जीव, लोक के पूर्वी-चरमान्त में समुद्घात करके लोक के पश्चिम-चरमान्त में अपर्याप्त सूक्ष्मपृथ्वीकायिक-रूप में उत्पन्न होने योग्य है, वह कितने समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है? गौतम ! वह एक, दो, तीन अथवा चार समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है । भगवन् ! किस कारण से ? गौतम ! पूर्ववत्, जैसे पूर्वी-चरमान्त में समुद्घात करके पूर्वी-चरमान्त में ही उपपात का कथन किया, वैसे ही पूर्वी-चरमान्त में समुद्घात करके पश्चिम-चरमान्त में भी सभी के उपपात का कथन करना चाहिए ।

भगवन् ! जो अपर्याप्त सूक्ष्मपृथ्वीकायिक जीव, लोक के पूर्वी-चरमान्त में समुद्घात करके लोक के उत्तर-चरमान्त में अपर्याप्त सूक्ष्मपृथ्वीकायिक जीव में उत्पन्न होने योग्य है तो वह कितने समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है ? गौतम ! पूर्वी-चरमान्त में समुद्घात करके दक्षिण-चरमान्त में उपपात समान पूर्वी-चरमान्त में समुद्घात करके उत्तर-चरमान्त में उपपात का कथन करना चाहिए ।

भगवन् ! जो अपर्याप्त सूक्ष्मपृथ्वीकायिक जीव लोक के दक्षिण-चरमान्त में समुद्घात करके लोक के दक्षिण-चरमान्त में ही अपर्याप्त सूक्ष्मपृथ्वीकायिक-रूप में उत्पन्न होने योग्य है, वह कितने समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है ? गौतम ! पूर्वी-चरमान्त में समुद्घात करके पूर्वी-चरमान्त में ही उपपात के समान दक्षिण-चरमान्त में समुद्घात करके दक्षिण-चरमान्त में ही उत्पन्न होने योग्य का उपपात कहना चाहिए । इसी प्रकार यावत् पर्याप्त सूक्ष्मवनस्पतिकायिक का, पर्याप्त सूक्ष्मवनस्पतिकायिकों में दक्षिण-चरमान्त तक उपपात कहना चाहिए । इसी

प्रकार दक्षिण-चरमान्त में समुद्घात करके पश्चिम-चरमान्त में उपपात का कथन करना । विशेष यह है कि इनमें दो, तीन या चार समय की विग्रहगति होती है । शेष पूर्ववत् । स्वस्थान में उपपात के समान दक्षिण-चरमान्त में समुद्घात करके उत्तर-चरमान्त में उपपात का तथा एक, दो, तीन या चार समय की विग्रहगति का कथन करना । पश्चिम-चरमान्त में उपपात के समान पूर्वीय-चरमान्त में भी दो, तीन या चार समय की विग्रहगति से उपपात का कथन करना

पश्चिम-चरमान्त में समुद्घात करके पश्चिम चरमान्त में ही उत्पन्न होने वाले पृथ्वीकायिक के लिए स्वस्थान में उपपात के अनुसार कथन करना । उत्तर-चरमान्त में उत्पन्न होने वाले जीव के एक समय की विग्रहगति नहीं होती । शेष पूर्ववत् । पूर्वी-चरमान्त में उपपात का कथन स्वस्थान में उपपात के समान है । दक्षिण-चरमान्त में उपपात में एक समय की विग्रहगति नहीं होती । शेष पूर्ववत् । उत्तर-चरमान्त में समुद्घात करके उत्तर-चरमान्त में उत्पन्न होने वाले जीव का कथन स्वस्थान में उपपात के समान जानना । इसी प्रकार उत्तर-चरमान्त में समुद्घात करके पूर्वी चरमान्त में उत्पन्न होने वाले पृथ्वीकायिकादि जीवों के उपपात का कथन समझना किन्तु इनमें एक समय की विग्रहगति नहीं होती । उत्तर-चरमान्त में समुद्घात करके दक्षिण-चरमान्त में उत्पन्न होने वाले जीवों का कथन भी स्वस्थान के समान है । उत्तर-चरमान्त में समुद्घात करके पश्चिम-चरमान्त में उत्पन्न होने वाले जीवों के एक समय की विग्रहगति नहीं होती । शेष पूर्ववत् यावत् पर्याप्त सूक्ष्मवनस्पतिकायिक का पर्याप्त सूक्ष्मवनस्पति-कायिक जीवों में उपपात का कथन जानना चाहिए ।

भगवन् ! पर्याप्त बादर पृथ्वीकायिक जीवों के स्थान कहाँ कहे हैं ? गौतम ! स्वस्थान की अपेक्षा आठ पृथ्वीयाँ हैं, इत्यादि सब कथन स्थानपद के अनुसार यावत् पर्याप्त और अपर्याप्त सभी सूक्ष्म वनस्पतिकायिक जीव एक ही प्रकार के हैं । हे आयुष्मन् श्रमण ! वे सर्व लोक में व्याप्त हैं ।

भगवन् ! अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीवों के कितनी कर्मप्रकृतियाँ कही हैं ? गौतम ! आठ, यथा–ज्ञानावरणीय यावत् अन्तराय । इस प्रकार प्रत्येक के चार-चार भेद से एकेन्द्रिय शतक के अनुसार पर्याप्त बादर वनस्पतिकायिक तक कहना । भगवन् ! अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव कितनी कर्मप्रकृतियाँ बाँधते हैं ? गौतम ! सात या आठ । यहाँ भी एकेन्द्रियशतक के अनुसार पर्याप्त बादर वनस्पतिकायिक तक का कथन करना ।

भगवन् ! अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव कितनी कर्मप्रकृतियों का वेदन करते हैं ? गौतम ! वे चौदह कर्मप्रकृतियों का वेदन करते हैं, यथा–ज्ञानावरणीय आदि । शेष सब वर्णन एकेन्द्रियशतक के अनुसार पुरुषवेद-वध्य कर्मप्रकृति पर्यन्त कहना चाहिए । इसी प्रकार पर्याप्त बादर वनस्पतिकायिक पर्यन्त जानना चाहिए ।

भगवन् ! एकेन्द्रिय जीव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! व्युत्क्रान्तादिपद में उक्त पृथ्वीकायिक जीव के उपपात के समान इनका भी उपपात कहना । भगवन् ! एकेन्द्रिय जीवों के कितने समुद्घात कहे हैं ? गौतम ! चार–वेदनासमुद्घात यावत् वैक्रियसमुद्घात ।

भगवन् ! तुल्य स्थिति वाले एकेन्द्रिय जीव तुल्य और विशेषाधिककर्म का बन्ध करते हैं ? अथवा तुल्य स्थिति वाले एकेन्द्रिय जीव भिन्न-विशेषाधिक कर्मबन्ध करते हैं ? अथवा भिन्न-भिन्न स्थिति वाले एकेन्द्रिय जीव तुल्य-विशेषाधिक कर्मबन्ध करते हैं ? या भिन्न-भिन्न स्थिति वाले एकेन्द्रिय जीव भिन्न-विशेषाधिक कर्मबन्ध करते हैं ? गौतम ! तुल्य स्थिति वाले कईं एकेन्द्रिय जीव तुल्य और विशेषाधिक कर्मबन्ध करते हैं, तुल्य स्थिति वाले कतिपय एकेन्द्रिय जीव भिन्न-भिन्न विशेषाधिक कर्मबन्ध करते हैं, कईं भिन्न-भिन्न स्थिति वाले एकेन्द्रिय जीव तुल्य - विशेषाधिक कर्मबन्ध करते हैं और कईं भिन्न-भिन्न स्थिति वाले एकेन्द्रिय जीव भिन्न-भिन्न विशेषाधिक कर्मबन्ध करते हैं । भगवन् ! ऐसा क्यों कहा गया कि कईं तुल्यस्थिति वाले...यावत् भिन्न-भिन्न विशेषाधिक कर्मबन्ध करते हैं? गौतम! एकेन्द्रिय जीव चार प्रकार के कहे हैं । यथा–कईं जीव समान आयु वाले और साथ उत्पन्न हुए होते हैं, कईं जीव समान आयु वाले और विषम उत्पन्न हुए होते हैं, कईं विषम आयु वाले और साथ उत्पन्न हुए होते हैं तथा कितने ही जीव विषम आयु वाले और विषम उत्पन्न हुए होते हैं । इनमें से जो समान आयु और समान उत्पत्ति वाले हैं, वे तुल्य स्थिति वाले तथा तुल्य एवं विशेषाधिक कर्मबन्ध करते हैं । जो समान आयु और विषम उत्पत्ति वाले हैं, वे तुल्य स्थिति वाले

विमात्रा स्थिति वाले तुल्य-विशेषाधिक कर्मबन्ध करते हैं और जो विषम आयु और विषम उत्पत्ति वाले हैं, वे विमात्रा स्थिति वाले, विमात्रा-विशेषाधिक कर्मबन्ध करते हैं । इस कारण से यह कहा गया है कि यावत् विमात्र-विशेषाधिक कर्मबन्ध करते हैं । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-३४/१ – उद्देशक–२

सूत्र - १०३५

भगवन् ! अनन्तरोपपन्नक एकेन्द्रिय कितने प्रकार के कहे हैं ? गौतम ! पाँच प्रकार के, यथा–पृथ्वीकायिक यावत् वनस्पतिकायिक । फिर प्रत्येक के दो-दो भेद एकेन्द्रिय शतक के अनुसार वनस्पतिकायिक पर्यन्त कहना ।

भगवन् ! अनन्तरोपपन्नक बादर पृथ्वीकायिक जीवों के स्थान कहाँ कहे हैं ? गौतम ! वे स्वस्थान की अपेक्षा आठ पृथ्वीयों में हैं, यथा–रत्नप्रभा इत्यादि । स्थानपद के अनुसार–यावत् द्वीपों में तथा समुद्रों में अनन्तरो-पपन्नक बादर पृथ्वीकायिक जीवों के स्थान कहे हैं । उपपात और समुद्घात की अपेक्षा वे समस्त लोक में हैं । स्वस्थान की अपेक्षा वे लोक के असंख्यातवें भाग में रहे हुए हैं । अनन्तरोपपन्नक सूक्ष्म पृथ्वीकायिक सभी जीव एक प्रकार के हैं तथा विशेषता और भिन्नता रहित हैं तथा हे आयुष्मन् श्रमण ! वे सर्वलोक में व्याप्त हैं । इसी क्रम से सभी एकेन्द्रिय-सम्बन्धी कथन करना । उन सभी के स्वस्थान स्थानपद के अनुसार हैं । इन पर्याप्त बादर एके-न्द्रिय जीवों के उपपात, समुद्घात और स्वस्थान के अनुसार अपर्याप्त बादर एकेन्द्रिय जीव के भी उपपातादि जानने चाहिए तथा सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीवों के उपपात, समुद्घात और स्वस्थान के अनुसार सभी सूक्ष्म एकेन्द्रिय जीव यावत् वनस्पतिकायिक पर्यन्त जानना ।

भगवन् ! अनन्तरोपपन्नक सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीवों के कितनी कर्मप्रकृतियाँ हैं ? गौतम ! आठ हैं, इत्यादि एकेन्द्रियशतक में उक्त अनन्तरोपपन्नक उद्देशक के समान उसी प्रकार बाँधते हैं और वेदते हैं, यहाँ तक इसी प्रकार अनन्तरोपपन्नक बादर वनस्पतिकायिक पर्यन्त जानना चाहिए । भगवन् ! अनन्तरोपपन्नक एकेन्द्रिय जीव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! औधिक उद्देशक अनुसार कहना । भगवन् ! अनन्तरोपपन्नक एकेन्द्रिय जीवों के कितने समुद्घात कहे हैं ? गौतम ! दो, यथा–वेदना समुद्घात और कषायसमुद्घात ।

भगवन् ! क्या तुल्यस्थिति वाले अनन्तरोपपन्नक एकेन्द्रिय जीव परस्पर तुल्य, विशेषाधिक कर्मबन्ध करते हैं? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! कईं तुल्यस्थिति वाले एकेन्द्रिय जीव तुल्य-विशेषाधिक कर्मबन्ध करते हैं और कईं तुल्यस्थिति वाले एकेन्द्रिय जीव विमात्र-विशेषाधिक कर्मबन्ध करते हैं । भगवन् ! ऐसा क्यों कहा गया ? गौतम ! अनन्तरोपपन्नक एकेन्द्रिय जीव दो प्रकार के कहे हैं, यथा कईं जीव समान आयु और समान उत्पत्ति वाले होते हैं, जबकि कईं जीव समान आयु और विषम उत्पत्ति वाले होते हैं । इनमें से जो समान आयु और समान उत्पत्ति वाले हैं, वे तुल्यस्थिति वाले परस्पर तुल्य-विशेषाधिक कर्मबन्ध करते हैं और जो समान आयु और विषम उत्पत्ति वाले हैं, वे तुल्य स्थिति वाले विमात्र-विशेषाधिक कर्मबन्ध करते हैं । इस कारण से हे गौतम ! ऐसा कहा गया कि...यावत् विमात्र-विशेषाधिक कर्मबन्ध करते हैं । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-३४/१ – उद्देशक–३

सूत्र - १०३६

भगवन् ! परम्परोपपन्नक एकेन्द्रिय कितने प्रकार के कहे हैं ? गौतम ! पाँच प्रकार के, यथा–पृथ्वीकायिक इत्यादि । उनके चार-चार भेद वनस्पतिकायिक पर्यन्त कहना । भगवन् ! परम्परोपपन्नक सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव रत्नप्रभापृथ्वी के पूर्व-चरमान्त में मरणसमुद्घात करके रत्नप्रभापृथ्वी के यावत् पश्चिम-चरमान्त में अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक रूप से उत्पन्न हो तो वह कितने समय की विग्रहगति से उत्पन्न होता है ? गौतम ! इस अभिलाप से प्रथम उद्देशक के अनुसार यावत् लोक के चरमान्त पर्यन्त कहना । भगवन् ! परम्परोपपन्नक पर्याप्त बादर पृथ्वीकायिक जीवों के स्थान कहाँ हैं ? गौतम ! स्वस्थान की अपेक्षा वे आठ पृथ्वीयों में हैं । इस प्रकार प्रथम उद्देशकमें उक्त कथनानुसार तुल्य-स्थिति तक कहना चाहिए । 'भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-३४/१ – उद्देशक–४ से ११

सूत्र - १०३७

इसी प्रकार शेष आठ उद्देशक भी यावत् 'अचरम' तक जानने चाहिए । विशेष यह है कि अनन्तर-उद्देशक अनन्तर के समान और परम्पर-उद्देशक परम्पर के समान कहना चाहिए । चरम और अचरम भी इसी प्रकार हैं । इस प्रकार ये ग्यारह उद्देशक हुए ।

शतक-३४ – शतकशतक-२

सूत्र - १०३८

भगवन् ! कृष्णलेश्यी एकेन्द्रिय कितने प्रकार के कहे हैं ? गौतम ! पाँच प्रकार । उनके चार-चार भेद एकेन्द्रियशतक के अनुसार वनस्पतिकायिक पर्यन्त जानना ।

भगवन् ! कृष्णलेश्यी अपर्याप्त सूक्ष्मपृथ्वीकायिक जीव इस रत्नप्रभापृथ्वी के पूर्व-चरमान्त में यावत् उत्पन्न होता है ? गौतम ! औघिक उद्देशक के अनुसार लोक के चरमान्त तक सर्वत्र कृष्णलेश्या वालों में उपपात कहना ।

भगवन् ! कृष्णलेश्यी अपर्याप्त बादरपृथ्वीकायिक जीवों के स्थान कहाँ कहे गए हैं ? गौतम ! औघिक उद्देशक के इस अभिलाप के अनुसार 'तुल्यस्थिति वाले' पर्यन्त कहना । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।' इस प्रकार-प्रथम श्रेणी शतक समान ग्यारह उद्देशक कहना ।

शतक-३४ – शतकशतक-३ से ५

सूत्र - १०३९-१०४१

इसी प्रकार नीललेश्या वाले एकेन्द्रिय जीव का तृतीय शतक है । कापोतलेश्यी एकेन्द्रिय के लिए भी इसी प्रकार चतुर्थ शतक है । तथा भवसिद्धिक-एकेन्द्रिय विषयक पंचम शतक भी समझना चाहिए ।

शतक-३४ – शतकशतक-६

सूत्र - १०४२

भगवन् ! कृष्णलेश्यी भवसिद्धिक एकेन्द्रिय जीव कितने प्रकार के हैं ? गौतम ! औघिक उद्देशकानुसार जानना । भगवन् ! अनन्तरोपपन्नक भवसिद्धिक-कृष्णलेश्यी एकेन्द्रिय कितने प्रकार के कहे हैं ? गौतम ! औघिक उद्देशक के अनुसार जानना ।

भगवन् ! परम्परोपपन्नक कृष्णलेश्यी-भवसिद्धिक कितने प्रकार के कहे हैं ? गौतम ! पाँच प्रकार के हैं । यहाँ प्रत्येक के चार-चार भेद वनस्पतिकायिक पर्यन्त समझने चाहिए । भगवन् ! जो परम्परोपपन्नक-कृष्णलेश्यी-भवसिद्धिक अपर्याप्त सूक्ष्मपृथ्वीकायिक जीव, इस रत्नप्रभापृथ्वी के पूर्वी-चरमान्त में यावत् उत्पन्न होता है ? गौतम! पूर्ववत् जानना । इस अविलाप से औघिक उद्देशक के अनुसार लोक के चरमान्त तक यहाँ सर्वत्र कृष्ण-लेश्यी भवसिद्धिक में उपपात कहना ।

भगवन् ! परम्परोपपन्नक कृष्णलेश्यीभवसिद्धिक पर्याप्त बादरपृथ्वीकायिक जीवों के स्थान कहाँ कहे गए हैं? गौतम ! इसी प्रकार इस अभिलाप से औघिक उद्देशक यावत् तुल्यस्थिति-पर्यन्त जानना । इसी प्रकार इस अभिलाप से कृष्णलेश्यी-भवसिद्धिक एकेन्द्रियों के सम्बन्ध में भी कहना चाहिए ।

शतक-३४ – शतकशतक-७ से १२

सूत्र - १०४३

नीललेश्या वाले भवसिद्धिक एकेन्द्रिय जीवों का (सातवाँ) शतक कहना । इसी प्रकार कापोतलेश्या वाले भवसिद्धिक एकेन्द्रिय जीव का (आठवाँ) शतक कहना । भवसिद्धिक जीव के चार शतकों के अनुसार अभव-सिद्धिक एकेन्द्रिय जीव के भी चार शतक कहने चाहिए । विशेष यह है कि चरम और अचरम को छोड़कर इनमें नौ उद्देशक ही कहना । इस प्रकार ये बारह एकेन्द्रिय-श्रेणी-शतक कहे हैं । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-३४ का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

शतक–३५

शतकशतक-१ – उद्देशक–१

सूत्र - १०४४

भगवन् ! महायुग्म कितने बताए गए हैं ? गौतम ! सोलह, यथा–कृतयुग्मकृतयुग्म, कृतयुग्मत्र्योज, कृत-युग्मद्वापरयुग्म, कृतयुग्मकल्योज, त्र्योजकृतयुग्म, त्र्योजत्र्योज, त्र्योजद्वापरयुग्म, त्र्योजकल्योज, द्वापरयुग्मकृत-युग्म, द्वापरयुग्मत्र्योज, द्वापरयुग्मद्वापरयुग्म, द्वापरयुग्मकल्योज, कल्योजकृतयुग्म, कल्योजत्र्योज, कल्योजद्वापर-युग्म और कल्योजकल्योज ।

भगवन् ! क्या कारण है कि महायुग्म सोलह कहे गए हैं ? गौतम ! जिस राशि में चार संख्या का अपहार करते हुए - (१) चार शेष रहें और उस राशि के अपहारसमय भी कृतयुग्म (चार) हों तो वह राशि कृतयुग्मकृतयुग्म कहलाती है, (२) तीन शेष रहें और उस राशि के अपहारसमय कृतयुग्म हों तो वह राशि कृतयुग्मत्र्योज कहलाती है। (३) दो शेष रहें और उस राशि के अपहारसमय कृतयुग्म हों तो वह राशि कृतयुग्मद्वापरयुग्म कहलाती है, (४) एक शेष रहे और उस राशि के अपहारसमय कृतयुग्म हों तो वह राशि कृतयुग्मकल्योज कहलाती है, (५) चार शेष रहें और उस राशि के अपहारसमय त्र्योज हों तो वह राशि त्र्योजकृतयुग्म कहलाती है । (६) तीन शेष रहें और उस राशि के अपहारसमय भी त्र्योज हों तो वह राशि त्र्योजत्र्योज कहलाती है । (७) दो बचें और उस राशि के अपहारसमय त्र्योज हों तो वह राशि त्र्योजद्वापरयुग्म कहलाती है, (८) एक बचे और उस राशि के अपहारसमय त्र्योज हों तो वह राशि त्र्योजकल्योज कहलाती है, (९) चार शेष रहें और उस राशि के अपहारसमय द्वापरयुग्म (दो) हों तो वह राशि द्वापरयुग्मकृतयुग्म कहलाती है, (१०) तीन शेष रहें और उस राशि के अपहारसमय द्वापरयुग्म हो तो वह राशि द्वापरयुग्मत्र्योज कहलाती है । (११) दो बचें और उस राशि के अपहारसमय द्वापरयुग्म हों तो वह राशि द्वापरयुग्मद्वापरयुग्म कहलाती है । (१२) एक शेष रहे और उस राशि के अपहार-समय द्वापरयुग्म हों, तो वह राशि द्वापरयुग्मकल्योज कहलाती है, (१३) चार शेष रहें और उस राशि का अपहार-समय कल्योज (एक) हो तो वह राशि कल्योजकृतयुग्म कहलाती है, (१४) तीन शेष रहें और उस राशि का अपहार-समय कल्योज हो तो वह राशि कल्योजत्र्योज कहलाती है । (१५) दो बचें और उस राशि का अपहार समय कल्योज हो तो वह राशि कल्योजद्वापरयुग्म कहलाती है, और (१६) एक शेष रहे और उस राशि का अपहार-समय कल्योज हो तो वह राशि कल्योजकल्योज कहलाती है । इसी कारण से हे गौतम ! कल्योजकल्योज तक कहा गया है ।

सूत्र - १०४५

भगवन् ! कृतयुग्म-कृतयुग्मराशिरूप एकेन्द्रिय जीव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! उत्पलोद्देशक के उपपात समान उपपात कहना चाहिए । भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! वे सोलह, संख्यात, असंख्यात या अनन्त । भगवन् ! वे अनन्त जीव समय-समय में एक-एक अपहृत किये जाएं तो कितने काल में अपहृत होते हैं ? गौतम ! अनन्त अवसर्पिणी और उत्सर्पिणी बीत जाएं तो भी वे अपहृत नहीं होते। इनकी ऊंचाई उत्पलोद्देशक के अनुसार जानना ।

भगवन् ! वे एकेन्द्रिय जीव ज्ञानावरणीयकर्म के बन्धक हैं या अबन्धक ? गौतम ! वे बन्धक हैं, अबन्धक नहीं वे जीव आयुष्यकर्म को छोड़कर शेष सभी कर्मों के बन्धक हैं । आयुष्यकर्म के वे बन्धक भी हैं और अबन्धक भी हैं

भगवन् ! वे जीव ज्ञानावरणीयकर्म के वेदक हैं या अवेदक हैं ? गौतम ! वेदक हैं, अवेदक नहीं हैं । इसी प्रकार सभी कर्मों में जानना । भगवन् ! वे जीव साता के वेदक हैं अथवा असाता के ? गौतम ! वे सातावेदक भी होते हैं, अथवा असातावेदक भी एवं उत्पलोद्देशक की परिपाटी के अनुसार वे सभी कर्मों के उदय वाले हैं, वे छह कर्मों के उदीरक हैं तथा वेदनीय और आयुष्यकर्म के उदीरक भी हैं और अनुदीरक भी हैं ।

भगवन् ! वे एकेन्द्रिय जीव क्या कृष्णलेश्या वाले होते हैं ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! वे जीव कृष्णलेश्यी, नीललेश्यी, कापोतलेश्यी अथवा तेजोलेश्यी होते हैं । ये मिथ्यादृष्टि होते हैं । वे अज्ञानी होते हैं । वे नियमतः दो अज्ञान

वाले होते हैं, यथा-मतिअज्ञानी और श्रुतअज्ञानी । वे काययोगी होते हैं । वे साकारोपयोग वाले भी होते हैं और अनाकारोपयोग वाले भी होते हैं । भगवन् ! उन एकेन्द्रिय जीवों के शरीर कितने वर्ण के होते हैं ? इत्यादि समग्र प्रश्न । गौतम ! उत्पलोद्देशक के अनुसार, उनके शरीर पाँच वर्ण, पाँच रस, दो गन्ध और आठ स्पर्श वाले होते हैं । वे उच्छ्वास वाले या निःश्वास वाले अथवा नो-उच्छ्वास-निःश्वास वाले होते हैं । आहारक या अनाहारक होते हैं। वे अविरत होते हैं क्रियायुक्त होते हैं, सात या आठ कर्मप्रकृतियों के बन्धक होते हैं । आहारसंज्ञा यावत् परिग्रहसंज्ञा वाले होते हैं । क्रोधकषायी यावत् लोभकषायी होते हैं । नपुंसकवेदी होते हैं । स्त्रीवेदबन्धक पुरुषवेद-बन्धक या नपुंसकवेद-बन्धक होते हैं । असंज्ञी होते हैं और सइन्द्रिय होते हैं ।

भगवन् ! वे कृतयुग्म-कृतयुग्मराशिरूप एकेन्द्रिय जीव काल की अपेक्षा कितने काल तक होते हैं ? गौतम! वे जघन्य एक समय और उत्कृष्ट अनन्तकाल-अनन्त वनस्पतिकाल-पर्यन्त होते हैं । यहाँ संवेध का कथन नहीं किया जाता । आहार उत्पलोद्देशक अनुसार जानना, किन्तु वे व्याघातरहित छह दिशा से और व्याघात हो तो कदाचित् तीन, चार या पाँच दिशा से आहार लेते हैं । स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट बाईस हजार वर्ष की होती है । आदि के चार समुद्घात होते हैं । ये मारणान्तिक समुद्घात से समवहत अथवा असमवहत होकर मरते हैं और उद्वर्त्तना उत्पलोद्देशक के अनुसार जानना । भगवन् ! समस्त प्राण, भूत, जीव और सत्त्व क्या कृतयुग्म -कृतयुग्मराशिरूप एकेन्द्रियरूप से पहले उत्पन्न हुए हैं ? हाँ, गौतम ! वे अनेक बार अथवा अनन्त बार उत्पन्न हो चूके हैं ।

भगवन् ! कृतयुग्म-त्र्योजराशिरूप एकेन्द्रिय जीव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! उनका उपपात पूर्ववत् जानना । भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! वे एक समय में उन्नीस, संख्यात, असंख्यात या अनन्त उत्पन्न होते हैं । शेष पूर्ववत् । कृतयुग्म-कृतयुग्मराशिरूप के पाठ के अनुसार अनन्त बार उत्पन्न हुए हैं, तक कहना ।

भगवन् ! कृतयुग्म-द्वापरयुग्मरूप एकेन्द्रिय जीव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! उपपात पूर्ववत् जानना । भगवन् ! वे जीव एक समयमें कितने उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! अठारह, संख्यात, असंख्यात या अनन्त उत्पन्न होते हैं । शेष सब पूर्ववत् यावत् अनन्त बार उत्पन्न हुए हैं, भगवन् ! कृतयुग्म-कल्योजरूप एकेन्द्रिय कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! उपपात पूर्ववत् । इनका परिमाण है-सत्रह, संख्यात, असंख्यात या अनन्त । शेष पूर्ववत् यावत् अनन्त बार उत्पन्न हो चूके हैं । भगवन् ! त्र्योज-कृतयुग्मराशिरूप एकेन्द्रिय जीव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! उपपात पूर्ववत् जानना । इनका परिमाण है-बारह, संख्यात, असंख्यात अथवा अनन्त । शेष पूर्ववत् यावत् अनन्तबार उत्पन्न हुए हैं । भगवन् ! त्र्योज-त्र्योजराशिरूप एकेन्द्रिय जीव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! उपपात पूर्ववत् है । इनका परिमाण-पन्द्रह, संख्यात, असंख्यात या अनन्त । शेष पूर्ववत् यावत् अनन्त बार उत्पन्न हुए

इस प्रकार इन सोलह महायुग्मों का एक ही प्रकार का कथन समझना चाहिए । किन्तु इनके परिमाण में भिन्नता है । जैसे कि-त्र्योजद्वापरयुग्म का प्रतिसमय उत्पाद का परिमाण चौदह, संख्यात, असंख्यात या अनन्त है । त्र्योजकल्योज का है-तेरह, संख्यात, असंख्यात या अनन्त । द्वापरयुग्मकृतयुग्म का उत्पाद-परिमाण आठ, संख्यात, असंख्यात या अनन्त है । द्वापरयुग्मत्र्योज का ग्यारह, संख्यात, असंख्यात या अनन्त है । द्वापरयुग्मद्वाप-रयुग्म में दस, संख्यात, असंख्यात या अनन्त उत्पन्न होते हैं । द्वापरयुग्मकल्योज में नौ, संख्यात, असंख्यात या अनन्त हैं । कल्योजकृतयुग्म में चार, संख्यात, असंख्यात या अनन्त हैं । कल्योजत्र्योज में प्रतिसमय सात, संख्यात, असंख्यात या अनन्त है और कल्योजद्वापरयुग्म में छह, संख्यात, असंख्यात या अनन्त है । भगवन् ! कल्योज-कल्योजराशिरूप एकेन्द्रिय जीव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! उपपात पूर्ववत् कहना । परिमाण पाँच संख्यात, असंख्यात या अनन्त है । शेष पूर्ववत् । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-३५/१ – उद्देशक-२

सूत्र - १०४६

भगवन् ! प्रथम समयोत्पन्न कृतयुग्म-कृतयुग्मराशिरूप एकेन्द्रिय जीव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम!

पूर्ववत् । इसी प्रकार प्रथम उद्देशक अनुसार द्वीतिय उद्देशक में भी उत्पाद-परिमाण सोलह बार कहना चाहिए । अन्य सब पूर्ववत् । किन्तु इन दस बातों में भिन्नता है, यथा-अवगाहना-जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग है और उत्कृष्ट भी अंगुल के असंख्यातवें भाग है । आयुष्यकर्म के बन्धक नहीं, अबन्धक होते हैं । आयुष्य-कर्म के ये उदीरक नहीं, अनुदीरक होते हैं । ये उच्छ्वास, निःश्वास तथा उच्छ्वास-निःश्वास से युक्त नहीं होते और ये सात प्रकार के कर्मों के बन्धक होते हैं, अष्टविधकर्मों के बन्धक नहीं होते ।

भगवन् ! वे प्रथमसमयोत्पन्न कृतयुग्म-कृतयुग्मराशिरूप एकेन्द्रिय जीव कितने काल तक होते हैं ? गौतम! एक समय । उनकी स्थिति भी इतनी ही है । उनमें आदि के दो समुद्घात होते हैं । उनमें समवहत एवं उद्वर्त्तना नहीं होने से, इन दोनों की पृच्छा नहीं करनी चाहिए । शेष सब बातें सोलह ही महायुग्मों में अनन्त बार उत्पन्न हुए हैं, तक उसी प्रकार कहना । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-३५/१ - उद्देशक-३ से ११

सूत्र - १०४७

भगवन् ! अप्रथमसमयोत्पन्न कृतयुग्म-कृतयुग्मराशिरूप एकेन्द्रिय जीव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! प्रथम उद्देशक अनुसार इस उद्देशक में भी सोलह महायुग्मों के पाठ द्वारा यावत् अनन्त बार उत्पन्न हुए हैं, तक। 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

सूत्र - १०४८

भगवन् ! चरमसमयोत्पन्न कृतयुग्म-कृतयुग्मराशिरूप एकेन्द्रिय जीव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! प्रथमसमय उद्देशक अनुसार कहना चाहिए । किन्तु इनमें देव उत्पन्न नहीं होते तथा तेजोलेश्या के विषय में प्रश्न नहीं करना चाहिए । शेष पूर्ववत् ।

सूत्र - १०४९

भगवन् ! अचरमसमय के कृतयुग्म-कृतयुग्मराशिरूप एकेन्द्रिय जीव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! अप्रथमसमय उद्देशक के अनुसार कहना । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, यह इसी प्रकार है ।'

सूत्र - १०५०

भगवन् ! प्रथमप्रथमसमय के कृतयुग्म-कृतयुग्मराशिरूप एकेन्द्रिय जीव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! प्रथमसमय के उद्देशक अनुसार समग्र कथन करना ।

सूत्र - १०५१

भगवन् ! प्रथम-अप्रथमसमय के कृतयुग्म-कृतयुग्मराशिरूप एकेन्द्रिय जीव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं? गौतम ! प्रथमसमय के उद्देशकानुसार कहना । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है० ।'

सूत्र - १०५२

भगवन् ! प्रथम-चरमसमय के कृतयुग्म-कृतयुग्मराशिरूप एकेन्द्रिय जीव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! चरमउद्देशक अनुसार जानना ।

सूत्र - १०५३

भगवन् ! प्रथम-अचरमसमय के कृतयुग्म-कृतयुग्मराशिरूप एकेन्द्रिय जीव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! दूसरे उद्देशक के अनुसार जानना । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है० ।'

सूत्र - १०५४

भगवन् ! चरम-चरमसमय के कृतयुग्म-कृतयुग्मराशिरूप एकेन्द्रिय जीव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! चौथे उद्देशक के अनुसार जानना ।

सूत्र - १०५५

भगवन् ! चरम-अचरमसमय के कृतयुग्म-कृतयुग्मराशिरूप एकेन्द्रिय जीव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ?

गौतम ! प्रथमसमयउद्देशक के अनुसार जानना । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है० ।'

सूत्र - १०५६

इस प्रकार ये ग्यारह उद्देशक हैं । इनमें से पहले, तीसरे और पाँचवें उद्देशक के पाठ एकसमान है । शेष आठ उद्देशक एकसमान पाठ वाले हैं । किन्तु चौथे, (छठे), आठवें और दसवें उद्देशक में देवों का उपपात तथा तेजोलेश्या का कथन नहीं करना ।

शतक-३५ – शतकशतक–२ से १२

सूत्र - १०५७

भगवन् ! कृष्णलेश्यी-कृतयुग्म-कृतयुग्मराशिरूप एकेन्द्रिय जीव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! इनका उपपात औघिक उद्देशक अनुसार समझना । किन्तु इन बातों में भिन्नता है । भगवन् ! क्या वे जीव कृष्ण-लेश्या वाले हैं ? हाँ, गौतम ! हैं । भगवन् ! वे कृष्णलेश्यी कृतयुग्म-कृतयुग्मराशिरूप एकेन्द्रिय जीव कितने काल तक होते हैं? गौतम ! वे जघन्य एकसमय तक और उत्कृष्ट अन्तमुहूर्त्त तक होते हैं । उनकी स्थिति भी इसी प्रकार जानना । शेष पूर्ववत् यावत् अनन्त बार उत्पन्न हो चूके हैं । इसी प्रकार क्रमशः सोलह महायुग्मों पूर्ववत् कहना । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार हैं० ।'

भगवन् ! प्रथमसमय-कृष्णलेश्यी कृतयुग्म-कृतयुग्मराशिरूप एकेन्द्रिय जीव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं? गौतम ! प्रथमसमयउद्देशक के समान जानना । विशेष यह है–भगवन् ! वे जीव कृष्णलेश्या वाले हैं ? हाँ, गौतम ! वे कृष्णलेश्या वाले हैं । शेष पूर्ववत् । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है० ।' औघिकशतक के ग्यारह उद्देशकों के समान कृष्णलेश्याविशिष्ट शतक के भी ग्यारह उद्देशक कहने चाहिए । प्रथम, तृतीय और पंचम उद्देशक के पाठ एक समान हैं । शेष आठ उद्देशकों के पाठ सदृश हैं । किन्तु इनमें से चौथे, (छठे), आठवें और दसवें उद्देशक में देवों की उत्पत्ति नहीं होती । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है० ।' नीललेश्या वाले एकेन्द्रियों का शतक कृष्णलेश्या वाले एकेन्द्रियों के शतक के समान कहना चाहिए । इसके भी ग्यारह उद्देशकों का कथन उसी प्रकार है। 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है०।' कापोतलेश्या-सम्बन्धी शतक कृष्णलेश्याविशिष्ट शतक के समान जानना । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, यह इसी प्रकार है ।'

भगवन् ! भवसिद्धिक कृतयुग्म-कृतयुग्मराशिरूप एकेन्द्रिय जीव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! औघिकशतक के समान जानना । इनके ग्यारह ही उद्देशकों में विशेष बात यह है–भगवन् ! सर्व प्राण, भूत, जीव और सत्त्व भवसिद्धिक कृतयुग्म-कृतयुग्म विशिष्ट एकेन्द्रिय के रूप में पहले उत्पन्न हुए हैं ? गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है। शेष कथन पूर्ववत् । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है० ।'

भगवन् ! कृष्णलेश्यी भवसिद्धिक कृतयुग्म-कृतयुग्मराशिरूप एकेन्द्रिय जीव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं? गौतम ! कृष्णलेश्या-सम्बन्धी द्वीतिय शतक के समान जानना । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है० ।' नीललेश्या वाले भवसिद्धिक कृतयुग्म-कृतयुग्मएकेन्द्रिय शतक का कथन तृतीय शतक के समान जानना । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है० ।'

कापोतलेश्यीभवसिद्धिक एकेन्द्रियों के भी ग्यारह उद्देशकों सहित यह शतक चतुर्थ शतक समान जानना । इस प्रकार ये चार शतक भवसिद्धिक एकेन्द्रिय जीव के हैं । इन चारों शतकों में–क्या सर्व प्राण यावत् सर्व सत्त्व पहले उत्पन्न हुए हैं ? यह अर्थ समर्थ नहीं है । इतना विशेष जानना । भवसिद्धिक-सम्बन्धी चार शतक अनुसार अभवसिद्धिक एकेन्द्रिय के लेश्या-सहित चार शतक कहने चाहिए । भगवन् ! सर्व प्राण यावत् सर्व सत्त्व पहले उत्पन्न हुए हैं ? पूर्ववत् । यह अर्थ समर्थ नहीं है । (इतना विशेष जानना ।) इस प्रकार ये बारह एकेन्द्रियमहायुग्म-शतक हैं । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है० ।'

शतक-३५ का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

शतक–३६

शतकशतक-१ – उद्देशक–१

सूत्र - १०५८

भगवन् ! कृतयुग्म-कृतयुग्मराशिप्रमाण द्वीन्द्रिय जीव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! इनका उपपात व्युत्क्रान्तिपद अनुसार जानना । परिमाण–एक समय में सोलह, संख्यात या असंख्यात उत्पन्न होते हैं । इनका अपहार उत्पलोद्देशक अनुसार जानना । इनकी अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग की और उत्कृष्ट बारह योजन की है । एकेन्द्रियमहायुग्मराशि के प्रथम उद्देशक के समान समझना । विशेष यह है कि इनमें तीन लेश्याएं होती हैं । देवों से आकर उत्पन्न नहीं होते । सम्यग्दृष्टि भी होते हैं, मिथ्यादृष्टि भी होते हैं । ज्ञानी अथवा अज्ञानी होते हैं । वे वचनयोगी और काययोगी होते हैं ।

भगवन् ! वे कृतयुग्म-कृतयुग्म द्वीन्द्रिय जीव काल की अपेक्षा कितने काल तक होते हैं ? गौतम ! जघन्य एक समय और उत्कृष्ट संख्यातकाल । उनकी स्थिति जघन्य एक समय की और उत्कृष्ट बारह वर्ष की होती है । वे नियमतः छह दिशा का आहार लेते हैं । तीन समुद्घात होते हैं । शेष पूर्ववत् यावत् पहले अनन्त बार उत्पन्न हुए हैं । इसी प्रकार द्वीन्द्रिय जीवों के सोलह महायुग्मों में कहना । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है० ।'

शतक-३६/१ – उद्देशक–२ से ११

सूत्र - १०५९

भगवन् ! प्रथमसमयोत्पन्न कृतयुग्म-कृतयुग्मराशिप्रमाण द्वीन्द्रिय जीव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम! एकेन्द्रियमहायुग्मों के प्रथमसमय-सम्बन्धी उद्देशक अनुसार जानना । यहाँ दस बातों का जो अन्तर बताया है, वही अन्तर समझना । ग्यारहवीं विशेषता यह है कि ये सिर्फ काययोगी होते हैं । शेष सब बातें एकेन्द्रियमहा-युग्मों के प्रथम उद्देशक के समान जानना । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है० ।'

एकेन्द्रियमहायुग्म-सम्बन्धी ग्यारह उद्देशकों के समान यहाँ भी कहना चाहिए । किन्तु यहाँ चौथे, (छठे) आठवें और दसवें उद्देशकों में सम्यक्त्व और ज्ञान का कथन नहीं होता । एकेन्द्रिय के समान प्रथम, तृतीय और पंचम, उद्देशकों के एकसरीखे पाठ हैं, शेष आठ उद्देशक एक समान हैं ।

शतक-३६ – शतकशतक–२ से १२

सूत्र - १०६०

भगवन् ! कृष्णलेश्या वाले कृतयुग्म-कृतयुग्मराशिप्रमाण द्वीन्द्रिय से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! पूर्ववत् जानना । कृष्णलेश्यी जीवों का भी शतक ग्यारह उद्देशक-युक्त जानना चाहिए । विशेष यह है कि इनकी लेश्या और कायस्थिति तथा भवस्थिति कृष्णलेश्यी एकेन्द्रिय जीवों के समान होती है । इसी प्रकार नीललेश्यी और कापोतलेश्यी द्वीन्द्रिय जीवों का ग्यारह उद्देशक-सहित शतक है ।

भगवन् ! भवसिद्धिक कृतयुग्म-कृतयुग्मराशिप्रमाण द्वीन्द्रिय जीव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम! पूर्ववत् भवसिद्धिक महायुग्मद्वीन्द्रिय जीवों के चार शतक जानने चाहिए । विशेष यह है कि–सर्व प्राण, भूत, जीव और सत्त्व यावत् अनन्त बार उत्पन्न हुए ? यह बात शक्य नहीं है । शेष सब पूर्ववत् जानना चाहिए । ये चार औघिकशतक हुए । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है० ।' जिस प्रकार भवसिद्धिक के चार शतक कहे, उसी प्रकार अभवसिद्धिक के भी चार शतक कहने चाहिए । विशेष यह है कि इन सबमें सम्यक्त्व और ज्ञान नहीं होते हैं । शेष सब पूर्ववत् ही है । इस प्रकार ये बारह द्वीन्द्रियमहायुग्मशतक होते हैं । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है० ।'

शतक-३६ का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

शतक–३७

सूत्र - १०६१

भगवन् ! कृतयुग्मराशि वाले त्रीन्द्रिय जीव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! द्वीन्द्रियशतक के समान त्रीन्द्रिय जीवों के भी बारह शतक कहना विशेष यह है कि इनकी अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग की और उत्कृष्ट तीन गाऊ की है तथा स्थिति जघन्य एक समय की और उत्कृष्ट उनचास अहोरात्रि की है । शेष पूर्ववत् । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है० ।'

शतक–३८

सूत्र - १०६२

इसी प्रकार चतुरिन्द्रिय जीवों के बारह शतक कहने चाहिए । विशेष यह है कि इनकी अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट चार गाऊ की है तथा स्थिति जघन्य एक समय की और उत्कृष्ट छह महीने की है । शेष कथन द्वीन्द्रिय जीवों के शतक समान । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है० ।'

शतक–३९

सूत्र - १०६३

भगवन् ! कृतयुग्म-कृतयुग्मराशिप्रमाण असंज्ञीपंचेन्द्रिय जीव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! द्वीन्द्रियशतक के समान असंज्ञीपंचेन्द्रिय जीवों के भी बारह शतक कहने चाहिए । विशेष यह है कि इनकी अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवे भाग की और उत्कृष्ट एक हजार योजन की है तथा कायस्थिति जघन्य एक समय की और उत्कृष्ट पूर्वकोटिपृथक्त्व की है एवं भवस्थिति जघन्य एक समय की और उत्कृष्ट पूर्वकोटि की है । शेष पूर्ववत् द्वीन्द्रिय जीवों के समान है । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है० ।'

शतक-३७ से ३९ का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

शतक–४०

शतकशतक-१

सूत्र - १०६४

भगवन् ! कृतयुग्म-कृतयुग्मराशि रूप संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! इनका उपपात चारों गतियों से होता है । ये संख्यात वर्ष और असंख्यात वर्ष की आयु वाले पर्याप्तक और अपर्याप्तक जीवों से आते हैं । यावत् अनुत्तरविमान तक किसी भी गति से आने का निषेध नहीं है । इनका परिमाण, अपहार और अवगाहना असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों के समान है । ये जीव वेदनीयकर्म को छोड़कर शेष सात कर्मप्रकृतियों के बन्धक अथवा अबन्धक होते हैं । वेदनीयकर्म के तो बन्धक ही होते हैं । मोहनीयकर्म के वेदक या अवेदक होते हैं। शेष सात कर्मप्रकृतियों के वेदक होते हैं । वे सातावेदक अथवा असातावेदक होते हैं । मोहनीयकर्म के उदयी अथवा अनुदयी होते हैं, शेष सात कर्मप्रकृतियों के उदयी होते हैं । नाम और गोत्र कर्म के वे उदीरक होते हैं । शेष छह कर्मप्रकृतियों के उदीरक या अनुदीरक होते हैं । वे कृष्णलेश्यी यावत् शुक्ललेश्यी होते हैं । वे सम्यग्दृष्टि, मिथ्यादृष्टि या सम्यग् मिथ्यादृष्टि होते हैं । ज्ञानी अथवा अज्ञानी होते हैं । वे मनोयोगी, वचनयोगी और काययोगी होते हैं । उनमें उपयोग, वर्णादि चार, उच्छ्वास-निःश्वास और आहारक का कथन एकेन्द्रिय जीवों के समान हैं । वे विरत, अविरत या विरताविरत होते हैं । वे सक्रिय होते हैं ।

भगवन् ! वे जीव सप्तविध, अष्टविध, षड्विध या एकविधकर्मबन्धक होते हैं ? गौतम ! वे सप्तविधकर्म-बन्धक भी होते हैं, यावत् एकविधकर्मबन्धक भी होते हैं । भगवन् ! वे जीव क्या आहारसंज्ञोपयुक्त यावत् परिग्रह-संज्ञोपयुक्त होते हैं अथवा वे नोसंज्ञोपयुक्त होते हैं ? गौतम ! आहारसंज्ञोपयुक्त यावत् नोसंज्ञोपयुक्त होते हैं ।

इसी प्रकार सर्वत्र प्रश्नोत्तर की योजना करनी चाहिए । (यथा–) वे क्रोधकषायी यावत् लोभकषायी होते हैं। स्त्रीवेद, पुरुषवेदक, नपुंसकवेदक या अवेदक होते हैं । स्त्रीवेद-बन्धक, पुरुषवेद-बन्धक, नपुंसकवेद-बन्धक या अबन्धक होते हैं । संज्ञी होते हैं । संस्थितिकाल जघन्य एक समय और उत्कृष्ट सातिरेक सागरोपम-शतपृथक्त्व होता है । आहार पूर्ववत् यावत् नियम से छह दिशा का होता है । स्थिति जघन्य एक समय और उत्कृष्ट तैंतीस सागरोपम की है । प्रथम के छह समुद्घात पाए जाते हैं । ये मारणान्तिक-समुद्घात से समवहत होकर भी मरते हैं और असमवहत भी मरते हैं । उद्वर्त्तना का कथन उपपात समान है । किसी भी विषय में निषेध अनुत्तरविमान तक नहीं है ।

भगवन् ! सभी प्राण, भूत, जीव और सत्त्व यहाँ, पहले उत्पन्न हुए हैं ? गौतम ! अनन्त बार उत्पन्न हो चूके हैं । इसी प्रकार सोलह युग्मों में अनन्त बार उत्पन्न हो चूके हैं । इनका परिमाण द्वीन्द्रिय जीवों के समान है । शेष पूर्ववत् । 'भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

सूत्र - १०६५

भगवन् ! प्रथम समय के कृतयुग्म-कृतयुग्मराशियुक्त संज्ञीपंचेन्द्रिय जीव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! इनका उपपात, परिमाण, अपहार प्रथम उद्देशक के अनुसार जानना । अवगाहना, बन्ध, वेद, वेदना, उदयी और उदीरक द्वीन्द्रिय जीवों के समान समझना । कृष्णलेश्यी यावत् शुक्ललेश्यी होते हैं । शेष प्रथमसमयोत्पन्न द्वीन्द्रिय के समान इससे पूर्व अनन्त बार उत्पन्न हुए हैं, तक जानना । वे स्त्रीवेदी, पुरुषवेदी या नपुंसकवेदी होते हैं । संज्ञी होते हैं । शेष पूर्ववत् । इसी प्रकार सोलह ही युग्मों में परिमाण आदि की वक्तव्यता पूर्ववत् जानना । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है० ।' यहाँ भी ग्यारह उद्देशक पूर्ववत् हैं । प्रथम, तृतीय और पंचम उद्देशक एक समान हैं और शेष आठ उद्देशक एक समान हैं तथा चौथे, आठवे और दसवे उद्देशक में कोई विशेषता नहीं है । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-४० – शतकशतक–२ से २१

सूत्र - १०६६

भगवन् ! कृष्णलेश्यी कृतयुग्म-कृतयुग्मराशियुक्त संज्ञीपंचेन्द्रिय कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? इत्यादि प्रश्न ।

गौतम ! संज्ञी के प्रथम उद्देशक अनुसार जानना । विशेष यह है कि बन्ध, वेद, उदय, उदीरणा, लेश्या, बन्धक, संज्ञा, कषाय और वेदबंधक, इन सभी का कथन द्वीन्द्रियजीव-सम्बन्धी कथन समान है । कृष्णलेश्यी संज्ञी के तीनों वेद होते हैं, वे अवेदी नहीं होते । संचिट्ठणा जघन्य एक समय की और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त्त अधिक तैंतीस सागरोपम की होती है और उनकी स्थिति भी इसी प्रकार होती है । स्थिति में अन्तर्मुहूर्त्त अधिक नहीं कहना चाहिए। शेष प्रथम उद्देशक के अनुसार पहले अनन्त बार उत्पन्न हुए हैं, तक कहना । इसी प्रकार सोलह युग्मों का कथन समझ लेना चाहिए । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है० ।'

भगवन् ! प्रथमसमयोत्पन्न कृश्णलेश्यायुक्त कृतयुग्म-कृतयुग्मराशि वाले संज्ञीपंचेन्द्रिय जीव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! इनकी वक्तव्यता प्रथमसमयोत्पन्न संज्ञीपंचेन्द्रियों के उद्देशक अनुसार जानना । विशेष यह कि-भगवन् ! क्या वे जीव कृष्णलेश्या वाले हैं ? हाँ, गौतम ! हैं । शेष पूर्ववत् । इसी प्रकार सोलह ही युग्मों में कहना चाहिए । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।' इस प्रकार इस कृष्णलेश्या शतक में ग्यारह उद्देशक हैं । प्रथम, तृतीय और पंचम, ये तीनों उद्देशक एक समान हैं । शेष आठ उद्देशक एक समान हैं । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है० ।'

सूत्र - १०६७

नीललेश्या वाले संज्ञी की वक्तव्यता भी इसी प्रकार समझना । विशेष यह कि संचिट्ठणाकाल जघन्य एक समय और उत्कृष्ट पल्योपम के असंख्यातवें भाग अधिक दस सागरोपम है । स्थिति भी इसी प्रकार है । पहले, तीसरे, पाँचवे इन तीन उद्देशकों के विषय में जानना चाहिए । शेष पूर्ववत् । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।' इसी प्रकार कापोतलेश्या शतक के विषय में समझ लेना चाहिए । विशेष-संचिट्ठणाकाल जघन्य एक समय और उत्कृष्ट पल्योपम के असंख्यातवें भाग अधिक तीन सागरोपम है । स्थिति भी इसी प्रकार है तथा इसी प्रकार तीनों उद्देशक जानना । शेष पूर्ववत् । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है० ।'

तेजोलेश्याविशिष्ट (संज्ञी पंचेन्द्रिय) का शतक भी इसी प्रकार है । विशेष यह है कि संचिट्ठणाकाल जघन्य एक समय और उत्कृष्ट पल्योपम के असंख्यातवे भाग अधिक दो सागरोपम है । स्थिति भी इसी प्रकार है । किन्तु यहाँ नोसंज्ञोपयुक्त भी होते हैं । इसी प्रकार तीनों उद्देशकों के विषय में समझना चाहिए । शेष पूर्ववत् । 'हे भगवन्! यह इसी प्रकार है० ।' तेजोलेश्या शतक के समान पद्मलेश्या शतक है । विशेष-संचिट्ठणाकाल जघन्य एक समय और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त्त अधिक दस सागरोपम है । स्थिति भी इतनी ही है, किन्तु इसमें अन्तर्मुहूर्त्त अधिक नहीं कहना । शेष पूर्ववत् । इस प्रकार इन पाँचों शतकों में कृष्णलेश्या शतक के समान गमक पहले अनन्त बार उत्पन्न हो चूके हैं, तक जानना । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है० ।'

शुक्ललेश्या शतक भी औघिक शतक के समान है । इनका संचिट्ठणाकाल और स्थिति कृष्णलेश्या शतक के समान है । शेष पूर्ववत्, पहले अनन्त बार उत्पन्न हुए हैं, तक कहना । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है० ।' भगवन् ! कृतयुग्म-कृतयुग्मराशियुक्त भवसिद्धिकसंज्ञी पंचेन्द्रिय जीव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! प्रथम संज्ञीशतक के अनुसार भवसिद्धिक के आलापक से यह शतक जानना चाहिए । विशेष में-भगवन् ! क्या सभी प्राण, भूत, जीव और सत्त्व यहाँ पहले उत्पन्न हुए हैं ? गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है । शेष पूर्ववत् । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है० ।'

भगवन् ! कृष्णलेश्यी-भवसिद्धिक कृतयुग्म-कृतयुग्मराशिक संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? इत्यादि समग्र प्रश्न । गौतम ! कृष्णलेश्यी औघिक शतक के अनुसार कहना । 'भगवन् ! यह इसी प्रकार है० ।' नीललेश्यी भवसिद्धिक शतक भी इसी प्रकार जानना । 'भगवन् ! यह इसी प्रकार है० ।' संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों के सात औघिक शतक समान भवसिद्धिक सम्बन्धी सातों शतक कहने चाहिए । विशेष यह है-सातों शतकों में क्या...इससे पूर्व सर्व प्राण, यावत् सर्व सत्त्व उत्पन्न हुए हैं ? गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है । शेष पूर्ववत् । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है० ।'

भगवन् ! अभवसिद्धिक-कृतयुग्म-कृतयुग्मराशि-संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! अनुत्तरविमानों को छोड़कर शेष सभी स्थानों में पूर्ववत् उपपात जानना । इनका परिमाण, अपहार, ऊंचाई, बन्ध, वेद,

वेदन, उदय और उदीरणा कृष्णलेश्या शतक के समान है । कृष्णलेश्यी से लेकर यावत् शुक्ल-लेश्यी होते हैं । केवल मिथ्यादृष्टि होते हैं । अज्ञानी हैं । इसी प्रकार सब कृष्णलेश्या शतक के समान है । विशेष यह है कि वे अविरत होते हैं । इनका संचिट्ठणाकाल और स्थिति औघिक उद्देशक के अनुसार जानना । इनमें प्रथम के पाँच समुद्घात हैं । उद्वर्त्तना अनुत्तरविमानों को छोड़कर पूर्ववत् जानना चाहिए । तथा-क्या सभी प्राण यावत् सत्त्व पहले इनमें उत्पन्न हुए हैं ? यह अर्थ समर्थ नहीं । शेष कृष्णलेश्या शतक के समान पहले अनन्त बार उत्पन्न हुए हैं, तक कहना । इसी प्रकार सोलह ही युग्मों के विषय में जानना चाहिए । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है० ।'

भगवन् ! प्रथमसमयोत्पन्न अभवसिद्धिक कृतयुग्म-कृतयुग्मराशियुक्त संज्ञीपंचेन्द्रिय जीव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! प्रथमसमय के संज्ञी-उद्देशक के अनुसार जानना । विशेष-सम्यक्त्व, सम्यग् मिथ्यात्व और ज्ञान सर्वत्र नहीं होता । शेष पूर्ववत् । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है० ।' इस प्रकार इस शतक में भी ग्यारह उद्देशक होते हैं । इनमें से प्रथम, तृतीय एवं पंचम, ये तीनों उद्देशक समान पाठ वाले हैं तथा शेष आठ उद्देशक भी एक समान हैं । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है० ।'

भगवन् ! कृष्णलेश्यी-अभवसिद्धिक-कृतयुग्म-कृतयुग्मराशियुक्त संज्ञीपंचेन्द्रिय जीव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! औघिक शतक है, अनुसार कृष्णलेश्या-शतक जानना चाहिए । विशेष-भगवन् ! वे जीव कृष्ण-लेश्या वाले हैं ? हाँ, गौतम ! हैं । इनकी स्थिति और संचिट्ठणाकाल कृष्णलेश्या शतक समान । शेष पूर्ववत् । 'भगवन् ! यह इसी प्रकार है० ।'

कृष्णलेश्या-सम्बन्धी शतक अनुसार छहों लेश्या-सम्बन्धी छह शतक कहने चाहिए । विशेष-संचिट्ठणा-काल और स्थिति का कथन औघिक शतक के समान है, किन्तु शुक्ललेश्यी का उत्कृष्ट संचिट्ठणाकाल अन्तर्मुहूर्त्त अधिक इकतीस सागरोपम होता है और स्थिति भी पूर्वोक्त ही होती है, किन्तु उत्कृष्ट और अन्तर्मुहूर्त्त अधिक नहीं कहना चाहिए । इनमें सर्वत्र सम्यक्त्व और ज्ञान नहीं होता तथा इनमें विरति, विरताविरति तथा अनुत्तरविमानो-त्पत्ति नहीं होती । इसके पश्चात्-भगवन् ! सभी प्राण यावत् सत्त्व यहाँ पहले उत्पन्न हुए हैं ? गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है० ।' इस प्रकार ये सात अभवसिद्धिकमहायुग्म शतक होते हैं । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है० ।' इस प्रकार ये इक्कीस महायुग्मशतक संज्ञीपंचेन्द्रिय के हुए । सभी मिलाकर महायुग्म-सम्बन्धी ८१ शतक सम्पूर्ण हुए ।

शतक-४० का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

शतक–४१

उद्देशक-१

सूत्र - १०६८

भगवन् ! राशियुग्म कितने कहे गए हैं ? गौतम ! चार, यथा–कृतयुग्म, यावत् कल्योज । भगवन् ! राशि-युग्म चार कहे हैं, ऐसा किस कारण से कहते हैं ? गौतम ! जिस राशि में चार-चार का अपहार करते हुए अन्त में ४ शेष रहें, उस राशियुग्म को कृतयुग्म कहते हैं, यावत् जिस राशि में से चार-चार अपहार करते हुए अन्त में एक शेष रहे, उस राशियुग्म को 'कल्योज' कहते हैं । इसी कारण से हे गौतम ! यावत् कल्योज कहलाता है ।

भगवन् ! राशियुग्म-कृतयुग्मरूप नैरयिक कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? इनका उपपात व्युत्क्रान्तिपद अनुसार जानना । भगवन् ! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! चार, आठ, बारह, सोलह, संख्यात या असंख्यात उत्पन्न होते हैं । भगवन् ! वे जीव सान्तर उत्पन्न होते हैं या निरन्तर ? गौतम ! वे जीव सान्तर भी उत्पन्न होते हैं और निरन्तर भी । जो सान्तर उत्पन्न होते हैं, वे जघन्य एक समय और उत्कृष्ट असंख्यात समय का अन्तर करके उत्पन्न होते हैं । जो निरन्तर उत्पन्न होते हैं, वे जघन्य दो समय और उत्कृष्ट असंख्यात समय तक निरन्तर प्रतिसमय अविरहितरूप से उत्पन्न होते हैं ।

भगवन् ! वे जीव जिस समय कृतयुग्मराशिरूप होते हैं, क्या उसी समय त्र्योजराशिरूप होते हैं और जिस समय त्र्योजराशियुक्त होते हैं, उसी समय कृतयुग्मराशिरूप होते हैं ? गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं । भगवन् ! जिस समय वे जीव कृतयुग्मरूप होते हैं, क्या उस समय द्वापरयुग्मरूप होते हैं तथा जिस समय वे द्वापरयुग्मरूप होते हैं, उसी समय कृतयुग्मरूप होते हैं ? गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है । भगवन् ! जिस समय वे कृतयुग्म होते हैं, क्या उस समय कल्योज होते हैं तथा जिस समय कल्योज होते हैं, उस समय कृतयुग्मराशि होते हैं ? गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है ।

भगवन् ! वे जीव कैसे उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! जैसे कोई कूदने वाला इत्यादि उपपातशतक अनुसार वे आत्मप्रयोग से उत्पन्न होते हैं, परप्रयोग से नहीं । भगवन् ! वे जीव आत्म-यश से उत्पन्न होते हैं अथवा आत्मअयश से उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! वे आत्म-अयश से उत्पन्न होते हैं । भगवन् ! यदि वे जीव आत्म-अयश से उत्पन्न होते हैं तो क्या वे आत्म-यश से जीवनिर्वाह करते हैं अथवा आत्म-अयश से जीवननिर्वाह करते हैं ? गौतम ! वे आत्म-अयश से करते हैं ।

भगवन् ! यदि वे आत्म-अयश से अपना जीवननिर्वाह करते हैं, तो वे सलेश्यी होते हैं अथवा अलेश्यी होते हैं ? गौतम ! वे सलेश्यी होते हैं । भगवन् ! यदि वे सलेश्यी होते हैं तो सक्रिय होते हैं या अक्रिय होते हैं ? गौतम ! वे सक्रिय होते हैं । भगवन् ! यदि वे सक्रिय होते हैं तो क्या उसी भव को ग्रहण करके सिद्ध, बुद्ध, मुक्त हो जाते हैं यावत् सर्वदुःखों का अन्त कर देते हैं ? गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है ।

भगवन् ! राशियुग्म-कृतयुग्मराशिरूप असुरकुमार कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? नैरयिकों के कथन अनुसार यहाँ जानना । पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च तक इसी प्रकार कहना । विशेष–वनस्पतिकायिक जीव यावत् असंख्यात या अनन्त उत्पन्न होते हैं, शेष पूर्ववत् ।

मनुष्यों से सम्बन्धित कथन भी वे आत्म-यश से उत्पन्न नहीं होते, किन्तु आत्म-अयश से उत्पन्न होते हैं, तक कहना । भगवन् ! यदि वे आत्म-अयश से उत्पन्न होते हैं तो क्या आत्म-यश से जीवन-निर्वाह करते हैं या आत्म-अयश से जीवन निर्वाह करते हैं । गौतम ! आत्म-यश से भी और आत्म-अयश से भी जीवन निर्वाह करते हैं। भगवन् ! यदि वे आत्मयश से जीवन-निर्वाह करते हैं तो सलेश्यी होते हैं या अलेश्यी होते हैं ? गौतम ! वे सलेश्यी भी होते हैं और अलेश्यी भी । भगवन् ! यदि वे अलेश्यी होते हैं तो सक्रिय होते हैं या अक्रिय होते हैं ? गौतम ! वे किन्तु अक्रिय होते हैं भगवन् ! यदि वे अक्रिय होते हैं तो क्या उसी भव को ग्रहण करके सिद्ध, बुद्ध, मुक्त यावत् सर्व दुःखों का अन्त करते हैं? हाँ, गौतम ! करते हैं । भगवन् ! यदि वे सलेश्यी हैं तो सक्रिय होते हैं या अक्रिय होते हैं ? गौतम ! वे सक्रिय होते हैं ।

भगवन् ! वे सक्रिय होते हैं तो क्या उसी भव को ग्रहण करके सिद्ध होते हैं यावत् सब दुःखों का अन्त करते हैं ? गौतम! कितने ही इसी भव में सिद्ध होते हैं यावत् सर्व दुःखों का अन्त कर देते हैं और कितने ही उसी भव में सिद्ध-बुद्ध-मुक्त नहीं होते, यावत् सर्व दुःखों का अन्त नहीं कर पाते ।

भगवन् ! यदि वे आत्म-अयश से जीवन निर्वाह करते हैं तो वे सलेश्यी होते हैं या अलेश्यी होते हैं ? गौतम! वे सलेश्यी होते हैं । भगवन् ! यदि वे सलेश्यी होते हैं तो सक्रिय होते हैं अथवा अक्रिय होते हैं ? गौतम ! वे सक्रिय होते हैं। भगवन् ! यदि वे सक्रिय होते हैं तो क्या उसी भव को ग्रहण करके सिद्ध होते हैं यावत् सर्व दुःखों का अन्त कर देते हैं ? गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है ।

वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिक-सम्बन्धी कथन नैरयिक के समान है । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है।'

शतक-४१ – उद्देशक-२

सूत्र - १०६९

भगवन् ! राशियुग्म-त्र्योजराशि-परिमित नैरयिक कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! पूर्ववत्-ये तीन, सात, ग्यारह, पन्द्रह, संख्यात या असंख्यात उत्पन्न होते हैं । सान्तर पूर्ववत् । भगवन् ! वे जीव जिस समय त्र्योज-राशि होते हैं, क्या उस समय कृतयुग्मराशि होते हैं, तथा जिस समय कृतयुग्मराशि होते हैं, क्या उस समय त्र्योज-राशि होते हैं । गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है । भगवन् ! जिस समय वे जीव त्र्योजराशि होते हैं, क्या उस समय द्वापरयुग्मराशि होते हैं तथा जिस समय वे द्वापरयुग्मराशि होते हैं, क्या उस समय वे त्र्योजराशि होते हैं ? गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है । कल्योजराशि के साथ कृतयुग्मादिराशि-सम्बन्धी वक्तव्यता भी इसी प्रकार जाननी चाहिए। शेष सब कथन पूर्ववत् यावत् वैमानिक जानना किन्तु सभी का उपपात व्युत्क्रान्तिपद के अनुसार समझना । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-४१ – उद्देशक-३

सूत्र - १०७०

भगवन् ! राशियुग्म-द्वापरयुग्मराशि वाले नैरयिक कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! पूर्ववत् जानना। किन्तु इनका परिमाण-ये दो, छह, दस, संख्यात या असंख्यात उत्पन्न होते हैं । भगवन् ! वे जीव जिस समय द्वापर युग्म होते हैं, क्या उस समय कृतयुग्म होते हैं, अथवा जिस समय कृतयुग्म होते हैं, क्या उस समय द्वापरयुग्म होते हैं? गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है । इसी प्रकार त्र्योजराशि के साथ भी कृतयुग्मादि सम्बन्धी वक्तव्यता कहना । कल्योजराशि के साथ भी कृतयुग्मादि-सम्बन्धी वक्तव्यता इसी प्रकार है । शेष कथन प्रथम उद्देशक के अनुसार, वैमानिक पर्यन्त करना । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

शतक-४१ – उद्देशक-४

सूत्र - १०७१

भगवन् ! राशियुग्म-कल्योजराशि नैरयिक कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! पूर्ववत् । विशेष-ये एक, पाँच, नौ, तेरह, संख्यात या असंख्यात उत्पन्न होते हैं । भगवन् ! वे जीव जिस समय कल्योज होते हैं, क्या उस समय कृतयुग्म होते हैं अथवा जिस समय कृतयुग्म होते हैं, क्या उस समय कल्योज होते हैं ? गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है । इसी प्रकार त्र्योज तथा द्वापरयुग्म के साथ कृतयुग्मादि कथन जानना । शेष सब वर्णन प्रथम उद्देशक के समान वैमानिक पर्यन्त जानना । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है० ।'

शतक-४१ – उद्देशक-५ से २८

सूत्र - १०७२

भगवन् ! कृष्णलेश्या वाले राशियुग्म-कृतयुग्मराशिरूप नैरयिक कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? इनका उपपात धूमप्रभापृथ्वी समान है । शेष कथन प्रथम उद्देशक अनुसार जानना । असुरकुमारों के विषय में भी इसी प्रकार वाणव्यन्तर पर्यन्त कहना चाहिए । मनुष्यों के विषय में भी नैरयिकों के समान कथन करना । वे आत्मअयश

पूर्वक जीवन-निर्वाह करते हैं । अलेश्यी, अक्रिय तथा उसी भव में सिद्ध होने का कथन नहीं करना । शेष प्रथमोद्देशक समान है । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है० ।' कृष्णलेश्या वाले राशियुग्म में त्र्योजराशि तथा द्वापरयुग्मराशि नैरयिक का उद्देशक भी इसी प्रकार है । कृष्णलेश्या वाले कल्योजराशि नैरयिक का उद्देशक भी इसी प्रकार जानना। किन्तु इनका परिमाण और संवेध औघिक उद्देशक अनुसार समझना । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है० ।'

कृष्णलेश्या वाले जीवों के अनुसार नीललेश्या युक्त जीवों के भी पूर्ण चार उद्देशक कहने चाहिए । विशेष में, नैरयिकों के उपपात का कथन वालुकाप्रभा के समान जानना । शेष पूर्ववत् । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है०।' इसी प्रकार कापोतलेश्या-सम्बन्धी भी चार उद्देशक कहना । विशेष नैरयिकों का उपपात रत्नप्रभापृथ्वी के समान जानना चाहिए । शेष पूर्ववत् । भगवन् ! तेजोलेश्या वाले राशियुग्म-कृतयुग्मरूप असुरकुमार कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! पूर्ववत् जानना, किन्तु जिनमें तेजोलेश्या पाई जाती हो उन्हीं के जानना । इस प्रकार ये भी कृष्णलेश्या-सम्बन्धी चार उद्देशक कहना चाहिए । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, यह इसी प्रकार है ।'

इसी प्रकार पद्मलेश्या के भी चार उद्देशक जानने चाहिए । पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चयोनिक, मनुष्य और वैमानिक-देव, इनमें पद्मलेश्या होती है, शेष में नहीं होती । पद्मलेश्या के अनुसार शुक्ललेश्या के भी चार उद्देशक जानने चाहिए। विशेष यह है कि मनुष्यों के लिए औघिक उद्देशक के अनुसार जानना । शेष पूर्ववत् । इस प्रकार इन छह लेश्याओं-सम्बन्धी चौबीस उद्देशक होते हैं तथा चार औघिक उद्देशक हैं । ये सभी मिलकर अट्ठाईस उद्देशक होते हैं। 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है० ।'

शतक-४१ – उद्देशक-२९ से ५६

सूत्र - १०७३

भगवन् ! भवसिद्धिक राशियुग्म-कृतयुग्मराशि नैरयिक कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! पहले के चार औघिक उद्देशकों अनुसार सम्पूर्ण चारों उद्देशक जानना । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है० ।' भगवन् ! कृष्ण-लेश्यी भवसिद्धिक राशियुग्म-कृतयुग्मराशियुक्त नैरयिक कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? इत्यादि प्रश्न । गौतम ! कृष्णलेश्या-सम्बन्धी चार उद्देशक अनुसार भवसिद्धिक कृष्णलेश्यी जीवों के भी चार उद्देशक कहना । इसी प्रकार नीललेश्यी कापोतलेश्यी, पद्मलेश्यी, शुक्ललेश्यी भवसिद्धिक के भी चार उद्देशक कहना । इस प्रकार भवसिद्धिक-जीव-सम्बन्धी अट्ठाईस उद्देशक होते हैं । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है० ।'

शतक-४१ – उद्देशक-५७ से ८४

सूत्र - १०७४

भगवन् ! अभवसिद्धिक-राशियुग्म-कृतयुग्मराशियुक्त नैरयिक कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! प्रथम उद्देशक के समान कथन करना । विशेष यह है कि मनुष्यों और नैरयिकों की वक्तव्यता समान जाननी चाहिए। शेष पूर्ववत् । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है० ।' इसी प्रकार चार युग्मों के चार उद्देशक कहना ।

भगवन् ! कृष्णलेश्यी-अभवसिद्धिक-राशियुग्म-कृतयुग्मराशिरूप नैरयिक कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? पूर्ववत् चार उद्देशक कहना । इसी प्रकार नीललेश्या यावत् शुक्ललेश्या वाले अभवसिद्धिक जीवों के भी चार उद्देशक जानना । इस प्रकार इन अट्ठाईस अभवसिद्धिक उद्देशकों में मनुष्यों-सम्बन्धी कथन नैरयिकों के आलापक के समान जानना चाहिए । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, यह इसी प्रकार है ।'

शतक-४१ – उद्देशक-८५ से ११२

सूत्र - १०७५

भगवन् ! सम्यग्दृष्टि-राशियुग्म-कृतयुग्मराशियुक्त नैरयिक कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? प्रथम उद्देशक के समान यह उद्देशक जानना । इसी प्रकार चारों युग्मों में भवसिद्धिक के समान चार उद्देशक कहने चाहिए । 'हे भगवन्! यह इसी प्रकार है० ।'

भगवन् ! कृष्णलेश्यी सम्यग्दृष्टि राशियुग्म-कृतयुग्मराशि नैरयिक कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? यहाँ भी

कृष्णलेश्या के समान चार उद्देशक कहने चाहिए । इस प्रकार (नीललेश्यादि पंचविध) सम्यग्दृष्टि जीवों के भी भव-सिद्धिक जीवों के समान अट्ठाईस उद्देशक कहना । 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है० ।'

शतक-४१ – उद्देशक-११३ से १४०

सूत्र - १०७६

भगवन् ! मिथ्यादृष्टि-राशियुग्म-कृतयुग्मराशियुक्त नैरयिक जीव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? मिथ्यादृष्टि के अभिलाप से यहाँ भी अभवसिद्धिक उद्देशकों के समान अट्ठाईस उद्देशक कहने चाहिए । 'हे भगवन् ! यह० ।'

शतक-४१ – उद्देशक-१४१ से १६८

सूत्र - १०७७

भगवन् ! कृष्णपाक्षिक-राशियुग्म-कृतयुग्मराशिविशिष्ट नैरयिक कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! अभवसिद्धिक-उद्देशकों के समान अट्ठाईस उद्देशक कहना ।

शतक-४१ – उद्देशक-१६९ से १९६

सूत्र - १०७८

भगवन् ! शुक्लपाक्षिक-राशियुग्म-कृतयुग्मराशि-विशिष्ट नैरयिक कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? गौतम ! भवसिद्धिक उद्देशकों के समान अट्ठाईस उद्देशक होते हैं । इस प्रकार यह (४१ वाँ) राशियुग्म शतक इन सबको मिलाकर १९६ उद्देशकों का है यावत्-भगवन् ! शुक्ललेश्या वाले शुक्लपाक्षिक राशियुग्म-कृतयुग्म-कल्योजराशि-विशिष्ट वैमानिक यावत् यदि सक्रिय हैं तो क्या उस भव को ग्रहण करके सिद्ध हो जाते हैं यावत् सब दुःखों का अन्त कर देते हैं ? गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं, 'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।'

सूत्र - १०७९

भगवान् गौतमस्वामी, श्रमण भगवान महावीर की तीन बार आदक्षिण - दाहिनी ओर से प्रदक्षिणा करते हैं, यों तीन बार आदक्षिण-प्रदक्षिणा करके वे उन्हें वन्दन-नमस्कार करते हैं । तत्पश्चात् इस प्रकार बोलते हैं-'भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह अवितथ-सत्य है, भगवन् ! यह असंदिग्ध है, भन्ते ! यह ईच्छित है, भन्ते ! प्रतीच्छित-(स्वीकृत) है, भन्ते ! यह ईच्छित-प्रतीच्छित है, भगवन् ! यह अर्थ सत्य है, जैसा आप कहते हैं, क्योंकि अरिहंत भगवंत अपूर्व वचन वाले होत हैं, यों कहकर वे श्रमण भगवान महावीर का पुनः वन्दन-नमस्कार करते हैं । तत्पश्चात् तप और संयम से अपनी आत्मा को भावित करते हुए विचरते हैं ।

शतक-४१ का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

शेष कथन

सूत्र - १०८०

सम्पूर्ण भगवती सूत्र के कुल १३८ शतक हैं और १९२५ उद्देशक हैं । प्रवर (सर्वश्रेष्ठ) ज्ञान और दर्शन के धारक महापुरुषों ने इस अंगसूत्र में ८४ लाख पद कहे हैं तथा विधि-निषेधरूप भाव तो अनन्त कहे हैं ।

सूत्र - १०८१

गुणों से विशाल संघरूपी समुद्र सदैव विजयी होता है, जो ज्ञानरूपी विमल और विपुल जल से परिपूर्ण है, जिसकी तप, नियम और विनयरूपी वेला है और जो सैकड़ों हेतुओं-रूप प्रबल वेग वाला है ।

सूत्र - १०८२

गौतम आदि गणधरों को नमस्कार हो । भगवती व्याख्याप्रज्ञप्ति को नमस्कार हो तथा द्वादशांग-गणिपिटक को नमस्कार हो ।

सूत्र – १०८३-१०८५

कच्छप के समान संस्थित चरण वाली तथा अम्लान कोरंट की कली के समान, भगवती श्रुतदेवी मेरे मति अन्धकार को विनष्ट करे । जिसके हाथमें विकसित कमल है, जिसने अज्ञानान्धकार का नाश किया है, जिसको बुध और विबुधों ने सदा नमस्कार किया है, ऐसी श्रुताधिष्ठात्रि देवी मुझे भी बुद्धि प्रदान करे । जिसकी कृपा से ज्ञान सीखा है, उस श्रुतदेवता को प्रणाम करता हूँ तथा शान्ति करने वाली उस प्रवचनदेवी को नमस्कार करता हूँ ।

सूत्र - १०८६

श्रुतदेवता, कुम्भधर यक्ष, ब्रह्मशान्ति, वैरोट्यादेवी, विद्या और अन्तहुंडी, लेखक के लिए अविघ्न प्रदान करे।

सूत्र - १०८७

व्याख्याप्रज्ञप्ति के प्रारम्भ के आठ शतकों के दो-दो उद्देशकों का उद्देश एक-एक दिन में दिया जाता है, किन्तु चतुर्थ शतक के आठ उद्देशकों का उद्देश पहले दिन किया जाता है, जबकि दूसरे दिन दो उद्देशों का किया जाता है । नौवें शतक से लेकर आगे यावत् बीसवें शतक तक जितना-जितना शिष्य की बुद्धि में स्थिर हो सके, उतना-उतना एक दिन में उपदिष्ट किया जाता है । उत्कृष्टतः एक दिन में एक शतक का भी उद्देश दिया जा सकता है, मध्यम दो दिन में और जघन्य तीन दिन में एक शतक का पाठ दिया जा सकता है । किन्तु ऐसा बीसवें शतक तक किया जा सकता है । विशेष यह है कि इनमें से पन्द्रहवे गोशलकशतक का एक ही दिन में वाचन करना चाहिए । यदि शेष रह जाए तो दूसरे दिन आयंबिल करके वाचन करना चाहिए । फिर भी शेष रह जाए तो तीसरे दिन दो आयंबिल करके वाचन करना चाहिए । इक्कीसवे, बाईसवे और तेईसवे शतक का एक-एक दिन में उद्देश करना चाहिए । चौबीसवे शतक के छह-छह उद्देशकों का प्रतिदिन पाठ करके चार दिनों में पूर्ण करना चाहिए । पच्चीसवे शतक के प्रतिदिन छह-छह उद्देशक बांच कर दो दिनों में पूर्ण करना चाहिए ।

एक समान पाठ वाले बन्धीशतक आदि सात शतक का पाठवाचन एक दिन में, बारह एकेन्द्रियशतकों का वाचन एक दिन में बारह श्रेणीशतकों का वाचन एक दिन में तथा एकेन्द्रिय के बारह महायुग्मशतकों का वाचन एक ही दिन में करना चाहिए । इसी प्रकार द्वीन्द्रिय के बारह, त्रीन्द्रिय के बारह, चतुरिन्द्रिय के बारह, असंज्ञीपंचेन्द्रिय के बारह शतकों का तथा इक्कीस संज्ञीपंचेन्द्रिययुग्म शतकों का वाचन एक-एक दिन में करना चाहिए । इकतालीसवे राशियुग्मशतक की वाचना भी एक दिन में दी जानी चाहिए ।

५– भगवती/व्याख्याप्रग्यप्ति अङ्गसूत्र-५ का
मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

नमो नमो निम्मलदंसणस्स

પૂજ્યપાદ્ શ્રી આનંદ–ક્ષમા–લલિત–સુશીલ–સુધર્મસાગર ગુરૂભ્યો નમ:

५

भगवती/व्याख्याप्रज्ञप्ति

आगमसूत्र हिन्दी अनुवाद

[अनुवादक एवं संपादक]

आगम दीवाकर मुनि दीपरत्नसागरजी

[M.Com. M.Ed. Ph.D. श्रुत महर्षि]

વેબ સાઈટ:– (1) www.jainelibrary.org (2) deepratnasagar.in

ઈમેલ એડ્રેસ:- jainmunideepratnasagar@gmail.com મોબાઈલ 09825967397